भारतकी नद-नदियां, तालाब-सरोवर, प्रपात, समुद्र आदिकी रसायन

जीवनलीला

काकासाहब कालेलकर

अनुवादक
रवीन्द्र केळेकर

विश्वस्य मातरः सर्वाः
सर्वाश् चैव महाफलाः ।
इत्येता सरितो राजन् !
समाख्याता यथास्मृति ।।
— भीष्मपर्व, ९–३७

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-१४

साहित्य अकादमी, दिल्लीकी ओरसे सूचित गुजराती आवृत्ति परसे

पहली आवृत्ति ५०००, सन् १९५८

तीन रुपये

फरवरी, १९५८

जीवनलीला

१

मैंने कही पर लिखा ही है कि मेरे भारत-यात्राके वर्णन केवल साहित्य-विलास नही हैं, बल्कि भारत-भक्तिका और पूजाका अेक प्रकार है। भगवानके गुण गाना जिस तरह नवधा भक्तिका अेक प्रकार है, असी तरह भारतकी भूमि, असके पहाड और पर्वतश्रेणिया, नदिया और सरोवर, गाव और शहर, अनमें बसे हुअे लोग और अनका पुरुषार्थ, अनके आश्रयमें रहनेवाले ग्राम्य पशु-पक्षी और अनके साथ असहयोग करके आजादीका आनद लेनेवाले वन्य पशु-पक्षी — आदि सबका वर्णन करके अनका परिचय बढाना भारत-भक्तिका अेक अत्यत आनददायी प्रकार है। यह भक्ति अेकातमें भी की जा सकती है और लोकातमें भी। जब कभी नवयुवकोकी कोअी घुमक्कड टोली मुझसे मिलने आती है और कहती है कि 'आपकी यात्राकी पुस्तकें पढकर हम भारतकी यात्रा करनेके लिअे निकल पडे हैं' तब मुझे बडा आनन्द होता है, और मैं अनकी ओर अैसी कृतज्ञ-बुद्धिसे देखता हूं, मानो वे मुझ पर अुपकार करनेके लिअे ही निकले हो।

मेरे अिन यात्रा-वर्णनोमें से जैसे सब वर्णन, जिनमें मैंने भारतकी नदियोको भक्ति-कुसुमोकी अजलि अर्पित की है, अेकत्र करके 'लोकमाता'* के नामसे गुजराती तथा मराठीमें जनताके सामने बहुत पहले मैंने रख दिये हैं। महाभारतकारने हमारी नदियोको 'विश्वस्य मातर' कहा है। अिन स्तन्यदायिनी माताओका वर्णन करते हुअे हमारे पूर्वज कभी नही थके। और मेरा अनुभव है कि अिन्ही

* हिन्दीमें अिनमें से सिर्फ सात नदियोंके वर्णन 'सप्त-सरिता' के नामसे दिल्लीके सस्ता-साहित्य-मडलकी ओरसे प्रकाशित किये गये थे।

नदियोंके नये प्रकारके स्तोत्र यदि लोगोंके सामने रखे जायँ तो अनेक आजके लोग भी प्रेमपूर्वक स्वागत करते हैं।

अब स्वराज्य सरकारकी ओरसे हालमें स्थापित हुआी 'साहित्य अकादमी' (भारत-भारती-परिषद्) ने सूचना की कि 'लोकमाता' में दूसरे और कुछ प्रवास-वर्णन मिलाकर अेक पुस्तक मैं तैयार करूं, 'साहित्य अकादमी' हिन्दुस्तानकी प्रमुख भाषाओंमें अुसका अनुवाद करवाकर प्रकाशित करेगी।

अिस अनुग्रहको स्वीकार करते समय मैंने सोचा कि अुसमें किसी भी *स्थानके यात्रा-वर्णन जोड़नेके बदले नदी, प्रपात और* सरोवरोंके साथ मेल खा सकें अैसे सागर, सागर-संगम और सागर-तटकी विविध लीलाका ही वर्णन यदि दूं, तो पंचमहाभूतोंमें से अेक अत्यन्त आह्लादक तत्त्वकी लीलाका वर्णन अेक स्थान पर आ जायेगा और अिस नअी पुस्तकमें अेक प्रकारकी अेकरूपता भी रहेगी। यह विचार मित्रोंको और 'साहित्य अकादमी' के गुजराती सलाहकारों तथा संचालकोंको पसन्द आया। अत. 'लोकमाता' 'जीवनलीला' के रूपमें पाठकोंकी सेवा करनेके लिअे निकल पड़ी।

'लोकमाता' में केवल नदियोंके ही वर्णन होनेसे अुसके मुख-पृष्ठ पर महाभारतका 'विश्वस्य मातरः' वाला श्लोक ठीक मालूम होता था। अब अुसने व्यापक 'जीवनलीला' का रूप धारण किया है, अतः अिस श्लोकका अुपयोग करनेमें अव्याप्तिका दोष आ जाता है। फिर भी परंपराकी रक्षाके लिअे यह श्लोक अिस पुस्तकमें भी भक्तिभावसे रहने दिया है।

'जीवनलीला' की गुजराती आवृत्तिने लोकप्रियताकी यात्रा शुरू की और तुरन्त अुसके हिन्दी अनुवादका सवाल खड़ा हुआ। नवजीवन प्रकाशन मंदिरने अपनी नीतिके अनुसार हिन्दी आवृत्ति प्रकाशित करनेका भार स्वयं अुठाया और मेरी सूचनाके अनुसार अनुवादका काम वर्धामें मेरे पास रहे हुअे श्री रवीन्द्र केळेकरको सौंपा। अुन्होंने बड़ी योग्यता और प्रेमके साथ यह अनुवाद समय पर कर दिया। सारा अनुवाद मैं देख चुका हूं और मुझे अुससे संतोष है।

गुजराती आवृत्तिके लिअे जो टिप्पणियां अध्यापक श्री नगीनदास पारेखने तैयार की थी, अुन्हीका अुपयोग अिस आवृत्तिके लिअे किया गया है। हमारे देशमें जहां सदर्भ-ग्रंथोकी कमी है और अच्छे पुस्तकालय भी बहुत कम जगह पर पाये जाते हैं विद्यार्थियोंके लिअे ही नहीं, किन्तु सामान्य संस्कार-रसिक पाठकोंके लिअे भी टिप्पणियां लाभदायक होती हैं।

अनुवाद और टिप्पणियां देखकर मेरे अन्तेवासी श्री नरेश मन्त्रीने अपने ही अुत्साहसे 'जीवनलीला' की सूची बनाकर दी। आजकलके जमानेमें सूचीकी आवश्यकता अनुक्रमणिकासे कम नहीं मानी जाती। पाठक तो सूची बनानेवालेको धन्यवाद दे ही देंगे, क्योंकि अनुक्रमणिका और सूची ग्रंथकी दो आंखें मानी जाती हैं।

मेरी अिस किताबके लिअे अिस तरह टिप्पणियां और सूची देनेका अुत्साह दिखाकर नवजीवन प्रकाशन मंदिरने विद्यानुरागी पाठकोंके धन्यवाद अवश्य ही हासिल किये हैं।

जब तक मेरी यात्रा चलती है और भक्तियुक्त स्मृति काम देती है, मेरी किताबोंका कलेवर बढ़नेवाला ही है। गुजराती 'जीवनलीला' के प्रकट होनेके बाद जीवनलीलामें सलग्न दसेक मौलिक हिन्दी लेख और तैयार हो गये, जिनको अिस हिन्दी आवृत्तिमें स्थान देकर मेरी 'जीवन'-भक्तिको मैंने *अद्यतन (up-to-date) बनाया है। अैसे नये लेखोंको* अनुक्रमणिकामें तारकांकित किया गया है। अब अिस विषयमें ज्यादा लिखनेका अुत्साह नहीं है, किन्तु भारतके नद-नदी, तालाब-सरोवर, प्रपात और समुद्र-तट, वार्षिक जल-प्रलय और मरुभूमिके मृगजल आदिका विविध वर्णन नये जमानेके नयी प्रतिभावाले अुदीयमान लेखकोंकी कलमसे निकले हुअे लेखोंमें पढ़नेकी अिच्छा या लालसा है। पं० बनारसीदासजीने हिन्दी लेखकोंका ध्यान अिस क्षेत्रकी ओर कबका आकर्षित किया है।

२६–१–'५८ — काका कालेलकर

स्वातन्त्र्यका गणतंत्र-दिन

वस्तुतः पंचमहाभूतोंके संयोगसे ही जीवन अस्तित्वमें आता है। फिर भी हमारे लोगोंने केवल पानीको ही जीवन कहा, अिसमें बड़ा रहस्य छिपा हुआ है। पृथ्वीके आसपास चाहे जितना वायुमंडल घिरा हुआ हो, और जिस 'वातके आवरण' के बिना हम भले अेक क्षण भी जी न सकें, फिर भी पृथ्वीका महत्त्व है अुसको घेरकर रहनेवाले अुदावरण (पानीका आवरण) के ही कारण। अुदकमें जो ताजगी है, जो जीवन-तत्त्व है, वह न तो अग्निकी ज्वालामें है, न पवन या आंधी-तूफानमें है। पानी जहां बहता है वहां शीतलता प्रदान करता है; रेगिस्तानको भी वह अुपवन बनाता है; और प्राणिमात्र अनेक प्रकारके जीवन-प्रयोग कर सकें अैसी सुविधायें प्रदान करता है। जलका स्वभाव चंचल है, तरल है, अूर्मिल है। और अिससे भी विशेष, वत्सल है।

प्रकृतिके निरीक्षणका आनंद अनुभव करते हुअे पहाड़, रेत, बादल और अुनके अुत्सवरूप सूर्योदय तथा सूर्यास्तके रंग-चमत्कार मैंने देखे हैं। हरेककी खूबी अलग, हरेककी चमत्कृति अनोखी होती है; फिर भी पानीके प्रवाह या विस्तारमें से जो जीवन-लीला प्रकट होती है अुसके असरके समान दूसरा कोअी प्राकृतिक अनुभव नहीं है। पहाड़ चाहे जितना अुत्तुंग या गगनभेदी हो, जब तक अुसके विशाल वक्षको चीरकर कोअी बड़ा या छोटा झरना नहीं कूदता, तब तक अुसकी भव्यता कोरी, सूनी और अलोनी ही मालूम होती है।

संस्कृतमें 'डलयोः सावर्ण्यम्' न्यायसे जलको जड भी कहते होंगे। किन्तु सच पूछा जाय तो जलको जड कहनेवालेकी बुद्धि ही जड़ होनी चाहिये। जड़ताका यदि कहीं अभाव है तो वह जलमें ही है।

पहाड़को देखते ही अुसके शिखर तक चढ़नेका दिल होगा और संभव हुआ तो शिखर तक पैर चलेंगे भी। पानीकी भी यही बात है। मनुष्य जब तक नदीका अुद्गम और मुख नहीं ढूंढ़ता, तब तक अुसे संतोष नहीं होता। पानीको देखते ही अुसके समीप जानेका दिल होता ही है। वह यदि पेय हो तो प्यास न होते हुअे भी अुसको

चखनेका मन होता है। स्नानसे बाह्य शरीर और पानसे शरीरके अंदरका भाग पावन किये बगैर मनुष्यको तृप्ति ही नही होती। अन्य सहूलियत न हो तो वह पानीका आचमन करेगा, अथवा कमसे कम पानीकी दो बूंदें आखोकी पलको पर जरूर लगायेगा।

हिमालयके ठडे प्रदेशमें जहा कपडे अुतारना भी मुश्किल है वहा हमारे धर्मनिष्ठ लोग पचस्नानी करते है। पानीमें अुगलिया डुबो-कर अुनसे माथेको छूने पर अेक स्नान पूरा हुआ। दो आखोको छूने पर दूसरे दो स्नान हो गये। फिर वही पानीकी बूंदें दो कर्ण-मूलोको लगानेसे पचस्नानी पूरी होती है। पानीके स्पर्शके बिना मनुष्यको अैसा नही लगता कि वह पवित्र हो गया है।

मनुष्य जब मर जाता है, तब अुसके शरीरको जिस पृथ्वीसे वह आया अुसीके अुदरमें दफना देनेकी प्रथा सभी जगह है। किन्तु हम लोगोने अिसमें सशोधन किया। शरीरको सडने देनेके बजाय अुसका अग्नि-सस्कार करना हम अधिक श्रेयस्कर मानते है। अग्निको हम पावक कहते है। पावक यानी पवित्र करनेवाला। कोअी वस्तु चाहे जितनी गदी हो, सडी हुअी हो या अपवित्र हो, अग्नि-सस्कार होने पर वह पावन हो जाती है। अिसीलिअे हम अुपले, लकडिया, चदन, धूप और कपूर जैसे ज्वालाग्राही पदार्थ अेकत्र करके शरीरका अग्नि-सस्कार करते हैं।

यहा तक तो सब ठीक है, किन्तु जीवननिष्ठ सस्कृतिको अितनेसे सतोष नही हुआ। अग्नि-सस्कारके अतमें जो अस्थिया और भस्म बच जाते है, अुन अवशेषोको जब हम पवित्र जलाशयोमें विसर्जन करते है, तभी हमें परम सतोष होता है।

महात्माजीकी अस्थियो और चिताभस्मको हमने सारे देशमें जहा भी पवित्र जलाशय है वहा पहुचा दिया। हिमालयके अुस पार कैलासके मार्गमें फैले हुअे मानस-सरोवरमें भी कुछ अवशेष छोड दिये गये। प्रयाग जैसे यज्ञस्थानमें विसर्जित करनेके बाद कुछ अवशेष समुद्र-किनारे भी ले गये, और खास तौर पर ध्यानमें रखनेकी बात तो यह है कि जिस अफ्रीका खडमें गाधीजीने सत्याग्रह जैसे दैवी बलकी खोज की और

अपना जीवन-कार्य शुरू किया, अुस अफ्रीकामें नील नदीके अुद्गमके प्रवाहमें भी अिन अस्थियोंका विसर्जन किया और अिस प्रकार पानीकी सर्वोपरि पवित्रताको स्वीकार किया।

अैसे पानीके पवित्र दर्शनका आनंद जिनमें छलकता हो, अैसे ही वर्णन अिस संग्रहमें लिये गये हैं।

संग्रह करते समय मेरी 'स्मरण-यात्रा' में से अेक छोटासा अध्याय सिर अूचा करके पूछने लगा, "क्या आप मुझे अिसमें नहीं लेंगे?" अनवधानके लिअे अुससे माफी मागकर मैंने कहा "जरूर, जरूर, तेरा भी जीवनलीलामें स्थान होगा।" मानसिक सृष्टि, कल्पना-सृष्टि और मायावी सृष्टि भी अंतमें पार्थिव सृष्टिके साथ सृष्टि तो है ही। अतः मनुष्यकी आशाओं और मृगोंकी आशाओंको जो जलके समान मालूम होता है और जिसका प्रवाह अिन दोनोंको अपनी ओर खींचता है, वह भले प्राणवायु तथा अुद्जन-वायुके संयोगसे बना हुआ न हो, फिर भी जीवनलीलामें अुसका स्थान होना ही चाहिये — यों सोचकर छुटपनमें यात्रा करते समय देखा हुआ 'तेरदालका मृगजल' नामक वर्णन भी अिसमें ले लिया गया है।

सहाराके रेगिस्तानके आसपास दोपहरके समय यदि गया होता, तो अुस विराट् रेगिस्तानका और वहाके मृगजलका वर्णन अिसमें जरूर शामिल करता। किन्तु पश्चिम अफ्रीकासे अुत्तरकी ओर जाते हुअे समय और जान बचानेके लिअे सहाराका पूरा रेगिस्तान मैंने पार किया रातके अंधेरेमें; और वह भी हवाअी जहाजकी मददसे। पश्चिम अफ्रीकाकी मध्ययुगीन नगरी 'कानो' से चलकर मध्यरात्रिके बाद ट्रिपोली पहुचा तब तक सारे समय टकटकी लगाकर मैंने सहाराको देखा। किन्तु अुस रात अंधेरेमें अंधेरेसे भिन्न कुछ दिखाअी नहीं दिया। सहाराका रेगिस्तान पार करने पर भी वहाका मृगजल नहीं देखा जा सका! जब हवाअी जहाजसे अुतरा, तब अितना ही कह सका :

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनम् नभः।

हमारे संस्कृत कवियोंके नदी-वर्णन और स्तोत्रों पर मैं मुग्ध हूं। अिन स्तोत्रोंमें सबसे अधिक तो भक्ति ही नजर आती है। अुनका

शब्द-लालित्य असाधारण होता है। भाषा-प्रवाह मानो नदीके प्रवाहके साथ होड करता है। कही कही अेकाध शब्दमे या समासमें सुदर वर्णन भी आ जाता है। किन्तु कुल मिलाकर ये स्तोत्र वर्णन नही होते, बल्कि केवल माहात्म्य ही होते हैं।

आज हमें यथार्थ वर्णनोकी और शब्दचित्रोकी भूख है। अुनके साथ थोडा *माहात्म्य और चाहे अुतना काव्य आ जाय तो वह अिष्ट* ही होगा। किन्तु वर्णन पढते समय नदी या सरोवरके प्रत्यक्ष दर्शनका थोडा-बहुत सतोष तो मिलना ही चाहिये। वरना जैन पुराणोमें दिये गये नगरियोके वर्णन जैसी बात होगी। ये वर्णन कहीसे अुठाकर किसी भी शहरके साथ जोड दे तो कुछ बिगडेगा नही। अक्सर लेखक वर्णनकी दो-चार पक्तिया लिखकर अीमानदारीके साथ कहते है कि अमुक कहानीमें अमुक नगरीका जो वर्णन आता है अुसीको अुठाकर यहा रख दें। अैसे वर्णन न तो यथार्थ चित्रण माने जा सकते हैं, न माहात्म्य ही माने जा सकते है।

अेक पुराने हिन्दी कविने अेक पहाडी किलेका वर्णन किया है। अुसमें अश्वशालाके साथ गजशालाका भी वर्णन है। भोले कविको सदेह *नही हुआ कि महाराष्ट्रके पहाड पर हाथी जायेंगे किस तरह!* दूसरे अेक स्थान पर बगीचेके वर्णनमें ठडे मुल्कके और गरम मुल्कके, समुद्र-तटके और पहाड परके सब फल और फूलोके पेड-पौधोको अेकत्र कर दिया गया है! और अिसमें खूबी यह कि अिन तमाम फूलोके अेकसाथ खिलनेमें और फलोके अेकसाथ पकनेमें महीनो या ऋतुओंकी कोअी कठिनाअी नहीं पडी हुअी!

सौभाग्यसे अैसे साहित्य-प्रकार अब बद हो गये हैं। फिर भी आजके लेखक प्रत्यक्ष परिचयके अभावमें केवल सामान्य वर्णन लिखते हैं 'आकाशमें तारे चमक रहे थे', 'बगीचेमें तरह तरहके फल खिले थे', 'जगलमें वृक्ष-लताओकी घनी बस्ती थी।' अैसे सामान्य वर्णन लिखकर ही वे सतोष मानते हैं। लेखक आकाशको और वहाके तारोको *पहचानता न हो, अुनके नाम न जानता हो, कौनसे* फूल किस ऋतुमें खिलते हैं यह न जानता हो, किन जगलोमें किस तरहके

पेड़ अुगते हैं और किस तरहके नहीं अुगते आदि जानकारी अुसे न हो, तो फिर वह क्या करे? शब्द-वैभवको फैलाकर अनुभव-दारिद्रय छिपानेका वह चाहे जितना प्रयत्न करे, फिर भी दारिद्रय प्रकट हुअे बिना नहीं रहता।

हमारे देशमें अब यात्राके साधन काफी बढ़ गये हैं और दिनोदिन बढ़ते जा रहे हैं। फोटोग्राफीकी कलाकी अितनी वृद्धि हुअी है कि अब वह ललित-कलाकी कोटिको पहुंचनेका प्रयत्न कर रही है। देश-विदेशकी भाषाओंके यात्रा-वर्णन पढ़कर हमारी कल्पना अुद्दीपित हो सकती है, तो अब हम भारतीय भाषाओंमें पाया जानेवाला केवल यात्रा-वर्णनका दारिद्रय दूर क्यों न करें?

हमारे प्रिय-पूज्य देशको हम साहित्य द्वारा और दूसरे अनेक प्रकारोंसे सजायेंगे और नयी पीढ़ीको भारत-भक्तिकी दीक्षा देंगे।

देशका मतलब केवल जमीन, पानी और अुसके अूपरका आकाश ही नहीं है, बल्कि देशमें बसे हुअे मनुष्य भी हैं। यह जिस तरह हमें जानना चाहिये, अुसी तरह हमारी देशभक्तिमें केवल मानव-प्रेम ही नहीं बल्कि पशु-पक्षी जैसे हमारे स्वजनोंका प्रेम भी शामिल होना चाहिये।

नदी, पहाड़, पर्वतश्रेणी और अुसके अुत्तुंग शिखरोंसे तथा अिन सबके अूपर चमकनेवाले तारोंसे परिचय बढ़ाकर हमें भारत-भक्तिमें अपने पूर्वजोंके साथ होड़ चलानी चाहिये। हमारे पूर्वजोंकी साधनाके कारण गंगाके समान नदियां, हिमालयके समान पहाड़, जगह जगह फैले हुअे हमारे धर्मक्षेत्र, पीपल या बड़के समान महावृक्ष, तुलसीके समान पौधे, गायके जैसे जानवर, गरुड़ या मोरके जैसे पक्षी, गोपीचंदन या गेरूके जैसे मिट्टीके प्रकार — सब जिस देशमें भक्ति और आदरके विषय बन गये हैं, अुस देशमें संस्कारोंकी और भावनाओंकी समृद्धि बढ़ाना हमारे जमानेका कर्तव्य है।

दादाभाजी नौरोजी पुण्यतिथि, काका कालेलकर
बम्बअी, १–६–'५६

सरिता-संस्कृति

जो भूमि केवल वर्षाके पानीसे ही सींची जाती है और जहा वर्षाके आधार पर ही खेती हुआ करती है, अुस भूमिको 'देव-मातृक' कहते हैं। अिसके विपरीत, जो भूमि अिस प्रकार वर्षा पर आधार नही रखती, बल्कि नदीके पानीसे सींची जाती है और निश्चित फसल देती है, अुसे 'नदी-मातृक' कहते हैं। भारतवर्षमें जिन लोगोंने भूमिके अिस प्रकार दो हिस्से किये, अुन्होंने नदीको कितना महत्त्व दिया था यह हम आसानीसे समझ सकते हैं। पजावका नाम ही अुन्होंने सप्तसिधु रखा। गगा-यमुनाके बीचके प्रदेशोको अतर्वेदी (दोआब) नाम दिया। सारे भारतवर्षके 'हिन्दुस्तान' और 'दक्खन' जैसे दो हिस्से करनेवाले विन्ध्याचल या सतपुडेका नाम लेनेके बदले हमारे लोग सकल्प बोलते समय 'गोदावर्या दक्षिणे तीरे' या 'रेवाया अुत्तरे तीरे' अैसे नदीके द्वारा देशके भाग करते हैं। कुछ विद्वान ब्राह्मण-कुलोने तो अपनी जातिका नाम ही अेक नदीके नाम पर रखा है — सारस्वत। गगाके तट पर रहनेवाले पुरोहित और पडे अपने-आपको गगापुत्र कहनेमें गर्व अनुभव करते हैं। राजाको राज्यपद देते समय प्रजा जब चार समुद्रोका और सात नदियोका जल लाकर अुससे राजाका अभिषेक करती, तभी मानती थी कि अब राजा राज्य करनेके लिअे अधिकारी हो गया। भगवानकी नित्यकी पूजा करते समय भी भारतवासी भारतकी सभी नदियोको अपने छोटेसे कलशमें आकर बैठनेकी प्रार्थना अवश्य करेगा

गगे! च यमुने! चैव गोदावरि! सरस्वति!।
नर्मदे! सिंधु! कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधि कुरु॥

भारतवासी जब तीर्थयात्राके लिअे जाता है तब भी अधिकतर वह नदीके ही दर्शन करनेके लिअे जाता है। तीर्थका मतलब है नदीका छैछल या घाट। नदीको देखते ही अुसे अिस बातका होश नही रहता *कि जिस नदीमें स्नान करके वह पवित्र होता है अुसे अभिषेककी क्या* आवश्यकता है? गगाका ही पानी लेकर गगाको अभिषेक किये बिना अुसकी भक्तिको सतोष नही मिलता। सीताजी जब रामचद्रजीके साथ

वनवासके लिअे निकल पड़ी, तब वे हर नदीको पार करते समय मनौती मनाती जाती थीं कि वनवाससे सही-सलामत वापस लौटने पर हम तुम्हारा अभिषेक करेंगे। मनुष्य जब मर जाता है, तब भी अुसे वैतरणी नदीको पार करना पड़ता है। थोड़ेमें, जीवन और मृत्यु दोनोंमें आर्योंका जीवन नदीके साथ जुड़ा हुआ है।

अुनकी मुख्य नदी तो है गंगा। वह केवल पृथ्वी पर ही नहीं, बल्कि स्वर्गमें भी बहती है और पातालमें भी बहती है। अिसीलिअे वे गंगाको त्रिपथगा कहते हैं।

पाप धोकर जीवनमें आमूलाग्र परिवर्तन करना हो, तब भी मनुष्य नदीमें जाता है और कमर तक पानीमें खड़ा रहकर संकल्प करता है, तभी अुसको विश्वास होता है कि अब अुसका संकल्प पूरा होनेवाला है। वेदकालके ऋषियोंसे लेकर व्यास, वाल्मीकि, शुक, कालिदास, भवभूति, क्षेमेंद्र, जगन्नाथ तक किसी भी संस्कृत कविको ले लीजिये, नदीको देखते ही अुसकी प्रतिभा पूरे वेगसे बहने लगती है। हमारी किसी भी भाषाकी कवितायें देख लीजिये, अुनमें नदीके स्तोत्र अवश्य मिलेंगे। और हिन्दुस्तानकी भोली जनताके लोकगीतोंमें भी आपको नदीके वर्णन कम नहीं मिलेंगे।

गाय, बैल और घोड़े जैसे अुपयोगी पशुओंकी जातियां तय करते समय भी हमारे लोगोंको नदीका ही स्मरण होता है। अच्छे अच्छे घोड़े सिंधुके तट पर पाले जाते थे; अिसलिअे घोड़ोंका नाम ही सैंधव पड़ गया। महाराष्ट्रके प्रख्यात टट्टू भीमा नदीके किनारे पाले जाते थे, अतः वे भीमथड़ीके टट्टू कहलाये। महाराष्ट्रकी अच्छा दूध देनेवाली और सुंदर गायोंको अंग्रेज आज भी 'कृष्णावेली ब्रीड' कहते हैं।

जिस प्रकार ग्राम्य पशुओंकी जातिके नाम नदी परसे रखे गये हैं, अुसी प्रकार कअी नदियोंके नाम पशु-पक्षियों परसे रखे गये हैं। जैसे : गो-दा, गो-मती, साबर-मती, हाथ-मती, बाघ-मती, सारस्वती, चर्मण्वती आदि।

महादेवकी पूजाके लिअे प्रतीकके रूपमें जो गोल चिकने पत्थर (बाण) अुपयोगमें लाये जाते हैं, वे नर्मदाके ही होने चाहिये। नर्मदाका

माहात्म्य अितना अधिक है कि वहाके जितने ककर अुतन सब शकर होते है। और वैष्णवोके शालिग्राम गडकी नदीसे आते हैं।

तमसा नदी विश्वामित्रकी बहन मानी जाती है तो कालिन्दी यमुना प्रत्यक्ष कालभगवान यमराजकी बहन है।

प्रत्येक नदीका अर्थ है सस्कृतिका प्रवाह। प्रत्येककी खबी अलग है। मगर भारतीय सस्कृति विविधतामें से अेकताको अुत्पन्न करती है। अत सभी नदियोको हमने सागर-पत्नी कहा है। समुद्रके अनेक नामोमें अुसका सरित्पति नाम बडे महत्त्वका है। समुद्रका जल अिसी कारण पवित्र माना जाता है कि सब नदिया अपना अपना पवित्र जल सागरको अर्पण करती है। 'सागरे सर्वं तीर्थानि'।

जहा दो नदियोका सगम होता है अुस स्थानको प्रयाग कहकर हम पूजते है। यह पूजा हम केवल अिसीलिअे करते हैं कि सस्कृतियोका जब मिश्रण या सगम होता है तब अुसे भी हम शुभ-सगम समझना सीखें। स्त्री-पुरुषके बीच जब विवाह होता है तब वह भिन्न-गोत्री ही होना चाहिये, अैसा आग्रह रखकर हमने यही सूचित किया है कि अेक ही अपरिवर्तनशील सस्कृतिमें सडते रहना श्रेयस्कर नही है। भिन्न भिन्न सस्कृतियोके बीच मेलजोल पैदा करनेकी कला हमें आनी ही चाहिये। लकाकी कन्या घोघा (सौराष्ट्र) के लडकेके साथ विवाह करती है', तभी अुन दोनोमें जीवनके सब प्रश्नोके प्रति अुदार दृष्टिसे देखनेकी शक्ति आती है। भारतीय सस्कृति पहलेसे ही सगम-सस्कृति रही है। हमारे राजपुत्र दूर दूरकी कन्याओसे विवाह करते थे। केकय देशकी कैकेयी, गाधारकी गाधारी, कामरूपकी चित्रागदा, ठेठ दक्षिणकी मीनाक्षी मीनलदेवी, बिलकुल विदेशसे आयी हुअी अुर्वशी और महाश्वेता — अिस तरह कअी मिसालें बताअी जा सकती हैं। आज भी राजा-महाराजा यथासभव दूर दूरकी कन्याओसे विवाह करते है। हमने नदियोसे ही *यह सगम-सस्कृति सीखी है।*

अपनी अपनी नदीके प्रति हम सच्चे रहकर चलेंगे, तो अतत समुद्रमें पहुच जायेंगे। वहा कोअी भेदभाव नही रह सकता। सब कुछ अेकाकार, सर्वाकार और निराकार हो जाता है। 'सा काष्ठा सा परा गति'।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

सुबह या शामके समय नदीके किनारे जाकर आरामसे बैठने पर मनमें तरह तरहके विचार आते हैं। बालूका शुभ्र विशाल पट हमेशा वहीका वही होता है, फिर भी वहांका हरअेक कण पवन या पानीसे स्थानभ्रष्ट होता है। अितनी सारी बालू कहांसे आती है और यहां पानी है? बालूके पट पर चलनेसे अुसमें पांवोंके स्पष्ट या अस्पष्ट निशान बनते हैं। किन्तु घड़ी दो घड़ी हवा चलने पर अुसका 'नामोनिशान' भी नहीं रहता। दो किनारोंकी मर्यादामें रहकर नदी बहती है, वह कभी रुकती नहीं। पानी आता है और जाता है, आता है और जाता है। छुटपनमें मनमें विचार आता था कि 'मध्यरात्रिके समय यह पानी सो जाता होगा और सुबह सबसे पहले जागकर फिरसे बहने लगता होगा। सूरज, चांद और अनगिनत तारे जिस प्रकार विश्रांति लेनेके लिअे पश्चिमकी ओर अुतरते हैं, अुसी प्रकार यह पानी भी रातको सो जाता होगा। विश्रांतिकी हरेकको आवश्यकता रहती है।' बादमें देखा, नहीं, नदीके पानीको विश्रांतिकी आवश्यकता नहीं है। यह तो निरन्तर बहता ही रहता है।

नदीको देखते ही मनमें विचार आता है — यह आती कहांसे है और जाती कहां तक है? यह विचार या यह प्रश्न सनातन है। नदीका आदि और अंत होना ही चाहिये। नदीको जितनी बार देखते हैं, अुतनी ही बार यह सवाल मनमें अुठता है। और यह सवाल ज्यों ज्यों पुराना होता जाता है, त्यों त्यों अधिक गंभीर, अधिक काव्यमय और अधिक गूढ़ बनता जाता है। अंतमें मनसे रहा नहीं जाता, पैर रुक नहीं पाते। मन अेकाग्र होकर प्रेरणा देता है और पैर चलने लगते हैं। आदि और अंत ढूंढना — यह सनातन खोज हमें शायद नदीसे ही मिली होगी। अिसीलिअे हम जीवन-प्रवाहको भी नदीकी अुपमा देते आये हैं। अुपनिषत्कार और अन्य भारतीय कवि, मैथ्यू आर्नोल्ड जैसे युरोपियन कवि और रोमां रोलां जैसे अुपन्यासकार जीवनको नदीकी ही अुपमा

देते हैं। अिस ससारका प्रथम यात्री है नदी। अिसीलिअे पुराने यात्री लोगोने नदीके अुद्गम, नदीके सगम और नदीके मुखको अत्यत पवित्र स्थान माना है।

जीवनके प्रतीकके समान नदी कहासे आती है और कहा तक जाती है? शून्यमें से आती है और अनतमें समा जाती है। शून्य यानी अत्यल्प, सूक्ष्म किन्तु प्रबल, और अनतके मानी हैं विशाल और शात। शून्य और अनत, दोनो अेकसे गूढ हैं दोनो अमर हैं। दोनो अेक ही हैं। शून्यमें से अनत — यह सनातन लीला है। कौशल्या या देवकीके प्रेममें समा जानेके लिअे जिस प्रकार परब्रह्मने बालरूप धारण किया, अुसी प्रकार कारुण्यसे प्रेरित होकर अनत स्वय शून्यरूप धारण करके हमारे सामने खडा रहता है। जैसे जैसे हमारी आकलन-शक्ति बढती है, वैसे वैसे शून्यका विकास होता जाता है और अपना ही विकास-वेग सहन न होनेसे वह मर्यादाका अुल्लघन करके या अुसे तोडकर अनत बन जाता है — बिंदुका सिंधु बन जाता है।

मानव-जीवनकी भी यही दशा है। व्यक्तिसे कुटुब, कुटुबसे जाति, जातिसे राष्ट्र, राष्ट्रसे मानव्य और मानव्यसे भूमा विश्व — अिस प्रकार हृदयकी भावनाओका विकास होता जाता है। स्व-भाषाके द्वारा हम प्रथम स्वजनोका हृदय समझ लेते हैं और अतमें सारे विश्वका आकलन कर लेते हैं। गावसे प्रान्त, प्रान्तसे देश और देशसे विश्व, अिस प्रकार हम 'स्व' का विकास करते करते 'सर्व' में समा जाते हैं।

नदीका और जीवनका क्रम समान ही है। नदी स्वधर्म-निष्ठ रहती है और अपनी कूल-मर्यादाकी रक्षा करती है, अिसीलिअे प्रगति करती है। और अतमें नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती है। अस्त होने पर भी वह स्थगित या नष्ट नही होती, चलती ही रहती है। यह है नदीका क्रम। जीवनका और जीवन्मुक्तिका भी यही क्रम है।

क्या अिस परसे हम जीवनदायी शिक्षाके क्रमके बारेमें बोध लेंगे?

१९२२

अुपस्थान*

भिन्न भिन्न अवसरों पर भारतवर्षकी जिन नदियोंके दर्शन मैंने किये, अुनमें से कुछ नदियोंका यहां स्मरण किया गया है। यहां मेरा अुद्देश भूगोलमें दी जानेवाली जानकारीका संग्रह करनेका नहीं है, न नदियोंका हमारे व्यापार-वाणिज्य पर होनेवाला असर बतानेका यहां प्रयत्न है। *यह तो केवल हमारे देशकी लोकमाताओंका भक्तिपूर्वक* किया हुआ नये प्रकारका अुपस्थान है।

हमारे पूर्वजोंकी नदी-भक्ति लोक-विश्रुत है। आज भी वह क्षीण नहीं हुआी है। यात्रियोंकी छोटी-बड़ी नदियां तीर्थस्थानोंकी ओर बहकर यही सिद्ध करती हैं कि यह प्राचीन भक्ति आज भी जैसीकी वैसी जाग्रत है।

भक्त-हृदय भक्तिके अिन अुद्गारोंका श्रवण करके संतुष्ट हों। युवकोंमें लोकमाताओंके दर्शन करनेकी और विविध ढंगसे अुनका स्तन्यपान करके संस्कृति-पुष्ट होनेकी लगन जाग्रत हो।

*   *   *

हिन्दुस्तानके सभी सुन्दर स्थलोंका वर्णन करना मानव-शक्तिके बाहरकी बात है। खुद भगवान व्यास जब भारतकी नदियोंके नाम गुनाने बैठे, तब अुनको भी कहना पड़ा कि जितनी नदियां याद आयीं अुन्हींका यहां नाम-संकीर्तन किया गया है। बाकीकी असंख्य नदियां रह गयी हैं।

मेरी देखी हुआी *नदियोंमें से बन सके अुतनी नदियोंका स्मरण* और वर्णन करके पावन होनेका मेरा संकल्प था। आज जब अिस भक्ति-कुसुमांजलिको देखता हूं, तो मनमें विषाद पैदा होता है कि कृतज्ञता व्यक्त हो सके अुतनी नदियोंका भी अुपस्थान मैं कर नहीं सका हूं। जिनका वर्णन नहीं कर सका, अुन्हीं नदियोंकी संख्या अधिक है। जिस प्रान्तमें मैं करीब पाव सदी तक रहा, अुस गुजरातकी नदियोंका वर्णन भी मैंने नहीं किया है। नर्मदा और साबरमतीके बारेमें तो अभी अभी कुछ लिख सका हूं। ताप्ती या तपतीके बारेमें कुछन हीं लिखा। अुसका परिताप मनमें है ही। अिस नदीका अुद्गम-स्थान मध्यप्रान्तमें बैतूलके पास है। बरहानपुर और भुसावल

* मूल गुजराती पुस्तक 'लोकमाता' की प्रस्तावनासे।

होकर वह आगे बढती है। अुसकी मदद लेकर अेक बार मैं सूरतसे हजीरा तक हो आया हू। ताप्तीसे भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके बारेमें पूछा जा सकता है और अंग्रेजोंने व्यापारके बहाने सूरतमें कोठी किस प्रकार डाली और बाजीरावने यही महाराष्ट्रका स्वातंत्र्य अंग्रेजोको कब सौंप दिया, अिसके बारेमें भी पूछा जा सकता है।

गोधरा जाते समय जो छोटी-सी मही नदी मैंने देखी थी, वही खभातसे कावी बदरगाह तक महाप्रक कीचडका विस्तार किस तरह फैला सकती है, यह देखनेका सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ है। पूर्वकी महानदी और पश्चिमकी मही नदी, दोनोका कार्य विशेष प्रकारका है। सूर्या, दमणगगा, कोलक, अबिका, विश्वामित्री, कीम आदि अनेक पश्चिम-वाहिनी नदियोका मीठा आतिथ्य मैंने कभी न कभी चखा है। अुन्हें यदि अजलि अर्पण न करू तो मैं कृतघ्न माना जाअूगा। और जिस साजीके किनारे महात्माजीने छुटपनकी शरारतें की थी, वह तो खास तौर पर मेरी अजलिकी अधिकारिणी है। वढवाणकी भोगावोके बारेमें मैंने शायद कही लिखा होगा। किन्तु वह भोगावोकी अपेक्षा राणकदेवीके स्मरणके तौर पर ही होगा।

गुजरातके बाहर नजर घुमाकर दूसरी नदियोका स्मरण करता हू, तब प्रथम याद आता है सबसे बडा ब्रह्मपुत्र। अुसका अुद्गम-स्थान तो हिमालयके अुस पार मानस-सरोवरके प्रदेशमें है। हिमालयके अुत्तरकी ओर बहते हुअे पानीकी अेक अेक बूद अिकट्ठी करके वह हिमालयकी सारी दीवार पार करता है और पहाडो तथा जगलोके अज्ञात प्रदेशोमें बहता हुआ आसामकी ओर अुन्हें छोड देता है। बादमें सदिया, डिब्रुगढ, तेजपुर, गौहाटी, ढुब्री आदि स्थानोको पावन करता हुआ वह बगालमें अुतरता है। और अुसे गगासे मिलना है, अिसी कारण वह कुछ दूरी तक यमुना नाम धारण करते हुअे आगे पद्मा बनता है। 'अितिहासके अुषाकाल' से लेकर जापानियोके अभी अभीके आक्रमण तकका सारा अितिहास ब्रह्मपुत्रको विदित है। किन्तु अिस ताजे अितिहासके कअी प्रकरण तो मणिपुरकी अिम्फाल नदी ही बता सकती है। फिर भी अिस नदीको पूछने पर वह कहेगी कि मुझसे

पूछनेके बदले यह सब आपकी अैरावतीकी सखी छिंदवीनसे ही पूछ लीजिये। और मणिपुरकी ओरसे भामग्र आये हुअे लोगोंसे कुछ अितिहास तो सुर्मा-घाटीकी बराक नदीसे ही पूछना होगा।

मैंने नदिया तो कअी देखी है। किन्तु जिसकी गूढ़-गामिता और चिंता-रहित लापरवाही पर मैं सबसे अधिक मुग्ध हुआ हू, वह है कालीम्पोंग तरफकी तीस्ता नदी। कैसा तो अुसका अुन्माद! और कैसा अुसका आत्म-गौरवका भान!

अुत्कलमें मैं अनेक बार हो आया हू। वहांकी महानदी, काटजुडी और काठ्जेया तो है ही। किन्तु खरी-कटकसे वापस लौटते समय स्र-स्रोताके किनारे देखा हुआ सूर्योदय और अन्य अवसर पर सुना हुआ ऋषिकुल्या नदीका अितिहास तथा अुसके किनारेका सौदर्य मैं भला कैसे भूल सकता हूं? जौगढ़का अशोकका प्रख्यात शिलालेख देखने गया था, तब मैंने ऋषिकुल्याके दर्शन किये थे; और यदि मैं भलता न होअू तो धवलीका हाथीवाला शिलालेख देखने गया था, तब अेक नदीकी दो नदिया बनती हुअी मैंने देखी थी। दो नदियोंका सगम देखना अेक बात है। दो नदिया अिकट्ठी होकर अपनी जलराशि बढ़ाती हैं और संभूय-समुत्थानके सिद्धातके अनुसार बडा व्यापार करती हैं। यह तो शक्ति बढ़ानेका प्रयास है। किन्तु अेक ही नदी दूरसे आकर जब देखती है कि दोनों ओरके प्रदेशको मेरे जलकी अुतनी ही आवश्यकता है, तब भला वह किसका पक्षपात करे? अपना जल बाटकर जब दो प्रवाहोंमें वह बहने लगती है, तब दो बच्चोंकी माताके जैसी मालूम होती है। अुसको विशेष भक्तिपूर्वक प्रणाम किये बिना रहा नहीं जा सकता।

क्या आपने काली नदीके सफेद होनेकी बात कभी सुनी है? छुटपनमें कारवारमें मैंने अेक काली नदी देखी थी। वह समुद्रसे मिलती है तब तक काली ही काली रहती है। किन्तु गोवाकी ओर अेक काली नदी है, जो सागरसे मिलनेकी आतुरताके कारण पहाडकी चोटी परसे नीचे अिस तरह कूदती है कि अुसका दूधके समान काव्यमय सफेद प्रपात बन जाता है। अुसका नाम ही दूधसागर पड गया है। अिस दूधसागरका दृश्य अैसा है, मानो किसी लडकीने नहानेके बाद सुखानेके

लिअे अपने बाल फैलाये हो। शरावतीके जोगके प्रपातका वर्णन मैंने तीन बार किया है, तो दूधसागरके गभीर ललित काव्यका मनन मुझे दस बार करना चाहिये था।

हिमालय जाते समय देखी हुअी रामगगाका और हिमालयके अुस पारसे आनेवाली सरयू घाघराका वर्णन तो रह ही गया है। किन्तु लका (सीलोन) में देखी हुअी सीतावाका और अन्य दो तीन गगाओंके बारेमें भी मैंने कहा लिखा है? मध्यप्रातमें देखी हुअी धसानके बारेमें मैंने लिखा और वेत्रवतीको छोड दिया, यह भला कैसे चल सकता है? अुज्जयिनी जाते समय देखी हुअी शिप्रा नदीको स्मरणाजलि न दू, तो कालिदास ही मुझे शाप देंगे। मुरादाबादमें देखी हुअी गोमतीका स्मरण करते ही द्वारकाकी गोमतीका स्मरण हो आता है और अिसी न्यायसे सिंधकी सिंधुके साथ मध्यभारतकी नन्ही-सी सिंधुकी भी याद हो आती है।

काठियावाडमें चोरवाडके पास समुद्रसे मिलने जाते जाते बीचमें ही रुक जानेवाली मेगल नदी मैंने देखी नही है। किन्तु अिसी प्रकारकी अेक नदी अड्यार मद्रासके पास मैंने देखी है, जिसकी समुद्रसे बनती नही। अड्यार नदी समुद्रकी ओर हृदय-समृद्धिका खाद या गाद लेकर आती है और समुद्र चिढ़कर अुसके सामने बालूका अेक बाध खडा कर देता है। खडितावा यह दृश्य अितना करुण है कि अुसका असर बरसो तक मेरे मन पर रहा है।

अिससे तो केरलके 'बैंक वॉटर' अच्छे हैं। वहा समुद्रके समानान्तर, किनारे किनारे अेक लबी नदी फैली हुअी है, मानो समुद्रसे कह रही हो कि तुम्हारे खारे पानीके तूफान मैं भारतकी भूमि तक पहुचने नही दूगी।

अिसका अेक छोटा-सा नमूना हमें जुहूकी ओर देखनेको मिलता है। जुहूके नारियलवाले प्रदेशके पश्चिममें समुद्र है, और पूर्वकी ओर कभी कभी पानी फैला हुआ दीख पडता है। यही स्थिति यदि हमेशाकी हो जाये और पानी यदि अुत्तर-दक्षिणकी ओर सौ पचास मील तक फैल जाये, तो बबअीके लोगोंको केरलके 'बैंक वॉटर्स' का कुछ खयाल हो सकेगा। किन्तु केरलके अुस हिस्सेका नृष्टि-सौन्दर्य प्रत्यक्ष देखे बिना ध्यानमें नही आयेगा।

सिंधके कमल-सुंदर मचर सरोवरके बारेमें मैंने थोड़ा-सा लिखा है। किन्तु अुत्कलमें देखे हुअे चिल्का सरोवरके बारेमें लिखना अभी बाकी है। लॉर्ड कर्जनने अेक बार कहा था कि "हिन्दुस्तानमें श्रेष्ठ सौंदर्य-धाम यदि कोअी हो तो वह चिल्का सरोवर ही है।" स्वीडन और नार्वेके समुद्र-शाखाके चित्र जब जब मैं देखता हू, तब तब मुझे अेक बार देखे हुअे चिल्का सरोवरका स्मरण हुअे बिना नहीं रहता। अुत्कलके अेक कविने अिस सरोवर पर अेक सुन्दर सुदीर्घ काव्य लिखा है।

*   *   *

नदियों और सरोवरोंके बारेमें लिखनेके बाद जीवन-तर्पण पूरा करनेके लिअे मुझे हिन्दुस्तान, ब्रह्मदेश और सीलोनके किनारे किये हुअे विशिष्ट समुद्र-दर्शनोंका वर्णन भी लिख डालना चाहिये। कराची, कच्छ और काठियावाड़से लेकर बम्बअी, दाभोळ, कारवार या गोकर्ण तकका समुद्र-तट, अुसके बाद कालिकटसे लेकर रामेश्वरम् और कन्याकुमारी तकका दक्षिणका किनारा, वहांसे अूपर पांडिचेरी, मद्रास, मछलीपट्टम्, विजगापट्टम् आदि सूर्योदयका पूर्व किनारा और अंतमें गोपालपुर, चांदीपुर, कोणार्क और पुरी-जगन्नाथसे लेकर ठेठ हीराबंदर तकका दक्षिणाभिमुख समुद्र-तट जब याद आता है, तब कमसे कम पचास-पचहत्तर दृश्य अेक ही साथ नजरके सामने विश्वरूप दर्शनकी तरह अद्भुत ज्वार-भाटा चलाते हैं। सीलोन और रंगूनके दृश्य तो अपना व्यक्तित्व रखते ही हैं। दिलमें यह सारा आनंद अितना भरा हुआ है कि वाणीके द्वारा अुसे अेकसाथ यदि बहा दूं, तो समुद्रसे निकलकर अनेक दिशाओंमें बहनेवाली अेक नयी अलौकिक सरस्वती पैदा हो जायगी। कुछ नहीं तो दिलको हलका करनेके लिअे ही अिन सब संस्मरणोंको गति देनी होगी।

हिन्दुस्तानके पहाड़ और जंगल, रेगिस्तान और मैदान, शहर और गांव, सब प्रतीक्षा कर रहे हैं। गांवोंका पुरस्कार करनेके हेतु मैं शहरोंकी कितनी ही निन्दा क्यों न करूं और काम पूरा होनेके पहले ही शहरोंसे भागनेकी अिच्छा भी क्यों न करूं, फिर भी शहरोंका व्यक्तित्व मैं पहचान सकता हूं। अुनके प्रति भी मैं प्रेम-भक्तिका भाव रखता हूं। क्या भारतके सब शहर मेरे देशवासियोंके पुरुषार्थके प्रतीक नहीं

है? क्या शहरोंमें संस्कारिताकी पेढियां हमारे लोगोंने स्थापित नही की हैं? क्या हरेक शहरने अपना वायुमडल, अपनी टेक, अपना पुरुषार्थ अखड रूपसे नही चलाया है? शहर यदि गावोंके भक्षक या शोषक मिटकर अनुके पोषक बन जायें, तो अुन्हें भी हरेक समाज-हितचिंतकके आशीर्वाद मिले बिना नही रहेंगे।

मेरी दृष्टिसे तो हिन्दुस्तानमें देखे हुअे अनेकानेक स्मशान भी मेरी भक्तिके विषय हैं। फिर वह चाहे हरिश्चद्र द्वारा रक्षित काशीका स्मशान हो, दिल्लीके आसपासके अनेक राजधानियोंके स्मशान हो, या महायुद्धके बाद अभी आसाममें देखे हुअे मृतक हवाअी जहाजोंके अवशेष-रूप दो तीन चमकीले स्मशान हो। स्मशान तो स्मशान ही है। अुन्हें देखते ही मनुष्योंके तथा राजवशोंके, साम्राज्योंके और सस्कृतियोंके जन्म-मरणके बारेमें गहरे विचार मनमें अुठे बिना नही रह सकते।

जिसमें खुद मुझे जाना है, अुस अेक स्मशानको छोडकर बाकीके सब स्मशानोंका वर्णन करनेकी अिच्छा हो आती है। यह यदि सभव न हो तो जिस प्रकार युद्धमें 'काम आये हुअे' अज्ञात वीरोंको और श्राद्धके समय अज्ञात सबधियोंको अेक सामान्य पिंड या अजलि अर्पण की जाती है, अुसी प्रकार हरिश्चन्द्र, विक्रम, भर्तृहरि और महादेवके अुपासक असख्य योगियोंने जिस स्मशानको अपना निवास बनाया, अुस प्रातिनिधिक 'सर्व-सामान्य स्मशान' को अेक अजलि अर्पण करनेकी अिच्छा तो है ही।

क्या यह सब मै कर सकूगा? मुझे असकी चिंता नही है। अैसी बात नही है कि सिर्फ अीश्वर ही अवतार धारण करता है। जिस जिसके मनमें सकल्प अुठते हैं, अुस अुसको अवतार लेने ही पडते हैं। यह भी माननेकी आवश्यकता नही है कि अेक ही जीवात्मा अनेक अवतार धारण करता है। अवतार धारण करना पडता है अदम्य सकल्पको। अदम्य सकल्प ही सच्चा विधाता है। सकल्प पैदा हुआ कि अुसमें से सृष्टि अुत्पन्न होगी ही। फिर वह भले ब्रह्मदेवकी पार्थिव सृष्टि हो, साहित्यकी शब्द-सृष्टि हो, या केवल कल्पनाकी चित्र-सृष्टि हो।

अिस सृष्टिके द्वारा जीवन-देवता अपना अनत-विध अुल्लास प्रकट करता ही रहता है।

अनुक्रमणिका

जीवनलीला

अेक विनती

'जीवनलीला' के प्रास्ताविक चार लेखोसे सम्बन्ध रखनेवाले 'अनुबन्ध' की टिप्पणियो तथा 'सूची' के शब्दोके साथ पृ० ५ से पृ० १८ तक की जो पृष्ठसख्या दी गअी है, अुसमें १७ के सिवा प्रत्येक सख्याके साथ अेक-अेक अक और जोड कर पढनेकी कृपा करे।

'सभ्य-समुत्थानका सिद्धान्त' टिप्पणीका पृष्ठ १७ के बजाय १८ पढा जाय।

सखी मार्कण्डी

क्या हरअेक नदी माता ही होती है? नहीं। मार्कण्डी तो मेरी छुटपनकी सखी है। वह अितनी छोटी है कि मैं अुसे अपनी बड़ी बहन भी नहीं कह सकता।

बेलगुदीके हमारे खेतमें गूलरके पेड़के नीचे दुपहरकी छायामें जाकर बैठूं तो मार्कण्डीका मंद पवन मुझे जरूर बुलायेगा। मार्कण्डीके किनारे मैं कअी बार बैठा हू, और पवनकी लहरोंसे डोलती हुअी घासकी पत्तियोंको मैंने घटों तक निहारा है। मार्कण्डीके किनारे असाधारण अद्‌भुत कुछ भी नहीं है। न कोअी खास किस्मके फूल हैं, न तरह तरहके रंगोंकी तितलिया हैं। सुन्दर पत्थर भी वहा नहीं हैं। अपने कलकूजनसे चित्तको बेचैन कर डालें अैसे छोटे-बड़े प्रपात भला वहा कहांसे हों? वहा है केवल स्निग्ध शांति।

गडरिये बताते हैं कि मार्कण्डी वैजनाथके पहाड़से आती है। अुसका अुद्‌गम खोजनेकी अिच्छा मुझे कभी नहीं हुअी। हमारे तालुकेका नक्शा हाथमें आ जाय तो भी अुसमें मार्कण्डीकी रेखा मैं नहीं खोजूगा। क्योंकि वैसा करनेसे वह सखी मिटकर नदी बन जायगी! मुझे तो अुसके पानीमें अपने पाव छोड़कर बैठना ही पसद है। पानीमें पाव डाला कि फौरन अुसकी कलकल कलकल आवाज शुरू हो जाती है। छुटपनमें हम दोनों कितनी ही बातें किया करते थे। अेक दूसरेका सहवास ही हमारे आनंदके लिअे काफी हो जाता था। मार्कण्डी क्या बता रही है यह जाननेकी परवाह न मुझे थी, न मैं जो कुछ बोलता हू अुसका अर्थ समझनेके लिअे वह रुकती थी। हम अेक-दूसरेसे बोल रहे हैं, अितना ही हम दोनोंके लिअे काफी था। भाअी-बहन जब बरसों बाद मिलते हैं, तब अेक-दूसरेसे हजारों सवाल पूछा करते हैं। किन्तु अिन सवालोंके पीछे जिज्ञासा नहीं होती। वह तो प्रेम व्यक्त करनेका केवल

अेक तरीका होता है। प्रश्न क्या पूछा और अुत्तर क्या मिला, अिस ओर ध्यान दे सके अितना स्वस्थ चित्त भला प्रेम-मिलनके समय कैसे हो?

मार्कण्डीके किनारे किनारे मैं गाता हुआ घूमता और मार्कण्डी अुन गीतोंको सुनती जाती। सोलहवें वर्षकी आयुमें शिव-भक्तिके बल पर जिन्होंने यमराजको पीछे ढकेल दिया अुन मार्कण्डेय ऋषिका अुपाख्यान गाते समय मुझे कितना आनंद मालूम होता था!

मृकंडु ऋषिके कोअी सन्तान न थी। अुन्होंने तपश्चर्या की और महादेवजीको प्रसन्न किया। महादेवजीने वरदानमें विकल्प रखा।

गाध सुंदर शाहणा गुण तया सोळाच वर्षे मिती
जो या मूढ कुरूप तो शतवरी वर्षे असे स्व-स्थिती
या दोहींत जसा मनात रुचला तो म्या तुम्हां दीधला.

(अेक लड़का साधुचरित, खूबसूरत और सयाना होगा। किन्तु अुसकी आयु सिर्फ सोलह सालकी होगी। दूसरा मूढ़ और बदसूरत होगा। अुसकी आयु सौ सालकी होगी। मगर वह अुम्रभर जैसाका वैसा ही रहेगा। अिन दोनोंमें से जो तुम्हें पसंद हो, सो मैं दूंगा।)

अब अिन दोनोंमें से कौनसा पसंद करें? ऋषिने धर्मपत्नीसे पूछा। दोनोंने सोचा, बालक भले सोलह वर्ष ही जिये किन्तु वह सद्‌गुणी हो। वही कुलका अुद्धार करेगा। दोनोंने वही वर माग लिया। मार्कण्डेय अुम्रमें ज्यों ज्यों खिलता गया त्यों त्यों मा-बापके वदन म्लान होते चले। आखिर सोलह वर्ष पूरे हुअे।

युवक मार्कण्डेय पूजामें बैठा है। यमराज अपने पाड़े पर बैठकर आये। किन्तु शिवलिंगसे भेंटे हुअे युवा तापसको छूनेकी हिम्मत अुन्हें कैसे हो? हां, ना करते करते अुन्होंने आखिर पाश फेंका। अुधर लिंगसे त्रिशूलधारी शिवजी प्रकट हुअे। और अपनी धृष्टताके लिअे यमराजको भला-बुरा बहुत कुछ सुनना पड़ा। मृत्युंजय महादेवजीके दर्शन करनेके बाद मार्कण्डेयको मृत्युका डर कैसे हो सकता है? अुसकी आयुधारा अब तक बह रही है।

आगे जाकर जब मैं कॉलेजमे पढने लगा तब अिम्तहानके बाद हमारी भाअी-दूज होती। फसल काटनेके दिन होते। दो दो दिन खेतमे ही बिताने पडते। तब मार्कण्डी मुझे शक्कर भी खिलाती और अमृत जैसा पानी भी पिलाती। जब यह देखनेके लिये मैं जाता कि रातको ठडके मारे वह काप तो नही रही है, तब अपने आशिर्मे वह मुझ मगनदम्न दिखाती।

आज भी जब मैं अपने गाव जाता हू, मार्कण्डीसे बिना मिले नही रहता। किन्तु अब वह पहलेकी भाति मुझसे लाड नही करती। जरा-सा स्मित करके मौन ही धारण करती है। अुसके सुकुमार वदन पर पहलेके जैसा लावण्य नही है। किन्तु अब अुसके स्नेहकी गभीरता बढ गयी है।

अगस्त, १९२८

२

कृष्णाके संस्मरण

१

ग्यारसका दिन था। गाडीमे बैठकर हम माहुली चले। महाराष्ट्रकी राजधानी सातारासे माहुली कुछ दूरी पर है। रास्तेमें दाहिनी तरफ श्री शाहु महाराजके वफादार कुत्तेकी समाधि आती है। रास्ते पर हमारी ही तरह बहुतसे लोग माहुलीकी तरफ गाडिया दौडाते थे। आखिर हम नदीके किनारे पहुचे। वहा अिस पारसे अुस पार तक लोहेकी अेक जर्जर अूची तनी हुअी थी। अुसमें रस्सीसे अेक नाव लटकाअी गअी थी, जो मेरी बाल-आखोको बडी ही भव्य मालूम होती थी।

किनारेके छोटे-बडे ककर कितने चिकने, काले काले और ठडे ठडे थे। हाथमें अेकको लेता तो दूसरे पर नजर पडती। यह पहलेसे अच्छा

मालूम होता। अितनेमें तीसरे भीगे हुअे कगर पर कत्थअी रंगकी लकीरें दीख पड़ती और अुसे अुठानेका दिल हो जाता। अुस दिन कृष्णाका मुझे प्रथम दर्शन हुआ। कृष्णामैयाने भी मुझे पहली ही बार पहचाना। मैं अुसे पहचान लूं अितना बड़ा तो मैं था ही नहीं। बच्चा माको पहचाने अुससे पहले ही मा अुसे अपना बना लेती है। हम बच्चे नंगे होकर खूब नहाये, कूदे, पानी अुछाला, नाव पर चढ़कर पानीमें छलांगें मारीं। कड़ाकेकी भूख लगे अितना कृष्णामें जलविहार किया।

जैसा नदीका यह मेरा पहला ही दर्शन था, वैसा ही नहानेके बाद नमकीन मूंगफलीके नाश्तेका स्वाद भी मेरे लिअे पहला ही था। यात्राके अवसर पर मोरपंखोंकी टोपी पहननेवाले 'वासुदेव' भीख मांगने आये थे। मंजीरेके साथ अुनका मधुर भजन भी अुस दिन पहली ही बार सुना। कृष्णामैयाके मंदिरमें थोड़ा-सा आराम करनेके बाद हम घर लौटे।

सह्याद्रिके कान्तारमें, महाबलेश्वरके पाससे निकलकर सातारा तक दौड़नेमें कृष्णाको बहुत देर नहीं लगती। किन्तु अितनेमें ही वेण्णा कृष्णासे मिलने आती है। अिनके यहांके संगमके कारण ही माहुलीको माहात्म्य प्राप्त हुआ है। दो बालिकाअें अेक-दूसरेके कंधे पर हाथ रखकर मानो खेलने निकली हों, अैसा यह दृश्य मेरे हृदय पर पिछले पैंतीस सालसे अंकित रहा है।

कृष्णाका कुटुम्ब काफी बड़ा है। कअी छोटी-बड़ी नदियां अुससे आ मिलती हैं। गोदावरीके साथ साथ कृष्णाको भी हम 'महाराष्ट्र-माता' कह सकते हैं। जिस समय आजकी मराठी भाषा बोली नहीं जाती थी, अुस समयका सारा महाराष्ट्र कृष्णाके ही घेरेमें अंदर आता था।

२

'नरसोबाकी वाड़ी' जाते समय नाव पर गाड़ी चढ़ाकर हमने कृष्णाको पार किया, तब अुसका दूसरी बार दर्शन हुआ। यहां पर अेक ओर अूंचा कगार और दूसरी ओर दूर तक फैला हुआ कृष्णाका कछार, और अुसमें अुगे हुअे बैंगन, खरबूजे, ककड़ी और तरबूजों

अमृत-खेत! कृष्णाके किनारेके ये बैंगन जिसने अेकाध बार खा लिये, वह स्वर्गमें भी अुनकी अिच्छा करेगा। दो-दो महीने तक लगातार बैंगन खाने पर भी जी नहीं भरता, फिर भला अरुचि तो कैसे हो?

३

सांगलीके पास, कृष्णाके तट पर मैंने पहली ही बार 'रियासती महाराष्ट्र' का राजवैभव देखा। वे आलीशान और विशाल घाट, सुदर और चमकीले बर्तनोंमें भर भर कर पानी ले जाती हुआी महाराष्ट्रकी ललनायें, पानीमें छलाग मारकर किनारे परके लोगोंको भिगानेका हौसला रखनेवाले अखाडेबाज, क्षुद्र घडियाओंकी तालबद्ध आवाजसे अपने आगमनकी सूचना देनेवाले पहाड जैसे हाथी, और कर्र्र्र्र् की अेकश्रुति आवाज निकालकर रसपानका न्योता देनेवाले अीखके कोल्हू— यह था मेरा कृष्णामैयाका तीसरा दर्शन।

मुझे तैरना अच्छी तरह नहीं आता था। फिर भी *अेक बडी* गागर पानीमें औंधी डालकर अुसके सहारे बह जानेके लिअे मैं अेक बार यहा नदीमें अुतर पडा। किन्तु अेक जगह कीचडमें अैसा फसा कि अेक पैर निकालता तो दूसरा और भी अदर धस जाता। और कीचड भी कैसा? मानो काला काला मक्खन! मुझे लगा कि अब जगम न रहकर अुलटे पेडकी तरह यहीं स्थावर हो जाअूगा! अुस दिनकी घबराहट भी मैं अब तक नहीं भूला हू।

४

चिंचली स्टेशन पर पीनेके लिअे हमें हमेशा कृष्णाका पानी मिलता था। हमारे अेक परिचित सज्जन वहा स्टेशनमास्टर थे। वे हमें बडे प्रेमसे अेकाध लोटा पानी मगवाकर देते थे। हम चाहे प्यासे हों या न हों पिताजी हम सबको भक्तिपूर्वक पानी पीनेको कहते। कृष्णा महाराष्ट्रकी आराध्य देवी है। अुसकी अेक बूद भी पेटमें जानेसे हम पावन हो जाते हैं। जिसके पेटमें कृष्णाकी अेक बूद भी पहुच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नहीं सकता। श्रीसमर्थ

रामदास और शिवाजी महाराज, शाहू और बाजीराव, घोरपडे और पटवर्धन, नाना फडनवीस और रामशास्त्री प्रभुणे — थोडेमें कहें तो महाराष्ट्रका नायुत्व और वीरत्व, महाराष्ट्रकी न्यायनिष्ठा और राजनीतिज्ञता, धर्म और सदाचार, देशसेवा और विद्यासेवा, स्वतन्त्रता और अुदारता, सब कुछ कृष्णाके वत्सल कुटुम्बमें परवरिश पाकर फला-फूला है। वेष्ठ और आठदीके जल कृष्णामें ही मिलते हैं। पंढरपुरकी चन्द्रभागा भी भीमा नाम धारण करके कृष्णाको ही मिलती है। 'गंगाका स्नान और तुंगाका पान' अिस कहावतमें जिसके गौरवको स्वीकार किया गया है, वह तुंगभद्रा कर्णाटकके प्राचीन वैभवकी याद करती हुअी कृष्णामें ही लीन होती है। सच कहें तो महाराष्ट्र, कर्णाटक और तेलगण (आंध्र), अिन तीनों प्रदेशोंका अैक्य साधनेके लिअे ही कृष्णा नदी बहती है। अिन तीनों प्रान्तोंने कृष्णाका दूध पिया है। कृष्णामें पक्षपातकी प्रान्तीयता नहीं है।

५

कॉलिजके दिन थे। बडी बडी आशायें लेकर बडे भाअीसे मिलने मैं पूनासे घर गया। किन्तु मेरे पहुंचनेसे पहले ही वे अिहलोक छोड चुके थे। मेरी किस्मतमें कृष्णाके पवित्र जलमें अुनकी अस्थियोंका समर्पण करना ही बदा था। बेलगाममें मैं कुडची गया। मध्याह्नका समय था। रेलके पुलके नीचे कृष्णाकी पूजा की। बडे भाअीकी अस्थियां कृष्णाके अुदरमें अर्पण कीं। नहाया और पलथी मारकर जीवन-मरण पर सोचने लगा।

कृष्णाके पानीमें कितने ही महाराष्ट्रके वीरों और महाराष्ट्रके दुश्मनोंका खून मिला होगा! कराडकी मस्जिदमें कृष्णाने कितने ही विमान और अुनके सवेसियोंको जलसमाधि दी होगी! पर कृष्णाको अिससे क्या? मदोन्मत्त हाथी अुसके जलमें विहार करे और विरक्त साधु अुसके किनारे तपश्चर्या करे, कृष्णाके लिअे दोनों समान हैं। मेरे भाअीकी अस्थियों और पत्थर बनी हुअी पहाडकी अस्थियोंके बीच कृष्णाके मनमें क्या फर्क है? माटुलीमें अपने सपने पर मुझे

खडा करके पानीमें कूदनेके लिअे बढ़ावा देनेवाले बड़े भाअीकी अस्थियां मुझे अपने हाथों अुमी कृष्णाके जलमें समर्पण करनी पड़ीं। जीवनकी लीला कैसी अगम्य है!

६

कृष्णाके अुदरमें मेरा दूसरा अेक भाअी भी समाया हुआ है। ब्रह्मचारी अनंतबुआ मरढेकर हृदयकी भावनासे मेरे सगे छोटे भाअी थे, और देशसेवाके व्रतमें मेरे बड़े भाअी थे। स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा और गोसेवा यह त्रिविध कार्य करते करते अुन्होंने शरीर छोड़ा था। मेरे साथ अुन्होंने गंगोत्री और अमरनाथकी यात्रा की थी। किन्तु कृष्णाके किनारे आकर ही वे अमर हुअे। भक्तिकी धुनमें वे सुध-बुध भूल जाते और कभी जगह ठोकर खाते। अिस बातका मुझे हिमालयकी यात्रामें कभी बार अनुभव हुआ था। मैं बार बार अुनको कोसता। किन्तु वे परवाह नहीं करते। वे तो श्रीसमर्थकी प्रासादिक वाणीकी सात्त्विक मस्तीमें ही रहते। कृष्णाको भी अुन्हें चोसनेकी सूझी होगी। देव-मंदिरकी प्रदक्षिणा करते करते वे अूपरसे अेक दहमें गिर पड़े और देवलोक सिधारे। जब माअीके पयरीले पट परसे बहती गंगाका स्मरण करता हूं, कृष्णामें हर वर्षाकालमें शिरस्नान करते देव-मंदिरके शिखरोंका दर्शन करता हूं, तब कृष्णाके पास मेरा भी यह अेक भाअी हमेशाके लिअे पहुंच गया है अिस बातका स्मरण हुअे बिना नहीं रहता, साथ ही साथ अनंतबुवाकी तपोनिष्ठ किन्तु प्रेम-सुकुमार मूर्तिका दर्शन हुअे बिना भी नहीं रहता।

७

सन् १९२१ का वह साल! भारतवर्षने अेक ही सालके भीतर स्वराज्य सिद्ध करनेका बीड़ा अुठा लिया है। हिन्दू-मुसलमान अेक हो गये हैं। तैंतीस करोड़ देवताओंके समान भारतवासी करोड़ोंकी सख्यामें ही सोचने लगे हैं। स्वराज्यऋषि लोकमान्य तिलकका स्मरण कायम करनेके लिअे 'तिलक स्वराज्य फंड' में अेक करोड़ रुपये अिकट्ठे करने हैं। राष्ट्रसभाके छत्रके नीचे काम करनेवाले सदस्योंकी संख्या भी अेक

करोड बनानी है। और चट-वर्धन श्रीकृष्णके सुदर्शनके समान चरखे भी अिस धर्मभूमिमें अुतनी ही संख्यामें चलवा देने है। भारतपुत्र अिस कामके लिअे बेजवाडेमें अिकट्ठे हुअे हैं। श्री अब्बास साहब, पुणतांबेकर, गिदवाणी और मैं, अेक साथ बेजवाडा पहुंच गये हैं। अैसे मंगल अवसर पर श्री कृष्णाम्बिका का विराट दर्शन करनेका सौभाग्य मिला। वाअीमें जिस कृष्णाके किनारे बैठकर सन्ध्यावंदन किया था और न्यायनिष्ठ रामशास्त्री तथा राजकाजपटु नाना फडनवीसकी वाले भी थीं, अुसी नन्ही कृष्णाको यहां अितनी बड़ी होते देखकर प्रथम तो विश्वास ही न हुआ। यहां माहुलीकी वह छोटी-सी जंजीर और कहां युरोप-अमरीकाको जोडनेवाले केबलके जैसा यहांका वह रस्सा! हजारों-लाखों लोग यहां नहाने आये हैं। स्थूलकाय आंध्र भाअियोंमें आज भारतवर्षके तमाम भाअी घुलमिल गये हैं। 'राष्ट्रीय' हिन्दीका वाक्प्रवाह जहां-तहां सुनाअी देता है। कृष्णामें जिस प्रकार वेण्णा, वारणा, कोयना, भीमा, तुंगभद्रा आकर मिलती हैं, अुसी प्रकार गांव गांवके लोग ठटके ठट बेजवाडेमें अुभरते हैं। अैसे अवसर पर सबके साथ रोज कृष्णामें स्नान करनेका लुत्फ मिलता। जिस कृष्णाने जन्मकालका दूध दिया अुसी कृष्णाने स्वराज्यकाशी भारतराष्ट्रका गौरवशाली दर्शन कराया। जय कृष्णा! तेरी जय हो! भारतवर्ष अेक हो! स्वतंत्र हो!!

जुलाअी, १९२९

३

मुळा-मुठाका संगम

नदिया तो हमारी बहुत देखी हुअी होती हैं। पर दो नदियोंका सगम आसानीसे देखनेको नही मिलता। सगमका काव्य ही अलग है।

जब दो नदिया मिलती है तब अक्सर अुनमें से अेक अपना नाम छोडकर दूसरीमें मिल जाती है। सभी देशोमे अिस नियमका पालन होता हुआ दिखाअी देता है। किन्तु जिस प्रकार कलकके बिना चद्र नही शोभता, अुसी प्रकार अपवादके बिना नियम भी नही चलते। और कअी बार तो नियमकी अपेक्षा अपवाद ही ज्यादा ध्यान खीचते हैं। अुत्तर अमरीकाकी मिसिसिपी-मिसारी अपना लबा-चौडा सप्ताक्षरी नाम द्वद्व समाससे धारण करके ससारकी सबसे लबी नदीके तौर पर मशहूर हुअी है। सीता-हरणसे लेकर विजयनगरके स्वातत्र्य-हरण तकके अितिहासको याद करती तुगभद्रा भी तुगा और भद्राके मिलनसे अपना नाम और बडप्पन प्राप्त कर सकी है। पूनाको अपनी गोदमें खेलाती मुळामुठा भी मुळा और मुठाके सगमसे बनी है।

सिंहगढकी पश्चिम ओरकी घाटीसे मुठा आती है। खडक-वासला तककी मुडी टेकरिया अुसका रक्षण करती हैं। खडक-वासलाके बाधने तन्वगी मुठाका अेक सुदीर्घ सरोवर बनाया है। अिस सरोवरके किनारे न तो कोअी पेड हैं, न मदिर। दिनमें बादल और रातके समय तारे अपने चिताजनक प्रतिबिंब अिस सरोवरमें डालते हैं। यहीकी मुठासे नहरके रूपमें दो जबरदस्त महसूल लिये जाते हैं, जिनसे पूना और खडकीकी बस्ती जी भरके पानी पीती है। मुठाके किनारे गन्नेकी खेती बढती जा रही है। बसत ऋतुमें जहा देखें वहा अीखके कोल्हू बाग पुकार पुकार कर लोगोको रसगानकी याद दिलाते हैं। लकडी-पुलके नामसे परिचित किन्तु पत्थरके बने हुअे पुलके नीचेसे नदी आगे जाती है और दगडी-पुलके नामसे परिचित किन्तु पत्थरसे पक्के बाधको पार करती है।

अिसके बाद ही मुठाका अुसकी बहन मुळासे संगम होता है। लकड़ी-पुलसे ओंकारेश्वर तक चाहे जितने शव जलते हों, लेकिन संगमके समय अुसका विषाद मुठाके चेहरे पर दिखाओ नहीं देता।

अितना शांत संगम शायद ही और कहीं होगा। अिसी संगम पर कॅप्टन मॅलेट पेशवाओंकी अनुमतिकी राह देखता हुआ पड़ाव डाल-कर बैठा था। आज तो संस्कृत भाषाका संशोधन युरोपियन पंडितोंके हाथसे वापिस छीन लेनेके लिये मथनेवाले आर्य पंडित भांडारकरजीका संगमाश्रम ही यहां विराजमान है। संस्कृत विद्याके पुनरुद्धारके लिये संस्थापित पाठशालाका रूपान्तर करके पुराने और नयेका संगम करनेवाला डेक्कन कॉलेज भी अिस संगमके पास ही विराजमान है। यहां गोरे लोगोंने नौका विहारके लिये नदी पर बांध बांधकर पानी रोका है, और मच्छरोंके विशाल कुलको भी यहां आश्रय दिया है। नजदीककी टेकरी पर गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्रकी अुत्तुंग-शिखरक किन्तु नम्र-नामधेय 'पर्णकुटी' है। मानवकी स्वतंत्रताका हरण करनेवाला यरवडाका कैदखाना और प्राणहरपटु लश्करी बारूदखाना भी अिस संगमसे अधिक दूरी पर नहीं है। न मालूम कितनी विचित्र वस्तुओंका संगम मुळामुठाके किनारे पर होता है . होनेवाला होगा! बांधके पासके बंड-गार्डनमें लक्षाधीश और भिक्षार्थीओंका संगम हर शामको होता है, यह भी अिसीकी अेक मिसाल है।

आखिरी बांध परसे छलांग मारकर छूटकी मुळामुठा यहांसे आगे कहां तक जाती है, यह भला कौन बता सकेगा? अिस बातकी जान-कारी किसके पास होगी?

महाराष्ट्रकी नदियोंमें तीन नदियोंसे मेरी विशेष आत्मीयता है। मार्कण्डी मेरी छुटपनकी सखी, मेरे संस्कृत जीवनकी साक्षी, और मेरी बहन आक्काकी प्रतिनिधि है। कृष्णाके किनारे तो मेरा जन्म ही हुआ। महाबलेश्वरसे लेकर बेजवाड़ा और मछलीपट्टम तकका अुसका विस्तार अनेक ढंगसे मेरे जीवनके साथ बुना हुआ है। और तीसरी है मुळा-मुठा। बचपनमें हम सब भाओ शिक्षाके लिये पूनामें रहे थे, अुस समयसे मुळा और मुठाका संगम मेरे बाल्यकालका साक्षी रहा है।

कॉलिजके दिनोंमें हमने जिन नानाविध विचारोंका सेवन किया था अुन्हें भी मुळामुठा जानती है। किन्तु अिन सब संस्मरणोंसे बढ़ जाते हैं महात्मा गांधीके साथ व्यतीत किये हुअे अुसके किनारे परके वे दिन! लेडी ठाकरसीकी पर्णकुटी, दिनशा मेहताका निसर्गोपचार भवन और सिंहगढ़का निवास, सब अेक ही साथ याद आते हैं।

और आखिर आखिरके दिनोंमें अंग्रेज सरकारने गांधीजीको जहां गिरफ्तार करके रखा था वह आगाखां महल भी मुळामुठाके किनारे पर ही है। और यहीं गांधीजीके दो जीवन-साथियोंने स्वराज्यके यज्ञमें अपनी अंतिम आहुति दी थी। कस्तूरबा और महादेवभाअीने जिसके किनारे शरीर छोड़ा वह मुळामुठा भारतवासियोंके लिअे, खास करके हम आश्रमवासियोंके लिअे तो तीर्थस्थान है।

और जब आजकी मुळामुठाके बारेमें सोचता हूं तब सिंहगढ़के दामनमें खड़क-वासला सरोवरके किनारे जिस राष्ट्र-रक्षा-विद्यालयकी स्थापना हुअी है अुसका स्मरण हुअे बिना नहीं रहता। अिस संस्थाका नाम युद्ध-महाविद्यालय रखनेके बदले राष्ट्रीय रक्षा-विद्यालय रखा गया, यह बात भी ध्यान खींचे बिना नहीं रहती। जिस सरोवरके किनारे अिस विद्यालयकी स्थापना हुअी है अुसका नाम भी महाराष्ट्रके अितिहासके अनुरूप ही होना चाहिये। अैसे सरोवरको किसी अंग्रेजका नाम न देकर नरवीर तानाजी मालुसरेका नाम देना चाहिये। अपनी जान देकर जब तानाजीने छत्रपति शिवाजीके लिअे कोंडाणा गढ़ जीत दिया तब शिवाजीने कहा 'गड आला पण सिंह गेला — गढ़ तो जीत लिया किन्तु मैंने अपना शेर खो दिया।' और अुस दिनसे अिस गढ़का नाम सिंहगढ़ पड़ा।

अिस सरोवरको हम या तो तानाजी सरोवर कहें या सिंह सरोवर।

१९२६-२७
संशोधित, १९५६

सागर-सरिताका संगम

बचपनमें भोज और कालिदासकी कहानियां पढ़नेको मिलती थीं। भोज राजा पूछते हैं, "यह नदी अितनी क्यों रोती है?" नदीका पानी पत्थरोंको पार करते हुअे आवाज करता होगा। राजाको सूझा, कविके सामने अेक कल्पना फेंक दें, अिसलिअे अुसने अुसका रहस्य पूछा। लोककथाओंका कालिदास लोकमानसको जचे अैसा ही जवाब देगा न? अुसने कहा, "रोनेका कारन क्या पूछते हैं, महाराज? यह बाला पीहरसे ससुराल जा रही है। फिर रोयेगी नहीं तो क्या करेगी?" अुस समय मेरे मनमें आया, "ससुराल जाना अगर पसन्द नहीं है तो चली जाती क्यों है?" किसीने जवाब दिया, "लड़कीका जीवन ससुराल जानेके लिअे ही है।"

नदी जब अपने पति सागरसे मिलती है तब अुसका सारा स्वरूप बदल जाता है। वहां अुसके प्रवाहको नदी कहना भी मुश्किल हो जाता है। सातारेके पास माहुलीके नजदीक कृष्णा और वेण्णाका संगम देखा था। पूनामें मुळा और मुठाका। किन्तु सरिता-सागरका संगम तो पहले पहल देखा कारवारमें — अुनकी ओरके सरोंके (कॅस्युरिनाके) बनके सिर पर। हम दो भाई समुद्र-तटकी बालू पर खेलते खेलते, घूमते-घामते दूर तक चले गये थे। अिसलिअे काफी दूर गये और यकायक अेक सुन्दर नदीको समुद्रसे मिलते देखा। दो नदियोंके संगमकी अपेक्षा नदी-समुद्रका संगम अधिक रमणीय होता है। दो नदियोंका संगम गूढ़-शान्त होता है। किन्तु जब सागर और सरिता अेक-दूसरेसे मिलते हैं तब दोनोंमें स्पष्ट अुन्माद दिखाओ देता है। अिस अुन्मादका नशा हमें भी जरूर चढ़ता है। नदीका पानी मानो आवेशमें समुद्रकी ओर बहता जाता है, जब कि अपनी मर्यादाको कभी न छोड़नेके लिअे विख्यात समुद्रका पानी चढ़ावकी अुतरनाके अनुसार कभी नदीके लिअे रास्ता बना देता है, कभी सामने हो जाता है। नदी और सागरका

जब अेक-दूसरेके खिलाफ सत्याग्रह चलता है, तब कओी तरहके दृश्य देखनेको मिलते हैं। समुद्रकी लहरें जब तिरछी बलराती आती हैं तब पानीका अेक फुहारा अेक छोरसे दूसरे छोर तक दौड़ता जाता है। कहीं कहीं पानी गोल गोल चक्कर काटकर भंवर बनाता है। जब सागरका जोश बढ़ने लगता है तब नदीका पानी पीछे हटता जाता है। अैसे अवसर पर दोनों ओरके किनारों परका अुसका थपेड़ा बड़ा तेज होता है। नदीकी गतिकी विपरीत दशाको देखकर अुससे फायदा अुठानेवाली स्वार्थी नावें पुरजोशमें अंदर घुसती हैं। अुन्हें मालूम है कि भाग्यके अिस ज्वारके साथ जितना अंदर जा सकेंगे अुतना ही पल्ले पड़नेवाला है। फिर जब भाटा शुरू होता है और सागरकी लहरें विरोधकी जगह बाहु खोलकर नदीके पानीका स्वागत करती हैं, तब मतलबी नावोंको अपनी त्रिकोनी पगड़ी बदलते देर नहीं लगती। पवन चाहे किसी भी दिशामें चलता रहे, जब तक वह प्रत्यक्ष सामने नहीं होता तब तक अुसमें से कुछ न कुछ मतलब साधनेकी चालाकी अिन वैश्यवृत्तिवाली नावोंमें होती ही है। अुनकी पगड़ीकी यानी पालकी बनावट भी अैसी ही होती है।

हम जिस समय गये थे अुस समय नावें अिसी प्रकार नदीके अंदर घुस रही थीं। किन्तु समुद्रके अिन पतंगोंको निहारनेमें हमें कोअी दिलचस्पी नहीं थी। हम तो सागरके साथ सूर्यास्त कैसा फबता है यह देखनेमें मशगूल थे। सुनहरा रंग सब जगह सुन्दर ही होता है। किन्तु हरे रंगके साथकी अुसकी बादशाही शोभा कुछ और ही होती है। अूंचे अूंचे पेड़ों पर सन्ध्याके सुवर्ण किरण जब आरोहण करते हैं तब मनमें सन्देह अुठता है कि यह मानवी सृष्टि है, या परियोंकी दुनिया है? समुद्र अैसी तो भव्य सुन्दरता दिखाने लगा मानो सुवर्ण रसका सरोवर अुमड़ रहा हो। यह शोभा देखकर हम अघा गये या सच कहें तो जैसे जैसे यह शोभा देखते गये वैसे वैसे हमारा दिल अधिकाधिक बेचैन होता गया। सौंदर्यपानसे हम व्याकुल होते जा रहे थे।

सूर्यास्तके बाद ये रंग सौम्य हुअे। हम भी होशमें आये और वापस लौटनेकी बात सोचने लगे। किन्तु पानी अितना आगे बढ़ गया था कि

वापस लौटना कठिन हो गया। परिणामस्वरूप हम नदीके किनारे किनारे अुल्टे चले। यहा पर भी नदीका पानी दोनों ओरसे फूलता जा रहा था — जैसे भैंसकी पीठ परकी पराल भरते समय फूलती जाती है। जैसे जैसे हम अुल्टे चलते गये वैसे वैसे पानीमें शांति बढ़ती गयी। अंधेरा भी बढ़ता जा रहा था। अिस पारसे अुस पार तक आने जानेवाली अेक नन्हीं-सी नाव अेक कोनेमें पड़ी थी। और देहातके चंद मजदूर लंगोटीकी डोरीमें पीछेकी ओर लकड़ीका अेक चक्र खोंसकर अुसमें अपने 'कोयते' लटकाये जा रहे थे। ('कोयता' हंसियेके जैसा अेक औजार होता है, जो नारियल छीलनेमें काम आता है या सामान्य तौरसे जिसका कुल्हाड़ीकी तरह अुपयोग किया जाता है।) अिन लोगोंकी पोशाक बस अेक लंगोटी और अेक जाकिट होती है। नदीको पार करते समय जाकिट निकालकर सिर पर ले लिया कि बस। प्रकृतिके बालक! जमीन और पानी अुनके लिअे अेक ही हैं।

घर जानेकी जल्दी सिर्फ हमें ही नहीं थी। अैसा मालूम होता था कि अिन देहाती लोगोंको भी जल्दी थी। और नदीके किनारे दौड़ते छोटे छोटे केकड़ोंको भी हमारी ही तरह जल्दी थी। रात पड़ी और हम जल्दीसे घर लौटे। किन्तु मनमें विचार तो आया कि किसी दिन अिस नदीके किनारे किनारे काफी अूपर तक जाना चाहिये।

प्याज या कॅबेज (पत्तागोभी) हाथमें आने पर फौरन अुसकी सब पत्तियां खोलकर देखनेकी जैसे अिच्छा होती है, वैसे ही नदीको देखने पर अुसके अुद्गमकी ओर चलनेकी अिच्छा मनुष्यको होती ही है। अुद्गमकी खोज सनातन खोज है। गंगोत्री, जमनोत्री और महाबलेश्वर या त्र्यबककी खोज अिसी तरह हुआी है।

बचपनकी यह अिच्छा कुछ ही वर्ष पहले बर आयी। श्री शंकरराव गुलवाडीजी मुझे अेक गैसायॅर्व दिखानेके लिये नदीकी अुलटी दिशामें दूर तक ले गये। अिस प्रवास-यात्राके समय ही कवि बोरकरकी कविता सुनी थी, अिस बातका भी आनददायी स्मरण है।

१९३४

५

गंगामैया

१

गगा कुछ भी न करती, सिर्फ देवव्रत भीष्मको ही जन्म देती, तो भी आर्यजातिकी माताके तौर पर वह आज प्रख्यात होती। पितामह भीष्मकी टेक, भीष्मकी नि स्पृहता, भीष्मका ब्रह्मचर्य और भीष्मका तत्त्वज्ञान हमेशाके लिअे आर्यजातिका आदरपात्र ध्येय बन चुका है। हम गगाको आर्यसंस्कृतिके अैसे आधारस्तभ महापुरुषकी माताके रूपमें पहचानते हैं।

२

नदीको यदि कोअी अुपमा शोभा देती है, तो वह माताकी ही। नदीके किनारे पर रहनेसे अकालका डर तो रहता ही नहीं। मेघराजा जब धोखा देते हैं तब नदीमाता ही हमारी फसल पकाती है। नदीका किनारा यानी शुद्ध और शीतल हवा। नदीके किनारे किनारे घूमने जायें तो प्रकृतिके मातृवात्सल्यके अखड प्रवाहका दर्शन होता है। नदी बडी हो और अुसका प्रवाह धीरगभीर हो, तब तो अुसके किनारे पर रहनेवालोंकी शानशौकत अुस नदी पर ही निर्भर करती है। सचमुच नदी जनसमाजकी माता है। नदी-किनारे बसे हुअे शहरकी गली गलीमें घूमते समय अेकाध कोनेसे नदीका दर्शन हो जाय, तो हमें कितना आनद होता है! कहा शहरका वह गदा वायुमडल और कहा नदीका यह प्रसन्न दर्शन! दोनोंके बीचका अतर फौरन मालूम हो जाता है। नदी अीश्वर नहीं है, बल्कि अीश्वरका स्मरण करानेवाली देवता है। यदि गुरुको वदन करना आवश्यक है तो नदीको भी वदन करना अुचित है।

यह तो हुअी सामान्य नदीकी बात। किन्तु गगामैया तो आर्य-जातिकी माता है। आर्योंके बड़े बड़े साम्राज्य अिसी नदीके तट पर स्थापित हुअे हैं। कुरु-पाचाल देशका अगवगादि देशोंके साथ गगाने

ही सयोग किया है। आज भी हिन्दुस्तानकी आबादी गगाके तट पर सबसे अधिक है।

जब हम गगाका दर्शन करते हैं तब हमारे ध्यानमें फसलसे लहलहाते सिर्फ खेत ही नहीं आते, न सिर्फ मालसे लदे जहाज ही आते हैं, किन्तु वाल्मीकिका काव्य, बुद्ध-महावीरके विहार, अशोक, समुद्रगुप्त या हर्ष जैसे सम्राटोंके पराक्रम और तुलसीदास या कबीर जैसे सतजनोंके भजन — अिन सबका अेक साथ स्मरण हो आता है। गगाका दर्शन तो चैत्य-पावनताका हार्दिक तथा प्रत्यक्ष दर्शन है।

किन्तु गगाके दर्शनका अेक ही प्रकार नहीं है। गगोत्रीके पासके हिमाच्छादित प्रदेशोंमें अुसका खिलाडी कन्यारूप, अुत्तरकाशीकी ओर चीड-देवदारोंके काव्यमय प्रदेशमें मुग्धारूप, देवप्रयागके पहाडी और सकरे प्रदेशमें चमकीली अलकनदाके साथ अुसकी अठखेलियां, लक्ष्मण-झूलेकी विकराल दष्ट्रामें से छूटनेके बाद हरद्वारके पास अुसका अनेक धाराओंमें स्वच्छद विहार, कानपुरके तटपर जाता हुआ अुसका अिति-हास-प्रसिद्ध प्रवाह, प्रयागके विशाल पट पर हुआ अुसका कालिन्दीके साथका त्रिवेणी सगम — हरेककी शोभा कुछ निराली ही है। अेक दृश्य देखने पर दूसरेकी कल्पना नहीं हो सकती। हरेकका सौंदर्य अलग, हरेकका भाव अलग, हरेकका वातावरण अलग, हरेकका माहात्म्य अलग।

प्रयागसे गगा अलग ही स्वरूप धारण कर लेती है। गगोत्रीसे लेकर प्रयाग तककी गगा वर्धमान होते हुअे भी अेकरूप मानी जा सकती है। किन्तु प्रयागके पास अुसमें यमुना आकर मिलती है। यमुनाका तो पहलेसे ही दोहरा पाट है। वह खेलती है, कूदती है, किन्तु [illegible] नहीं मालूम होती। गगा शकुतला जैसी तपस्वी कन्या दीखती है। काली यमुना द्रौपदी जैसी मानिनी राजकन्या मालूम होती है। शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा जब हम सुनते हैं, तब भी प्रयागके पास गगा और यमुनाके बडी कठिनाअीके साथ मिलते हुअे शुक्ल-कृष्ण प्रवाहोंका स्मरण हो आता है। हिन्दुस्तानमें अनगिनत नदियां हैं, अिसलिअे सगमोंका भी कोअी पार नहीं है। अिन सभी

सगमोमे हमारे पुरखोने गगा-यमुनाका यह सगम सबसे अधिक पसन्द किया है, और अिसीलिअे अुसका 'प्रयागराज' जैसा गौरवपूर्ण नाम रखा है। हिन्दुस्तानमे मुसलमानोके आनेके बाद जिस प्रकार हिन्दुस्तानके अितिहासका रूप बदला, अुसी प्रकार दिल्ली-आगरा और मथुरा-वृदावनके समीपसे आते हुअे यमुनाके प्रवाहके कारण गगाका स्वरूप भी प्रयागके बाद बिल्कुल बदल गया है।

प्रयागके बाद गगा कुलवधूकी तरह गभीर और सौभाग्यवती दीखती है। अिसके बाद अुसमे बडी बडी नदिया मिलती जाती है। यमुनाका जल मथुरा-वृदावनसे श्रीकृष्णके सस्मरण अर्पण करता है, जब कि अयोध्या होकर आनेवाली सरयू आदर्श राजा रामचद्रके प्रतापी किन्तु करुण जीवनकी स्मृतिया लाती है। दक्षिणकी ओरसे आनेवाली चबल नदी रतिदेवके यज्ञयागकी बातें करती है, तब कि महान कोलाहल करता हुआ शोणभद्र गजग्राहके दारुण द्वद्व-युद्धकी झाकी कराता है। अिस प्रकार हृष्ट-पुष्ट बनी हुअी गगा पाटलीपुत्रके पास मगध साम्राज्य जैसी विस्तीर्ण हो जाती है। फिर भी गडकी अपना अमूल्य करभार लाते हुअे हिचकिचाती नही। जनक और अशोककी, बुद्ध और महावीरकी प्राचीन भूमिसे निकलकर आगे बढते समय गगा मानो सोचमें पड जाती है कि अब कहा जाना चाहिये। जब अितनी प्रचड वारिराशि अपने अमोघ वेगसे पूर्वकी ओर बह रही हो, तब अुसे दक्षिणकी ओर मोडना क्या कोअी आसान बात है? फिर भी वह अुस ओर मुड गअी है सही। दो सम्राट् या दो जगद्गुरु जैसे अेकाअेक अेक-दूसरेसे नही मिलते, वैसा ही गगा और ब्रह्मपुत्राका हाल है। ब्रह्मपुत्रा हिमालयके अुस पारका सारा पानी लेकर आसामसे होती हुअी पश्चिमकी ओर आती है और गगा अिस ओरसे पूर्वकी ओर बढती है। अुनकी आमने-सामने भेट कैसे हो? कौन किसके सामने पहले झुके? कौन किसे पहले रास्ता दे? अतमें दोनोंने तय किया कि दोनोंको दाक्षिण्य धारणकर सरित्पतिके दर्शनके लिअे जाना चाहिये और भक्ति-नम्र होकर, जाते जाते जहा सभव हो, रास्तेमें अेक-दूसरेसे मिल लेना चाहिये।

अिस प्रकार गोआलदोके पास जब गंगा और ब्रह्मपुत्राका विशाल जल आकर मिलता है तब मनमें संदेह पैदा होता है कि सागर और क्या होता होगा? विजय प्राप्त करनेके बाद थकी हुआी सेना भी जिस प्रकार अव्यवस्थित हो जाती है और विजयी वीर मनमें आये वैसे जहां तहां घूमते हैं, अुसी प्रकारका हाल अिसके बाद अिन दो महान नदियोंका होता है। अनेक मुखों द्वारा वे सागरमें जाकर मिलती हैं। हरेक प्रवाहका नाम अलग अलग है और कुछ प्रवाहोंके तो अेकसे भी अधिक नाम हैं। गंगा और ब्रह्मपुत्रा अेक होकर पद्माका नाम धारण करती हैं। यही आगे जाकर मेघनाके नामसे पुकारी जाती है।

यह अनेकमुखी गंगा कहां जाती है? सुंदरवनमें बेतके झाड़ अुगाने? या सगरपुत्रोंकी वासनाको तृप्त कर अुनका अुद्धार करने? आज जाकर आप देखेंगे तो यहां पुराने काव्यका कुछ भी शेष नहीं होगा। जहां देखो वहां सनकी बोरियां बनानेवाली मिलें और अैसे ही दूसरे बेहूदे विश्री कल-कारखाने दीख पड़ेंगे। जहांसे हिन्दुस्तानी कारीगरीकी असंख्य वस्तुअें हिन्दुस्तानी जहाजोंसे लंका या जावा द्वीप तक जाती थीं, अुसी रास्तेसे अब विलायती और जापानी आगबोटें (स्टीमरें) विदेशी कारखानोंमें बना हुआ भद्दा माल हिन्दुस्तानके बाजारोंमें भर डालनेके लिअे आती हुआी दिखाओी देती हैं। गंगामैया पहले ही की तरह हमें अनेक प्रकारकी समृद्धि प्रदान करती जाती हैं। किन्तु हमारे निर्बल हाथ अुसको अुठा नहीं सकते!

गंगामैया! यह दृश्य देखना तेरी किस्मतमें कब तक बदा है?

फरवरी, १९२६

६

यमुनारानी

हिमालय तो भव्यताका भंडार है। जहां तहां भव्यताको बिखेर कर भव्यताको भव्यतासे कम करते रहना ही मानो हिमालयका व्यवसाय है। फिर भी अैसे हिमालयमें अेक अैसा स्थान है, जिसकी अूर्जस्विता हिमालयवासियोंका भी ध्यान खींचती है। यह है यमराजकी बहनका अुद्गम-स्थान।

अूंचाअीसे बर्फ पिघलकर अेक बड़ा प्रपात गिरता है। अिर्दगिर्द गगनचुंबी नहीं, बल्कि गगनभेदी पुराने वृक्ष आड़े गिरकर गल जाते हैं। अुत्तुंग पहाड़ यमदूतोंकी तरह रक्षण करनेके लिअे खड़े हैं। कभी पानी जमकर बर्फ बन जाता है, और कभी बर्फ पिघलकर अुसका वर्णन जितना ठंडा पानी बन जाता है। अैसे स्थानमें जमीनके अंदरसे अेक अद्भुत ढंगसे अुबलता हुआ पानी अुछलता रहता है। जमीनके भीतरसे अैसी आवाज निकलती है मानो किसी वाष्पयंत्रसे शीघ्रगामी भाप निकल रही हो। और अुन झरनोंमें सिरसे भी अूंची अुड़ती बूंदें अितनी सरदीमें भी मनुष्यको झुलसा देती हैं। अैसे लोक-चमत्कारी स्थानमें ऋषित ऋषिने यमुनाका मूल स्थान खोज निकाला। अिस स्थानमें शुद्ध जलसे स्नान करना असंभव-सा है। ठंडे पानीमें नहायें तो हमेशाके लिअे ठंडे पड़ जायेंगे और गरम पानीमें नहायें तो वहीके वहीं आलूकी तरह अुबल कर मर जायगे। अिसीलिअे वहां मिश्र जलके कुंड तैयार किये गये हैं। अेक झरनेके अूपर अेक गुफा है। अुसमें लकड़ीके पटिये डालकर सो सकते हैं। हां, रातभर करवट बदलते रहना चाहिये, क्योंकि अूपरकी ठंड और नीचेकी गरमी, दोनों अेकसी असह्य होती हैं।

दोनों बहनोंमें गंगासे यमुना बड़ी है, प्रौढ़ है, गंभीर है, कृष्ण-भगिनी द्रौपदीके समान कृष्णवर्णा और मानिनी है। गंगा तो मानो बेचारी मुग्ध शकुंतला ही ठहरी, पर देवाधिदेवने अुसका स्वीकार किया अिसलिअे यमुनाने अपना बड़प्पन छोड़कर गंगाको ही अपनी

सरदारी सौंप दी। ये दोनों बहनें अेक-दूसरेसे मिलनेके लिअे बड़ी आतुर दिखाओ देती हैं। हिमालयमें तो अेक जगह दोनों करीब करीब आ जाती हैं। किन्तु औग्याल्टु दडाल पर्वतके बीचमें विघ्नसंतोषीकी तरह आड़े आनेसे अुनका मिलन वहां नहीं हो पाता। अेक वात्सल्य-हृदयी ऋषि वहां यमुनाके किनारे रहकर हमेशा गंगास्नानके लिअे जाया करता था। किन्तु भोजनके लिअे वापिस यमुनाके ही घर आ जाता था। जब वह बूढ़ा हुआ — ऋषि भी अन्तमें बूढ़े होते हैं — तब अुसके धर्मेमाईके पावों पर तरस खाकर गंगाने अपना प्रतिनिधिरूप अेक छोटासा झरना यमुनाके तीर पर ऋषिके आश्रममें भेज दिया। आज भी वह छोटासा सफेद प्रवाह अुस ऋषिका स्मरण कराता हुआ बह रहा है।

देहरादूनके पास भी हमें आशा होती है कि ये दोनों नदियां अेक-दूसरेसे मिलेंगी। किन्तु नहीं, अपने शैत्य-पावनत्वसे अन्तर्वेदीके समूचे प्रदेशको पुनीत करनेका कर्तव्य पूरा करनेके पहले अुन्हें अेक-दूसरेसे मिलकर फुरसतकी बातें करनेकी सूझती ही कैसे? गंगा तो अुत्तरकाशी, टेहरी, श्रीनगर, हरिद्वार, कन्नौज, ब्रह्मावर्त, कानपुर आदि पुराण-प्रसिद्ध और अितिहास-प्रसिद्ध स्थानोंको अपना दूध पिलाती हुआी दौड़ती है; जब कि यमुना कुरुक्षेत्र और पानीपतके हत्यारे भूमि-भागको देखती हुआी भारतवर्षकी राजधानीके पास आ पहुंचती है। यमुनाके पानीमें साम्राज्यकी शक्ति होनी चाहिये। अुसके स्मरण-संग्रहालयमें पाण्डवोंसे लेकर मुगल-साम्राज्य तकका और गदरके जमानेसे लेकर स्वामी श्रद्धानन्दजीकी हत्या तकका सारा अितिहास भरा पड़ा है। दिल्लीसे आगरे तक अैसा मालूम होता है, मानों बाबरके खानदानके लोग ही हमारे साथ बातें करना चाहते हों। दोनों नगरोंके किले साम्राज्यकी रक्षाके लिअे नहीं, बल्कि यमुनाकी शोभा निहारनेके लिअे ही मानों बनाये गये हैं। मुगल-साम्राज्यके नगारे तो कबके बंद हो गये; किन्तु मथुरा-वृन्दावनकी बांसुरी अब भी बज रही है।

मथुरा-वृन्दावनकी शोभा कुछ अपूर्व ही है। यह प्रदेश जितना रमणीय है अुतना ही समृद्ध है। हरियानेकी गौअें अपने मीठे, सरस, सकस

दूधके लिअे हिन्दुस्तान भरमें मशहूर है। यशोदामैयाने या गोपराजा नंदने खुद यह स्थान पसंद किया था, अिस बातको तो मानो यहांकी भूमि भूल ही नहीं सकती। मथुरा-वृन्दावन तो है बालकृष्णकी क्रीडा-भूमि, वीरकृष्णकी विक्रमभूमि। द्वारकावासको यदि छोड़ दें तो श्रीकृष्णके जीवनके साथ अधिकसे अधिक सहयोग कालिंदीने ही किया है। जिस यमुनाने कालियामर्दन देखा अुसी यमुनाने कंसका शिरच्छेद भी देखा। जिस यमुनाने हस्तिनापुरके दरबारमें श्रीकृष्णकी शाचिव-वाणी सुनी, अुसी यमुनाने रण-कुशल श्रीकृष्णकी योगमूर्ति कुरुक्षेत्र पर विचरती निहारी। जिस यमुनाने वृन्दावनकी प्रणय-बांसुरीके साथ अपना कलरव मिलाया, अुसी यमुनाने कुरुक्षेत्र पर रोमहर्षण गीतावाणीको प्रतिध्वनित किया। यमराजकी बहनका भाओीपन तो श्रीकृष्णको ही शोभा दे सकता है।

जिसने भारतवर्षके कुलका कओी बार संहार देखा है, अुस यमुनाके लिअे पारिजातके फूलके समान ताजबीबीका अवसान कितना मर्मभेदी हुआ होगा? फिर भी अुसने प्रेमसम्राट् शाहजहांके जमे हुअे आंसुओंको प्रतिबिंबित करना स्वीकार कर लिया है।

भारतीय कालसे मशहूर वैदिक नदी चर्मण्वतीसे करभार लेकर यमुना ज्यों ही आगे बढती है, त्यों ही मध्ययुगीन अितिहासकी झांकी करानेवाली नन्हीं-सी सिन्धु नदी अुससे आ मिलती है।

अब यमुना अधीर हो अुठी है। कओी दिन हुअे, बहन गंगाका दर्शन नहीं हुआ है। कहने जैसी बातें पेटमें समाती नहीं हैं। पूछनेके लिअे असंख्य सवाल भी अिकट्ठे हो गये हैं। कानपुर और कालपी बहुत दूर नहीं हैं। यहां गंगाकी खबर पाते ही खुशीसे वहांकी मिश्रीसे मुंह मीठा बनाकर यमुना अैसी दौड़ी कि प्रयागराजमें गंगाके गलेसे लिपट गओी। क्या दोनोंका अुन्माद! मिलने पर भी मानो अुनको यकीन नहीं होता कि वे मिली हैं। भारतवर्षके सबके सब साधु-संत अिस प्रेमसंगमको देखनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हैं। पर अिन बहनोंको अिसकी सुधबुध नहीं है। आंगनमें अक्षयवट खड़ा है। अुसकी भी अिन्हें परवाह नहीं है। बूढ़ा अकबर छावनी डाले पड़ा है, अुसे कौन

पूछता है? और अशोकका शिलास्तंभ लाकर वहां खड़ा करे तो भी क्या ये बहनें असकी ओर नजर अुठाकर देखेंगी?

प्रेमका यह संगम-प्रवाह अखंड बहता रहता है, और असके साथ कवि-सम्राट् कालिदासकी सरस्वती भी अखंड बह रही है!

क्वचित् प्रभा-लेपिभिर्अिन्द्रनीलैर् मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा।
अन्यत्र माला सित-पंकजानाम् अिन्दीवरैर् अुत्खचितान्तरेव।।
क्वचित् खगानां प्रिय-मानसानां कादंब-संसर्गवतीव पंक्ति ।
अन्यत्र कालागरु-दत्तपत्रा भक्तिर् भुवश्चन्दन-कल्पितेव।।
क्वचित् प्रभा चान्द्रमसी तमोभिश्छायाविलीनैः शबलीकृतेव।
अन्यत्र शुभ्रा शरद्अभ्रलेखा-रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभः प्रदेशा।।
क्वचित् च कृष्णोरग-भूषणेव भस्मांग-रागा तनुर् ईश्वरस्य।
पश्यानवद्यांगि! विभाति गंगा भिन्नप्रवाहा यमुनातरंगैः।।

[हे निर्दोष अंगवाली सीते! देखो अिस गंगाके प्रवाहमें यमुनाकी तरंगें धक्का देकर प्रवाहको खंडित कर रही हैं। यह कैसा दृश्य है! कहीं मालूम होता है, मानो मोतियोंकी मालामें पिरोये हुअे अिन्द्रनील मणि मोतियोंकी प्रभाको कुछ धुंधला कर रहे। कहीं अैसा दीखता है, मानो सफेद कमलके हारमें नील कमल गूंथ दिये हों। कहीं मानो मानसरोवर जाते हुअे श्वेत हंसोंके साथ काले कादंब अुड़ रहे हों। कहीं मानो श्वेत चंदनसे लीपी हुअी जमीन पर कृष्णागरुकी पत्र-रचना की गयी हो। कहीं मानो चंद्रकी प्रभाके साथ छायामें सोये हुअे अंधकारकी क्रीड़ा चल रही हो। कहीं शरदऋतुके शुभ्र मेघोंके पीछेसे अिधर अुधर आसमान दीख रहा हो। और कहीं अैसा मालूम होता है, मानो महादेवजीके भस्मभूषित शरीर पर कृष्ण सर्पोंके आभूषण धारण करा दिये हों।]

कैसा सुंदर दृश्य! अूपर पुष्पक विमानमें मेघ-श्याम रामचंद्र और धवल-शीला जानकी चौदह सालके वियोगके पश्चात् अयोध्यामें पहुंचनेके लिअे अधीर हो अुठे हैं, और नीचे अिंदीवर-श्यामा कालिंदी और सुधा-जला जाह्नवी अेक-दूसरेका परिरंभ छोड़े बिना सागरमें नामरूपको छोड़कर विलीन होनेके लिअे दौड़ रही हैं।

अिस पावन दृश्यको देखकर स्वर्गसे सुमनोंकी पुष्पवृष्टि हुअी होगी और भूतल पर कवियोंकी प्रतिभा-सृष्टिके फुहारे अुडे होंगे।

सितबर, १९२९

७

मूल त्रिवेणी

ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों मिलकर जिस तरह दत्तात्रेयजी बनते हैं, अुसी तरह *अलकनदा, मदाकिनी* और *भागीरथी मिलकर गगामैया* बनती हैं। ये तीनों गगाकी बहनें नहीं हैं, बल्कि गगाके अग हैं। भागीरथी भले गगोत्रीसे आती हो, तो भी मदाकिनीका केदारनाथ और *अलकनदाका बदरीनारायण भी गगाके ही अुद्गम हैं।*

ब्रह्मकपालसे होकर जो अलकनदा बहती है और वहा अेक बार *श्राद्ध करनेसे जो अशेष पूर्वजोंको अेकसाथ हमेशाके लिअे मुक्ति दे* देती है, अुस अलकनदाका अुद्गम-स्थान क्या गगोत्रीसे कम पवित्र है? ब्रह्मकपाल पर अेक बार श्राद्ध करनेके बाद फिर कभी श्राद्ध किया ही नहीं जा सकता। यदि मोहवश करे तो पितरोंकी अधोगति होती है। कितना जाग्रत स्थान है वह!

बदरीनारायणके गरम कुडोंका पानी लेकर अलकनदा आती है, जब कि मदाकिनी गौरीकुडके अुष्ण जलसे थोडी देर कवोष्ण होती है। केदारनाथका मदिर बनावटकी दृष्टिसे अन्य सब मदिरोंसे अलग प्रकारका है। अदरका शिवलिंग भी स्वयभू, बिना आकृतिका है। वह अितना अूचा है कि मनुष्य अुस पर झुककर अुससे हृदयस्पर्श कर सकता है। मदिरोंकी जितनी विशेषता है अुतनी ही मदाकिनीकी भी विशेषता है। यहाके पत्थर अलग प्रकारके हैं, यहाका बहाव अलग प्रकारका है, और यहा नहानेका आनद भी अलग प्रकारका है।

गगोत्री तो गगोत्री ही है। अिन तीनों प्रवाहोंमें भागीरथीका प्रवाह अधिक वन्य और मुग्ध मालूम होता है। यह नहीं है कि गगामें सिर्फ यही तीन प्रवाह हैं। नीलगगा है, ब्रह्मगगा है, कभी

गंगायें हैं। हिमालयसे निकलनेवाले सभी प्रवाह गंगा ही तो हैं! जिन जिनका पानी हरिद्वारके पास हरिके चरणोंका स्पर्श करता है वे सब प्रवाह गंगा ही हैं। वाल्मीकिने भी जब गंगाको आकाशसे हिमालयके शिखररूपी महादेवजीकी जटाओं पर गिरते और वहांसे अनेक धाराओंमें निकलते देखा तब अुनकी आर्ष दृष्टिने सात अलग अलग प्रवाह गिनाये थे।

> तस्या विसृज्यमानाया सप्त स्रोतांसि जज्ञिरे।
> ह्लादिनी, पावनी चैव, नलिनी च तथैव च।।
> सुचक्षुश्चैव, सीता च, सिन्धुश्चैव, महानदी।
> सप्तमी चान्वगात् तासां भगीरथ-रथं तदा।।

१९३४

८

जीवनतीर्थ हरिद्वार

त्रिपथगा गंगाके तीन अवतार हैं। गंगोत्री या गोमुखसे लेकर हरिद्वार तककी गंगा अुसका प्रथम अवतार है। हरिद्वारसे लेकर प्रयागराज तककी गंगा अुसका दूसरा अवतार है। प्रथम अवतारमें वह पहाड़के बंधनसे — शिवजीकी जटाओंसे — मुक्त होनेके लिओ प्रयत्न करती है। दूसरे अवतारमें वह अपनी बहन यमुनासे मिलनेके लिओ आतुर है। प्रयागराजमें गंगा यमुनासे मिलकर अपने बड़े प्रवाहके साथ सरित्पति सागरमें विलीन होनेकी चाह रखती है। यह है अुसका तीसरा अवतार। गंगोत्री, हरिद्वार, प्रयाग और गंगासागर, गंगापुत्र आर्योंके लिओ चार बड़ेसे बड़े तीर्थस्थान हैं। जितना अूपर चढ़े अुतना तीर्थका माहात्म्य अधिक, अैसा माना जाता है। अेक प्रकारसे यह सही भी है। किन्तु मेरी दृष्टिमें तो भारत-जातिके लिओ अत्यंत आकर्षक स्थान हरिद्वार ही है। हरिद्वारमें भी पांच तीर्थ प्रसिद्ध हैं। पुराणकारोंने हरेकके माहात्म्यका वर्णन श्रद्धा और रससे किया है। किन्तु यह महत्त्व कुछ भी न जानते

हुअे भी मनुष्य यह कह सकता है कि 'हरिकी पैड़ी' में ही गंगाका माहात्म्य कहें तो माहात्म्य और काव्य कहें तो काव्य अधिक दिखाओी देता है।

यों तो हरेक नदीकी लम्बाओीमें काव्यमय भूमिभाग होंगे ही हैं। मेरा कहनेका यह आशय नहीं है कि गंगाके किनारे हरिद्वारसे अधिक सुंदर स्थान हो ही नहीं सकते। हरिकी पैड़ीके आसपास बनारसकी शोभाका सौवां हिस्सा भी आपको नहीं मिलेगा। फिर भी यहां पर प्रकृति और मनुष्यने अेक-दूसरेके वैरी न होते हुअे गंगाकी शोभा बढ़ानेका काम सहयोगसे किया है। गंगाका वह गाढ़ा और स्वच्छ प्रवाह, नदियोंके पासका वह दौड़ता घाट, घाटके नीचेका वह छोटासा टेढ़ामेढ़ा दह, अिस तरफ हजारों लोग आसानीसे बैठ सकें अैसा नदीके पट जैसा घाट, अुस तरफ छोटे बेटके जैसा टुकड़ा और दोनों बाजुओंको साधनेवाला पुराना पुल, सभी काव्यमय हैं। किनारे परके मंदिरों और धर्मशालाओंके सादे शिखर गंगाकी तरफ चिपका हुआ हमारा ध्यान अपनी तरफ नहीं खींचते। फिर भी वे गंगाकी शोभामें वृद्धि ही करते हैं। बनारसके बाजारमें बैठनेवाले आलसी बैल अलग हैं और शांतिसे जुगाली करनेवाले यहांके बैल अलग हैं। यहां गंगामें कहीं पर भी कीचड़का नामोनिशान आपको नहीं मिलेगा। अनंतकालसे अेक-दूसरेके साथ टकरा टकरा कर गोल बने हुअे सफेद पत्थर ही सर्वत्र देख लीजिये।

हरिकी पैड़ीमें सबसे आकर्षक वस्तुकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। हम अुसका महज असर ही अनुभव करते हैं। वह है यहांकी हवा। हिमालयके दूर दूरके हिमाच्छादित शिखरों परसे जो पवन दक्षिणकी ओर बहते हैं, वे सबसे पहले यहांकी ही मनुष्यबस्तीको स्पर्श करते हैं। अितना पावन पवन अन्यत्र कहां मिले? हरिकी पैड़ीके पास पुल पर खड़े रहिये, आपके फेफड़ोंमें और दिलमें केवल आह्लाद ही भर जायगा। अुन्मादक नहीं बल्कि प्राणदायी; फिर भी प्रशम-कारी।

जितनी बार मैं यहां आया हूं, अुतनी बार वही शांति, वही आह्लाद, वही स्फूर्ति मैंने अनुभव की है। चंद लोग बम्बओीकी चौपाटीके

साथ अिस घाटका मुकाबला करते हैं। आत्यन्तिक विरोधका सादृश्य अिन दोनोंके बीच जरूर है। यहां यात्री लोग मछलियोंको आहार देते हैं, जब कि वहां मछुअे आहारके लिअे मछलियोंको पकड़ने जाते हैं।

हरिकी पैड़ी देखनी हो तो शामको सूर्यास्तके बाद जाना चाहिये। चांदनी है या नहीं, यह सोचनेकी आवश्यकता नहीं है। चांदनी होगी तो अेक प्रकारकी शोभा मिलेगी, नहीं होगी तो दूसरे प्रकारकी मिलेगी। जिन दोनोंमें जो पसंदगी करने बैठेगा वह कला-प्रेमी नहीं है। सध्याकाशमें अेकके बाद अेक सितारे प्रकट होते हैं, और नीचेके अेकके बाद अेक जलते दीये अुनको जवाब देते हैं। अिस दृश्यकी गूढ़ शांति मन पर कुछ अद्भुत असर करती है। अितनेमें मंदिरमें टींग टाङा, टींग टाङा करते घंटे आरतीके लिअे न्यौता देते हैं। अिस घटनाका मानो अंत ही नहीं है। टींग टाङा, टींग टाङा चलता ही रहता है। और भक्तजन तरह तरहकी आरतियां गाते ही रहते हैं। पुरुष गाते हैं, स्त्रियां गाती हैं, ब्रह्मचारी गाते हैं और सन्यासी भी गाते हैं, स्थानिक लोग गाते हैं और प्रांत प्रांतके यात्री भी गाते हैं। कोअी किसीकी परवाह नहीं करता। कोअी किसीसे नहीं अकुलाता। हरेक अपने अपने भक्तिभावमें तल्लीन। सनातनी स्तोत्र गाते हैं, आर्य-समाजी अुपदेश देते हैं। सिख लोग ग्रंथसाहबके अेकाध 'महोल्ले' में से बारबार-दि-बार जोरसे गाते हैं। गोरक्षा-प्रचारक आपको यहां बतायेंगे कि संसारमें सफेद रंग अिसलिअे है कि गायका दूध सफेद है। गायके पेटमें तैंतीस कोटि देवता हैं; सिर्फ वहां पेटभर घास नहीं है। चंद नास्तिक अिस भीड़का फायदा अुठाकर प्रमाणोंके साथ यह सिद्ध कर देते हैं कि अीश्वर नहीं है। और अुदार हिन्दूधर्म यह सब सद्भावपूर्वक चलने देता है। गंगामैयाके वातावरणमें किसीका भी तिरस्कार नहीं है। सबीका सत्कार है। लाल गेरुआ पहनकर मुक्त हांतेका दावा करनेवाले मुक्तिफौजके मिशनरी भी यहां आकर यदि हिन्दूधर्मके विरुद्ध प्रचार करें तो भी हमारे यात्री अुनकी बात शांतिसे सुनेंगे और कहेंगे कि भगवानने जैसी बुद्धि दी है वैसा बेचारे बोलते हैं; अुनका क्या अपराध है?

हिन्दू समाजमें अनेक दोष हैं और अिन दोषोंके कारण हिन्दू समाजने काफी सहा भी है। किन्तु अुदारता, सहिष्णुता और सद्भाव आदि हिन्दू समाजकी विशेषतायें हरगिज दोषरूप नहीं हैं। यह कहने-वाले कि अुदारताके कारण हिन्दू समाजने बहुत कुछ सहा है, हिन्दू धर्मकी जड़ ही काट डालते हैं।

अब भी वह घंटा बज रहा है और आलसी लोगोंको यह कहकर कि आरतीका समय अभी बीता नहीं है, जीवनका कल्याण करनेके लिअे मनाता है।

और वे बालायें साखरेके पत्तोंके बड़े बड़े दोनोंमें फूलोंके बीच घीके दीये रखकर अुन्हें प्रवाहमें छोड़ देती हैं, मानो अपने भाग्यकी परीक्षा करती हों। और ये दोने तुरन्त नावकी तरह डोलते डोलते — *अिस तरह डोलते हुअे मानो अपने भीतरकी ज्योतिका* महत्त्व जानते हों, जीवन-यात्रा शुरू कर देते हैं।

चली! *वह जीवन-यात्रा चली! अेकके बाद अेक, अेकके बाद अेक, ये दीये अपनेको और अपने भाग्यको जीवन-प्रवाहमें छोड़ देते हैं।* जो बात मनुष्य-जीवनमें व्यक्तिकी होती है वही यहां दीयोंकी होती है। कोअी अभागे यात्राके आरंभमें ही पवनके वश हो जाते हैं और चारों ओर विषाद फैलाते हैं। कुछ काफी आशायें दिखाकर निराश करते हैं। कुछ आजन्म मरीजोंकी तरह डगमग करते करते दूर तक पहुंचते हैं। कभी कभी दो दोने पास पास आकर अेक-दूसरेसे चिपक जाते हैं और बादमें यह जोड़ा-नाव दंपतीकी तरह लंबी लंबी यात्रा करती है। अुनको गोल गोल चक्कर काटते देखकर मनमें जो भाव प्रकट होते हैं अुन्हें *व्यक्त करना कठिन है। कभी तो जीवन-ज्योति बुझनेसे पहले ही दृष्टिसे* ओझल हो जाते हैं। मृत्यु और अदृष्ट दोनों मनुष्य-जीवनके आखिरी अध्याय हैं। अिनके सामने किसीकी चलती नहीं, अिसीलिअे मनुष्यको अीश्वरका स्मरण होता है। मरण न होता तो शायद अीश्वरका स्मरण भी न होता।

हिंमत हो तो किसी दिन सुबह चार बजे अकेले अकेले अिस घाट पर आकर बैठिये। कुछ अलग ही किस्मके भक्त आपको यहां दिखाअी

देंगे। सुबह तीन बजेसे लेकर सूर्योदय तक विशिष्ट लोग ही यहां आयेंगे। वाजिनीवती अुषा सूर्यनारायणको जन्म देती है और तुरन्त व्यावहारिक दुनिया अिस घाट पर कब्जा कर लेती है। अुसके पहले ही यहांसे खिसक जाना अच्छा है। आकाशके सितारे भी खुश होंगे।

मार्च, १९३६

९

दक्षिणगंगा गोदावरी

१

बचपनमें सुबह अुठकर हम भूपाली* गाते थे। अुनमें से ये चार पंक्तियां अब भी स्मृतिपट पर अंकित हैं :

'अुठोनिया प्रातःकाळीं। वदनी वदा चन्द्रमौळी।
श्रीबिंदुमाधवाजवळी। स्नान करा गंगेचें। स्नान करा गोदेचें।।

*　　　　*　　　　*

कृष्णा वेण्या तुंगभद्रा। शरयू कालिंदी नर्मदा।
भीमा भामा गोदा। करा स्नान गंगेचें।।

गंगा और गोदा अेक ही हैं। दोनोंके माहात्म्यमें जरा भी फर्क नहीं है। फर्क कोअी हो भी तो अितना ही कि कलिकालके पापके कारण गंगाका माहात्म्य किसी समय कम हो सकता है, किन्तु गोदावरीका माहात्म्य कभी कम हो ही नहीं सकता। श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन अिस गोदावरीके तीर पर ही बीते थे, और जीवनका दारुण आघात भी अुन्हें यहीं सहना पड़ा था। गोदावरी तो दक्षिणकी गंगा है।

कृष्णा और गोदावरी अिन दो नदियोंने दो विक्रमशाली महाप्रजाओंका पोषण किया है। यदि हम कहें कि महाराष्ट्रका स्वराज्य

* प्रभातिका।

और आंध्रका साम्राज्य अिन्हीं दो नदियोंका ऋणी है, तो अिसमें जरा-सी भी अत्युक्ति नहीं होगी। साम्राज्य बने और टूटे, महाप्रजायें चढ़ी और गिरी, किन्तु अिस अैतिहासिक भूमिमें ये दो नदियां अखंड बहती ही जा रही है। ये नदियां भूतकालके गौरवशाली अितिहासकी जितनी साक्षी हैं अुतनी ही भविष्यकालकी महान आशाओंकी प्रेरक भी हैं। अिनमें भी गोदावरीका माहात्म्य कुछ अनोखा ही है। वह *जितनी सलिल-समृद्ध है अुतनी ही अितिहास-समृद्ध भी है।* गोपाल-कृष्णके जीवनमें जिस तरह सर्वत्र विविधता ही विविधता भरी हुअी है, अैसा अुत्कर्ष ही अुत्कर्ष दिखाअी देता है, अुसी तरह गोदावरीके *अति दीर्घ प्रवाहके किनारे सृष्टि-सौंदर्यकी विविधता और विपुलता* भरी पड़ी है। ब्रह्मदेवकी अेक कल्पनामें से जिस तरह सृष्टिका विस्तार होता है, वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से जिस तरह रामायणी सृष्टिका विस्तार हुआ है, अुसी तरह त्र्यंबकके पहाड़के कगारसे टपकती हुअी गोदावरीमें से ही आगे जाकर राजमहेंद्रीकी विशाल वारिराशिका विस्तार हुआ है। सिंधु और ब्रह्मपुत्राको जिस तरह हिमालयका आलिंगन करनेकी सूझी, नर्मदा और ताप्तीको जिस तरह विंध्य-सतपूड़ाको पिघलानेकी सूझी, अुसी तरह गोदावरी और कृष्णाको दक्षिणके अुन्नत प्रदेशको तर करके अुसे धनधान्यसे समृद्ध करनेकी सूझी है। पक्षपातसे सह्याद्रि पर्वत पश्चिमकी ओर ढल पड़ा, यह मानो अिन्हें पसन्द नहीं आया। अैसा ही जान पड़ता है कि अुसे पूर्वकी ओर खींचनेका अखंड प्रयत्न ये दोनों नदियां कर रही हैं। अिन दोनों नदियोंका अुद्गम-स्थान पश्चिमी समुद्रसे ५०–७५ मीलसे अधिक दूर नहीं है, फिर भी दोनों ८००–९०० मीलकी यात्रा करके अपना जलभार या कर-भार पूर्व-समुद्रको ही अर्पण करती हैं। और अिस कर-भारका विस्तार कोअी मामूली नहीं है। अुसके अन्दर सारा महाराष्ट्र देश आ जाता है, हैदराबाद और मैसूरके राज्योंका अंत-र्भाव होता है, और आंध्र देश तो साराका सारा अुसीमें समा जाता है। मिश्र संस्कृतिकी माता नाअिल नदी हमारी गोदावरीके सामने कोअी चीज ही नहीं है।

त्र्यंबकके पास पहाड़की अेक बड़ी दीवारमें से गोदाका अुद्गम हुआ है। गिरनारकी अूंची दीवार परसे भी त्र्यंबककी अिस दीवारका पूरा खयाल नहीं आयेगा। त्र्यंबक गांवसे जो चढ़ाओ शुरू होती है वह गोदामैयाकी मूर्तिके चरणों तक चलती ही रहती है। अिससे भी अूपर जानेके लिअे बाओं ओर पहाड़में विकट सीढ़ियां बनायी गयी हैं। अिस रास्ते मनुष्य ब्रह्मगिरि तक पहुंच सकता है। किन्तु वह दुनिया ही अलग है। गोदावरीके अुद्गम-स्थानसे जो दृश्य दीख पड़ता है वहीं हमारे वातावरणके लिअे विशेष अनुकूल है। महाराष्ट्रके तपस्वियों और राजाओंने समान भावसे जिस स्थान पर अपनी भक्ति अुंडेल दी है। कृष्णाके किनारे वाओी सातारा और गोदाके किनारे नासिक पैठण महाराष्ट्रकी सच्ची सांस्कृतिक राजधानियां हैं।

२

किन्तु गोदावरीका अितिहास तो सत्य-वीर रामचंद्र और दुःख-मूर्ति सीतामाताके वृत्तांतसे ही शुरू होता है। राजपाट छोड़ते समय रामको दुःख नहीं हुआ, किन्तु गोदावरीके किनारे सीता और लक्ष्मणके साथ मनाये हुअे आनंदका अंत होते ही रामका हृदय अेकदम शतधा विदीर्ण हो गया। बाघ-भेड़ियोंके अभावमें निर्भय बने हुअे हिरण आर्य रामभद्रको दुःखोन्मत्त आर्ते देखकर दूर भाग गये होंगे। सीताकी खोजमें निकले देवर लक्ष्मणकी दहाड़ें सुनकर बड़े बड़े हाथी भी भय-चकित हो गये होंगे। और पशुपक्षियोंके दुःखाश्रुओंसे गोदावरीके विमल जल भी कषाय हो गये होंगे। हिमालयमें जिस तरह पार्वती थी, अुसी तरह जनस्थानमें सीता समस्त विश्वकी अधिष्ठात्री थी। अुसके जाने पर जो कल्पनातीत दुःख हुआ वह यदि सार्वभौम हुआ हो, तो अुसमें आश्चर्य ही क्या है?

राम-सीताका संयोग तो फिर हुआ। किन्तु अुनका जनस्थानका वियोग तो हमेशाके लिअे बना रहा। आज भी आप नासिक-पंचवटीमें घूमकर देखें, चाहे चौमासेमें जायें या गरमीमें, आपको यही मालूम होगा मानो सारी पंचवटी जटायुकी तरह अुदास होकर 'सीता, सीता'

पुकार रही है। महाराष्ट्रके साधु-संतोंने यदि अपनी मंगल-वाणी यहां फैलाओी न होती, तो जनस्थान मानो भयानक अुजाड प्रदेश हो गया होता। गरमीकी धूपको टालनेके लिअे जिस तरह तृणसृष्टि चारों ओर फैल जाती है, अुसी तरह जीवनकी विषमताको भुला देनेके लिअे साधु-संत सर्वत्र विचरते हैं, यह कितने बड़े सौभाग्यकी बात है! जब जब नासिक-त्र्यंबककी ओर जाना होता है तब तब वनवासके लिअे अिस स्थानको पसन्द करनेवाले राम-लक्ष्मणकी आंखोंसे सारा प्रदेश निहारनेका मन होता है। किन्तु हर बार कपिश तृणोंमें से सीतामाताकी कातर तनु-यष्टि ही आंखोंके सामने आती है।

रामभक्त श्रीसमर्थ रामदास जब यहां रहते थे तब अुनके हृदयमें कौनसी अूर्मियां अुठती होंगी! श्रीसमर्थने गोदावरीके तीर पर गोबरके हनुमानकी स्थापना किस हेतुसे की होगी? क्या यह बतानेके लिअे कि पंचवटीमें यदि हनुमान होते तो वे सीताका हरण कभी न होने देते? सीतामाताने कठोर वचनोंसे लक्ष्मण पर प्रहार करके अेक महासंकट मोल ले लिया। हनुमानको तो वे अैसी कोअी बात कह नहीं पातीं! किन्तु जनस्थान और किष्किंधाके बीच बहुत बड़ा अंतर है, और गोदावरी कोअी तुंगभद्रा नहीं है।

* * *

रामकथाका करुण रस द्वापर युगसे आज तक बहता ही आया है। अुसे कौन घटा सकता है? अिसलिअे हम अंत्यज जातिके भाने गये पाडेके मुहसे वेदोंका पाठ करवानेवाले श्री ज्ञानेश्वर महाराजसे मिलने पैठण चलें। गोदावरी जिस तरह दक्षिणकी गंगा है, अुसी तरह अुसके किनारे पर बसी हुआी प्रतिष्ठान नगरी दक्षिणकी काशी मानी जाती थी। यहांके दशग्रंथी ब्राह्मण जो 'व्यवस्था' देते थे, अुसे चारों वर्णोंको मान्य करना पड़ता था। बड़े बड़े सम्राटोंके ताम्रपत्रोंसे भी यहांके ब्राह्मणोंके व्यवस्थापत्र अधिक महत्त्वके माने जाते थे। अैसे स्थान पर शास्त्रधर्मके सामने हृदयधर्मकी विजय दिखानेका काम सिर्फ ज्ञानराज ही कर सकते थे। पैठणमें ज्ञानेश्वरको यज्ञोपवीतका

अधिकार नहीं मिला। सन्यासी शंकराचार्यके अूपर किये गये अत्याचारोंकी स्मृतिको कायम रखनेके लिअे जिस तरह यहाके राजाने नाबुद्री ब्राह्मणो पर कभी रिवाज लाद दिये थे, असी तरह सन्यासी-पुत्र ज्ञानेश्वरका यदि कोअी शिष्य राजपाटका अधिकारी होता तो वह महाराष्ट्रीय ब्राह्मणोंको सजा देता और कहता कि ज्ञानेश्वरको यज्ञोपवीतका अिनकार करनेवाले तुम लोग आगेसे यज्ञोपवीत पहन ही नहीं सकते।

हाथकी अुगलियोंका जिस तरह पंजा बनता है, अुसी तरह बडी बडी नदियोंमें आकर मिलनेवाली और आत्म-विलोपनका कठिन योग साधनेवाली छोटी नदियोंका भी पंजा बनता है। सह्याद्रि और अजिठाके पहाडोंमें जो कोना बनता है अुसमें जितना पानी गिरता है अुस सबको खीच खीच कर अपने साथ ले जानेका काम ये नदिया करती है। धारणा और कादवा, प्रवरा और मुळाको यदि छोड दें तो भी मध्यभारतसे दूर दूरका पानी लानेवाली वर्धा और वैनगगाको भला कैसे भूल सकते है? दो मिलकर अेक बनी हुआी नदीका जिसने प्राणहिता नाम रखा, अुसके मनमें कितनी कृतज्ञता, कितना काव्य, कितना आनद भरा होगा! और ठेठ अीशान कोणसे पूर्व-घाटका नीर ले आनेवाली अप्टवक्रा अिद्रावती और अुसकी सखी श्रमणी तपस्विनी शबरीको प्रणाम किये बिना कैसे चल सकता है?

गोदावरीकी सपूर्ण कला तो भद्राचलमसे ही देखी जा सकती है। जिसका पट अेकमे दो मील तक चौडा है अैसी गोदावरी जब अूचे अूचे पहाडोंके बीचमें से होकर अपना रास्ता बनाती हुअी सिर्फ दो सौ गजकी खाअीमें से निकलती है तब वह क्या सोचती होगी? अपनी सारी शक्ति और युक्ति काममें ले कर नाजुक समयमें अपनी महाप्रजाको आगे ले चलनेवाले किसी राष्ट्रपुरुषकी तरह और ससारको विस्मयमें डालनेवाली गर्जनाके साथ वह यहासे निकलती है। नदीमें आनेवाले घोडा-पूर और हाथी-पूर जैसे भारी पूरोंकी बातें हम सुनते है; किन्तु अेकदम पचास फुट जितना अूचा पूर क्या कभी कल्पनामें भी आ सकता है? पर जो कल्पनामें सभव नहीं है, वह गोदावरीके प्रवाहमें

सभव है। सकडी खाओमे से निकलते हुअे पानीके लिअे अपना पृष्ठभाग भी सपाट बनाये रखना असभव-सा हो जाता है। अर्घ्य देते समय जिस प्रकार अजलिकी छोटी नाली-सी बन जाती है, अुसी प्रकार खाओमें से निकलनेवाले पानीके पृष्ठभागकी भी अेक भयानक नाली बनती है। किन्तु अद्भुत रस तो अिससे भी आगे अधिक है। अिस नालीमें से अपनी नावको ले जानेवाले साहसी नाविक भी वहा मौजूद है! नावके दोनो ओर पानीकी अूची अूची दीवारोको नावके ही वेगसे दौडते हुअे देखकर मनुष्यके दिलमें क्या क्या विचार अुठते होगे?

भद्राचलम्से राजमहेन्द्री या धवलेश्वर तक अखड गोदावरी बहती है। अुसके बाद 'त्यागाय सभृतार्थानाम्' का सनातन सिद्धात अुसे याद आया होगा। यहासे गोदावरीने जीवन-वितरण करना शुरू कर दिया है। अेक ओर गौतमी गोदावरी, दूसरी ओर वसिष्ठ गोदावरी, बीचमे कओ द्वीप और अतर्वेदी जैसे प्रदेश है, और अिन प्रदेशोंमें गोदाके सरस जलसे और काली चिकनी मिट्टीसे पैदा होनेवाले सोनेके जैसे शालिधान्य पर परिपुष्ट होकर वेदघोष करनेवाले ब्राह्मण रहते आये है। अैसे समृद्ध देशको स्वतत्र रखनेकी शक्ति जब हमारे लोग खो बैठे, तब डच, अग्रेज और फ्रेंच लोग भी गोदावरीके किनारे पडाव डालनेको अिकट्ठे हुअे। आज* भी यानानमें फ्रासका तिरगा झडा फहरा रहा है।

३

मद्राससे राजमहेन्द्री जाते समय बेजवाडेमें सूर्योदय हुआ। वर्षाऋतुके दिन थे। फिर पूछना ही क्या था? सर्वत्र विविध छटाओवाला हरा रग फैला हुआ था। और हरे रगका अिस तरह जमीन पर पडा रहना मानो असह्य लगनेसे अुसरे बडे बडे गुच्छ हाथमें लेकर अूपर अुछालनेवाले ताडके पेड जहा तहा दीख पडते थे। पूर्वकी ओर अेक नहर रेलकी सडकके किनारे किनारे बह रही थी। पर किनारा अूचा होनेके कारण अुसका पानी कभी कभी ही दीख पडता था। सिर्फ नितलियोंकी

* सौभाग्यसे आज यह परिस्थिति नही है।

तरह अपने पाल फैलाकर मजारमें खड़ी हुआी नौकाओं परसे ही अुस नहरका अस्तित्व ध्यानमें आता था। बीच बीचमें पानीके छोटे बड़े तालाब मिलते थे। अिन तालाबोंमें विविधरंगी बादलोंवाला अनंत आकाश नहानेके लिअे अुतरा था, अिसलिअे पानीकी गहराअी अनंत गुनी गहरी मालूम होती थी। कहीं कहीं चंचल कमलोंके बीच निस्तब्ध बगुलोंको देखकर प्रभातकी वायुका अभिनंदन करनेका दिल हो जाता था। अैसे काव्यप्रवाहमें से होकर हम कोव्वूर स्टेशन तक आ पहुंचे। अब गोदावरी मैयाके दर्शन होंगे अैसी अुत्सुकता यहींसे पैदा हुअी। पुल परसे गुजरते समय दायीं ओर देखें या बायीं ओर, अिसी अुधेड़बुनमें हम पड़े थे। अितनेमें पुल आ ही गया और भगवती गोदावरीका सुविशाल विस्तार दिखाअी पड़ा।

गंगा, सिंधु, शोणभद्र, अैरावती जैसे विशाल वारि-प्रवाह मैंने जी भरकर देखे हैं। बेजवाड़ेमें किये हुअे कृष्णामाताके दर्शनके लिअे मैंने हमेशा गर्व अनुभव किया है। किन्तु राजमहेन्द्रीके पासकी गोदावरीकी शोभा कुछ अनोखी ही थी। अिस स्थान पर मैंने जितना भव्य काव्यका अनुभव किया है, अुतना शायद ही और कहीं कहता देखा होगा। पश्चिमकी ओर नजर डाली तो दूर दूर तक पहाड़ियोंका अेक सुन्दर झुंड बैठा हुआ नजर आया। आकाशमें बादल घिरे होनेसे कहीं भी धूप न थी। सांवले बादलोंके कारण गोदावरीके धूलि-धूसर जलकी कालिमा और भी बढ़ गअी थी। फिर भवभूतिका स्मरण भला क्यों न हो? अूपरकी और नीचेकी अिस कालिमाके कारण सारे दृश्य पर वैदिक प्रभातकी सौम्य सुन्दरता छाअी हुअी थी। और पहाड़ियों पर अुतरे हुअे गअी सफेद बादल तो बिलकुल ऋषियोंके जैसे ही मालूम होते थे। अिस सारे दृश्यका वर्णन शब्दोंमें कैसे किया जा सकता है?

अितना सारा पानी कहांसे आता होगा? विभूतियोंमें से विजयके साथ पार हुआ देश जैसे वैभवकी नयी नयी छटायें दिखाता जाता है और चारों ओर समृद्धि फैलाता जाता है, वैसे ही गोदावरीका प्रवाह पहाड़ोंसे निरन्तर अपने गौरवके साथ आता हुआ दिखाअी देता था। छोटे बड़े जहाज नदीके बच्चों जैसे थे। माताके स्वभावसे परिचित होनेके कारण अुसकी गोदमें चाहे जैसे नाचें तो अुन्हें कौन

रोकनेवाला था? किन्तु वच्चोंकी अपमा तो अिन नावोंकी अपेक्षा प्रवाहमें जहां तहां पैदा होनेवाले भवरोंको देनी चाहिये। वे कुछ देर दिखाओी देते, वडे तूफानका स्वांग रचते, और अेकाध क्षणमें हस देते। और टूट पडते। चाहे जहांसे आते और चाहे जहां चले जाते या लुप्त हो जाते।

अितने वडे विशाल पटमें यदि द्वीप न हो तो अुतनी कमी ही मानी जायगी। गोदावरीके द्वीप मशहूर हैं। कुछ तो पुराने धर्मकी तरह स्थिर रूप लेकर बैठे हैं। किन्तु कओी-अेक तो कविकी प्रतिभाके समान हर समय नया नया स्थान लेते हैं और नया नया रूप धारण करते हैं। अिन पर अनासक्त बगुलोंके सिवा और कौन खडा रहने जाय? और जब बगुले चलने लगते हैं तब वे अपने पैरोंके गहरे निशान छोडे बगैर थोडे ही रहते हैं। अपने धवल चरित्रका अनुसरण करनेवालोंको दिशा-सूचन न करा दें तो वे बगुले ही कैसे!

नदीका किनारा यानी मानवी कृतज्ञताका अखंड अुत्सव। सफेद सफेद प्रासाद और अूंचे अूंचे शिखर तो अेक अखंड अुपासना है ही। किन्तु अितनेसे ही काव्य संपूर्ण नहीं होता। अतः भक्त लोग हर रोज नदीकी लहरों परसे मंदिरके घंटनादकी लहरोंको अिस पारसे अुस पार तक भेजते रहते हैं।

संस्कृतिके अुपासक भारतवासी अिसी स्थान पर गंगाजलके कलश आधे गोदामें अुडेलते हैं और फिर गोदाके पानीसे अुन्हें भरकर ले जाते हैं। कितनी भव्य विधि है! कितना पवित्र भावप्रधान काव्य है! यह भक्तिरव प्रत्येक हृदयमें भरा हुआ है। वह घंटनाद और वह भक्तिरव पूर्वस्मृतिने ही सुनाया। दरअसल तो केवल अेंजिनकी आवाज ही सुनाओी देती थी। आधुनिक संस्कृतिके अिस प्रतिनिधिके प्रति अपनी घृणाको यदि हम छोड दें तो रेलके पहियोंका ताल कुछ कम आकर्षक नहीं मालूम होता। और पुल पर तो अुसका विजयनाद सत्रामक ही सिद्ध होता है।

पुल पर गाडी काफी देर चलनेके बाद मुझे खयाल आया कि पूर्व दिशाकी ओर तो देखना रह ही गया। हम अुस ओर मुडे। वहां

बिलकुल नयी ही शोभा नजर आयी। पश्चिमकी ओर गोदावरी जितनी चौडी थी, अुससे भी विशेष चौडी पूर्वकी ओर थी। अुसे अनेक मार्गों द्वारा सागरसे मिलना था। गरिमपतिसे जब सरिता मिलने जाती है तब अुसे संभ्रम तो होता ही है। किन्तु गोदावरी तो धीरोदात्त माता है। अुसका संभ्रम भी अुदात्त रूपमें ही व्यक्त हो जाता है। अिस ओरके द्वीप अलग ही किस्मके थे। अुनमें वनश्रीकी शोभा पूरी-पूरी खिली हुअी थी। ब्राह्मणोंकी या किसानोंके झोंपडे अिस ओरसे दिखाओी नहीं पडते थे। बाढ़के पानीके हमलेके सामने टक्कर लेनेवाले अिन द्वीपोंमें किसीने अुंचे प्रासाद बनाये होते तो शायद वे दूरसे ही दीख पडते। प्रकृतिने तो केवल अूंचे अूंचे पेडोंकी विजय-पताकायें खड़ी कर रखी थीं। और बायीं ओर राजमहेंद्री और धवलेश्वरकी सुखी बस्ती आनंद मना रही थी। अैसे विरल दृश्यसे तृप्त होनेके पहले ही नदीके दायें किनारे पर अुन्मत्तताके साथ बहता हुआ काजलकी सफेद कलगियोंका स्थावर प्रवाह दूर दूर तक चला हुआ नजर आया। नदीके पानीमें अुन्माद था, किन्तु अुसकी लहरें नहीं बनी थीं। कलगियोंके अिस प्रवाहने पवनके साथ षड्यंत्र रचा था, जिसलिअे वह मनमानी लहरें अुछाल सकता था। जहां तक नजर जा सकती थी वहां तक देखा। और नजरसे पूछा यहां "क्यों हो?" किन्तु कलगियोंका प्रवाह तो बहता ही जा रहा था। गोदावरीके विशाल प्रवाहके साथ भी होड करते अुसे संकोच नहीं होता था। और वह संकोच क्यों करता? माता गोदावरीके विशाल पुलिन पर अुसने मातांका स्तन्यपान क्या कम किया था?

माता गोदावरी! राम-लक्ष्मण-सीतासे लेकर वृद्ध जटायु तक सबको तूने स्तन्यपान कराया है। तेरे किनारे शूरवीर भी पैदा हुअे हैं, और तत्त्वचिंतक भी पैदा हुअे हैं। संत भी पैदा हुअे हैं और राजनीतिज्ञ भी। देशभक्त भी पैदा हुअे हैं और अीश-भक्त भी। चारों वर्णोंकी तू माता है। मेरे पूर्वजोंकी तू अधिष्ठात्री देवता है। नयी नयी आशायें लेकर मैं तेरे दर्शनके लिअे आया हूं। दर्शनसे तो कृतार्थ हो गया हूं। किन्तु मेरी आशायें तृप्त नहीं हुअी हैं। जिस प्रकार तेरे किनारे रामचंद्रने दुष्ट

रावणके नाशका सकल्प किया था, वैसा ही सकल्प मैं दूसरे अपने मनमें लिये हुअे हू । तेरी कृपा होगी तो हृदयमें से तथा देशमें से रावणका राज्य मिट जायेगा, रामराज्यकी स्थापना हाने मैं देखूगा और फिर तेरे दर्शनके लिअे आअूगा। और कुछ नहीं तो वाल्मीकि श्लोकोंके स्थावर प्रवाहकी तरह मुझ अुन्मत्त बना दे, जिससे बिना संकोचके अेक-ध्यान होकर मैं माताकी सेवामें रत रहू मरू और बाकी सब कुछ भूल जाअू। तेरे नीरमें अगाध शक्ति है। तेरे नीरका अेक बिंदुका सेवन भी व्यर्थ नहीं जायेगा।

अक्तूबर, १९३१

१०

वेदोंकी धात्री तुंगभद्रा

जलमग्न पृथ्वीको अपने शूलदतसे बाहर निकालनेवाले वराह भगवानने जिस पर्वत पर अपनी थकान दूर करनेके लिअे आराम किया, अुस पर्वतका नाम वराह-पर्वत ही हो सकता है। भगवान आराम करते थे तब अुनके दोनों दतोंसे पानी टपकने लगा और अुसकी धाराअें पैदा हुअीं। बायें दतकी धारा हुअी तुगा नदी और दाहिने दतसे निकली भद्रा नदी। आज अिस अुद्गम-स्थानको कहते हैं गगामूल और वराह-पर्वतको कहते हैं बाबाबुदान। बाबाबुदान शायद वराह-पर्वत नहीं है, लेकिन अुसका पडोसी है। तुगाके किनारे शकराचार्यका शृगेरी मठ है। मैंने तुगाके दर्शन किये थे तीर्थहल्ळीमें। (कन्नड भाषामें हळ्ळीके मानी हैं ग्राम।) तीर्थहळ्ळीमें मैं शायद अेक घटे जितना ही ठहरा था। लेकिन वहाकी नदीके पात्रकी शोभा देखकर खुश हुआ था। तीर्थहळ्ळीका माहात्म्य तो मैं नहीं जानता, लेकिन कन्नड भाषाकी अेक छोटीसी लघुकथामें मैंने तीर्थहळ्ळीका वर्णन पढ़ा था। वही मेरे लिअे तीर्थहळ्ळीका स्मरण कायम करनेके लिअे काफी है। तुगाके किनारे शिमोगा शहरके पास किसी

समय महात्मा गांधीके साथ मैं घूमने गया था। अिस कारण भी वह मेरे स्मृतिपट पर अंकित है।

भद्राके किनारे बेंकिपुर आता है। कनडी भाषामें अग्निको बेंकि कहते हैं। क्या भद्राका पानी बेंकिपुरकी आग बुझानेके लिअे काफी नहीं था?

तुंगा और भद्राका संगम होता है कूडलीके पास। शायद अिसी संगमके महादेवके भक्त थे श्री बसवेश्वर, जो अेक राजाके प्रधान होने पर भी लिंगायत पंथकी स्थापना कर गये। बसवेश्वरके कन्नड गद्यवचनोंके अंतमें 'कूडल-संगम देवराया' का जिक्र बार बार आता है। अुसे पढ़कर 'मीराके प्रभु गिरधर नागर' का स्मरण हुअे बिना नहीं रहता। कूडलीके पास जो तुंगभद्रा बनती है वह आगे जाकर कुर्नूलके पास मेरी माता कृष्णासे मिलती है। अिस बीच कुमुद्वती, वरदा, हगरी और वेदावति जैसी नदियां तुंगभद्रासे मिलती हैं। (वेदावति भी तुंगभद्रा जैसी द्वंद्व नदी है। वेद और अवति मिलकर वह बनती है)। अिस प्रदेशमें तुल्यबल द्वंद्व संस्कृतिका ही जोरवाला होगा। क्योंकि तुंगभद्राके किनारे ही हरिहर जैसी पुण्यनगरीकी स्थापना हुअी है। शैव और वैष्णवोंका झगड़ा मिटानेके लिअे किसी सुनय-सज्जनने हरि और हर दोनोंको मिला कर अेक मूर्ति बना दी। अुसके मंदिरके आसपास जो शहर बसा अुसका नाम हरिहर ही पड़ा।

तुंगभद्राका पात्र पथरीला है। जहां देखें गोल-मटोल बड़े बड़े पत्थर नदीके पात्रमें स्नान करते पाये जाते हैं। अैसे पत्थर कभी कभी अिस प्रदेशमें टेकरियोंके सिर पर भी अेकके अूपर अेक विराजमान पाये जाते हैं। अिन्हीं पत्थरोंके बीच अेक प्रचंड विस्तार पर विजयनगर साम्राज्यकी राजधानी थी।

विजयनगरके खंडहर देखनेके लिअे जब मैं हॉस्पेटमें विश्राम गया था तब अिन सोनेरंग बट्टोंका व चट्टानोंका दर्शन किया था। विजयनगरके अप्रतिम कारीगरीके भग्न मंदिरोंका दर्शन करते करते मेरा हृदय सम्राट् कृष्णरायका श्राद्ध कर रहा था। रातको विरूपाक्षके मंदिरमें हम सो गये तब तीन सौ साल जिसकी कीर्ति कायम रही अुस साम्राज्यके

वैभवके ही स्वप्न मैंने देखे। दूसरे दिन ब्राह्म मुहूर्तमें अुठकर हम नजदीकके मातग पर्वतके शिखर पर जा पहुचे। वहा हमें अरुणोदयका और बादमें अुतने ही काव्यमय सूर्योदयका दृश्य देखना था। मातग पर्वतकी चोटी परसे तुगभद्राका दर्शन करके हम धीरे धीरे लेकिन कूदते कूदते नीचे अुतरे।

जब रावण सीतामाताको अुठाकर गगनमार्गसे जा रहा था तब सीताके वल्कलका अचल यहाकी चट्टानोको घिस गया था। अुसकी रेखाअें आज भी यहाके पत्थरो पर पाअी जाती हैं।

अभी अभी चार साल पहले मैंने कुर्नूलके पास तुगभद्राको अपना समस्त जीवन कृष्णाको अर्पण करते देखा, और अुसके पाससे स्वार्पणकी दीक्षा ली।

सुनता हू कि अब अिस तुगभद्रा पर बाध बाधकर अुसके अिकट्ठा किये हुअे पानीसे सारे मुल्कको समृद्धि पहुचायी जायेगी और अुसी पानीसे बिजली पैदा करके अुसकी शक्तिसे अुद्योगोका विकास किया जायेगा। माताकी सेवाकी भी कभी कोअी मर्यादा हो सकती है?

नदीके प्रवाहमें ये हाथीके जैसे बडे बडे पत्थर बादमें आकर पडे हैं या हाथीके जैसे पत्थरोमें से ही नदीने अपना रास्ता खोज निकाला है, अिसकी खोज कौन कर सकता है? दक्षिणमें वैदिक सस्कृतिके विजयका सूचन करनेवाला विजयनगरका साम्राज्य अिसी नदीके किनारे निर्माण हुआ। और अिसी नदीके किनारे वह कच्चे घडेके समान टूट गया। विजयनगरके साम्राज्यकी कीर्ति-पताका त्रिखडमें फहराती थी। चीनका सम्राट्, बगदादका बादशाह और विजयनगरका महाराजाधिराज, तीनोंका वैभव सबसे बडा माना जाता था। अुस समय क्या तुगभद्रा आजके जैसी ही दिखाअी देती होगी? नही तो कैसी दिखाअी देती होगी? नदी क्या मनुष्यकी कृति है, जिससे अुसके वैभवमें अुत्कर्ष और अपकर्ष हो?

मुळा और मुठा मिलकर जैसे मळामुठा नदी बनी है, वैसे ही तुगा और भद्राके सगमसे तुगभद्रा बनी है। 'द्वद्व सामासिकस्य च' के न्यायसे अिन दोनो नदियोमें अुच्चनीच भाव तनिक भी नही है। दोनो

नाम समान भावसे साथ साथ बहते हैं। जिस नदीके पानीकी मिठास और अुपजाअूपनकी तारीफ प्राचीन कालसे होती आयी है। सभी नदी-भक्तोंने स्वीकार किया है कि गंगाका स्नान और तुंगाका पान मनुष्यको मोक्षके रास्ते ले जाता है। मोटरकी यात्रा यदि न होती तो तुंगभद्राको मैं अनेक स्थानों पर अनेक तरहसे देख लेता। तुंगभद्रा अेक महान संस्कृतिकी प्रतिनिधि है। आज भी वेदपाठी लोगोंमें तुंगभद्राके किनारे बसे हुअे ब्राह्मणोंके अुच्चारण आदर्श और प्रमाणभूत माने जाते हैं। वेदोंका मूल अध्ययन भले सिंधु और गंगाके किनारे हुआ हो, परन्तु अुनका यथार्थ सादर रक्षण तो सायणाचार्यके समयसे तुंगभद्राके ही किनारे हुआ है।

१९२६–'२७

११

नेल्लूरकी पिनाकिनी

नेल्लूर यानी धानका गांव। दक्षिण भारतके अितिहासमें नेल्लूरने अपना नाम चिरस्थायी कर दिया है। बेजवाडेसे मद्रास जाते हुअे रास्तेमें नेल्लूर आता है।

भारत सेवक समाजके स्व० हणमंतरावने नेल्लूरसे कुछ आगे पल्लीपाडु नामक गांवमें अेक आश्रमकी स्थापना की है। अुसे देखनेके लिअे जाते समय सुभग-सलिला पिनाकिनीके दर्शन हुअे। श्रीमती वनाम्माके पवित्र हाथोंसे काते हुअे सूतकी धोतीकी भेंट स्वीकार करके हम आश्रम देखनेके लिअे चले। कुछ दूर तक तो बगीचे ही बगीचे नजर आये। जहां तहां नहरोंमें पानी दौड़ता था, और हरियाली ही हरियाली हंसती दिखाअी देती थी।

बादमें आयी रेत। आगे, पीछे, दायें, बायें रेत ही रेत। पवन अपनी अिच्छाके अनुसार जहां तहां रेतके टीले बनाता था, और दिल बदलने पर अुतनी ही सहजतासे अुन्हें बिखेर देता था। अैसी रेतमें

घातिसे गुजर करनेवाले तुगकाय ताडवृक्ष आनदके साथ डोल रहे थे। धूपसे अकुलाकर वे खुद अपने ही अूपर चमर डुलाते थे या हमारे जैसे पथिको पर तरस खाकर पखा करते थे, यह भला ताडोने कभी स्पष्ट किया है? दोपहरकी धूप कर्मकाडी ब्राह्मणोके समान कठोरतासे तप रही थी। पाव जलते थे। सिर तपता था। और शरीरके बीचके हिस्सेको सम-वेदना देनेके लिअे प्यास अपना काम करती थी।

अिस प्रकार त्रिविध तापसे तप्त होकर हम आश्रममें पहुचे। वहा मैं अेक बडे टेकरे पर जा चढा। और अेकाअेक पिनाकिनीका तरल प्रवाह आखोमें बस गया। कितना शीतल अुसका दर्शन था! गेहूके खेके जैसी सफेद रेत पर स्फटिक जैसा पानी बहता हो, और अूपरसे चड भास्करके प्रतापी किरण बरसते हों, अैसी शोभाका वर्णन कैसे हो सकता है? मानो चादीके रसकी कोठी भट्टीका ताप सहन न कर सकनेके कारण टूट गयी है, और अदरका रस जिस ओर मार्ग मिले अुस ओर दौड रहा है! पवनने दिशा बदली और पिनाकिनी परसे बहकर आनेवाला ठडा पवन सारे शरीरको आनद देने लगा। पासकी अमराअीके अेक पेड पर चढकर दो डालियोके बीच आरामकुर्सी जैसा स्थान ढूढकर मैं बैठ गया। दूर ताडवृक्ष डोल रहे थे। वयावृद्ध आम्रवृक्ष छाव फैला रहे थे। और पिनाकिनी शीतल वायु फूक रही थी। क्या नदनवनमें भी अिससे अधिक सुख मिलता होगा?

नदी-किनारेके अिस काव्यका पान करके आखे तृप्त हुअी और मुदने लगी। स्वर्गीय अस्थिर आम्रासनसे भ्रष्ट होनेका डर यदि न होता तो जाग्रतिके अिस काव्यसे तुलना हो सके अैसा स्वप्नराज्य मैं वहा जरूर अनुभव कर लेता।

पिनाकिनीका पट बहुत बडा है। सुना है कि वर्षाऋतुमें वह रुद्रावतार धारण करती है। अुसकी अिस लीलाके वर्णनोकी शैली परसे मालूम हुआ कि पिनाकिनीके प्रति यहाके लोगोकी कुछ अनोखी ही भक्ति है। असलमें पिनाकिनी दो हैं। जिसे मैं देख रहा था वह है अुत्तर पिनाकिनी अथवा पेन्नेर।' यह ठेठ नदीदुर्गसे आती है। वहासे

आते आते यह जयमगली, चित्रावती और पापघ्नीका पानी ले आती है। मानवने अिन नदियोंसे स्वार्थसे बहुत लाभ अुठाया है। और अब तो तुगभद्राका भी कुछ पानी पेन्नारको मिलेगा। और यह सब धान अुगानेके काममें आयेगा।

१९२६–'२७

१२

जोगका प्रपात

ठेठ बचपनमें ही, मैं पश्चिम समुद्रके किनारे कारवारमें था तबसे, गिरसप्पाके बारेमें मैंने सुना था। अुस समय सुना था कि कावेरी नदी पहाड़ परसे नीचे गिरती है और अुसकी अितनी बड़ी आवाज होती है कि दो मीलकी दूरी पर अेकके अूपर अेक रखी हुअी गागरें स्वाके धक्केसे ही गिर जाती हैं! तब फिर अुस प्रपातकी आवाज तो यहां तक पहुचती होगी? बादमें जब भूगोल पढ़ने लगा तब मनमें सदेह पैदा हुआ कि कावेरीका अुद्गम तो ठेठ कुर्गमें है और वह पूर्व-समुद्रसे जा मिलती है। वह पश्चिम घाटके पहाड़ परसे नीचे गिर ही नहीं सकती। तब गिरसप्पामें जो गिरती है वह नदी दूसरी ही होगी। अुसे तो शीघ्रतासे होन्नावरके पास ही पश्चिम-समुद्रसे मिलना था। अिसलिअे सवा-सौ, डेढ़-सौ फुटसे अितनी अूचाअी से वह कूद पड़ी है। अुस नदीका नाम क्या होगा?

नायगराके प्रपातके सभी वर्णन मेरे पढ़नेमें आये थे। प्रकृति माताका अमरीकाको दिया हुआ वह अद्भुत आभूषण है। दुनिया भरके लोग अुसकी यात्राके लिअे जाते हैं। कभी लोगोंने बड़े मजबूत पीपेमें बैठकर अुस प्रपातमें से पार होनेके प्रयत्न किये हैं आदि वर्णन जैसे जैसे मैं अधिक पढ़ता गया वैसे वैसे मेरा कुतूहल बढ़ता गया। और दिखाओसे किये हुअे चित्र और अिनिमेट (Bioscopes) नायगराको नजरके सामने प्रत्यक्ष करने लगे। अिस प्रकार नायगराका अप्रत्यक्ष दर्शन जैसे जैसे बढ़ता

गया, वैसे वैसे बचपनमें सुने हुअे अुस गिरसप्पाके प्रपातकी मानसपूजा बढती गयी। बादमें जब यह पता चला कि नायगरा तो सिर्फ १६४ फुटकी अूचाअीसे गिरता है, जब कि गिरसप्पाकी अूचाअी ९६० फुट है, तब तो मेरे अभिमानका कोअी पार न रहा। सबसे मुख्य और ससारका सबसे बडा पर्वत हिन्दुस्तानमें है। सिंधु, गगा, और ब्रह्मपुत्रा जैसी नदियोंके बारेमें किसी भी देशको जरूर गर्व हो सकता है। यह सिद्ध करनेके लिअे कि सबसे लबी नदी हमारे ही यहा है, अमरीकाको दो नदियोकी लबाअी मिलाकर अेक करनी पडी। मिसोरी और मिसिसिपीको अलग अलग माने तो अुनकी लबाअी कितनी होगी? हिन्दुस्तानका अितिहास जिस तरह पृथ्वी पर सबसे पुराना है, अुसी तरह हिन्दुस्तानकी भू-रचना भी सारे ससारमें अद्भुत है।

क्या हिन्दुस्तान केवल प्रपातके बारेमें हार जायगा? सारे ससारने कबूल किया है कि अशोकके समान दूसरा सम्राट् दुनियामें नहीं हुआ है। भूगोलमें भी लोगोको स्वीकारना चाहिये कि भव्यतामें गिरसप्पासे (अुसका सही नाम जोग है) मुकाबला हो सके अैसा दूसरा अेक भी प्रपात ससारमें नही है।

कारवल राजकीय परिषद्के लिअे मैं दक्षिण कर्णाटकमें गया था तब अुम्मीद रखी थी कि अगुबा घाट चढकर शिमोगा होते हुअे गिरसप्पा देखनेके लिअे जाअूगा। किन्तु वैसा नहीं हो सका।

मनसा चिंतितं कार्यं दैवेनान्यत्र नीयते।

निराशामें मैंने मान लिया कि अिस चिरमचिन आशासे आखिर मैं हमेशाके लिअे वचित हो गया हू और गिरसप्पाका दर्शन मुझे ध्यानके द्वारा ही करना होगा।

किन्तु अितना तो जान लिया था कि जोग मैसूर राज्यकी सीमा पर है। वहा जानेके दो रास्ते हैं। अूपरका रास्ता शिमोगा सागर होकर जाता है और दूसरा नदीके मुखकी ओरसे जाता है। अिसमें बदर होन्नावरसे नावमें बैठकर जगलोंको पार करके गिरसप्पा गाव तक जाना होता है और वहासे घाट चढना पडता है। दोनों रास्तोंसे जाकर आये हुअे लोग कहते हैं कि अेक ओरकी शोभा दूसरी ओर देखनेको

नहीं मिलती। यह तो कहा ही नहीं जा सकता कि अेक ओरकी शोभा दूसरी ओरकी शोभासे अुतरती है। अेक रास्तेसे जाअूं और दूसरी ओरका साक्षात् अनुभव न करूं, तब तक तो मुझे कबूल करना ही चाहिये कि मैंने जोगके आधे ही दर्शन किये हैं।

गुजरातमें बाढ़ आयी थी अुस समय गांधीजी अपनी बीमारीके दिन बंगलोरमें बिता रहे थे। मैं अुनसे मिलने गया था। वहांसे मैसूर राज्यमें घूमते घामते गांधीजी सागर तक पहुंचे। श्री गंगाधरराव और राजगोपालाचार्य साथमें थे। सागर पहुंचनेके बाद गिरसप्पा देखनेके लिअे न जाना तो मेरे लिअे असंभव था। मोटरसे अेक ही घण्टेका रास्ता था। शिमोगामें तुंगाके किनारे घूमने गये थे तब मैंने गांधीजीसे आग्रह किया था, "आप गिरसप्पा देखने चलिये न? लॉर्ड कर्जन सिर्फ गिरसप्पा देखनेके लिअे खास तौर पर यहां आये थे। अिस ओर आना फिर कब होगा?" गांधीजी बोले, "मुझसे अितनी भी मनमानी नहीं हो सकेगी। तुम जरूर हो आओ। तुम देख आओगे तो विद्यार्थियोंको भूगोलका अेकाध पाठ पढ़ा सकोगे।" मैंने दलील पेश की: "मगर यह सचमुच अेक अद्भुत दृश्य है। नायगरासे जोग छः गुना अूंचा है। ९६० फुट अूपरसे पानी गिरता है। आपको अेक बार अुसे देखना ही चाहिये।"

अुन्होंने पूछा, "बारिशका पानी आकाशसे कितनी अूंचाअीसे गिरता है?" और मैं हार गया। मनमें कहा "स्थितप्रज्ञः किं प्रभाषेत? किमासीत? व्रजेत किम्?"

मुझे मालूम था कि गांधीजीको सबकी तरह सृष्टि-सौन्दर्यका भी बड़ा शौक है। घूमने जाते हुअे सूर्यास्तकी शोभाकी ओर या बादलोंमें से झांकते हुअे किसी अकेले सितारेकी ओर अुन्होंने मेरा ध्यान किसी समय खींचा न हो अैसी बात नहीं थी। किन्तु प्रजाकी सेवाका व्रत लिये हुअे गांधीजी जैसे सेवक महात्मा मनमानी किस तरह कर सकते हैं?

कुलशिखरिणः क्षुद्रा नैते न वा जलराशयः।

अेक बात अिस तरह समाप्त हुअी अिसलिअे मैंने दूसरी बात शुरू कर दी "आप नही आते अिसलिअे महादेवभाअी भी नही आते। आप अुनसे कहगे तो ही वे आयेंगे।"

"अुसकी अिच्छा हो तो वह भले तुम्हारे साथ जाये। मैं मना नही करूगा। किन्तु वह नही आयेगा। मैं ही अुसका गिरसप्पा हू।"

बाकीके हम सब ठहरे दुनियवी आदर्शके लोग! पहाड परसे गिरता हुआ प्रपात चर्मचक्षुसे न देखे तब तक हमें तृप्ति नही हो सकती थी। अिसलिअे भोजनके पहले ही हम सागरसे रवाना हुअे और मोटरकी मददसे जगल पार करने लगे। पहाडोको कुरेदकर रेलवेवाले जब खोह या सुरग बनाते हैं तब हमें बहुत आश्चर्य होता है। किन्तु बम्बओंकी बस्तीसे भी घने सह्याद्रिके जगलोंमें से रास्ता तैयार करना अुससे भी अधिक कठिन है। यहा आपका डायनेमाअिट (सुरग) नही चलेगा। तनेको काटनेके बाद भी अेक अेक पेडको शाखाओंके जालसे मुक्त करना हिन्दू-मुसलमानोंके झगडोको निबटने जितना कठिन काम है। खडाला घाटकी गहरी खोहके बीचोबीच जाने पर आदमी जिस भयानक रमणीयताका अनुभव करता है अुसी तरहकी स्थितिका अनुभव अिन जगलोंमें होता है। अैसे जगलोंमें हाथी, बाघ या अजगर जैसे प्राणी ही शोभा देते हैं। अिनमें मनुष्य तो बिलकुल तुच्छ प्राणी मालूम होता है। लगता है, यह अैसे जगलमें कहासे आ गया!

खैर, हम जगल पार करके शरावतीके किनारे पहुचे। अिस ओर अुसे भारगी भी कहते हैं। भारगी यानी बारहगगा। यहाके लोग यदि यह मानते हो कि गगा नदीसे अिस नदीका माहात्म्य बारह गुना अधिक है, तो हम अुनसे झगडा नही करेंगे। हरेक बच्चेको अपनी ही मा सर्वश्रेष्ठ मालूम होती है न? पानी रिमझिम बरस रहा था। यहा गगनभेदी महावृक्ष भी थे, और छोटे-बडे झाड-झखाड भी थे। अमर घास भी थी और जमीन तथा पेडोकी बूढी छाल पर अुगनेवाली शैवाल (काओ) भी थी। अुस पारके छोटे-बडे पेड नदीका पानी कितना ठडा या गहरा है यह जाचनेके लिअे अपने पत्तोंवाले हाथ पानीमें

डालते थे। और कुहरेके चंद बादल आलमी गाड़की तरह जिधर-उधर भटक रहे थे।

नदीको देखकर हमेशा सवाल अुठता है कि यह नदी कहांसे आती है और कहां जाती है? मेरे मनमें तो हमेशा नदी कहांसे आती है, यही सवाल प्रथम अुठता है। दूसरोंके मनमें भी यही सवाल अुठता होगा। जिसका क्या कारण है? नदी कहां जाती है, यह जानना आसान है। नदीमें कूद पड़े कि वह हमें अनायास अपने साथ ले चलती है। अुतनी हिम्मत न हो तो अेकाध पेड़के तनेको कुरेदकर बस अुसमें बैठ जाअिये। किन्तु नदी कहांसे आती है, यह जाननेके लिअे प्रतीप गतिसे जाना चाहिये। अैसा तो सिर्फ ऋषिगण ही कर सकते हैं। अुस दिनका दृश्य अैसा था जिससे मनमें संदेह अुत्पन्न होता था कि भारंगी या शरावतीका पानी पहाड़से आता है या बादलोंसे?

नावमें बैठकर हम अुस पार गये। किनारेकी जमीनसे कभी नन्हें नन्हें झरने कूद कूदकर नदीमें गिरते थे। अुन परसे हम सहज अनुमान लगा सके कि अगले दिन भारी बरसात होनेके कारण नदीका पानी काफी बढ़ गया था। आज वह करीब पांच फुट अुतरा था। नाव हमें नीचे अुतारकर दूसरोंको लाने वापस गअी। शान्त पानीमें नाव जब डाडकी डब् डब् आवाज करती हुअी जाती या आती है अुस समयका दृश्य कितना सुंदर मालूम होता है! और जब यह नाव हमारे प्रियजनोंको अपने पेटमें स्थान देकर अुन्हें गहरे पानीकी सतह परसे खींचकर लाती है, तब चिन्ताका कोअी कारण न होते हुअे भी मनमें डर मालूम हुअे बिना नहीं रहता। राजगोपालाचार्य अपने पुत्र और पुत्रीको साथ लेकर नावमें बैठने जा रहे थे। मैंने अुनसे कहा, 'हमारे पुरखोंने कहा है कि अेक ही कुटुंबके सब लोग अेकसाथ अेक ही नावमें बैठें यह ठीक नहीं है। या तो पिता हमारे साथ आयें या पुत्र, दोनों नहीं।' साथी लोग अिस रिवाजकी चर्चा करने लगे। किसीको जिसमें प्रतिष्ठाकी बू आअी, किसीको और कुछ सूझा। किन्तु किसीके ध्यानमें यह बात नहीं आयी कि सर्वनाशकी संभावनाको टालनेके लिअे ही यह नियम बनाया गया है। मुझे यह अर्थ स्पष्ट करके वायुमण्डलको विषण्ण नहीं बनाना

था। अिसलिअे पुरखोंकी बुद्धिकी निंदा सुनता हुआ मैं अुस पार पहुचा। जब नाव मझधारमें पहुची तब मंत्र बोलकर आचमन करना मैं नही भूला। नदीके दर्शनके साथ स्नान, पान और दानकी विधि होनी ही चाहिये। तभी कहा जायगा कि नदीका पूरा साक्षात्कार किया।

दूसरी टुकडी आ पहुची और हम दाहना आरके रास्तेसे चलने लगे। नदीका वह बाया किनारा था। रास्तेके बडे बडे पेडोंको मस्जिदके स्तभोकी तरह सीधे अूचे जाते देखकर हमें आनद हुआ। हमारी टोली अितनी बडी थी कि अिस निर्जन अरण्यमें देखते ही देखते हमारा वार्ताविनोद और हमारा अट्टहास्य चारो ओर फैल गया। मगर कितनी देर तक? हम कुछ ही दूर गये होगे कि नदीने अपनी गभीर ध्वनि शुरू की। अिस आवाजको किसकी अुपमा दी जाय? अितनी गभीर आवाज और कही सुनी हो तभी तो अुपमा दी जा सके न? मेघगर्जना भीषण जरूर होती है, और यह भी सच है कि वह सारे आकाशमें फैल जाती है। किन्तु वह सतत नही होती। यहा तो आप सुन सुनकर थक जायें तो भी आवाज रुकती ही नहीं। क्या यहा बादल टूट पडते हैं? क्या तोपें छूटती हैं? अथवा पहाडके बडे बडे पत्थरोंकी धानी फूटती है? या नदी अपना ध्यानमौन छोडकर महारुद्रका स्तवराज बोलती है?

'अब कौनसा दृश्य आयेगा?', 'अब कौनसा दृश्य आयेगा?' अैसे कुतूहलसे आखें फाडकर चारो ओर देखते देखते हम मुसाफिरखाने (डाकबगले) तक पहुचे। जहासे प्रपातका दर्शन सबसे सुन्दर होता है, वहीं मैसूर राज्यकी ओरसे यह अतिथिशाला बनायी गयी है। हम निरीक्षणके चबूतरे पर जा पहुचे। मगर यह क्या! सर्वव्यापी कुहरेके अलावा और कुछ दिखायी ही नही देता था। और प्रपात अपनी गभीर आवाजसे सारी घाटीको गूजा रहा था। ठीक दोपहरको भी सूर्यके दर्शन नही हो पाये। जहा देखें वहा कुहरा ही कुहरा! कुहरेके घने बादल मानो कुरुक्षेत्रका महायुद्ध मचा रहे हो और जोग अपने तालसे अुनका साथ दे रहा हो। अितनी अुम्मीदके साथ आनेके बाद अिस तरहका तमाशा हमें कभी देखनेको नही मिला था। मिनट पर

मिनट बीतते जाते थे और हमारी निराशाके साथ कुहरा भी घना होता जाता था। आखिर हम मौन तोड़कर आपसमें बातें करने लगे। बातें करनेके लिअे कोअी खास विषय नहीं था, किन्तु निराशाकी शून्यताको भरनेके लिअे कुछ तो चाहिये था।

क्या पितृदेव कुपित हो गये हैं या वरुणदेव अप्रसन्न हो गये हैं? मैं यह सोच ही रहा था कि जितनेमें वायुदेवने मदद की और अेक क्षणके लिअे — सिर्फ अेक ही क्षणके लिअे — कुहरेका वह घना परदा दूर हुआ और जिसकेलिअे जिनके लिअे तरसता रहा था वह अद्भुत दृश्य आखिर आंखोंके सामने आया! महादेवजीके सिर पर जिस तरह गंगाका अवतरण होता है, अुसी प्रकार अेक बड़ा प्रपात नीचेकी खोहमें बाहर निकले हुअे हाथी जैसे पत्थर पर गिरकर, पानीका आटा बनाकर, चारों ओर अुसकी बौछारें अुड़ा रहा है!!

नहीं। अिस दृश्यका वर्णन शब्दोंमें हो ही नहीं सकता। आश्चर्यमग्न होकर मैं बोल अुठा.

नमः पुरस्तात्, अथ पृष्ठतस् ते नमोऽस्तु ते सर्वत अेव सर्व।
अनन्त-वीर्यामित-विक्रमस् त्वम् सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः॥

तुरन्त सामनेका वह हाथीके समान पत्थर मिरसे प्रपातकी जटाओंको झाड़कर बोला:

सुदुर्दर्शम् अिद रूप दृष्टवान् असि यन् मम।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शन-कांक्षिणः॥

कुहरेका परदा फिर पहलेकी तरह जम गया और हमारी स्थिति अैसी हो गयी मानो हमने जो दृश्य देखा था वह सब स्वप्न था, माया थी या मतिभ्रम था! वह विस्तीर्ण खोह, वह विशाल पात्र, वह भयानक गहराअी और अुसके बीच पानीका नहीं बल्कि आटेका — नहीं, मैदेका — वह अद्भुत प्रपात और फव्वारा! सारा दृश्य कल्पनातीत था। यह प्रतीति दृढ़ होनेसे पहले ही कि हम जो अपनी आंखोंसे देख रहे हैं वह सच्चा ही है, कुहरेका क्षीरसागर फिर फैल गया और हम सामनेके बादलके साथ अुसमें डूब गये।

अब कोअी किसीसे बोलता नहीं था। जो देखा था अुस पर सब सोचने लगे। जहां कुछ भी नहीं था वहां जितनी बड़ी और गहरी सृष्टि कहांसे पैदा हुअी और देखते ही देखते वह कहां लुप्त हो गयी — अिसी आश्चर्यने मानो हम सबको घेर लिया।

मनमें आया, चाहे चार क्षणोंके लिअे ही क्यों न हो, जो देखने आये थे अुसे हमने देख लिया। अद्भुत रीतिसे देख लिया। अेक क्षणके लिअे जो दर्शन हुआ अुसके स्मरण और ध्यानमें घंटों बिताये जा सकते हैं।

अितनेमें वह वृद्ध जटाधारी पत्थर फिरसे बोला

क्वचिद्भी प्रीतमना पुनस् त्व नदत्व मे म्याम् अिह प्रपदय।

कुहरेका आवरण फिर दूर हुआ और अब तो अिस छोरसे अुस छोर तक सब कुछ स्पष्ट दीख पड़ने लगा। सामनेकी ओरसे ठेठ बायें छोर पर 'राजा' अर्धचंद्राकार पत्थर परसे नीचे कूद रहा था। अुसका पानी बारिशके कीचड़के कारण चाकीके रंगका हो गया था। किन्तु सबसे अधिक पानी राजाको ही मिलता है। छाती फुलाता हुआ जब वह ठेठ सीधा नीचे गिरता है तब अिस बातका भान होता है कि प्रकृतिकी शक्ति कितनी अपरिमित है। राजा प्रपातका विस्तार भी कुछ कम नहीं है। और अुसके दोनों ओर बड़े बड़े मोतियोंके सभा हार लटकते दीखते हैं। सचमुच यह प्रपात राजाके नामके लायक ही है।

अुसके पासके जिस प्रपातका दर्शन मुझे सबसे प्रथम हुआ था वह कन्दरामें गिरता था। अुसका नाम है वीरभद्र। वीरका अेक प्रपात यह अिस ओरसे स्पष्ट दिखाअी ही नहीं देता। वह कदम कदम पर जोरसे चिल्लाता हुआ आखिर राजामें मिल जाता है।

ठेठ दाहिनी ओर अेक छोटासा प्रपात है। अुसकी कमर कुछ पतली है। अिसलिअे मैंने अुसका नाम पार्वती रखा। जी भरकर देखनेके बाद हमारी बातें फिरसे शुरू हुअीं। स्वयं जो कुछ देखा हो अुसे दूसरेको दिखानेकी अुमंग जिसमें न हो वह आदमी आदमी नहीं

है। आदमी सचारशील होता है, सवादशील होता है। अुसने जो अनुभव किया वही दूसरोंको भी होता है—हो सकता है—अैसा विश्वास जब तक न हो तब तक अुसे परम सतोष नही होता। राजाजीने ध्यान खींचा, 'यह नीचे तो देखो! ठडी भापके ये बादल कैसे अूपर कूद आते हैं?' देवदास कहने लगे, 'अुन पक्षियोंको तो देखो! कैसे निर्भय होकर अुड रहे हैं?' मणिबहनने भी अैसा ही कुछ कहा और लक्ष्मीने अपने अण्णाको तमिल भाषामें बहुत कुछ समझाकर अपना आनद व्यक्त किया। हमारे साथ और अेक भाओ आये थे। वे रास्तेमें अकारण ही नाराज हो गये थे। हम जब अिस स्वर्गीय दृश्यके आनदमें विभोर हो रहे थे तब अुन भाओको अपने माने हुअे अपमानकी ही जुगाली करते थे। चक्रवर्तीने अुनकी अिस स्थितिकी ओर मेरा ध्यान खींचा। मैं मन ही मन बोला:

पत्रं नैव यदा करीर-विटपे दोषो वसतस्य किम्?

नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्?

अिस ससारमें निराशा, गलतफहमी, अप्रतिष्ठा, या वियोग सच्चे दुःख नही हैं। बल्कि अहकार ही सबसे बडा दुःख है। अहकारकी विकृतिको बडे बडे धन्वतरि भी दूर नही कर सकते।

अुन भाओकी अनेक प्रकारकी परेशानियां और विकृतियोंको मैं जानता था। अिसलिअे गिरसप्पाके जोगके सामने भी अुन्हें दो क्षण दिये बिना मुझसे रहा नही गया। मैंने अुनको गिरसप्पाके बारेमें थोडी जानकारी दी और अुन्हें प्रसन्न करनेका प्रयत्न किया।

राजा प्रपातके पीछेकी ओरकी खोहमें असख्य पक्षी रहते हैं, और दूर दूरके खेतोंसे चुनकर लाये हुअे 'अुच्छिष्ट' और अुत्कृष्ट दानोंका सग्रह करते हैं। अेक बार किसीसे सुना था कि यह सग्रह अितना बडा होता है कि सरकारकी ओरसे अुसका नीलाम किया जाता है। मधुमक्खियोंका मधु लूटनेवाला मानव-प्राणी पक्षियोंके सग्रहको भी लूटे तो अुसमें आश्चर्यकी क्या बात है? जो सग्रह करता है वह लूटा जाता है, अैसी सृष्टिकी व्यवस्था ही दीख पडती है: 'परिग्रहो भयायैव'।

फिर कुहरेका आवरण फंटा और मुझे अन्तर्मुख होकर विचारमें डूब जानेका मौका मिला। अैसे भव्य दृश्योंका रहस्य क्या है? भूगोलवेत्ता और भूस्तरशास्त्री फौरन कह देंगे 'यहाका पहाड 'निस्' कोटिके पत्थरके स्तरका है। घाटीमें से अेक दरार टूट गअी होगी और आसपासकी मिट्टी धुल गअी होगी। अेक बार प्रपात शुरू होने पर वह नीचेकी जमीनको अधिकाधिक गहरा खोदता जाता है और जहासे प्रपात शुरू होता है अुस कोनेको घिसता जाता है। अूपरका वह माथा यदि सख्त पत्थरका हो, तो अूचाअी हजारों बरसो तक कायम रह सकती है। प्रपातसे समुद्र अधिक दूर न होनेसे नदीका आगेका हिस्सा साफ हो गया है और प्रपातकी अूचाअी कायम रही है।' किन्तु यह तो हुआ प्रपातका जड रहस्य। किसी आधुनिक यांत्रिकसे पूछिये तो वह कहेगा '*अकेले गिरसप्पाके प्रपातमें अितना प्रचंड सामर्थ्य है कि मैसूर और कानडा (कर्णाटक) अिन दोनों जिलोंको चाहिये अुतनी शक्ति वह दे सकता है। फिर, आप अुससे बिजली लीजिये, हरेक शहर और गावको प्रकाशित कीजिये, कल-कारखाने चलाअिये और अपने मुल्कके या दूसरोंके मुल्कके चाहे अुतने लोगोंको बेकार बना दीजिये।*'

प्रकृतिसे जो कुछ फायदा मिलता है वह पृथ्वीकी सभी सतानें आपसमें समझ-बूझकर बाट ले और जीवनयात्राका बोझा हल्का कर लें, अैसी बुद्धि आदमीको जब सूझेगी तबकी बात अलग है। किन्तु आज तो मनुष्यके हाथमें किसी भी तरहकी शक्ति आ गयी कि वह फौरन अुसका अुपयोग दूसरोंसे स्पर्धा करके श्रेष्ठत्व पानेके लिअे ही करता है। फिर वह श्रेष्ठत्व अुसे भले दूसरोंको मारकर मिलता हो, गुलाम बनाकर मिलता हो, या आधे पेट पर रखकर मिलता हो।

मैसूर राज्य अेक आगे बढा हुआ राज्य है। बडे बडे अिजीनियरोंने दीवानपदको सुशोभित करके यहाकी समृद्धिको बढानेकी कोशिश की है। यदि कहें कि सारे ससारके लिअे अवश्यक चदनका तेल सिर्फ मैसूर राज्य ही देता है तो अिसमें अधिक अत्युक्ति नहीं होगी। हिन्दुस्तानकी बडीसे बडी सोनेकी खानें मैसूरमें ही हैं। भद्रावतीके लोहेके कल-कारखानेकी कीर्ति बढती ही जा रही है। और

कृष्णसागर तालाब तो मानव-पराक्रमका अेक सुन्दर नमूना है। यह तो हो ही नहीं सकता कि अैसे मैसूर राज्यको गिरसप्पाके प्रपातको भुनाकर खानेकी बात सूझी न हो। किन्तु अब तक यह बात अमलमें नहीं आयी — जितनी बड़ी शक्तिका कौनसा अुपयोग किया जाय, यह न सूझनेसे या सीमाका कोअी झगड़ा बीचमें आनेसे या अन्य किसी कारणसे, यह मैं भूल गया हूं। मगर अिसमें कोअी शक नहीं कि गिरसप्पाकी शोभा अब भी अुतनी ही प्राकृतिक, अुदात्त और अक्षुण्ण है।

भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलनाका यहां स्मरण हो आता है। किसी भी स्थानकी रमणीयताने जब भारतवासीको आकर्षित किया है तब अुसने फौरन अुसका धार्मिक रूपान्तर कर ही दिया है। भारतका हृदय जब किसी अद्‌भुत, रमणीय या भव्य दृश्यको देखता है, तब तुरंत अुसको लगता है कि यह तो गाय जैसे बछड़ेको पुकारती है वैसे परमात्मा जीवात्माको पुकार रहा है। नायगराका प्रपात यदि हिन्दुस्तानमें गंगा-मैयाके प्रवाहमें होता तो यहांकी जनताने अुसका वायुमंडल वैसा बना डाला होता? आमोद-प्रमोद और पिकनिककी टोलियोंके बदले और रेलके यात्रियोंके बदले प्रपातकी पूजा करनेके लिअे वार्षिक या मासिक यात्रियोंकी टोलियां ही टोलियां यहां अिकट्ठा होतीं। भोगविलासके सब साधन मुहैया करनेवाले होटलोंके बदले प्रपातके किनारे या अुसके बीचोंबीच अुमड़े हुअे हृदयकी भक्ति अुंडेलनेके लिअे बड़े बड़े मंदिर बनाये गये होते। सृष्टिके वैभवको देखकर भड़कीले अैश-आराम और शान-शौकतके बदले लोगोंने यहां तप किया होता। और अितनी प्रचंड शक्तिको मनुष्यके फायदेके लिअे और सुख-चैनके लिअे कैद करनेकी बात सूझनेके बदले अुसे प्रकृतिके साथ अैक्यका अनुभव करनेवाली मस्तीमें भैरवजापके साथ पानीके प्रवाहमें अपने जीवन-प्रवाहको मिला देनेकी ही बात सूझती। स्वभाव-भिन्नतामें क्या कुछ बाकी रहता है?

मगर प्रकृतिकी भव्यताको देखकर अुसमें अपने शरीरको छोड़ देनेमें आध्यात्मिकता है क्या? नहीं। अिसमें कोअी संदेह नहीं कि शरीरसे बंधन टूट जायें, 'किसी भी हालतमें जीवित रहूंगा ही' अिस तरहकी पामर जीवनाशा मनुष्य छोड़ दे, अिसमें आध्यात्मिक प्रगति

है। किन्तु यह वृत्ति स्थायी होनी चाहिये। क्षणिक अुन्मादका कोअी अर्थ नहीं है। फना होनेकी अिच्छा हरेक मनुष्यके दिलमें किसी समय पैदा होती ही है। अिसकी यह अेक विकृति है। अिसमें किन्हीं आध्यात्मिक तत्त्वोंकी झाकी देखकर अुस पर फिदा होना मनुष्य-जीवनकी महत्ताको शोभा नहीं देता। भगवान बुद्धने अपनी अचूक नजरसे अुसको विभव-तृष्णाका नाम देकर अुसे धिक्कारा है। विभवका अर्थ है नाश। भगवान मनुने भी यह बात साफ शब्दोंमें बताअी है:

नाभिनन्देत मरणम्, नाभिनन्देत जीवितम्।

अिसमें सदेह नहीं कि गिरसप्पाके प्रपात जैसे रोमहर्षण दृश्यके सामने यत्रों, शक्तिके हॉर्स-पावर, बिजलीके प्रकाश या कल-कारखानोंके बारेमें सोचना आत्माको भूलकर बाहरी वैभवका ध्यान करनेके बराबर है। किन्तु आसपासका प्रदेश यदि अकालसे पीडित हो, लोग अनेक रोगोंके शिकार होते हों, और जनताका यह दुःख प्रपातके पानीका *अन्य अुपयोग करनेसे ही दूर होता हो, तो अुस समय* हमारा क्या आग्रह होगा? सृष्टि-सौदर्यका रसपान करनेवाले हमारे चित्तके आह्लादक साधनको — प्रपातको — वैसाका वैसा रखनेका, या हमारे आपद्ग्रस्त भाअियोंको दुःखमुक्त करनेके लिअे अुसका बलिदान देनेका? जहां पर्याप्त अनाज न मिलता हो वहा अनाजकी खेतीको छोडकर गुलाबकी खेती करने लगें, तो क्या अिससे हमारा हृदयविकास होगा? गुलाबमें काव्य है, अनाजमें कारुण्य है। दोनोंमें से हम किसे पसन्द करेंगे? अिग्लैंडके अेक प्राचीन राजाने अनेक गावोंको अुजाडकर मृगयाके लिअे अेक महान अुपवन तैयार किया था। अिसमें कोअी सदेह नहीं कि यह राजा मर्दाने खेलोंका रसिया था। किन्तु सवाल यह है कि अुसे प्रजासेवक मानें या नहीं? जब कलाके सामने सेवाका सवाल खडा होता है, किस वृत्तिको — काव्यकी या कारुण्यकी — पोषण दें यह तय करना होता है, तब निर्णय किस कसौटी पर कसकर दिया जाय? जलते हुअे रोमको देखकर नीरोका फिडल बजाना और जलती मिथिलाको देखकर जनक राजाकी आध्यात्मिक चर्चा करना, दोनोंमें फर्क है। जनताकी सेवा जितनी बन सकती थी अुतनी सब करनेके बाद व्यर्थकी चितामें दिलको जलानेकी

अपेक्षा हृदयमें अंतर्यामीके स्मरणको दृढ करनेका प्रयत्न आर्यवृत्तिको सूचित करता है। अिनेगिने लोगोंके विलास या अैश्वर्यके लिअे प्रकृतिकी शक्तिका अुपयोग करना और प्राकृतिक सौंदर्यका नाश करना अधर्म है। किन्तु प्राणियोंके अतिचारोंसे होनेवाले हृदयविकारोंको छोड़कर प्रकृतिके विभूति-दर्शनमें अुसको ढूंढ़नेकी अिच्छा रखना अुचित है या नहीं, यह विचारने जैसा है।

वे रूठे हुअे भाअी अपने कल्पित अपमानकी जलनमें सामनेका दृश्य भूल गये थे और मैं अपने तात्त्विक कल्पना-विहारमें शून्य दृष्टिसे सामने देख रहा था। दोनों अभागे थे, क्योंकि कल्पना या जलन चलानेके लिअे बादमें चाहे अुतना समय मिलता। कुहरेका आवरण फिर फैला। अब क्या प्रपात फिरसे दिखाअी देनेवाला था? राजाजीने कहा, 'गरमीके दिनोंमें जब प्रपात गिरता है तब पानीकी फुहार पर तरह तरहके अिंद्रधनुष दिखाअी देते हैं। अुस समयकी शोभा बिलकुल निराली होती है।' और यह भी नहीं कहा जा सकता कि चांदनी रातमें भी धनुष नहीं दिखाअी देते। मैसूरका सर्वसंग्रह (गॅजेटियर) लिखता है कि घासके बड़े बड़े गट्ठोंसे आग लगाकर प्रपातमें छोड़ देनेसे अैसा दिखाअी देता है मानो अंधेरी रातमें सारी घाटी जल अुठी हो। चंद लोगोंने रातके समय आतिशबाजी करके भी यहां अद्भुत आनंद पाया है। अुत्पाती मानव क्या क्या नहीं करता? मुझे तो अैसी कोअी बात पसन्द नहीं है। अैसे स्थान पर प्रकृति जो गुरुतम परोसती है अुसकी स्वाभाविक रुचि अनुभव करनेमें ही सच्ची रसिकता है। मानवी मसाले डालनेसे स्वाद और पाचनशक्ति, दोनों खराब होते हैं।

अब हम बंगलेके भीतर पहुंचे। साथमें जो भोजन लाये थे अुसको अुदरस्थ किया। यहांका पानी पी नहीं सकते, क्योंकि फौरन मलेरिया होता है। अधिकतर लोगोंने गरम-गरम कॉफी पीकर ही प्यास बुझाअी। मैंने तो अुस दिन चातककी तरह बारिशकी कुछ बूंदे पाकर ही संतोष माना।

• प्रपातका और अेक बार दर्शन करके हम वापस लौटे। अब तो सब तरहसे स्पष्ट हो चुका कि प्रपात तीन नहीं बल्कि चार हैं।

बाओी ओरका पहला बड़ा प्रपात है राजा। अुसकी बगलकी खोहसे आक्रोश करता हुआ अुससे आ मिलनेवाला 'रोअरर' (Roarer) मेरा रुद्र है। सिर पर छूट रहे फव्वारेकी शुभ्र जटाओंवाला 'रॉकेट'। अुसे अब वीरभद्र कहनेके सिवा चारा नहीं था। और अंतमें आनेवाले प्रपातका नाम मैंने तन्वंगी पार्वती ही रखा। अंग्रेजोंने रुद्रको Roarer नाम दिया है। वीरभद्रको Rocket और पार्वतीको Lady का नाम दिया है।

अब हम वापस लौटे। पावोंमें जोंके चिपकनेका डर था। यहाके लोगोंने हम सबको सावधानीसे चलनेके बारेमें चेतावनी दे रखी थी। अुन्होंने कहा था, जोंकें चिपकेंगी तो मालूम ही नहीं होगा कि चिपक गयी हैं, और खून चूसा जायेगा। मैंने कहा, आप अिसकी फिक्र मत कीजिये। अंग्रेजोंको हम पहचान गये हैं, तो क्या जोंकोंसे सावधान नहीं रहेंगे? तिस पर भी करीब करीब हरेकके पावमें अेक अेक जोंक चिपक ही गअी। हो सकता है, मेरे शरीरमें खूनका विशेष आकर्षण न होनेसे या मेरा खून कसैला होनेसे या शायद काकदृष्टिसे देख देखकर मैं चलता था अिससे, मैं बच गया था। हम कुछ आगे गये। किन्तु मणिबहनसे रहा नहीं गया। 'जरा ठहरिये। बन सके तो फिर अेक बार अिस ओरसे प्रपातके दर्शन कर आती हूं।' 'मगर कुहरा खुले ही नहीं तो?' 'न खुले तो कोओी हर्ज नहीं। वापस लौट आयेंगे। किन्तु अेक बार देखने तो दीजिये।'

वापस लौटते समय बीचमें अेक जगह रास्ता फूटा था। वहासे होकर बहिनोंने नजदीकसे पार्वतीका दर्शन किया और वहाकी जमीन फिसलनेवाली होनेसे पार्वतीको 'वंदे मातरम्' कहकर साष्टांग प्रणिपात भी किया!

जाते समय जिस रास्तेसे अज्ञात और अननुभूत दशाका काव्य अनुभव किया था, अुसी रास्तेसे वापस लौटते समय हम संस्मरणोंके स्मृतिकाव्यका अनुभव करने लगे, हालांकि वही दृश्य अुल्टी दिशासे देखनेमें कम नवीनता न थी। जिन पेड़ोंके बारेमें जाते समय हमने बातें की थीं, वही पेड़ वापस लौटते समय ध्यान तो खींचेंगे ही।

असलिअे जिन परिचित भाअियोंसे 'क्योंजी कैसे हो?' प्रकार कुशल-समाचार पूछे बिना भला आगे कैसे जाया जा सकता है? और पेड़-पेड़के बीच प्रेमका पुल बाधनेवाली लतायें? अुनकी नम्रताको नमन किये बिना जो आगे जाता है वह अरसिक है। हम आहिस्ता-आहिस्ता नदीके किनारे तक आ पहुचे। अब अुसी शात प्रवाहके अूपरसे वापस लौटना था। कुहरेके बादल बिखर गये थे। नदीके शात पानीको आहिस्ता-आहिस्ता प्रपातकी ओर जाता हुआ देखकर मेरे मनमें बलिदानके लिअे जाते हुअे भेडाके झुडकी तस्वीर खडी हो गअी। मैंने अुस पानीसे कहा 'तुम्हारे भाग्यमें कितना बडा अध पतन लिखा है अिस बातका खयाल तक तुम्हें नहीं है। अिसीलिअे अितने शात चित्तसे तुम आगे बढ़ते हो। या नहीं — मैं ही गलती कर रहा हू। तुम जीवनधर्मी हो। तुम्हें विनाशका क्या डर है?

प्राय कन्दुक-पातेन पतत्यार्य पतन्नपि।

जितनी अूचाअीसे गिरोगे अुतने ही अूचे अुछलोगे। तुम्हारी दया खानेवाला मैं कौन हू? शरावतीके पवित्र पानीका स्पर्श करनेके लिअे मैंने अपना हाथ लबा किया। पानी खिलखिलाकर हसा और बोला, 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गति तात! गच्छति।' नाव अिस पार आ गअी और हमें सूझा कि मोटरको अिस ओर जरा नीचे तक दौड़ाया जाय तो अुसी प्रपातकी फिरसे दाहिनी यात्रा भी होगी। हम जिस ओर हो आये थे अुसे 'मैसूरकी तरफ' कहते हैं और दाहिनी ओरसे जानेके लिअे निकले अुसे 'बम्बअीकी तरफ' कहते हैं। क्योंकि जोग दोनों राज्यकी सीमा पर है।

यहा तो हम बिलकुल नजदीक आ पहुचे। मैं बड़ी बड़ी शिलाओंके बीचमें दौडने लगा। दो सालके बीमारके रूपमें मेरी ख्याति काफी फैली हुअी थी। अिससे मुझे दौडते देखकर राजाजीको आश्चर्य हुआ। किसीने कहा, 'वे तो महाराष्ट्रके मावले हैं और हिमालयके यात्री भी हैं। मछलियोंको जिस तरह पानी, अुसी तरह अिन मराठोंको पहाड होते हैं।' जिन वचनोंको सुननेके लिअे मुझे वहा रुकना था? मैं तो दौड़ता दौड़ता सीधा प्रपातकी बगलमें अुस प्रख्यात टीलेके पास

जा पहुचा। यहासे खडे खडे नीचेकी ओर देखा ही नहीं जा सकता। चक्कर खाकर आदमी गिर जाता है। कानोंमें चारो प्रपातोंकी आवाज अितनी भरी हुअी थी कि दूसरा कुछ सुननेके लिअे अुनमें गुंजाअिश ही बाकी न थी। जिस तरह प्रपातका पानी अूपरसे नीचे गिरकर फिर अूचा अुछलता था, अुसी तरह कानमें आवाज भी अुछलती होगी। प्रथम मेरा ध्यान खीचा राजाके गंडस्थल पर लटकती मोतियोंकी लडियोंने और जलप्रलयसे लागोंको बचानेके लिअे जिस तरह वीर तैराक पानीमें कूदते हैं अुसी तरह अिस ओरके प्रपातमें होकर युक्तिसे गुजरनेवाले पक्षियोंने। क्या अिन पक्षियोंको अिस प्रपातकी भीषण भव्यताका खयाल ही नही है, या अीश्वरने अुनके दिलमें अितनी हिम्मत भर दी है? मेरा खयाल है कि आगन्तुक पक्षियोंकी अितनी हिम्मत नही होगी। अिन जोगवासियोंका जन्म यहीं हुआ, प्रपातके पटलकी सुरक्षिततामें अुनकी परवरिश हुअी। शेरके बच्चे शेरनीसे नही डरते। सागरकी मछलियां लहरोंमें आनद मानती हैं, अुसी तरह ये जोगके बच्चे जोगके साथ खेलते होंगे।

राजा प्रपातको मैसूरकी ओरसे दूरसे देखा था, तब अुसका असर भिन्न प्रकारका हुआ था। यहा तो हम अुसके अितने नजदीक थे, मानो हाथीके गंडस्थल पर ही सोये हों। अूपरका पानी प्रपातकी ओर अैसा खिचा चला आता था, मानो कोअी महाप्रजा जाने-अनजाने, अिच्छा-अनिच्छासे महान क्रांतिकी ओर घसीटी जाती हो। कोअी महाप्रजा जब सामाजिक और राजनीतिक प्रगतिके प्रवाहमें बहने लगती है तब आगे क्या होनेवाला है अिस बातका अुसे खयाल तक नहीं होता। और खयाल हो भी तो 'हमारे बारेमें यह सच्चा नही होगा, हम किसी न किसी तरह बच जायेंगे,' अैसी अंधी आशा वह रखती है। अिस बीच प्रगतिका नशा बढता ही जाता है। अंतमें अुग्र लोग संयम सुझाते हैं और नरम (मॉडरेट) लोग अंधे होकर गैरजिम्मेदार लोगोंके साथ मिल जाते हैं और फिर अिच्छा होने पर भी पीछे नहीं हट सकते। या खुद पीछे हटें तो भी क्या? धनुषसे निकला हुआ तीर कभी पीछे खींचा जा सका है? जो अटल न हो वह क्रांति काहेकी?

प्रपातका पानी नीचे कहां तक जाता है यह देखना या जानना असंभव था। क्योंकि अुछलते हुअे पानीके बड़े बड़े बादल प्रपातके पांवोंसे लिपटे हुअे थे। पानीके अुन्मत्त अुत्पातको देखकर लगता था मानो महादेवजी महारुद्री ताडव-नृत्य ही कर रहे हों और शामनेरा रुद्र अुसने ताल दे रहा हो! परन्तु रोमांचकारी शोभाका परम अुत्कर्ष तो वीरभद्र ही दिखाता है। आपको यह मालूम ही नहीं होगा कि यहां पानी गिरता है और पानी अुछलता है। अैसा मालूम होता था मानो बड़ी बड़ी तोपोंसे गोलोंके सहारे कोरे आईके फव्वारे अुड़ते हो। अुस दृश्यका वर्णन शब्दोंमें हो ही नहीं सकता, क्योंकि शब्दोंकी परवरिश 'शांति और व्यवस्था' के बीच होती है।

हमने लेटे लेटे यहांसे अिस दृश्यको जी भरकर देखा। या सच कहें तो चाहे अुतने लेटने पर भी तृप्त होना असंभव है अिस बातका यकीन हुआ तब तक देखा। आखिर हम खड़े होकर वापस लौटे। लेकिन वापस लौटना आसान न था। कोअी तो अुठता ही नहीं था। अुसे खींचकर लानेके लिअे दूसरा जाता था तो वह भी खुद अुस नयनोत्सवमें चिपक जाता था। पहला पछताकर अुठता था तो जो बुलाने जाता वह नहीं अुठता था। और जब दोनों मुश्किलसे संयम करके वापस लौटते, तब अिन पर गुस्सा होकर झगड़ा करनेके लिअे गये हुअे तीसरे भाओी अेक क्षणके लिअे आखोंको तृप्त करने वहां खड़े हो जाते और अुन दोनोंके संयमको थोड़ा शिथिल बना देते। अुन दोनोंके मनमें आता: जिनने चिढ़े हुअे समाज-नियंता जितनी छूट लेते हैं अुतनी यदि हम भी लें तो अिसमें कोअी गलती नहीं है। हम कहां अुनसे अधिक संयमी होनेका दावा करते हैं? मेरे दिलमें आया कि अुस शिला पर पहुंच जाअूंगा तो राजाके पानीमें पांव डाल सकूंगा। किन्तु नदीका पानी कुछ बढ़ता जा रहा था और अुसमें वह शिला अेक छोटे द्वीपके जैसी बन गयी थी। अिसलिअे राजाजीने मुझे मना किया। मुझे भी लगा कि अुनकी बात नहीं मानूंगा तो दूनी अुद्धतता होगी। राजाजीकी आज्ञाका अुल्लंघन कैसे किया जाय? और 'राजा' के सिर पर पांव कैसे रखा जाय?

हम वापस लौटे। भक्ति, विस्मय, मानव-जीवनकी क्षणभंगुरता, दृश्यकी भव्यता, अिस क्षणकी धन्यता — सभी वृत्तियोंके बादल हृदयमें भरे थे और वहांसे अुस वीरभद्रकी तरह सिरमें अपने तीर छोड़ते थे। विचारोंकी यह आतिशबाजी अद्भुत होती है। हृदयसे तीर छूटकर सीधे सिर तक पहुंचता है और वहां फूटता है तब स्वस्थ शरीर कैसा अस्वस्थ हो जाता है, अिस बातका जिसने अनुभव लिया है वही अिसके चमत्कारको जान सकता है।

अिस स्थान पर मंदिर क्यों नहीं है? हमारे मंदिर तो मानो जन्मभूमिके काव्यमय स्थान हैं। अगर पहाड़का अमुक शिखर अुत्तुंग है, तो वहां कोअी ऋषि ध्यान करनेके लिअे जाकर बैठा ही है और भक्तोंने वहां अेक मंदिर बनाया ही है। फिर वह चाहे पूनाके पासका पार्वती शिखर हो, चंपानगरके पासका पावागढ़ हो, जूनागढ़के पासका गिरनार हो या हिमालयका कैलास शिखर हो। दक्षिणकी ओर दौड़नेवाली नदी कहीं अुत्तरवाहिनी हुअी है? तो चलो, वहां अेकाध *तीर्थकी स्थापना करो, करोड़ों लोग आकर पावन हो जायंगे।* बड़ी बड़ी दो नदियां अेक-दूसरेसे मिलती हों तो अुस प्रयागमें हमारे संतोंने तीसरी अपनी सरस्वती बहायी ही है। सारी यात्रा पूरी करके समुद्र तट पहुंचे, तो वहां भक्तोंने जगन्नाथजीकी या सेतुबंध महादेवजीकी स्थापना की ही है। जहां जमीनका अंत दीख पड़ा वहां या तो कन्याकुमारी होगी या देवेंद्र होगा। लंबे रेगिस्तानमें अेकाध सरोवर दिखाअी दे तो वह नारायणका ही सरोवर है, अुसकी पूजा होनी ही चाहिये। और क्षीरभवानीकी स्थापना भी होनी ही चाहिये!

हमारे संत कवियोंने तीर्थस्थानोंकी स्थापना कहां कहां की है, यह खोजने चलेंगे तो हिन्दुस्तानका सारा भूगोल पूरा करना पड़ेगा। मुसलमान संतोंने और रोमन कैथलिक पादरियोंने भी हमारे देशमें अिसी तरह अद्भुत काव्यमय स्थान पसंद किये हैं और वहां पूजा-प्रार्थनाकी व्यवस्था की है। फिर अिस प्रपातके पास मंदिर क्यों नहीं है? क्या जीवनराशिके अितने बड़े अधःपतनको देखकर मुनि खिन्न हुअे होंगे? क्या भैरवघाटीकी तरह यहां शरीर छोड़नेका नशा पैदा

होगा, अिस खयालसे लोकसंग्रह करनेवाले मुनियोंने लोकयात्राके लिअे अिस स्थानको नापसन्द किया होगा? या दिमागको भर देनेवाली अखण्ड और भीषण गर्जना ध्यानके लिअे अनुकूल नहीं है, अैसा मानकर अुपासक यहांसे विमुख हुअे होंगे? या यह प्रपात ही स्वयं अभयमुद्राकी मूर्ति है, अुसके पास ध्यान खींच सके अैसी कौनसी मूर्ति खड़ी करें, अिस अुधेड़बुनमें पड़कर अुन्होंने यह विचार छोड़ दिया? कौन बता सकता है? हमारे पुरखोंने यहां कोअी मंदिर नहीं बनाया, अिस बातका मुझे जरा भी दुःख नहीं है। किन्तु अिस स्थानको देखकर मुझे हुअे भावोंका अेकाध ताण्डवस्तोत्र तो अवश्य अुगना लिखना चाहिये था। पार्थिव मूर्ति जहां काम नहीं करती वहां वाङ्मयी मूर्ति जरूर अुद्दीपक हो सकती है।

यह सारी शोभा हम प्रपातके सिर परसे देख रहे थे। होन्नावरकी ओरसे आनेवाले लोग जब अुत्तर कानडा जिलेके महाबालासे आते हैं तब अुन्हें नीचेसे अिस प्रपातका आपाद-मस्तक दर्शन होता होगा। दोनोंमें कौनसा दर्शन ज्यादा अच्छा है, यह बिना अनुभव किये कौन बता सकेगा? और अनुभव लें भी तो क्या? प्रकृतिकी अलग अलग विभूतियोंमें किसी समय तुलना हुअी है? हिमालयकी भव्यता, सागरकी गंभीरता, रेगिस्तानकी भीषणता और आकाशकी नम्र अनंतताके बीच तुलना या रमदगी कौन कर सकता है? अिसलिअे अेक बार होन्नावरके रास्तेसे जोगके दर्शनके लिअे आना चाहिये।

समुद्रमें जहाजी बेड़ेका अनुभव लेकर कुशल बने हुअे चंद फौजी अफसर प्रपातको नापनेके लिअे आये थे और हिंडोलेमें लटकते हुअे प्रपातकी पीछेकी ओर पहुंच गये थे। अुन्हें किस तरहका अनुभव हुआ होगा? जोगके पक्षियोंने अुनका कैसा स्वागत किया होगा? प्रपातके परदेमें से अंदर फैलनेवाला बाहरका प्रकाश अुन्हें कैसा मालूम हुआ होगा? और अंधेरी रातमें प्रपातके पीछे यदि घास जलाकर बड़ा प्रकाश किया जाय तो सारी घाटीमें किस तरहकी गंधर्वनगरी पैदा होगी, अिस बातका खयाल किया किसीको है? जब यहां बिजलीका कल-कारखाना तैयार होगा तब कुछ कल्पनाशूर लोग अिस प्रपातके पीछे बिजलीकी बत्तियोंकी कतार जरूर लगायेंगे और संसारके कभी न

देखा हो अैसा अिंद्रजाल फैलायेंगे। अुस समय सारी घाटी अेक महान रंगभूमिके जैसी बन जायगी और सारों खड़ा है भूदेव अुसे देखनेके लिअे अवतार लेंगे। परन्तु अुस समय क्या किसीको अीश्वरका स्मरण होगा? मालूम होता है, अपनी बुद्धिशक्तिका अुपयोग अीश्वरको पहचाननेके लिअे करनेके बदले मनुष्यने अुसका अुपयोग अीश्वरको भूलनेकी युक्तियां और पद्धतियां खोजनेमें ही किया है।

शायद अैसा भी हो कि सब ओरसे परास्त होनेके बाद ही बुद्धि अीश्वरको अधिक अच्छी तरहसे समझ सकेगी।

हरेक वस्तुका अंत होता है। असलिअे हमारी अिस जोग-यात्राका भी अंत हुआ। अत्यंत पवित्र और मीठे संस्मरणोंके साथ हम वापस लौटे। किन्तु फिर अेक बार वहां जानेकी वासना तो रह ही गअी। असलिअे 'पुनरागमनाय च' अिन शास्त्रोक्त शब्दोंका अुच्चार करके हम भारत-वैभवकी अिस असाधारण विभूतिसे विदा ले सके।

सितंबर, १९२७

१३

जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

हिमालय, नीलगिरी और सह्याद्रि जैसे अुत्तुंग पर्वत, गंगा, सिंधु, नर्मदा, ब्रह्मपुत्र जैसी सुदीर्घ नद-नदियां, और चिल्का, वुलर तथा मंचर जैसे प्रसन्न सरोवर जिस देशमें बिराजते हों, अुस देशमें अेकाध महान, भीषण और रोमांचकारी जलप्रपात न हो तो प्रकृतिमाता कृतार्थताका अनुभव भला किस प्रकार करे? दक्षिण भारतमें कारवार जिले तथा मैसूर रियासतकी सीमा पर अेक अैसा प्रपात है, जो संसारमें अद्वितीय या सर्वश्रेष्ठ पदका अेकमात्र भोक्ता चाहे न हो, फिर भी अैसे सर्वश्रेष्ठ प्रपातोंमें अेक जरूर है। अंग्रेज लोग अुसे 'गिरसप्पा फॉल्स' के नामसे पहचानते हैं। अुसका स्वदेशी नाम है 'जोग'।

लॉर्ड कर्जन जब भारतमें आया तब जोगका प्रपात देखनेके लिअे वह अितना अुत्सुक हुआ था कि अिस देशमें आनेके बाद पहले मौकेका

फायदा अुठाकर वह अुसे देखने गया और अुसके अद्भुत सौंदर्यसे अुसने अपनी आखे ठडी की। अुसके बाद हमारे देशमें अिस प्रपातकी प्रतिष्ठा बढ गअी। जहासे लॉर्ड कर्जनने प्रपातको देखकर अपने आपको कृतार्थ किया था, वहा मैसूर सरकारने अेक चबूतरा बनवाया है। अुसको 'कर्जन सीट' कहते है।

प्रपातके पास ही मैसूर सरकारने अेक अतिथिशाला बनवाअी है। अुसके मेहमानोंकी सूचीमे प्रकृति-प्रेमी देशी-विदेशी यात्रियोंने समय समय पर अपने आनदोद्गार लिख रखे है। अिन अुद्गारोंका ही अेक सग्रह यदि प्रकाशित करें तो वह प्रकृति-काव्यकी अेक असाधारण मजूषा हो। यह सारा काव्य अुच्च कोटिका होता तो भी जोगके प्रत्यक्ष दर्शनसे अुसकी अपूर्णता ही सिद्ध होती और मुहसे यकायक अुद्गार निकलते :

अेतावान् अस्य महिमा अतो ज्यायाश्च पूरुषः।

शरावती तो है अेक छोटीसी नदी। फिर भी अुसके तीन तीन नाम क्यों रखे गये होंगे? प्रथम वह भारगी या बारहगगाके नामसे पहचानी जाती है। बीचके हिस्सेमें अुसे शरावती कहते है। और जहाँ वह प्रौढतासे समुद्रमें मिलती है वहा अुसे थालनदी कहते है! शरावतीके प्रवाहने यदि अिस रोमाचकारी प्रपातका रूप धारण न किया होता तो भी अुसने अपने प्राकृतिक सौंदर्यके द्वारा मनुष्योंका मन हरण किया ही होता। किन्तु तब वह हिन्दुस्तानकी अनेक सुन्दर नदियोंमें से अेक नदी ही मानी जाती। अिस प्रपातके कारण छोटीसी शरावती भारतवर्षकी अेक अद्वितीय सरिता बन गअी है।

जोगके अिस अलौकिक दृश्यका दर्शन करनेके लिअे राजाजी तथा दूसरे मित्रोंके साथ मैं प्रथम गया था, अुस समयके अुस अद्भुत दृश्यके दर्शनसे अेक कुतूहल तृप्त हो ही रहा था कि अितनेमें मनुष्य-स्वभावके अनुसार मनमें कुतूहलजन्य अेक नया सकल्प अुठा कि अितनी अूंचाअीसे कूदनेके बाद यह नदी आगे कहा जाती होगी, वहाँ कैसी मालूम होती होगी और सरित्पतिके साथ अुसका किस तरह मिलन होता होगा,

यह सब कभी न कभी जरूर देखना चाहिये। और बन सके तो वच्चा बनकर शरावतीके वक्षस्थल पर (नौका) विहार करना चाहिये। अंतरात्माकी अिस जिज्ञासाको सत्यसंकल्प अीश्वरने आशीर्वाद दिया और अेक तप (१२ वर्ष) की अवधि पूरी होनेके पहले ही जोगका दूसरी बार दर्शन करनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। पहली बार हम अूपरकी ओरसे प्रपातकी तरफ गये थे। अिस बार नदीके मुखकी ओरसे प्रवेश करके नावमें बैठकर हमने प्रतीप यात्रा की। और नाव जहां अटक गयी वहांसे तैलवाहन (मोटर) के सहारे घाट चढकर हम प्रपातके सिर पर पहुंचे।

वहां शरावतीकी अुस अर्धचंद्राकार घाटीमें चार प्रपात हैं। दाअीं ओर 'राजा' नामक प्रपात है, जो अूपरसे अेकदम ९६० फुट नीचे कूदता है। अुसका 'राजा' नाम यथार्थ ही है। अुसकी जलराशि, अुसका अुन्माद और अुसकी हिम्मत किसी जगदेक-सम्राट्को शोभा दे सके अैसी है। अुसकी बाअीं ओरका महारुद्रके समान गर्जना करनेवाला 'रुद्र (Roarer) प्रपात' राजाके चरणों पर जाकर गिरता है। रुद्रकी घोर गर्जना आसपासकी टेकरियों तथा घाटीका मीलों तक निनादित करती है। अुसकी ध्वनिको न तो मेघ-गभीर कह सकते हैं, न सागर-गभीर। क्योंकि मेघगर्जना आकाश-विद्रावी होने पर भी क्षण-जीवी होती है और सागरकी सनातन गर्जनाको ज्वार-भाटेके अनुसार झूलना पड़ता है। रुद्रकी ध्वनि अविरत, अखंड और धारावाही होती है। अुस ध्वनिका अुन्माद विलक्षण होता है।

राजा और रुद्रको संसारमें कहीं पर भी सम्राट्की पदवी मिल सकती है। किन्तु जोगका सच्चा वैभव तो आकाशमें विविध रूपमें अुड़नेवाली वीरभद्र (Rocket) की शुभ्र जल-जटाअोंके कारण है। वीरभद्रका प्रपात हाथीके गंडस्थल जैसे अेक विशाल शिलाखंड पर गिरते ही अुसमें से बारूदखानेके तीरों जैसे फव्वारे अूंचे और अूंचे अुड़ते ही चले जाते हैं। यह क्या शंकरका तांडव-नृत्य है? या महाकवि व्यासकी प्रतिभाका नवनवोन्मेषशाली कल्पना-विलास है? या सूर्यबिंबके पृष्ठभागसे बाहर पड़नेवाली सर्वसंहारकारी किन्तु कल्पनारम्य ज्वालायें हैं? या भूमाताकी वात्सल्य-प्रेरित स्तन्यधाराओंके फव्वारे हैं? अैसी अैसी अनेक

कल्पनायें मनमें अुठती हैं। वीरभद्र सचमुच देखनेवालोंकी आंखोंको पागल बना देता है।

वीरभद्रकी बाजी ओरकी कर्पूरगौरा, तन्वंगी और अनुदरी पर्वत-कन्या पार्वती (Lady) अपने लावण्यसे हमें आनंदित करती है।

चारों प्रपातोंकी मानो रक्षा करनेके लिअे ही अुनके दोनों ओर दो प्रचंड पहाड़ खड़े हैं। ये गरीब खड़े खड़े और क्या कर सकते हैं? प्रपातोंकी अखंड गर्जनाको प्रतिक्षण प्रतिध्वनित करते रहना, अुनके अिंद्रधनुषोंको धारण करना और विविध प्रकारकी वनस्पतिसे अपनी देहकी सजा कर पुलकित रहना, यही अुनकी अविरत प्रवृत्ति हो बैठी है।

अबकी बार जब हम गये तब गरमीके दिन थे। शरावतीका पानी अच्छा खासा अुतर गया था। वीरभद्रकी जटामें वही भी नजर नहीं आती थी। रुद्रकी लंबी लंबी अुछल-कूद भी कम हो गयी थी। पार्वतीने अब विरहिणीका वेश धारण कर लिया था। हमें अुम्मीद थी कि कमसे कम राजाका वैभव तो देखने लायक होगा ही। किन्तु विश्व-जित् यज्ञके अंतमें धन्यता अनुभव करनेवाला कोओ सम्राट् जिस प्रकार अकिंचन बन जाता है और अुस हालतमें भी अपने वैभवको व्यक्त करता है, ठीक यही-हालत 'राजा' की हो गयी थी।

अबकी बार हम शरावतीकी दाओं ओर यानी अुत्तरकी ओर आ पहुंचे थे। अनिर्बिण्णतासे रुके बिना हम दौड़ते दौड़ते सीधे 'राजा' प्रपातकी बगलमें जा खड़े हुअे।

यहां अेक ओर सख्त धूप थी और दूसरी ओर नीचेसे अुड़नेवाले तुषारोंका ठंडा कोहरा था; अिन दोनोंके बीच फंसनेसे हमारी जो दशा हुअी अुसका वर्णन करना कठिन है। राजाके मुकुट जैसे शोभनेवाले गरम गरम पत्थरों पर झुककर हमने नीचे घाटीमें देखा। अूपरसे राजाकी जो धारा नीचे गिरती थी वह ठेठ जमीन तक पहुंचती ही नहीं थी। किसी मन्दोमत्त हाथीकी सूंडके समान अेक प्रचंड स्रोत अूपरसे नीचे गिरता हुआ दीख पड़ता था। नीचे गिरते गिरते शनैः शनैः विदीर्ण होकर अुसकी सहस्र धारायें बन जाती थीं, और आगे जाकर अुन धाराओंके बड़े बड़े जलबिंदु बन जानेके कारण वे मोतीकी मालाओंकी तरह शोभा

पाने लगती थी। अिन मोतियोंका भी आगे जाकर चूर्ण बन गया और अुसके बड़े बड़े कण नजर आने लगे। अब नीचे और आगे जाना छोड़कर अुन्होंने थोड़ा स्वच्छंद-विहार शुरू किया। ये बड़े कण भी छिन्नभिन्न हो गये, अुन्होंने सीकर-पुंजका रूप धारण किया और बादलोंके समान विहार करने लगे। मगर प्रकृति-माताको अितनेसे ही संतोष नहीं हुआ। आगे जाकर अिन बादलोंसे नीहारिकाओंका कोहरा बना और पवनकी लहरोंके साथ अुड़कर वह सारी हवाको शीतल बनाने लगा। आश्चर्यकी बात तो यह थी कि अितनी बड़ी जलधाराकी अेक बूंद भी जमीन तक पहुंच नहीं पाती थी। नीचेकी जमीन गरम और अूपरकी ठंडी! अिस स्थितिको देखकर मुझे राजाओंका बगैर किसी व्यवस्थाका दान याद आया। प्रजाजनोंको अकालसे पीड़ित देखकर हमारे राजा जब अुदार हाथोंसे पैसे देने लगते हैं तब अुनके जयनादसे सारा वायुमंडल गूंज अुठता है। किन्तु बेचारी गरीब जनताके मुंह तक अुसका अेक दाना भी पहुंच नहीं पाता! बीचके अमले ही सब खा जाते हैं।

अलकेश्वरके दिलमें भी अीर्ष्या अुत्पन्न हो अैसी यहांके अिंद्रधनुषोंकी शोभा थी। भेद केवल यह था कि ये अिंद्रधनुष स्थायी नहीं थे। पवनकी तरंगें जैसे जैसे दिशायें बदलती जातीं, वैसे वैसे ये सीकर-पुंज भी अपने स्थान बदलते जाते। अिस कारणसे, पार्वतीके अिशारेसे जिस तरह शंकर नाचने लगते हैं, अुसी तरह ये अिंद्रधनुष भी अिधर-अुधर दौड़ते हुअे नजर आते थे। क्षणमें क्षीण हो जाते, तो दूसरे ही क्षण मयासुरके महलकी शोभा धारण करते। धर्मके साथ जिस प्रकार अुसका फल आता ही है, अुसी प्रकार हरेक धनुषके साथ अुसका प्रति-धनुष भी अपना वर्णक्रम ठीक अुलटा करके हाजिर होता ही था। हमने स्थान बदला, अिसलिअे अुन सुरधनुओंने भी अपना स्थल बदला। सुरधनु और सुरधुनीका यह आह्लादजनक खेल हम काफी देर तक विस्मय-विमुग्ध भावसे देखते ही रहे। जितना अधिक देखने अुतनी दर्शनकी पिपासा बढ़ती जाती। हमें मालूम था कि हम घंटे दो घंटे ही यहां पर रह सकेंगे। प्रति-क्षण हमारा समयरूपी पुण्य क्षीण होता जा रहा है, और थोड़ी ही देरमें हमें मर्त्यलोकमें वापस लौटना होगा, अिस बातका हमें खयाल था।

स्वर्गलोभी देवता जिस विषादके साथ स्वर्गसुखका अुपभोग करते है, पराक्रमी पुरुष अपने यौवनके अुत्तरार्धमें अपने सकल्पकी पूर्तिके लिअे जितने अधीर बन जाते है, अुतने ही विषादमें और अुतने ही अधीर बनकर हम सब अुस गधर्व-नगरीका आख, कान, नाक और सारी त्वचासे सेवन करने लगे और साथ साथ हमारी कल्पनाओ द्वारा अुसी आनदको शतगुणित करके अुसका अुपभोग करने लगे।

* * *

अेक दिन पहले हम तीन नावें लेकर निकले थे। बीचकी नावमें स्त्रिया और बालक थे और हम पुरुष लोग दायी ओरकी दोनो नावोमें बैठे थे। रातका समय था। अूपर आकाशमें चाद हस रहा था। अुसका वह काव्य लडकियोने हृदयमें ग्रहण कर लिया और बहासे वह अुनके आलापोके रूपमें बाहर आने लगा। हरेक लडकीने अपना प्यारा गीत नदीकी सतह पर तैरता छोड दिया। यह नाद कानो पर पडते ही किनारे परके नारियल और सुपारीके पेड रोमाचित हो अुठे और अपने अुन्नत सिर कुछ झुकाकर अुन आलापोका पान करने लगे। कब जाने तक लडकियोने गीत गाये। फिर वे सो गअी। चन्द्र अस्त हुआ। सर्वत्र अधकारका साम्राज्य प्रस्थापित हुआ। और अनत सितारे आसमानकी टेकरियोसे अनिमेष दृष्टिसे देखने लगे। यह कहना मुश्किल था कि आसपासकी नीरव शाति जाग रही थी या वह भी निद्रामें पडी थी।

जब जब हम नीदमेंसे जाग जाते तब तब कभी पतवारकी आवाज, कभी पतवारके साथ कुश्ती खेलते हुअे पानीकी आवाज, और कभी मुसाफिरोंके अेक-दूसरेको पुकारनेकी तीक्ष्ण आवाज सुनाअी देती। आखिर पौ फटी। पक्षियोने अपना कलरव शुरू किया। मेरे मनमें आया: बीचकी नावमें सोयी हुअी कोयले भी यदि जग जायें तो कितना अच्छा हो! मेरे इस निमत्रणका अुन्होने आलापोसे ही अुत्तर दिया। वृक्षोने भी रातके समय सुने हुअे आलापोको याद करके, अेक-दूसरेको यह बतानेके लिअे कि 'यही तो रातका सगीत है' अपने सिर हिलाना शुरू किया। रातका जलविहार सचमुच सात्त्विक, शातिमय और यौवनमय था।

तो सारी मैसूर रियासतको सस्ते दाममें बिजली दी जा सकेगी। अितना ही नहीं, बल्कि अुत्तर और दक्षिण कानडा जिलोंको भी दी जा सकेगी। अिससे लोगोंको बड़ा फायदा होगा। किन्तु अिससे यह अद्‌भुतरम्य प्राकृतिक दृश्य हमेशाके लिअे नष्ट हो जायगा। अिन दो बातोंमें से कौनसी अधिक अिष्ट है, अिसका अब तक कोअी निर्णय नहीं हो सका है। हजारों — नहीं, लाखों लोगोंको पेटभर अन्न मिलेगा। सैकड़ों विज्ञानवेत्ता नवयुवकोंको अपनी योग्यता सिद्ध करनेका मौका मिलेगा। हजारों जानवरोंकी पीड़ा दूर होगी। अेक स्थान पर अिस तरहका कारखाना सफल हो सका तो भारतके सब प्रपातोंका अैसा ही अुपयोग किया जा सकेगा। और देशको अेक महान शक्तिका हमेशाके लिअे लाभ मिल जायगा। तब क्या केवल अेक भीषणरम्य दृश्यके लोभसे हम अिन अनेक हितकर बातोंको छोड़ दें? कलाके शौककी भी कोअी सीमा है या नहीं? अपनी रानीके मनोविनोदके लिअे अपनी राजधानी रोमको जला डालनेवाले नीरोकी सुलतानी वृत्तिमें और अिस प्रकारकी कला-भक्तिमें तत्त्वत: क्या फर्क है?

अिस प्रश्नके अुत्तरमें जो कुछ कहा जाता है अुसका जिक्र करनेके पहले थोड़ेसे विषयान्तरकी आवश्यकता है। युरोपमें जब महायुद्ध छिड़ गया और लाखों नौजवान तोपों तथा बन्दूकोंके शिकार हुअे, तब साहित्य-शिरोमणि रोमें रोलाकी भूतदया द्रवीभूत हुअी और अन्य लोगोंके समान, खुद अुन्होंने भी अिन घायल लोगोंकी सेवाका कुछ प्रबंध किया। किन्तु जब अुभय पक्षके शत्रुओंने अेक-दूसरेकी कलापूर्ण अिमारतों पर बम-वर्षा शुरू की तब अुनकी कलात्मा पुण्यप्रकोपसे सुलग अुठी और अुन्होंने बुलन्द आवाजसे सारे युरोपको चेतावनी दी. "अे कमबख्तो, तुम्हें अेक-दूसरेको मार डालना हो तो मार डालो; अिस संसारसे तुम्हें बिलकुल नष्ट हो जाना हो तो नष्ट हो जाओ। किन्तु ये कलाकृतियां तो आत्माकी अभिव्यक्ति करनेवाली अमर कृतियां हैं। अुन्हींके द्वारा समस्त मानव-जातिकी आत्मा अपने आपको व्यक्त करती है — और कुछ नहीं तो कम-से-कम अिनका तो नाश न करो!!"

रोमें रोलाकी आर्षवाणी युरोपकी आत्माने सुनी और युध्यमान पक्षोंने कलाकृतियोंका संहार बंद कर दिया। अब सवाल यह है कि क्या कलाकृतियां सचमुच मानवकी आत्माकी अभिव्यक्तिकी द्योतक या प्रेरक हैं? या अुच्च अभिरुचिके आवरणके पीछे रही हुआी विलासिताकी ही साधन-सामग्री हैं?

कलाको जिसने सचमुच पहचाना है वह फौरन बता देगा कि कला और विलासिताके बीच जमीन आसमानका फर्क है और सच्ची कलाकृतिके द्वारा जो निरतिशय आनंद होता है वह सोयी हुआी आत्माको सचमुच जाग्रत करता ही है। करोड़ों वॉल्टकी विद्युतशक्ति पैदा करके लाखों लोगोंकी आजीविकाका प्रबंध करना कोआी साधारण बात नहीं है। किन्तु असंख्य लोगोंको कलाके द्वारा जो आनंद या रसिकता प्राप्त होती है वह तो अुनकी आत्माको पोषण देनेवाली चीज है।

और जोग कोआी मानवकृत कलाकृति नहीं है। अुलटे, वह तो कलाकारोंको भव्यता और सम्यताकी अेक ही साथ शिक्षा और दीक्षा देनेवाली प्रकृति-माताकी अलौकिक विभूति है। अुसे नष्ट करना नास्तिक विद्रोहके समान है। अुसे नष्ट करनेके पहले हमें सहस्र बार सोचना होगा। जोगका प्रपात वर्तमान युगकी ही संपत्ति नहीं है। हमारे अनेक ऋषि-पूर्वजोंने अुसके पास बैठकर ओश्वरका ध्यान किया होगा, और भविष्यमें हमारे वंशजोंके वंशज अुसका दर्शन करके अपने जीवनकी अज्ञात वृत्तियों और शक्तियोंका साक्षात्कार करेंगे।

अुपयुक्ततावादका सहारा लेकर 'अल्पस्य हेतो बहु हातुम् अिच्छन्' जैसे जड़ हम न बनें। अिस प्रपातको सुरक्षित रखकर अुससे कोआी लाभ अुठाया जा सकता हो तो भले अुठायें। मानव-बुद्धिके लिअे यह बात असंभव न होनी चाहिये। किन्तु अिस ताडवयोगके दर्शनसे मनुष्य-जातिको वंचित करनेका धर्मतः किसीको हक नहीं है। मंदिरमें हम मूर्तिकी स्थापना करते हैं। अुसी तरह प्रकृतिने भी विराट् स्वरूपकी भव्य प्रतिमाओंकी यहां, हमारे सामने, स्थापना की है। यहां केवल दर्शन, ध्यान और अुपासनाके लिअे आना चाहिये और

हृदयमें यदि कुछ सामर्थ्य हो तो अिनके साथ तदाकार हो जाना चाहिये। यही हमारा अधिकार है।

मअी, १९३८

१४

जोगका सूखा प्रपात

याद नही किस कविने यह विचार प्रकट किया है; मगर अुसका वह विचार मैं अपनी भाषामें यहां रख देता हू।

"यह सही है कि पहाड़ोंके जैसी अूची अूची लहरें अुछालनेवाला समुद्र भयानक मालूम होता है। मगर अुसका सारा पानी सूखकर यदि पात्र खाली हो जाय तो हजारो मील तक फैले हुअे अुसके गहरे गड्ढे कितने भयावने मालूम होते, अिसकी कल्पना भी करना कठिन है। यह सही है कि किसी दुर्जनके पास सपत्तिके भडार हों तो वह अुनका दुरुपयोग करके लोगोंको सतायेगा। मगर अुसकी यह सपत्ति नष्ट हो-कर वह यदि भूखा कगाल बन जाय, तो वह किस राक्षसी दुष्टतासे बाज आयेगा? अच्छा ही है कि समुद्र पानीसे भरपूर है, और दुर्जनोंके पास अुनकी दुष्टताकी आग बुझानेके लिअे पर्याप्त सपत्ति रहती है।"

जोगके प्रपातमें से राजा और रद्रके सूखे हुअे प्रपातोंको देखकर कविकी अूपर बताअी हुअी अुक्ति याद आनेका यद्यपि कोअी कारण नही था, फिर भी वह अुक्ति याद आअी जरूर।

सन् १९२७ में जब पहले पहल मैंने जोगका प्रपात देखा था, तब अुसका वैभव सोलहों कलासे प्रकट हुआ था। पानीका मुख्य प्रपात अपनी प्रचड जलराशिके साथ ८४० फुट नीचे कूदकर नीचेकी घाटीमें प्रपातके प्रवाहसे ही द्वारा तैयार की हुअी १५० फुट गहरे तालाबकी गद्दी पर गिरता था। अिस मुख्य प्रवाहकी प्रतिष्ठा बढानेके लिअे अुसके

दोनो ओर मोतियोंकी मालाओंके समान पानीकी अनेक धारायें अनेक ढगसे गिरती थी। अुसके दक्षिणकी ओर टढ़ी सीढ़ियों परसे कूदता कूदता रुद्र अपना पानी, आधेसे अधिक पतनके बाद, राजाके पानीमें फेंक देता था। राजाकी गर्जना प्राय नीचे पहुचनेके बाद ही पैदा होती है। रुद्रका प्रपात रावणकी तरह अपने जन्मके साथ ही चिल्लाने लगता है।

दोनो प्रपात अद्भुत तो है ही। किन्तु अुस समय मुझे जो दृश्य अलौकिक लगा था वह था वीरभद्रकी अुछल्ती जटाओंका। यह दृश्य मै फिर कभी नही देख पाया। किसी तसवीरमे भी वीरभद्रकी अुन जटाओंका चित्र नही आया है।

आखिरी प्रपात है पार्वतीका। अुसे देखते ही मनमें स्त्रीदाक्षिण्य पैदा होता है।

दस सालके बाद जब मैंने फिरसे जोगका दर्शन किया, तब राजाका स्रोत काफी क्षीण हो चुका था। वीरभद्रकी जटाओंका मुडन हो गया था। रुद्रकी चिल्लाहट यद्यपि कम नही हुआी थी फिर भी अुसका वह बडा ताल जोगके क्षीण प्रपातके साथ मिल्ता नही था। और पार्वती तो बिलकुल कृपागी तपस्विनी जैसी बन गयी थी।

किन्तु अिन सब सकोचोंको भुला दे असी खूबी ता थी प्रपातकी ठडी भापमें से अुत्पन्न होनेवाले अिन्द्रधनुषोंके भ्रूविलासमें। यह शोभा जितनी ओरसे देखने जाते अुतनी ओरसे अिन्द्रधनुष अपने मुह घुमाकर नया नया सौंदर्य प्रकट करते थे।

फिर ठीक दस सालके बाद जोगका वही प्रपात देखनेके लिअे जब हम अबकी बार गये तब चार प्रपातोंमें से तीन तो बिल्कुल सूख गये थे। रुद्रके अभावमें सर्वत्र स्मशान-शाति फैली हुआी थी। राजाके सूख जानेसे अुसके पीछेकी अेकके नीचे अेक दो बडी दरारें औरगजेब द्वारा निकाली हुआी सभाजीकी आखो जैसी भयावनी मालूम होती थी। पार्वती तो मानो दक्षके यज्ञमे जाकर भस्म हो गअी थी और वीरभद्र अैसा मालूम होता था मानो दक्षका नाश करनेके बाद कुछ शात होकर

अपने स्वामीके समुरकी मृत्यु पर नीरव आसू ढाल रहा हो। अितनी खिन्नता तो शायद महाभारतके युद्धके बाद कुरुक्षेत्र पर भी नहीं छाओ होगी!

पहली बार हम गये थे शिमोगा-सागरके रास्तेसे — गुजरातमें आयी हुओ बाढ़के सकटके दिनोंमें । दूसरी बार गये अिराटसन समुद्रके छोरसे अुल्टे क्रमसे — शरावतीके पानीके अूपरकी ओर यात्रा करके। हमारे पूर्वजोंने कहा है 'नदीमुखेनैव समुद्रमाविशेत्।' अिस नसीहतके ठीक अुल्टे हम शरावती-सागर-सगमसे नावमें बैठकर प्रतीप क्रमसे प्रपातकी सीढ़ियों तक पहुचे और वहासे पहाड़की पगडडीसे अूपर चढ़कर प्रपातके सिर पर जा पहुचे थे। अबकी बार हमने तीसरा रास्ता लेकर यात्रा की। शिरसीसे सिद्धापुर होकर हम प्रपातकी बंबओवाली बाजू पर गये। वहा राजाके सिर पर विराजनेवाली अेक बडी शिला पर लेटकर हमने नीचेका रोमहर्षण दृश्य देखा। आलेके जैसी भयानक दरारके सिर पर जाकर अदर देखनेसे सारा बदन काप अुठता है। मनमें यह सदेह पैदा हुओ बिना नहीं रहता कि यह शिला अपने ही भारसे कहीं छूट तो नहीं जायगी?

अिस शिलाके बगलमें अुतनी ही बडी और अुतनी ही भयावनी जगह पर दूसरी शिला है। अुस पर प्राचीन कालमें किसी राजाका लग्नमडप खडा किया गया होगा। आज अुस मडपके चार स्तभ जिस पर गडे किये गये थे यह चार सुराखोंवाला अेक बडा चबूतरा अुस शिला पर दिखाओ देता है। भयावने प्रपातकी दरारके किनारे मडप खडा करके विवाह करनेवाले राजाकी भाव्यमय वृत्तिकी बलिहारी है! अैसे शौकीन राजाके साथ जिसने शादी की अुस राजकन्याको अिस मडपमें बैठते समय कैसा अनुभव हुआ होगा! किसीने बताया, 'भीषण रसके रसिया अुस राजाके नाम पर ही अिस प्रपातका नाम राजा रखा गया है।' मैंने मनमें सोचा, 'तब तो अुससे शादी करनेवाली राजकन्याका नाम हम नहीं जानते अिस बातका फायदा अुठाकर अुसीको हम पार्वती क्यों न कहें? पर्वतकी दरारके किनारे अुसने शादी की; क्या अितना कारण अुसे पार्वती कहनेके लिअे बस नहीं है?'

अैसा नहीं है कि पहाड़ोंमें आलेकी जैसी गहरी दरारें मैंने न देखी हों। मस्जिदोंमें भी दीवारोंमें गहराओ साधकर अुनके किनारे मेहराब बनाते हैं। किन्तु राजाके नीचेका आला तो काऋपुरुषके मुहसे भी बड़ा और गहरा था। अुसके भीतर जहां जगह मिल वहां पक्षी अपने घोंसले बनाते हैं और चुनकर लाये हुअे अनाजके दानोंका संग्रह करते हैं।

बम्बओकी ओरसे यानी अुत्तरकी ओरसे जी भरकर देखनेके बाद हम मोटरमें बैठकर पूर्वकी ओर गये। वहां दो नावोंको बांधकर बनाये हुअे बेड़े पर — जिसे यहां 'जंगल' कहते हैं — हमारी मोटरको चढ़ाकर हम शरावती नदीको पार करके दक्षिणके किनारे आ पहुंचे। वहां मैसूर सरकारकी अतिथिशालाके पाससे फिर अेक बार सारी दरारका दृश्य देखा। बीस साल पहले यहींसे राजा, वीरभद्र और पार्वतीका देवदुर्लभ दृश्य देखा था। अैसा नहीं था कि अबकी बारके सूखे दृश्यमें काव्य न हो। अेकके नीचे अेक, दो बड़े आले ८४० फुटके पतनको नाप रहे हैं। अैसा दृश्य विधाताकी अिस विविध सृष्टिमें हर कहीं देखनेको थोड़े ही मिलनेवाला है!

मेरे मनमें छाया हुआ विषाद मैंने पेड़ों पर नहीं देखा। दोनों आलोंमें गोल गोल चक्कर काटनेवाले पक्षी भी विषण्ण नहीं दिखाओ देते थे। आकाशमें तैरते हुअे और प्रपातकी दरारमें ताकनेवाले बादल भी गंभीर नहीं मालूम होते थे। फिर रिक्तताका यह दृश्य देखकर मैं ही अितना बेचैन क्यों होता हूं? क्या बीस साल पहले यहां देखी हुओ जल-समृद्धिकी याद आनेसे? या दस साल पहले अुसमें देखे हुअे अिन्द्र-धनुषोंको याद करके? मगर वह जल-समृद्धि और वर्णसंकरता वह चमत्कार हमेशाके लिअे थोड़े ही लुप्त हो गये हैं? हजारों सालसे हर ग्रीष्मकालमें अैसी ही रिक्तता देखनेको मिलती होगी और हर वर्षाकालमें भारती सारी घाटीको जलमग्न कर देती होगी। यह क्रम तो चलता ही रहेगा। तब 'तत्र का परिदेवना'?

जोगके प्रपातके अिस तीसरे दर्शनके बाद हमने यहांके अितिहासका नया अध्याय खोला।

बीस साल पहले मैंने सुना था कि 'मैसूर सरकार अिस प्रपातके पानीसे बिजली पैदा करना चाहती है। बम्बअी सरकार और मैसूर सरकारके बीच अिस सिलसिलेमें पत्रव्यवहार चल रहा है। अब तक ये दोनों सरकारें अेकमत नहीं हो पाअी, अिसलिअ बिजलीकी यह योजना अमलमें नहीं लाअी गअी।'

अुस समय मैंने मनमें चाहा था कि अीश्वर करे ये दोनों सरकारें अेकमत न होने पायें। मेरे मनमें डर था कि बिजली पैदा करके यहां कल-कारखाने चलेंगे और देशकी समृद्धि बढ़ानेके बहाने देशकी गरीब जनता चूसी जायगी। और अिससे भी अधिक अकुलाहट तो यह थी कि यंत्र आने पर प्रपात टूट जायगा और प्रकृतिका यह भव्य दर्शन हमेशाके लिअे मिट जायगा। किन्तु सौभाग्यसे मेरा यह डर सच्चा नहीं निकला।

अिंजीनियर लोगोंने प्रपातसे काफी अूपर अेक बांध बांधकर वहां पानीके जत्थेको रोका है। अभी यह काम पूरा नहीं हुआ है। बांध बांधकर जो पानी रोका गया है अुसको चार नहरोंको अेक दिशामें ले जाकर मैसूरकी ओर, प्रपातसे काफी दूर, टेकरी परसे नीचे छोड़ दिया गया है — प्रपातके रूपमें नहीं, बल्कि ढंके अुतरे हुअे महाकाय चार नलों द्वारा। पानी नलके द्वारा जहां पहुंचता है वहां अिस पानीकी रफ्तारसे चलनेवाले यंत्र रखकर अुनसे बिजली पैदा की जाती है। अब यहां अितनी बिजली पैदा होगी कि मैसूर राज्यकी भूख मिटाकर थोड़ी हैदराबाद राज्यको भी दी जायगी। और बंबअी सरकारकी होशियारी तथा अुसकी करामात से नहीं गुजरती है अिसलिअे कुछ हजार किलोवाट बिजली बम्बअी सरकारको भी दी जायगी। न्यायतः अिस बिजली पर सबसे पहला अधिकार है होन्नावर तालुकेका और कारवार जिलेका। किन्तु यह जिला औद्योगिक दृष्टिसे अभी पिछड़ा हुआ नहीं है। अिस कारणसे यह तय हुआ है कि बिजली धारवाड़ जिलेको दी जाय। अिससे कारवार जिलेके लोग नाराज हुअे हैं। कारवार जिलेकी खनिज-संपत्ति और अुद्भिज्ज-संपत्ति धारवाड़ जिलेसे कअी गुनी अधिक है। अुसके पास समुद्र-किनारा होनेसे

अुसका व्यापार भी काफी बढ़ सकता है। कारवार जिलेमें काली, गंगावली, अघनाशिनी और शरावती — ये चार नदियां नौकानयनके लिओ अनुकूल होनेसे अिस जिलेका अुद्योगीकरण भी बहुत आसान है। किन्तु आज यह कहकर कि अिस जिलेमें बड़े अुद्योग नहीं हैं, अिसको बिजली देनेसे अिनकार किया जाता है। और अुसके पास बिजली न होनेसे यहां अुद्योग नहीं बढ़ाये जा सकते, यह भी अुसे सुना दिया जाता है! तामिल भाषाकी अेक कहावत है कि 'शादी नहीं होती अिसलिओ लड़कीका पागलपन नहीं जाता, और पागलपन नहीं जाता अिसलिओ अुसकी शादी नहीं होती'। अैसी है यह स्थिति।

मैं अुम्मीद रखता हूं कि स्वराज्य सरकार द्वारा यह अन्याय दूर होगा और कारवार जिलेको शरावतीकी बिजली मिलेगी। अलावा अिसके, कारवारके पास अुचळ्ळी, मागोड जैसे दूसरे भी छोटे बड़े तीन चार प्रपात हैं। शरावतीकी बिजली मिलने पर अुसकी मददसे दूसरे प्रपातों पर भी जीन कसा जायेगा और कारवार जिलेमें बारिशकी तरह बिजलीकी भी समृद्धि होगी। जहां चार नदियां पहाड़की अूंचाअीसे नीचे गिरती हैं वहां आज नहीं तो कल मनुष्य तिजारती बिजली पैदा करने ही वाला है।

मुझे संतोष हुआ केवल अिसीलिओ कि शरावतीके पानीसे बिजली तैयार करने पर भी जोगके प्रपातका प्राकृतिक स्वरूप तनिक भी खंडित होनेवाला नहीं है। बांधके कारण चाहे जितना पानी रोकने पर भी नदीके सामान्य प्रवाहमें पानी कम नहीं होगा। बारिशका पानी भर देनेके बाद हमेशाका प्रवाह हमेशाकी ही तरह चलेगा। अिसमें प्रवाहकी दिशा, गति या पानीका जत्था — किसी बातमें भी कमी नहीं आयेगी। अुलटा, लाभ यह होगा कि गरमीके दिनोंमें हजारों सालसे जो प्रवाह सूख जाता था वह, किसी दिन चाहने पर बांधके दरवाजोंमें से पानी छोड़कर, चाहे जितने प्रचंड और तूफानी रूपमें प्रत्यक्ष किया जा सकेगा, जिसे देखकर आकाशके गरमीके अुम्पका देवता भी चकित हो जायेंगे।

बलिहारी है मानवी विज्ञानकी!

अप्रैल, १९४७

गुर्जर-माता साबरमती

अंग्रेज सरकारके खिलाफ असहयोग पुकार कर महात्माजी स्वराज्यकी तैयारी कर रहे हैं। अहमदाबादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुआी है। स्वातंत्र्यवादी नौजवान महाविद्यालयमें शरीक हुअे हैं। वे अपनी आकांक्षायें और कल्पना-विलास व्यक्त करनेके लिअे अेक मासिक पत्रिका चाहते हैं। मेरे पास आकर वे पूछते हैं, "मासिक पत्रिकाका नाम क्या रखेंगे?" वह जमाना अैसा था जब चाचा (काका) को ही बुआका काम करना पड़ता था।

मैंने कहा, "मासिक पत्रिकायें तो काफी प्रकाशित हो रही हैं। तुम दो-दो महीनोंमें, ऋतु ऋतुमें, नये रूपसे प्रकट होनेवाली पत्रिका शुरू करो और अुसका नाम रखो 'साबरमती'।" द्विमासिककी कल्पना तो पसंद आअी। किन्तु 'साबरमती' नाम किसीको न भाया। 'साबरमती' तो है हमारी हमेशाकी परिचित नदी! हम अुसमें रोज स्नान करते हैं। अुसमें क्या नावीन्य है कि हम यह नाम अपने नवचेतनवाले साहित्य-प्रवाहको दें? मैंने कहा, "साबरमतीका प्रवाह सनातन है — अिसीलिअे नित्य-नूतन है।" मिसाल देनेकी दृष्टिसे मैंने दलील पेश की, "सिंध-हैदराबादके हमारे मित्रोंने अपनी कॉलेजकी पत्रिकाका 'फुलेली' नाम रखा है। 'फुलेली' सिंधुकी अेक नहर है। हमारी यह अनाविला (कीचड़-रहित) साबरमती गांधीयुगकी प्रतीक बन सकती है। मेरी बात मान लो और साबरमती नाम अपना लो।"

युवकोंने मेरी आज्ञाका पालन करनेके लिअे साबरमती नामको अपनाया, हालांकि वे चाहते थे अिससे कोअी अधिक जोशीला नाम।

मैंने नरहरिभाअीसे कहा — "साबरमती गुजरातकी विशेष लोक-माता है। आबूके परिसरसे जिन नदियोंका अुद्गम होता है अुनमें यह ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है। अुसका अेक गद्यस्तोत्र लिख दीजिये।" अुन्होंने अुत्साहपूर्वक अेक छोटासा, सुन्दर लेख लिख दिया। विद्यार्थियोंकी भावनायें जाग्रत हुअीं। अिस लोकमाताके प्रति अुनमें भक्ति पैदा हुअी

देखकर मैंने मौंकेसे लाभ अुठाया और विद्यार्थियोंसे कहा, मेरा सुझाया हुआ नाम तुम लोग अनिच्छासे स्वीकार करो यह मुझे पसन्द नहीं है। चाहो तो मैं दूसरा नाम सुझाता हूं।' सबने अेक ही आवाजसे जवाब दिया, "नहीं, नहीं, हम दूसरा नाम नहीं चाहते। 'सावरमती' ही सबसे सुन्दर है।'

मैंने कहा, 'अिसमें तो कोअी सदेह ही नहीं है।

*　　　*　　　*

मेरे नदी-पूजक हृदयने भारतकी अनेक नदियोंको समय समय पर अंजलियां अर्पित की हैं। सिन्धुसे लेकर ब्रह्मपुत्रा और अिरावती तक और दक्षिणमें पिनाकिनी तथा कावेरी तक अनेक नदियोंको मैंने सस्मरणांजलि दी है। किन्तु यह देखकर कि अिनमें गुजरातकी ही मुख्य नदियां रह गयी हैं मेरे कअी पाठकोंने अिसका कारण पूछा और गुजरातकी लोकमाताओंके बारेमें लिखनेकी आग्रहपूर्वक सूचना की।

मैंने कहा, नदीके अुपस्थानकी प्रेरणा मैं दे चुका हूं। अब गुजरातकी नदियोंके बारेमें गुजरातीमें कोअी गजरी-पुत्र लिखे, अिसीमें औचित्य है।"

अिसकी भी काफी राह देखी गयी और बार बार मुझे सूचना की गयी। किन्तु अन्तमें मेरी श्रद्धा सच्ची साबित हुअी और गुजरात विद्यापीठके अेक विद्यार्थी वनस्पति-अुपासक श्री शिवशंकरने गुजरातकी लोकमाताओंके बारेमें लिखना शुरू किया। यह काम किसी समय अवश्य पूरा होगा। मुझे सन्तोष है कि साबरमतीके प्रवाह-पुटके बारेमें अुन्होंने पर्याप्त लिखा है। अिसलिअे मुझे विस्तारपूर्वक लिखनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है। किन्तु जिस नदीके किनारे मैंने महात्माजीके और सब साथियोंके सम्पर्कमें २५–३० साल बिताये अुस नदीको श्रद्धांजलि अर्पण करनेका कर्तव्य तो रह ही जाता था। अुसे आह्लादपूर्वक पूरा करनेके लिअे थोड़ासा लिखता हूं।

हमारे कवि हरेक नामको संस्कृत रूप देनेका प्रयत्न तो करेंगे ही। साबरमतीका संस्कृत शब्द बनाते समय अुन्होंने 'साभ्रमति' शब्द खोज

निराला और फिर अुसका दो तरहसे पदच्छेद किया। अेक दलने बताया 'सा भ्रमति' — यह भ्रमण करती है, टेढ़े-मेढ़े मोड़ लेती है। दूसरेने कहा कि जिस नदीके प्रवाहके अूपरके आकाशमें अभ्र — बादल दिखाअी देते हैं, अिसलिअ वह अभ्रमति या 'साभ्र-मति' है। मेरा खयाल है कि यह सारा प्रयास मिथ्या है।

जिस नदीके किनारे गायोंके झुंड घूमते हैं, चरते हैं और पुष्ट होते हैं, वह जिस प्रकार या तो गो-दा (गोदावरी) या गो-मती होती है, जिस नदीके किनारे और प्रवाहमें बहुत पत्थर होते हैं, वह जिस प्रकार दृषद्-वती होती है, अुसी प्रकार अनेक सरोवरोंको जोड़नेवाली या सारस पक्षियोंसे शोभावाली नदी सरस्-वती या सारस-वती कही जाती है। अिसी न्यायसे भारतकी नदियोंको बाघ-मती, हाथ-मती, अैरावती आदि अनेक नाम हमारे पूर्वजोंने दिये हैं। अिनमें हाथमती तो साबरमतीसे ही मिलनेवाली नदी है। हिरन या साबर जिसके किनारे बसते हैं, लड़ते हैं और आजादीसे विहार करते हैं, वह है साबर-मती। अुसका संबंध 'श्वभ्र' के साथ जोड़ देनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है।

गुजरातकी नदियोंमें तीन-चार बड़ी नदियां आंतरप्रांतीय हैं। नर्मदा, तापी, मही — तीनों दूर दूरसे निकलकर पूर्वकी ओरसे आकर गुजरातमें घुसती हैं और समुद्रमें विलीन हो जाती हैं। साबरमती अिनसे अलग है। आरवल्ली पहाड़में जन्म पाकर तथा अनेक नदियोंको साथमें लेकर दक्षिणकी ओर बहती हुअी अंतमें वह सागरसे जा मिलती है। साबरमतीके जैसी कुटुंब-वत्सल नदियां हमारे देशमें भी अधिक नहीं हैं। साबरमतीको विशेष रूपसे गुर्जरी माता कह सकते हैं। अुसके किनारे गुजरातके आदिम निवासी सनातन कालसे बसते आये हैं। अुसके किनारे ब्राह्मणोंने तप किया है। राजपूतोंने कभी धर्मके लिअे, तो बहुत बार आनके लिअे खूनसे भरी हुअी जिदके लिअे, वीर पुरुषार्थ कर दिखाया है। वैश्योंने अिसके किनारे गांव और शहर बसा-कर गुजरातकी समृद्धि बढ़ायी है और अब आधुनिक युगका अनुसरण करके शूद्रोंने भी साबरमतीके किनारे मिलें चलाअी हैं।

सच पूछा जाय तो अिन नदियोंके साथ घनिष्ठ सपर्क तो पशु-पक्षियोंकी तरह आदिम निवासियोंका ही होना है। अिसलिअे साबरमतीके कुटुब-विस्तारका काव्य यदि अिकट्ठा करना हो तो पुराणोंकी ओर मुडनेके बदले आदिम निवासियोंकी लोक-कथाओं और लोक-गीतोंकी ओर हमारा ध्यान जाना चाहिये। डर यह है कि आजके सशोधक नवयुवकोंमें अिस कामके लिअे अुत्साह पैदा हो और आदिम निवासी गिरिजनोंके साथ मिलजुल जानेके लिअे व समय निकाल सकें, अुसके पहले ही आदिम निवासियोंकी नदी-कथायें कहीं लुप्त न हो जाय।

केवल नदी भक्तिसे प्रेरित होकर आदिम निवासियोंका 'वौठा' का मेला जब तक होता है, तब तक बिलकुल निराश होनेका कोअी कारण नहीं है। सात नदियोंका पानी क्रमश अेक-दूसरेमें मिलकर जिस जगह अेकत्र होता है, अुसके काव्यका आनन्द भोगने या नहाने के लिअे जहा आदिम निवासी तथा दूसरे लोग अिकट्ठे होते हैं, वहा 'वौठा'में साबरमतीके बारेमें आदि-कथायें हमें मिलनी ही चाहिये।

साबरमतीके पुराने नामोंकी खोज करते हुअे कश्यपगगा या अैसा ही दूसरा अेकाध नाम अवश्य मिल जायगा। नदीको किसी न किसी प्रकार गगाका अवतार जब तक न बनाये तब तक आर्योंको सतोष नहीं होता। किन्तु मुझे तो साबरमतीका पुराना नाम चदना सबसे अधिक आकर्षित करता है। क्योंकि — जैसा मैंने सुना है — कहीं कहीं पीली मिट्टीके बीचमें बहनेके कारण वह गोरोचनका रग धारण करती है। किन्तु साबरमतीके जिस किनारे पर मैंने तीस साल बिताये, वहा अुसका पानी सज्जनों और महात्माओंके मनकी तरह बिलकुल निर्मल है।

जहा नदीका पानी छिछला होनेसे अुस पार तक आसानीसे जाया जा सकता है, अैसे स्थानको सस्कृतमें तीर्थ कहते हैं। अनेक स्थानों पर प्रयत्न कर देखनेके बाद यात्री लोग तय करते हैं कि अमुक अमुक जगह अैसे घाट हैं। अन थोडा बहुत चलकर वे अैसे घाटके पास आते हैं, वहीं अिकट्ठे होते हैं, बैठकर विश्रांति लेते हैं, बातचीत करते हैं और नदीका पानी यकायक बढ़ गया हो तो जब तक वह कम न हो जाय तब तक कुछ घंटों या कुछ दिनों तक वहा ठहरते भी हैं। अिस प्रकार जहा स्वाभाविक

अेक्टके खिलाफ आन्दोलन, असमें से अुत्पन्न हुअे पंजाबके दंगे, जलियांवाला बाग, खेडा-सत्याग्रह, बारडोलीकी लडाअी, गुजरात विद्यापीठकी स्थापना, कांग्रेसके अधिवेशन, देशके हरेक राजकीय, सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक आन्दोलनका कद्र साबरमतीका यह किनारा था। साबरमतीकी रेतमें जब सभायें होती थीं तब लाख लाख लोगोंकी भीड जम जाती थी। अिस साबरमतीकी जीवनलीलाने केवल गुजरातका ही नहीं बल्कि सारे हिन्दुस्तानका जीवन बदल दिया। अुस समयका वायुमंडल आज सारी दुनियाकी राजनीतिमें अेक नया सिलसिला शुरू कर रहा है और नये युगकी नींव डाल रहा है।

अिस साबरमतीके नीरमें हमने क्या क्या आनन्द नहीं मनाया है? आश्रमके सभी लडके लडकियोंको, और शिक्षकोंको भी मैंने वहां तैरनेकी कला सिखाअी है। अुसकी रेतमें गीता और अुपनिषदोंका चिन्तन-मनन किया है। गीता-पारायणके अनेक सप्ताह चलाये हैं। अिस आश्रम-भूमि पर खडे करीब करीब सभी पेड हमारे हाथों ही बोये गये हैं।

वह रचनाकाल था ही अद्भुत। हरेक हृदयमें अेक नअी शक्तिशाली आत्मा आकर बसी थी। वह मर्दोंकी तरह तरहके काम लेती। केवल आहारके प्रयोग भी हमने वहां कम नहीं किये। कौटुंबिक जीवनके अनेक प्रकार आजमाये। शिक्षाका तंत्र अनेक बार बदला और अुसमें भी कअी दफा क्रांति की। और जीवनके हरेक पहलूके लिअे हम नयी नयी स्मृतियां तैयार करते गये। अिन सारे पुरुषार्थोंकी साक्षी साबरमती नदी है।

जब तक भारतका अितिहास दुनियाके लिअे बोध-दायक रहेगा और भारतके अितिहासमें महात्मा गांधीका स्थान कायम रहेगा, तब तक साबरमतीका नाम दुनियाकी जबान पर अवश्य रहेगा।

मअी, १९५५

१६

अुभयान्वयी नर्मदा

हमारा देश हिन्दुस्तान महादेवजीकी मूर्ति है। हिन्दुस्तानके नक्शेको यदि अुल्टा पकड़ें, तो अुसका आकार शिवलिंगके जैसा मालूम होगा। अुसका हिमालय अुसका पाया है, और दक्षिणकी ओरका कन्याकुमारीका हिस्सा अुसका शिखर है।

गुजरातके नक्शेको जरा-सा घुमाय और पूर्वके हिस्सेको नीचेकी ओर तथा सौराष्ट्रका छोर — आखा मण्डल — अूपरकी ओर ले जाय तो यह भी शिवलिंगके जैसा ही मालूम होगा। हमारे यहां पहाड़ोंके जितने भी शिखर हैं, सब शिवलिंग ही हैं। कैलासके शिखरका आकार भी शिवलिंगके समान ही है।

अिन पहाड़ोंके जंगलोंसे जब कोअी नदी निकलती है, तब कवि लोग यह कहे बिना नहीं रहते कि 'यह तो शिवजीकी जटाअोंसे गंगाजी निकली हैं!' चंद लोग पहाड़ोंसे आनेवाले पानीके प्रवाहको अप्सरा कहते हैं। और चंद लोग पर्वतकी अिन तमाम लड़कियोंको पार्वती कहते हैं।

अैसी ही अप्सरा जैसी अेक नदीके बारेमें आज मुझे कुछ कहना है। महादेवके पहाड़के समीप मेकल या मेखल पर्वतकी तलहटीमें अमरकंटक नामक अेक तालाब है। यहांसे नर्मदाका अुद्‌गम हुआ है। जो अच्छा घास अुगाकर गौओंकी संख्यामें वृद्धि करती है, अुस नदीको गो-दा कहते हैं। यश देनेवालीको यशो-दा और जो अपने प्रवाह तथा तटकी सुन्दरताके द्वारा 'नर्म' याने आनंद देती है, वह है नर्म-दा। अिसके किनारे घूमते-घामते जिसको बहुत ही आनंद मिला, अैसे किसी ऋषिने अिस नदीका यह नाम दिया होगा। अुसे मेकल-कन्या या मेखला भी कहते हैं।

जिस प्रकार हिमालयका पहाड़ तिब्बत और चीनको हिन्दुस्तानसे अलग करता है, अुसी प्रकार हमारी यह नर्मदा नदी अुत्तर भारत अथवा हिन्दुस्तान और दक्षिण भारत या दखनके बीच आठ सौ मीलकी अेक चमकती, नाचती, दौड़ती सजीव रेखा खींचती है। और यहीं

अिसको कोअी मिटा न दे, अिस खयालसे भगवानने अिस नदीके अुत्तरकी ओर विंध्य तथा दक्षिणकी ओर सातपुडाके लंबे लंबे पहाडोंको नियुक्त किया है। अैसे समर्थ भाअियोंकी रक्षाके बीच नर्मदा दौड़ती कूदती अनेक प्रान्तोंको पार करती हुअी भृगुकच्छ यानी भड़ौंचके समीप समुद्रसे जा मिलती है।

अमरकंटकके पास नर्मदाका अुद्गम समुद्रकी सतहसे करीब पांच हजार फुटकी अूचाअी पर होता है। अब आठ सौ मीलमें पांच हजार फुट अुतरना कोअी आसान काम नहीं है, अिसलिअे नर्मदा जगह जगह छोटी-बडी छलांग मारती है। अिसी परसे हमारे कवि-पूर्वजोंने नर्मदाको दूसरा नाम दिया 'रेवा'। 'रेव्' धातुका अर्थ है कूदना।

जो नदी कदम कदम पर छलांगें मारती है, वह नौका-नयनके लिअे यानी किश्तियोंके द्वारा दूर तककी यात्रा करनेके लिअे कामकी नहीं। *समुद्रसे जो जहाज आता है, वह नर्मदामें मुश्किलसे तीस-पैंतीस मील* अंदर जा-आ सकता है। वर्षा ऋतुके अंतमें ज्यादासे ज्यादा पचास मील तक पहुंचता है।

जिस नदीके अुत्तरकी और दक्षिणकी ओर दो पहाड़ खड़े हैं, अुसका पानी भला नहर खोदकर दूर तक कैसे लाया जा सकता है? अतः नर्मदा जिस प्रकार नाव खेनेके लिअे बहुत कामकी नहीं है, अुसी प्रकार खेतोंकी सिंचाअीके लिअे भी विशेष कामकी नहीं है। फिर भी अिस नदीकी सेवा दूसरी दृष्टिसे कम नहीं है। अुसके पानीमें विचरनेवाले मगर और मछलियोंकी, अुसके तट पर चरनेवाले ढोरों और किसानोंकी, और दूसर तरह-तरहके पशुओंकी तथा अुसके आकाशमें कलरव करनेवाले पक्षियोंकी वह माता है।

भारतवासियोंने अपनी सारी भक्ति भले गंगा पर अुंडेल दी हो; पर हमारे लोगोंने नर्मदाके किनारे कदम कदम पर जितने मंदिर खड़े किये हैं, अुतने अन्य किसी नदीके किनारे नहीं किये होंगे।

पुराणकारोंने गंगा, यमुना, गोदावरी, कावेरी, गोमती, सरस्वती आदि नदियोंके स्नान-पानका और अुनके किनारे किये हुअे दानके माहात्म्यका वर्णन भले चाहे जितना किया हो, किन्तु अिन नदियोंकी

प्रदक्षिणा करनेकी बात किसी भक्तने नहीं सोची। जब कि नर्मदाके भक्तोंने कवियोंको ही सूझनेवाले नियम बनाकर सारी नर्मदाकी परिक्रमा या 'परिकम्मा' करनेका प्रकार चलाया है।

नर्मदाके अुद्गमसे प्रारंभ करके दक्षिण-तट पर चलते हुअे सागर-संगम तक जाअिये, वहांसे नावमें बैठकर उत्तर तट पर जाअिये और वहांसे फिर पैदल चलते हुअे अमरकंटक तक जाअिये — अब परिकम्मा पूरी होगी। नियम बस अितना ही है कि 'परिकम्मा' के दरम्यान नदीके प्रवाहको कहीं भी लांघना नहीं चाहिये, न प्रवाहसे बहुत दूर ही जाना चाहिये। हमेशा नदीके दर्शन होने चाहिये। पानी केवल नर्मदाका ही पीना चाहिये। अपने पास धन-दौलत रखकर अैश आरामसे यात्रा नहीं करनी चाहिये। नर्मदाके किनारे जंगलोंमें रहनेवाले आदिम निवासियोंके मनमें यात्रियोंकी धन-दौलतके प्रति विशेष आकर्षण होता है। आपके पास यदि अधिक कपड़े, बर्तन या पैसे होंगे, तो वे आपको अिस बोझसे अवश्य मुक्त कर देंगे।

हमारे लोगोंको अैसे अकिंचन और भूखे भाअियोंका पुलिसके द्वारा अिलाज करनेकी बात कभी सूझी ही नहीं। और आदिम निवासी भाअी भी मानते आये हैं कि यात्रियों पर अुनका यह हक है। जंगलोंमें लूटे गये यात्री जब जंगलसे बाहर आते हैं, तब दानी लोग यात्रियोंको नये कपड़े और सीधा देते हैं।

श्रद्धालु लोग सब नियमोंका पालन करके — खास तौर पर ब्रह्मचर्यका आग्रह रखकर नर्मदाकी परिक्रमा धीरे धीरे तीन सालमें पूरी करते हैं। चौमासेमें वे दो तीन मास कहीं रहकर साधु-संतोंके सत्संगसे जीवनका रहस्य समझनेका आग्रह रखते हैं।

अैसी परिक्रमाके दो प्रकार होते हैं। अुनमें जो कठिन प्रकार है, अुसमें सागरके पास भी नर्मदाको लांघा नहीं जा सकता। अुद्गमसे मुख तक जानेके बाद फिर अुसी रास्तेसे अुद्गम तक लौटना तथा अुसके तटसे सागर तक जाना और फिर अुसी रास्तेसे अुद्गम तक लौटना। यह परिक्रमा अिस प्रकार दुनी होती है। अिसका नाम है जलेरी।

मौज और आरामको छोड़कर तपस्यापूर्वक अेक ही नदीका ध्यान करना, अुसके किनारेके मंदिरोंके दर्शन करना, आसपास रहनेवाले संत महात्माओंके वचनोंको श्रवण-भक्तिसे सुनना और प्रकृतिकी सुन्दरता तथा भव्यताका सेवन करते हुअे जीवनके दो-चार मास बिताना कोअी मामूली प्रवृत्ति नहीं है। अिसमें संकल्प है, तपस्या है, बहादुरी है, अंतर्मुख होकर आत्म-चिन्तन करनेकी और गरीबोंके साथ आत्मीय होनेकी भावना है, प्रकृतिमय बननेकी दीक्षा है, और प्रकृति द्वारा प्रकृतिमें विराजमान भगवानके दर्शन करनेकी साधना है।

और अिस नदीके किनारेकी समृद्धि मामूली नहीं है। अनादि कालसे अुच्च कोटिके सन्त-महन्त, वेदान्ती, संन्यासी और अीश्वरकी लीला देखकर गद्गद होनेवाले भक्त अपना अपना अितिहास अिस नदीके किनारे छोड़ गये हैं। अपने खानदानकी शान रखनेवाले और प्रजाकी रक्षाके लिअे जान कुरबान करनेवाले क्षत्रिय वीरोंने अपना पराक्रम अिस नदीके किनारे आजमाया है। अनेक राजाओंने अपनी राजधानीकी रक्षा करनेके हेतुसे नर्मदाके किनारे छोटे-बड़े किले बनवाये हैं। और भगवानके अुपासकोंने धार्मिक कलाकी समृद्धिका मानो संग्रहालय तैयार करनेके लिअे जगह जगह मंदिर खड़े किये हैं। हरेक मंदिर अपनी कलाके द्वारा आपके मनको खींचकर अन्तमें अपने शिखरकी अुंगली अूपर दिखाकर अनंत आकाशमें प्रकट होनेवाले परमात्माका ध्यान करनेके लिअे प्रेरित करता है।

जिस प्रकार अजान की आवाज सुनकर खुदापरस्तोंको नमाजका स्मरण होता है अुसी प्रकार दूर दूरसे दिखाओ देनेवाली मन्दिरोंकी शिखरकी चमकती अुंगलियाँ हमें स्तोत्र गानेके लिअे प्रेरित करती हैं।

और नर्मदाके किनारे शिवजीका या विष्णुका, रामचन्द्र या कृष्णचन्द्रका, गणपति या जगदम्बाका स्तोत्र शुरू करेंगे, पहले नर्मदाष्टकसे प्रारंभ करना होता है — 'सबिन्दुसिन्धु सुस्खलत् तरंगभंग-रंजितम्'। अिस प्रकार जब पंचचामरके लघु-गुरु अक्षर नर्मदाके प्रवाहका अनुकरण करते हैं, तब भक्त लोग मस्तीमें आकर कहते हैं, हे माता! तेरे पवित्र जलका दूरसे दर्शन करते ही अिस संसारकी समस्त बाधायें दूर

हो गअी — 'गत तदैव मे भय त्वदम्बु वीक्षित यदा'। और अंतमें भक्तिलीन होकर वे नमस्कार करते हैं — 'त्वदीय पाद-पंकज नमामि देवि! नर्मदे!'।

हमें यह भूलना नहीं चाहिये कि जिस प्रकार नर्मदा हमारी और हमारी प्राचीन संस्कृतिकी माता है, अुसी प्रकार वह हमारे भाअी आदिम निवासी लोगोंकी भी माता है। अिन लोगोंने नर्मदाके दोनों किनारों पर हजारों साल तक राज्य किया था, कअी किले भी बनवाये थे और अपनी अेक विशाल आरण्यक संस्कृति भी विकसित की थी।

मुझे हमेशा लगा है कि हिन्दुस्तानका अितिहास प्रांतोंके अनुसार या राज्योंके अनुसार लिखनेके बजाय यदि नदियोंके अनुसार लिखा गया होता, तो अुसमें प्रजा-जीवन प्रकृतिके साथ ओतप्रोत हो गया होता और हरेक प्रदेशका पुरुषार्थी वैभव नदीके अुद्गमसे लेकर मुख तक फैला हुआ दिखाअी देता। जिस प्रकार हम सिन्धुके किनारेके घोड़ोंको सैंधव कहते हैं, भीमाके किनारेका घोरण पाकर पुष्ट हुअे भीमथड़ीके टट्टुओंकी तारीफ करते हैं, कृष्णाकी घाटीके खाद-तेलोंको विशेष रूपसे चाहते हैं, अुसी प्रकार पुराने समयमें हरेक नदीके किनारे पर विकसित हुअी संस्कृति अलग अलग नामोंसे पहचानी जाती थी।

अिसमें भी नर्मदा नदी भारतीय संस्कृतिके दो मुख्य विभागोंकी सीमारेखा मानी जाती थी। रेवाके अुत्तरकी ओरकी पंचगौड़ोंकी विचार-प्रधान संस्कृति और रेवाके दक्षिणकी ओरकी द्रविड़ोंकी आचार-प्रधान संस्कृति मुख्य मानी जाती थी। विक्रम संवत्का काल-मान और शालिवाहन शकका काल-मान, दोनों नर्मदाके किनारे सुनाअी देते हैं और बदलते हैं।

मैंने कहा तो सही कि नर्मदा अुत्तर भारत तथा दक्षिण भारतके बीच अेक रेखा खींचनेका काम करती है, किन्तु अुसके साथ मुकाबला करनेवाली दूसरी भी अेक नदी है। नर्मदाने मध्य हिन्दुस्तानसे पश्चिम किनारे तक सीमा-रेखा खींची है। गोदावरीने यों मानकर कि यह ठीक नहीं हुआ, पश्चिमके पहाड़ सह्याद्रिसे लेकर पूर्व-सागर तक अपनी अेक तिरछी रेखा खींची है। अतः अुनकी ओरसे ब्राह्मण मन्त्र बोलते

समय कहेंगे — "रेवाया अुत्तरे तीरे," और पैठणके अभिमानी हम दक्षिणके ब्राह्मण कहेंगे — "गोदावर्या दक्षिणे तीरे।" जिस नदीके किनारे शालिवाहन या शातवाहन राजाओंने मिट्टीमें से मानव बनाकर अुनकी फौजके द्वारा शकोंको परास्त किया, अुस गोदावरीको संकल्पमें स्थान न मिले, यह भला कैसे हो सकता है ?

* * *

नर्मदा नदीकी 'परिक्रमा' तो मैंने नहीं की है। अमरकंटक तक जाकर अुसके अुद्गमके दर्शन करनेका मेरा संकल्प बहुत पुराना है। पिछले वर्ष विन्ध्यप्रदेशकी राजधानी रीवा तक हम गये भी थे। किन्तु अमरकंटक नहीं जा सके। नर्मदाके दर्शन तो जगह जगह किये हैं। किन्तु अुसके विशेष काव्यका अनुभव किया जबलपुरके पास भेडाघाटमें।

भेडाघाटमें नावमें बैठकर संगमरमरकी नीली-पीली शिलाओंके बीचसे जब हम जलविहार करते हैं, तब यही मालूम होता है मानो पातालविद्यामें प्रवेश करके मानव-भूतके गूढ़ रहस्योंको हम खोल रहे हैं। अिसमें भी जब हम बंदरकूदके पास पहुंचते हैं और पुराने सरदार यहां घोड़ोंको अिशारा करके अुस पार तक कूद जाते थे आदि बातें सुनते हैं, तब मानो मध्यकालका अितिहास फिरसे सजीव हो अुठता है।

अिस गूढ़ स्थानके अिस माहात्म्यको पहचानकर ही किसी योग-विद्याके अुपासकने समीपकी टेकरी पर चौंसठ योगिनियोंका मंदिर बनवाया होगा और अुनके बीचमें बैल पर विराजित शिव-पार्वतीकी स्थापना की होगी। अिन योगिनियोंकी मूर्तियां देखकर भारतीय स्थापत्यके सामने मस्तक नत हो जाता है और असी मूर्तियोंको खंडित करनेवालोंकी धर्मांधताके प्रति ग्लानि पैदा होती है। मगर हमें तो खंडित मूर्तियोंका देखनेकी आदत सदियोंसे पड़ी हुआी है!!

* * *

प्रपाताकार प्रकृतिका अेक स्वतंत्र काव्य है। पानीको यदि जीवन कहें तो प्रपातके कारण खंड खंड होनेके बाद भी जो अनायास पूर्वरूप धारण करता है और शांतिसे आगे बढ़ता है, यह सामुच

जीवनाम वहा जायगा। नौमासेम जब सारा प्रदेश जलमग्न हो जाता है, तब यहा न तो हाती है 'धार' और न होता है अुसमें से निकलनेवाला ठंडी भापों जैसा 'धुआं'। नौमासेंके बाद ही धुवाधारकी मस्ती देख लीजिये। प्रपातकी ओर टकटकी लगाकर ध्यान करना मुझ पसन्द नहीं है, क्योंकि प्रपात अेक नशीली वस्तु है। अिस प्रपातम जब धोनीघाट परसे साबुनके पानीके जैसी आकृतियां दिखाओ देती है और आसपास ठंडी भापके बादल तैर सकते हैं, तब जितना लगते हैं अुतनी चित्तवृत्ति अस्वस्थ होती जाती है। यह दृश्य मन भरकर देखनेके बाद वापस लौटते समय लगता है, मानो जीवनकी किसी कठिन प्रसंगसे से हम बाहर आये हैं और जिन अनुभवके बाद पहलेके जैसे नहीं रहे हैं।

* * *

जियारगी-हाशणाबादको सबीपकी नर्मदा बिलकुल अलग ही प्रकारकी है। यहांके पत्थर जमीनसे तिरछे गड़े हुअे हैं। किस भूकंपने कारण अिन पत्थरोंके स्तर अैसे विषम हो गये हैं, कोओ नहीं बता सकता। नर्मदाके किनारे भगवानकी आकृति धारण करके बैठे हुअे पाषाण भी अिस विषयमें कुछ नहीं बता सकते।

और वही नर्मदा जब शिरोबिन्दुको सांपके समान लेटे किन्तु बस चौड़े भडोंके किनारेसे धो डालती है और आलेखरके हलानियोंको खेलाती है, तब वह बिलकुल निराली ही मालूम होती है।

* * *

नदीके लड़के पास अपनी गोदमें अेक टापूकी परवरिश करनेका आनंद जिसे अेक बार मिला, वह सागर-संगमके समय भी अिसी तरहके अेक या अनेक टापू-बच्चोंकी परवरिश करे, तो अिसमें आश्चर्य ही क्या है?

कांगिवड हिन्दुस्तानके अनेक आश्चर्योमें से अेक है। हजारों लोग जिसकी छायामें बैठ सकते हैं और बड़ी बड़ी फौजें जिसकी छायामें पड़ाव डाल सकती हैं, अैसा अेक वट-वृक्ष नर्मदाके प्रवाहके बीचोंबीच अेक टापूमें पुराण पुरुषकी तरह अनन्तकालकी प्रतीक्षा कर रहा है। जब बाढ़ आती है, तब अुसमें टापूका अेकाध हिस्सा बह जाता है, और अुसके साथ

अिस वट-वृक्षकी अनेक शाखायें तथा अुन परसे लटकनेवाली जड भी बह जाती हैं। अब तक कबीरवडके अैसे कटाव कितनी बार हुअे, अितिहासके पास अिसकी नोंध नहीं है। नदी कटती जाती है, और बडकी नअी नअी पत्तियां फूटती जाती हैं। सनातन काल वृद्ध भी है और बालक भी है। वह त्रिकालज्ञानी भी है और विस्मरणशील भी है।

अिस बार भावनाका और कालातीत परमात्माका अखंड ध्यान करनेवाले ऋषि-मुनि और संत महात्मा जिसके किनारे युग-युगसे बसते आये हैं, वह आर्य अनार्य सबकी माता नर्मदा भूत-भविष्य-वर्तमानके मानवोंका कल्याण करे। जय नर्मदा, तेरी जय हो!

अगस्त, १९५५

१७

संध्यारस

गौरीशंकर* तालाबका दर्शन यकायक होता है। हमने बगीचेमें जाकर पहाडकी शोभा देख ली, चीनी तश्तरीके टुकडोंसे बनाये हुअे निर्जीव हाथी, घोडे और शेरोंका रुआब देखकर तथा पेडोंके नीचे मौज करनेवाले सजीव पक्षियोंका कलरव सुनकर तालाबके किनारे पहुंचे, सीढ़ियां चढ़ने लगे, और ठंडे पवनकी शांति अनुभव करने लगे; तो भी खयाल नहीं हुआ कि यहां पर तालाब होगा। आखिरी (यानी अूपरकी) सीढ़ी पर पांव रखा कि यकायक मानो आकाशको चीरकर कोअी अप्सरा प्रकट हुअी हो, अिस प्रकार सरोवरका नीर हमारे सामने प्रसन्न वदनसे देखने लगता है। आप भले अकेले ही सरोवरका दर्शन करने आयें, परन्तु आप यहां अकेले नहीं रहेंगे। आप देखेंगे कि आकाशमें बादल और सबसे जल्दी दौडकर आयी हुअी संध्या-तारिकायें भी आपके साथ ही सरोवरकी शोभाको निहार रही हैं।

* सौराष्ट्रमें भावनगरका अेक तालाब।

सरोवर तो हमेशा नीची सतह पर होते हैं। पहाड़से अुतरकर नीचे आते हैं तभी हम सरोवरके जलमें पांवोंका प्रक्षालन कर पाते हैं। किन्तु यह तो मानो गंधर्व सरोवर है, मानो बादल पिघलकर टेकरीके सिर पर छलक रहे हैं!

अुस पारका किनारा दिखाओी दे अैसा सरोवर भला किसे पसन्द आयेगा? अितना सारा पानी कहांसे आता है, अैसी अतृप्त जिज्ञासा जिससे साथ न हो, अुसके सौंदर्यमें दैवी गूढ़ भाव कैसे हो सकता है? रेलवे लाअिन भी बिलकुल सीधी हो तो हमें पसन्द नहीं आती। चढ़ाव हो, अुतार हो, दाअीं या बाअीं ओर मोड़ हो, तभी वह फबती है। सरोवर कोओी प्रपात नहीं है कि वह अूंचे-नीचेकी क्रीड़ा दिखाये। गोरीसरोवर चारों ओर टेकरियोंसे घिरा हुआ है। किन्तु ये टेकरियां मौतकी परवाह न करनेवाले वीरोंकी भांति भीड़ करके खड़ी नहीं हैं। अिसलिअे पानीको अिधर-अुधर सभी जगह फैलनेके लिअे अवकाश मिला है।

सरोवरके बांध परसे पश्चिमकी ओर देखने पर पानीमें भांति-भांतिके रंग फैले हुअे दिखाओी देते हैं, मानो किसी अद्भुत अुपन्यासमें नवों रस गूंथे गये हों। बांधके नीचे आत्महत्याका गहरा हरा रंग मानो हर क्षण हमें अंदर बुलाता है। अिसमें भी सभी जगह समानता नहीं है। कहीं मेंहदीकी पत्तियोंकी तरह गाढ़ा, तो कहीं नीमकी पत्तियोंकी तरह गहरा। काफी देखनेके बाद लगता है कि यह पानीका रंग नहीं है, बल्कि पानीमें छिपा हुआ स्थावर जहर है। कुछ आगे देखने पर बादामी रंग दीख पड़ता है, मानो निराशामें से आशा प्रकट होती हो। रंग तो है बादामी, किन्तु अुसमें धातुकी चमक है। आगे जाकर यही रंग कुछ रूपांतर पाकर नारंगी रंगके द्वारा संध्याका अुपस्थान करता हुआ दिखाओी देता है। बादलोंकी जामुनी छाया बीचमें यदि न आओी होती तो पता नहीं अिस ओरके नारंगी और अुस ओरके सुनहरे रंगके बीच कैसी शोभा प्रकट होती!

हमारा ध्यान सुनहरे रंगकी ओर जाता है अुससे पहले ही मंद-मंद बहता हुआ पवन जलपृष्ठ पर वीचिमाला अुत्पन्न करके हमसे कहता है, 'सुनिये, यह समयोचित स्तोत्र!' सामनेकी टेकरीने सिर अूंचा न किया

होता तो यह रसवती पृथ्वी कहां पूरी होती है और निःशब्द आकाश कहां शुरू होता है, यह जानना किसी पंडितके लिअे भी कठिन हो जाता।

बाअीं ओर काट-छांट की हुआी मेंहदीकी बाड़ है। गुफड़ बाड़ किसे पसंद न होगी? किन्तु शृंगार-साधिका मेंहदीका शिरच्छेद मुझे असह्य मालूम हुआ। दाहिनी ओर ठूंठ पड़ हुअ किन्तु गाढ़ न हुअे सूर्यके तेजके समान सरासर और बाअीं ओर नीच घनी-छिछली झाड़ी! अैसे परस्पर भिन्न रसोंके बीचसे जनताकी तरह यानयुक्त चित्तसे हम आगे बढ़े। वहां मिला अेक निराधार सेतु। संस्कृत कवियोंने अुसे देखा होता तो वे अुसका नाम शिवम्-सेतु ही रखते। अैसे सेतुओंकी खोज पहले-पहल हिमालयके वनेचरोंने ही की होगी। यह निराधार पुल हमें धीरे धीरे ले जाता है पानीके बीच तप करनेवाले ऋषि-जैसे अेक द्वीपके जटाभागमें। पुलके बीचोंबीच पहुंचने पर आतिथ्यशील जल चेतावनी देता है 'सावधानीसे चलिये, सावधानीसे चलिये।' और योग्य अवसर मिलने पर पादप्रक्षालन करनेमें भी नहीं चूकता।

और यह द्वीप? वह तो नीरव शांतिकी मूर्ति है। पानीमें चांद अितना खिलखिलाकर हंसता है, फिर भी अुसकी प्रतिध्वनि कहीं सुनाअी नहीं देती। मानो प्रकृतिको डर मालूम होता है कि कहीं ध्यानी मुनिकी शांतिमें खलल न पड़े। अिस बेटमें न तो सांप है, न गिरगिट। पक्षी हों तो वे अब अपने घोंसलोंमें निश्चिन्त सो गये हैं। आतिथेय मंडपके नीचे हम विराजमान हुअे। अब तो पानीके अूपर अज्ञात या गूढ़ अंधकारकी छाया फैलने लगी थी। अष्टमीकी चांदनी सीधी पानीमें अुतर रही थी। सिर्फ जातिवैरी सुर-असुरोंके गुरु दीर्घ विग्रहसे अूबकर पश्चिमकी ओर चमक रहे थे, मानो समझौता करनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हों। प्रकाश और अंधकारकी संधि करनेका प्रयत्न सध्याने अनेक बार किया है। अिसमें यदि वह कभी कामयाब हो सके तो ही सुर-असुरोंके बीच हमेशाके लिअे समाधान हो सकेगा। देखिये, दोनोंके गुरु अपनी दिशाको बदलकर अपनी स्वभावोचित गतिसे जा रहे हैं और सध्याकी रक्त कालिमा दोनोंको किसी

पक्षपातके बिना घेर रही है। जो हमेशा विग्रह ही चलाता है, अुसका अस्त तो होने ही वाला है।

अब पानीने अपना रंग बदला। अब तक पानीके पृष्ठ पर नावोंके बनाये हुअे रास्तोंके समान जो पट्टे बिना कारण दिखाओ देते थे वे अब दिखने बंद हुअे। खेल काफी हो चुका है, अब गंभीरताके साथ सोचना चाहिये, अैसा कुछ विचार आनेसे पानीकी मुखमुद्रा आमुंग हो गओी। टेकरियां अैसी दिखाओी देने लगीं, मानो प्रेक्षकोंके वाग्वादेह बिखरे हों। विस्तीर्ण शांति भी कितनी बेचैन कर सकती है, अिस बातका नमूना यहां पूरा-पूरा हो आता है। सब टेकरियां मानों हमारी ओर आवाज सुननेकी ही राह देख रही हैं। अिसमें कोओी संदेह नहीं रहता कि जगमें आवाज देने पर वे 'हां, हां! अभी आओी, अभी आओी।' कह कर दौड़ती हुओी आयेंगी। किन्तु अुन्हें बुलानेकी हिम्मत ही कैसे हो? क्या वे टेकरियां मध्यरात्रिके समय, कोओी न देख रहा हो तब, कपड़े अुतारकर सरोवरमें नहानेके लिअे अुतरती होंगी? आज तो वे नहीं अुतरेंगी, क्योंकि दुर्विनीत चन्द्रमा मध्यरात्रि तक सरोवरमें टकटकी बांधकर देखता रहेगा। और मध्यरात्रिके पहले ही शिशिरकी ठंडका साम्राज्य शुरू होनेवाला है। फिर पता नहीं, अुषःकालके पहले माघस्नान करनेकी अिच्छा अिन्हें होगी या नहीं। अैसे किसी पुण्यसंचयके बिना टेकरियोंको भी अितनी स्थिरता कैसे प्राप्त हुओी होगी?

कोओी पुल परसे निकला। पानीमें अुससे गलबली मचती है और अुसमें से निकलनेवाली लहरोंके वर्तुल दूर दूर तक दौड़ते हैं। लोग अपने अपने गांवोंमें रहते हैं फिर भी जिस तरह खबरें अुनके द्वारा दूर दूरतक फैला करती हैं, अुसी तरह पुलके पास जो क्षोभ शुरू हुआ वह किनारे तक पहुंचने ही वाला है। शरीरमें ओक जगह चोट लगनेसे जैसे सारे शरीरको अुसका पता चल जाता है, वैसी पानीकी भी बात है। पानीकी शांतिमें यदि भंग हो तो अुसके परिणामस्वरूप अुसमें क्षुद्रसे प्रतिबिंबित हुआ सारा ब्रह्मांड डोलने लगता है।

अब गिरनारका राग शुरू हुआ। पानीमें अुसका अनुकरण चलता दीख पड़ता है। किन्तु भूतकाल तो अलग ही है।

फरवरी, १९२७

१८
रेणुका का शाप

रेणुका का मतलब है रेत। अुसके शापसे कौनसी नदी सूख न जायगी? गयाकी नदी फल्गु भी अिस तरह अंतःसलिला हो गयी है न! फिर वढवाणके पासकी भोगावो भी अैसी क्यों न हो? सौराष्ट्रमें भोगावा (बरसातके बाद सूखनेवाली नदियां) बहुत हैं। क्या हरेकको किसी न किसी रेणुकादेवीका शाप लगा होगा? शेत्रुंजी, भादर, मच्छु, आजी, घेलामती, मेगळ — चारों दिशाओंमें बहनेवाली अिन नदियोंमें कितनी नदियां अैसी हैं जिनमें बारह मास पानी बहता हो? सचमुच भारतवर्षमें सौराष्ट्र-काठियावाड अनेक प्रकारसे अलग मालूम होता है। अुसका आकार भी कितना है! चोटीला या बरडा, शेत्रुंजा या गिरनार पर्वत भरकर पानी देगा भी तो कितना देगा? और अुनकी लड़कियां भी खींच-खींचकर आखिर कितना पानी लायेंगी? नीलगिरि और सह्याद्रि, सातपुडा और विन्ध्याद्रि, हिंदुकुश और हिमालय, नागा, खासी और ब्रह्मी योमा जैसे समर्थ पर्वतराजोंको ही बादलोंका मुख्य करभार मिलता है। अुनकी लड़कियां गौरवसे कैसी अस्खलितरूपेण होकर चलती हैं! अुनके मुकाबलेमें बेचारी काठियावाडी नदियां क्या हैं? पानी बरसा कि बहने लगीं। बरसात बन्द हुआ कि असमंजसमें पड़कर सूख गयी।

हरेक नदीने अेक-दो अेक दो शहरोंको आश्रय दिया है। भोगावोके कारण वढवाण (अब सुरेन्द्रनगर) की शोभा है। राणकदेवीका शाप अगर न लगा होता तो अिस नदीका मुख कितना अुज्ज्वल मालूम होता! अतयजोंका शाप लेकर आगे लोग भविष्यमें अुसकी क्या दशा करनेवाले

है? शेत्रुंजीकी वनना देखनी हो तो अुसके वीर (भाअी) के शिखर परसे देख लीजिये। कुंदनके समान पीली घास अुगी हुअी है, दूर दूर तक गालीचोंके समान खेत फैले हुअे हैं और बीचमें से शेत्रुंजी धीमे धीमे अपना रास्ता काटती जा रही है। शेत्रुंजीकी यह चाल गम्भीर और निरातुर है।

और मेगळका नाम मेगळ (= मयगळ ?) क्यों पडा होगा? क्या देवधरामें मगरने किसी हाथीको पकड रखा होगा अिसलिअे? या समुद्र और अुसके बीच आनेवाले अूंचे सिकता-पट पर वह सिर पटकती है अिसलिअे? समुद्रसे मिलनेका हक ना हरेक नदीका है ही। किन्तु बेचारी मेगळके भाग्यमें सालमें आठ महीनों तक खंडिताकी तरह अपने पतिके दूरसे ही दर्शन करना बदा है। वर्षा ऋतुमें जब समुद्रसे भी रहा नहीं जाता तभी अिन दोनोंका संगम होता है। पोरबाडके लोगोंको अिस संगम पर ही स्मशान बनानेकी क्या सूझी होगी? या कैसे कहूं सकते हैं कि अिसमें भी औचित्य नहीं है? स्मशान भी तो अिहलोक और परलोकका संगम ही है न!

भादर ही अेक अैसी नदी है, जिसके लिअे काठियावाड गर्व कर सकता है। भादरका असली नाम क्या होगा? भाद्रादी या भद्रावती? बहादुर तो हरगिज नहीं होगा। अिस नदीकी प्रतिष्ठा बहुत है। जेतपुर, नवागढ और नवीबंदर जैसे स्थान अुसके तट पर खडे हैं। नवीबंदर जब बसा होगा तब अुसको 'नवी' (= नयी) नाम देनेवाले पुरुषोंके दिलमें कितनी आकांक्षा, कितना अुत्साह होगा! पोरबंदरसे भी यह श्रेष्ठ होगा, बडे बडे जहाज दूर दूरके देशोंका माल देनेके अंदर पहुचायेंगे! दैव यदि अनुकूल होता तो क्या भादर टेम्स नदीकी प्रतिष्ठा न पाती? किन्तु नदीकी प्रतिष्ठा तो अुसके पुत्रोंके पुरुषार्थ पर निर्भर है। आज भादरको हिन्दुस्तानकी पश्चिम-वाहिनी नदियोंका नेतृत्व मिला है यही काफी है।

रंगमती, आजी और मच्छु नदियां चाहे जितनी परोपकारी हों और नवानगर, राजकोट और मोरवीके वैभवको वे भले अखंड रूपमें निहारती हों, फिर भी अुन्हें सागरको छोडकर छोटे अखातको ही ब्याहना पडा है।

काठियावाडकी अिन सब नदियोंने देशी रियासतोंकी वरतूतोंका तथा प्रपचोंका पुराने जमानेमें देखा होगा। मगर काठियावाडके भिन्न भिन्न विभागोंके विशिष्ट रीति-रिवाजोंका दर्शन यदि वे हमें करा दें तो वह बड़ा रोचक जरूर होगी।

सौराष्ट्रकी नदियोंका पानी पीनेवाले किसी पुत्रका यह काम है कि वह अिन नदियोंके मुहसे अुनका अपना अपना अनुभव सुनवावे।

१९२६–२७

१९

अंबा-अंबिका

भीष्म-पितामह अंबा-अंबिका नामक दो राजकन्याओंको जीतकर राजा विचित्रवीर्यके पास ले आये। कन्याओंने साफ-साफ कह दिया, 'हमारा मन दूसरी जगह बैठा हुआ है।' विचित्रवीर्य अब अिनसे विवाह कैसे करे? और जिसमें अिनका मन चिपका था वह राजा भी जीती हुअी कन्याओंका स्वीकार किस प्रकार करे? बेचारी राजकन्याओंको कोअी पति नहीं मिला और वे झूर झूर कर मर गअीं।

गरमीके दिनोंमें आबूके पहाड परसे सरस्वती और बनास नदियोंके दर्शन किये थे। वे बेचारी समुद्र तक पहुच ही न पाअीं। बीचमें कच्छके रेगिस्तानमें ही झूर झूर कर लुप्त हो गअी हैं। अंबा-अंबिकाकी तरह कौमार्य, सौभाग्य और वैधव्यमें से अेक भी स्थिति अिनके लिअे नहीं रही। गुजरात और राजपूतानाके अितिहासमें अिन नदियोंका कितना भी महत्त्व क्यों न हो, राजा कर्णके दो आसुओंके अलावा हम अुन्हें क्या दे सकते हैं?

१९२६–'२७

२०
लावण्यफला लूनी

खारची (मारवाड जंक्शन) से सिंध हैदराबाद जाते हुअे लूनी नदीका दर्शन अनेक बार किया है। अूटोंके स्वदेश जोधपुर जानेका रास्ता लूनी जंक्शनसे ही है, अिसलिअे भी अिस नदीका नाम स्मृतिपट पर अंकित है। यहाके स्टेशन पर हिरणके अच्छे-अच्छे चमडे सस्तेमें मिलते थे। अैसे मुलायम मृगाजिन यहांसे खरीदकर मैंने अपने कअी गुरुजनोंको और प्रियजनोंको ध्यानासनके तौर पर भेंट दिये थे। पता नहीं कि चमडेके अिस अुपयोगसे हिरणोंको अुनके ध्यानका कुछ पुण्य मिला या नहीं।

लूनीका नाम सुनते ही हृदय पर विषाद छा जाता है। यों तो सब-की-सब नदियां अपना मीठा जल लेकर खारे समुद्रसे मिलती हैं। और अिसी तरह अपने पानीको सडनेसे बचाती हैं। लेकिन सागरका संगम होने तक नदीका पानी मीठा रहे यही अच्छा है। बेचारी लूनीका न सागरसे संगम होता है, और न आखिर तक अुसका पानी मीठा ही रहता है।

अगर यह नदी साभर सरोवरसे निकली होती तो अुसका खारापन हम माफ कर देते। लेकिन अुसका अुद्गम है अजमेरके पास अरवली, आरावली या आडावलीकी पहाडियोंमें। यहां भी अुसे सागरमती कहते हैं! यह गोविन्दगढ़ तक पहुच गअी तो यहां पुष्कर सरोवरके पवित्र जल लेकर सरस्वती नदी अुससे मिलती है।

लूनीका असली नाम था लवणवारि। अुसका अपभ्रंश हो गया लोणवारी, और आज लोग अुसे कहते हैं लूनी। अजमेरसे लेकर आबू तक जो आरवलीकी पर्वत श्रेणी फैली हुअी है, अुसका पश्चिमका सारा पानी छोटे-बडे स्रोतोंके द्वारा लूनीको मिलता है। अिस पानीके बदौलत जोधपुर राज्यका आधा भाग अपनी द्विदल धान्यकी खेती करता

है। सिंघाडेकी अुपज भी यहा कम नही है। जहा-जहा लूनीकी बाढ पहुचती है, वहा किसान अुसे आशीर्वाद ही देते हैं।

जब लूनी बालोतरा पहुचती है तब अुसका भाग्य — सौभाग्य नही किन्तु दुर्भाग्य, अुस पर सवार होता है। जहा जमीन ही खारी है वहा बेचारी नदी क्या करे?

जोधपुरके राजा जसवंतसिहको सद्बुद्धि सूझी। अुसने लूनी नदीका पानी खारा होनेके पहले ही, बिलाडाके पास अेक बडा बाध बाध दिया और बाअीस वर्गमीलका अेक बडा विशाल, मनुष्य-कृत सरोवर बना दिया। तेरह हजार वर्गमीलका पानी अिस सरोवरमें अिकट्ठा होता है। अिसकी गहराअी अधिक-से-अधिक चालीस फुटकी है। अिस सरोवरका नाम 'जसवंत-सागर' रखा सो तो ठीक ही है, क्योकि राजाने अुसे बनाया। अगर किसानोसे पूछा जाता तो वे अुसे 'लूनी-प्रसाद' कहते।

अपनी दो सौ मीलकी यात्राके अन्तमें यह नदी कच्छके रणमें अपने भाग्यको कोसते-कोसते लुप्त हो जाती है। अिसके तीनो मुख नमकसे अितने भरे हुए रहते हैं कि समुद्र भी अिसके पानीका आचमन करनेमें संकोच करता है।

अब देखना है कि लूनी, सरस्वती, बनास और अैसी ही दूसरी नदिया जिस श्रद्धासे अपना जल कच्छके रणमें छोड देती हैं, अुस श्रद्धाका फल अुन्हे कब मिलता है और रणका परिवर्तन अुपजाअू भूमिमें कब हो जाता है। आज लूनी नदी करीब-करीब पाकिस्तानकी सरहद तक पहुच जाती है और कच्छके रणको दिन-पर-दिन अधिक खारा करती जाती है। अैसी लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध नदीको अगर हम 'लावण्यवती' कहे तो वैयाकरण अुस नामको जरूर मान्य करेंगे।

काव्यरसिक क्या कहेंगे अिसका पता नही।

१९५७

अुंचळ्ळीका प्रपात

जोगके बिलकुल ही सूखे प्रपातके अिस बारके दर्शनका गम हलका करनेके लिअे दूसरा अेकाध भव्य और प्रसन्न दृश्य देखनेकी आवश्यकता थी ही। धारवार जिलेके गर्वगग्रह — गॅजेटियर — के पन्ने अुलटते अुलटते पता चला कि जोगसे थोड़ा ही घटिया अुचळ्ळी नामक अेक सुन्दर प्रपात शिरसीसे बहुत दूर नहीं है। लशिंग्टन नामक अेक अंग्रेजने सन् १८४५ में असकी खोज की थी, मानो अुससे पहले किसीने असे देखा ही न हो! अंग्रेजोंकी आंखों पर वह चढ़ा कि दुनियामें अुसकी शोहरत हो गयी!

यह अुचळ्ळी कहां है? वहां किस ओरसे जाया जा सकता है? हम कैसे जायें? हमारे कार्यक्रममें यह बैठ सकता है या नहीं? आदि पूछताछ मैंने शुरू कर दी। श्री शंकरराव गुलवाडीजीने देखा कि अब अुचळ्ळीका कार्यक्रम तय किये बिना शांति या स्वास्थ्य मिलनेवाला नहीं है। वे खुद भी मुझसे कम अुत्साही नहीं थे। अुन्होंने बताया कि जब बिजली पैदा करनेकी दृष्टिसे धारवार जिलेके प्रपातोंकी जांच — सरवे की गयी थी, तब अिंजीनियर लोगोंने अुचळ्ळीके प्रपातको प्रथम स्थान पर रखा था; और गिरसप्पा यानी जोगके प्रपातको दूसरे स्थान पर; मागोडाको तीसरा और गूपाके नजदीकके प्रपातको चौथा स्थान दिया था।

समुद्रके साथ धारवार जिलेकी दोस्ती जोड़नेवाली मुख्य चार नदियां हैं — काळी नदी, गंगावळी, अघनाशिनी और शरावती। अिनमें से शरावती या कालनदी होन्नावरके पास समुद्रमें मिलती है। दस साल पहले जब हमने जोगका प्रपात दूसरी बार देखा था, तब अिस शरावती नदी पर नावमें बैठकर होन्नावरसे हम अूपरकी ओर गये थे। शरावतीका किनारा तो मानो वनश्रीका साम्राज्य है!

अबकी बार जब हम हुबलीसे अंकोला और कारवार गये तब आरबैल घाटीमें से 'नागमोडी' रास्ता निकालनेवाली गंगावळीको

देखा था। और अकोलासे गोकर्ण जाते समय अुसके पृष्ठभाग पर नौका-क्रीडा भी की थी। काळी नदीके दर्शन तो मैंने बचपनमें ही कारवारमें किये थे। पचास साल पहलेके ये संस्मरण दस साल पहले ताजे भी किये थे और अबकी बार भी कारवार पहुंचते ही काळी नदीके दो बार दर्शन किये। किन्तु अितनेसे संतोष न होनेके कारण कारवारसे हळगा तक की दस मीलकी यात्रा — आना-जाना — नावमें की।

चौथी है अघनाशिनी। अुसका नाम ही कितना पावन है! गोकर्णके दक्षिणकी ओर तदडी बदरके पास वह टेढी-मेढी होकर खूब फैलती है। किन्तु समुद्र तक पहुंचनेके लिअे अुसको जो रास्ता मिलता है वह बिलकुल छोटा है। यह अघनाशिनी जहां समुद्रसे मिलनेके लिअे अुतावली होकर सह्याद्रिके पहाड परसे नीचे कूदती है, वही स्थान अुंचळ्ळीके प्रपातके नामसे पहचाना जाता है।

हमने सिद्धापुरसे शिरसीका रास्ता लिया। किन्तु शिरसी तक जानेके बदले अेक रास्ता पश्चिमकी ओर फूटता था, अुससे हम नीलकुद पहुंचे। वहां श्री गोपाल भाडगावकरके चाचा रहते थे। वे बडे प्रतिष्ठित जमींदार थे। अुनके आतिथ्यका स्वीकार करके हम अुंचळ्ळीकी खोजमें निकल पडे। नीलकुदसे होसतोट (=नया बगीचा) जाना था। फौजी 'जीप'का प्रबंध होनेसे जंगलका रास्ता कैसे तय करेंगे, यह चिंता करीब करीब मिट गअी थी। होसतोटसे होनेकाव (=सोनेका गाव) की ओरका रास्ता हमें लेना था। किन्तु अिस रास्तेसे मोटर तो क्या, बैलगाडी या पालकी भी नहीं जा सकती थी। अिसे तो बाघका रास्ता कहना चाहिये। मनुष्य भी बाघके जैसा बनकर ही अैसे रास्तेसे जा सकता है। हमने अपनी जीपको अेक पेडकी छांहमें आराम करनेके लिअे छोड दिया और 'अथातो प्रपात-जिज्ञासा' कहकर जंगलमें रास्ता तय करना शुरू किया। होसतोटसे अेक स्थानिक नौजवान हाथमें अेक बडा 'कोयता' लेकर हमें रास्ता दिखानेके लिअे हमारे आगे चला। अिस बेचारेको धीरे चलनेकी आदत नहीं थी, न सृष्टि-सौंदर्य निहारनेकी लत! वह तो आगे ही आगे चलने लगा। हमें बुमरा

बहुत ही कम लाभ मिला। हम कुछ आगे गये। अूपर चढ़े, नीचे अुतरे, फिर चढ़े और फिर अुतरे। जिनमें जंगल घना होने लगा। थोड़े समयके बाद वह घनघोर हो गया।

So steep the path, the foot was fain,
Assistance from the hand to gain.

हमारी मुख्य कठिनाअी तो पगडंडीकी थी। यहां सूखे पत्ते अितने जमा हो गये थे कि पांव न फिसले तो ही गनीमत समझिये! मेहर मालिककी कि अिन पत्तोंमें से सरसराता हुआ कोअी सांप न निकला। वरना हमारी अुनळी यहींकी यहीं रह जाती। जहां सख्त अुतार होता था वहां लाठीसे पत्तोंको हटाकर देखना पड़ता था कि कोअी मजबूत पत्थर या किसी दरख्तकी अेकाध चीमड़ जड़ है या नहीं।

दोपहरके बारहका समय था। किन्तु पेड़ोंकी 'स्निग्ध-छाया'के अंदर धूप आये तभी न? चलकर यदि गरम न हो गये होते तो सर्दी ही लगती। जरा आगे बढ़ते और अेक-दूसरेसे पूछते, "हमने कितना रास्ता तय किया होगा? अब कितना बाकी होगा?" सभी अज्ञान! किन्तु सिद्धापुरसे अेक आयुर्वेदिक डॉक्टर कैमेरा लेकर हमारे साथ आये थे। ये सज्जन अेक साल पहले दूसरे किसी रास्तेसे अुनळी गये थे। अपने पुराने अनुभवके आधार पर वे रास्तेका अंदाज हमें बताते थे। बीच बीचमें तो हमारा यह नाममात्रका रास्ता भी बन्द हो जाता था। आगे अंदाजसे ही चलना पड़ता था। किन्तु सच्ची मुसीबत रास्ता बंद हो जाने पर नहीं, बल्कि तब होती है जब अेक पगडंडी फूटकर दो पगडंडियां बन जाती हैं। जब सही रास्ता दिखानेवाला कोअी नहीं होता और अपना अंदाज करनेवाले अेक साथीके साथसे दूसरेका अपना अंदाज मेल नहीं खाता, तब 'यद् भावि तद् भवतु'—जो होनेवाला होगा सो होगा—कहकर किस्मतके भरोसे किसी अेक पगडंडीको पकड़ लेना पड़ता है।

किसीने कहा कि दूरसे मकानकी आवाज सुनाअी देती है। मेरे कान बहुत तीक्ष्ण नहीं हैं। अेकने तो कभीका अिस्तीफा दे दिया है और दूसरा काम भरकी ही बात सुनता है। किन्तु अपनी कल्पना-शक्तिसे

बारेमें मैं अैसा नहीं कहूगा। मैंने कान और कल्पना, दोनोंके सहारे सुननेकी कोशिश की। किन्तु जिस प्रपातकी आवाज कह वैसी कोआी आवाज सुनाअी न दी। यहीं मधुमक्खियां भनभनाती होती ना भी मैं कहता, "हा, हा, प्रपातकी आवाज सचमुच सुनाअी देती है।" कठिन यात्रामें साथियोंके साथ झट सहमत हो जानेके यात्रा-धर्ममें मेरा पूर्ण विश्वास है। किन्तु यहा मैं लाचार था।

अेक ओर यदि जगलकी भीषण सुदरताका मैं रसास्वादन कर रहा था, तो दूसरी ओर चि० सरोजके कितने बेहाल हो रहे होंगे अिस चिंतासे अुसकी ओर देखता था। जब सरोजने कहा, "जगलकी अैसी यात्राके अतमें अगर कोअी प्रपात देखनेको न मिले तो भी कहना होगा कि यहा आना सार्थक ही हुआ है। कैसा मजेका जगल है! ये बडे बड पेड, अुन्हे अेक-दूसरेसे बाधनेवाली ये लतायें — सब सुन्दर है!" तब मुझे बहुत सतोष हुआ।

आगे जब रास्ता लगभग असभव-सा मालूम हुआ, और अेक हाथमें लकडी तथा दूसरेसे किसीका कधा पकडकर अुतरना भी सदेहप्रद प्रतीत हुआ, तब भी सरोज कहने लगी "मेरा अुत्साह कम नहीं हुआ है। किन्तु दूसरोको अडचनमें डाल रही हू अिस खयालसे ही हताश हो रही हू। यह अुतार फिर चढना होगा अिसका भी खयाल रखना है।"

मैंने कहा, "अेक बार अुबळ्ळीके दर्शन करनेके बाद किसी न किसी तरह वापस तो लौटना होगा ही। किन्तु हम पूरा आराम लेकर ही लौटेंगे। यहा तक तो आ ही गये हैं, और अब प्रपातकी आवाज भी सुनाअी दे रही है। अिसलिअे अब तो आगे बढना ही चाहिये।"

हमारे मार्गदर्शकने नीचे जाकर आवाज दी। डॉक्टरने कहा, "शायद अुसने पानी देखा होगा।" हमारा अुत्साह बढ़ा। हम फिर अुतरे। आगे बढे। फिर दाहिनी ओर मुडे और आखिर जिसके लिअे आसें तरस रही थीं अुस प्रपातका सिर नजर आया!

अेक तग घाटीके अिस ओर हम खडे थे और सामने अघनाशिनीका पानी, जिसे सुबह जीपकी यात्राके दरम्यान हमने तीन-चार बार

लाया था, यहा अेक बडे पत्थरके तिरछे पट परसे नीचे पहुचनेकी तैयारी कर रहा था। गीत जिस प्रकार तम्बूरेके तालके साथ ही सुना जाता है, अुसी प्रकार प्रपातके दर्शन भी नगारेके समान धड-धड आवाजके साथ ही किये जाते हैं।

अुचक्कळीका प्रपात जोगके राजाकी तरह अेक ही छलागमें नीचे नही पहुचता है। सुबहकी पतली नीदके हरेक अवसर जिस प्रकार हम अर्ध-जाग्रत स्थितिमें अनुभव लेते हैं, अुसी प्रकार अघनाशिनीका पानी अेक अेक सीढीसे कूदकर सफेद रगका अनेक आकारोका परदा बनाता है। अितने शुभ्र पानीमें मसाल्का वालेसे बाला 'अघ'—पाप भी सहज ही धुल सकता है

जिस प्रकार धान पछोरने पर सूपके दाने नाचते-कूदते दाहिनी ओरके कोने पर दौडते आते हैं, और साथ साथ आगे भी बढ़ते हैं, अुसी प्रकार यहाका पानी पहाडके पत्थर परसे अुतरते समय तिरछा भी दौडता है और फेनके वस्त्र बनाकर नीचे भी कूदता है। पानी अेक जगह अवतीर्ण हुआ कि वह फौरन घूमकर अगरखेके घेरेकी तरह या घोतीके घुमावकी तरह फैलने लगता है और अनुकूल दिशा ढूढकर फिर नीचे कूदता है।

अब तो बिना यह जाने कि यह पानी किस प्रकार कितने नखरे करनेवाला है और अतमें कहा तक पहुचनेवाला है, सतोष मिलनेवाला न था। हममें से चद लोग आगे बढे। फिर अुतरे। और भी अुतरे। पेडकी लचीली डालियोको पकडकर अुतरे। अैसा करते करते पूरे प्रपातका अखड साक्षात्कार करानेवाले अेक बडे पत्थर पर हम जा पहुचे। अुस पर खडे रहकर सामनेकी बडी अूची चट्टानसे गिरते हुअे पानीका पदक्रम देखना जीवनका अनोखा आनन्द था। हम टकटकी लगाकर पानीको देखते थे। मगर हम लोगोको देखनेके लिअे पानीको पास फुरसत न थी। वह अपनी मस्तीमें चूर था। कपूरके चूर्णमें शुभ्र रगका जो अुत्कर्ष होता है, वही अिस जीवनावतारमें था।

भगवान सूर्यनारायण माथे परसे हमें अपने आशीर्वाद देते थे। पसीनेके रेले हमारे गालों परसे घाट अुतने अुतरे सामनेके प्रपातके आगे वे किसीका ध्यान थोड़े ही खींच सकते थे। सूर्यनारायणके आशीर्वाद झेलनेकी जैसी शक्ति अुचळ्ळीके प्रपातमें थी, वैसी मुझमें न थी। पानी चमक कर सफेद रेशम या साटिनकी शोभा दिखाने लगा। A moving tapestry of white satin and silver filigree.

कटकमें चादीके बारीक तार खींचकर अुसके अत्यंत नाजुक और अत्यत मोहक फूल, गहने आदि बनाये जाते हैं। ताम्र बनाये हुअे पीपलके पत्ते, मयूर, गरुड आदि अनेक प्रकारकी चीजें मैंने अुडीसामें मन भरकर देखी है और कहा है, 'अिन गहनोंने केवल कटकका नाम सार्थक किया है।'

प्रकृतिके हाथोंसे बननेवाले और क्षण-क्षणमें बदलनेवाले चादीके सुंदर और सजीव गहने यहा फिरसे देखकर कटकका स्मरण हो आया। सोनेके डाकनसे मत्यका रूप शायद ढक जाता होगा, किन्तु चादीके सजीव तार-कामसे प्रकृतिका सत्य अद्भुत ढगसे प्रगट होता था। "अब अिस सत्यका क्या करूं? किस तरह अुसे पी लू? अुसे कहा रखू? किस तरह अुठाकर ले चलू?" अैसी मधुर परेशानी मैं महसूस कर रहा था, अितनेमें पुरानी आदतके कारण, अनायास, हृदयसे ओशावास्यका मत्र जोरोंसे गूजने लगा। हा सचमुच अिस जगतको अुपरसे ओशसे ढकना ही चाहिये — जिस तरह सामनेका तिरछा पत्थर पानीके परदेसे ढक जाता है और वह परदा चैतन्यकी चमकसे छा जाता है। जो जो दिखाओी देता है — फिर वह चाहे चर्मचक्षुकी दृष्टि हो या कल्पनाकी दृष्टि हो — सबको आत्मतत्त्वसे ढक देना चाहिये। तभी अलिप्त भावसे अखड जीवनका आनन्द अन्त तक पाया जा सकता है। मनुष्यके लिअे दूसरा कोओी रास्ता नहीं है।

दृष्टि नीचे गओी। वहा अेक गंभीर कुड अपनी हरी नीलिमामें प्रपातका पानी झेलता था और यह जानकर कारण कि परिग्रह अच्छा नहीं है, थोड़ी ही देरमें अेक सुंदर प्रवाहमें अुस सारी जलराशिको बहा देता था। अपनातिकी अपने टेढ़े-मेढ़े प्रवाहके द्वारा आसपासकी सारी भूमिको

पावन करनेका और मानव-जातिके टेढ़े-मेढ़े (जुहुराण) पाप (अेनस्) को धो डालनेका अपना व्रत अविरत चलाती थी। मैंने अंतमें अुसीसे प्रार्थना की

युयोधि अस्मत् जुहुराणम् अेनः
भूयिष्ठां ते नम अुक्तिं विधेम।

हे अघनाशिनी! हमारा टेढ़ा-मेढ़ा कुटिल पाप नष्ट कर दे। हम तेरे लिअे अनेकों नमस्कारके वचन रचेंगे।

जून, १९४७

२२

गोकर्णकी यात्रा

लंकापति रावण हिमालयमें जाकर तपश्चर्या करने बैठा। अुसकी माने अुसे भेजा था। शिवपूजक महान सम्राट् रावणकी माता क्या मामूली पत्थरके लिंगकी पूजा करे? अुसने लड़केसे कहा, "जाओ बेटा, कैलास जाकर शिवजीके पाससे अुन्हीका आत्मलिंग ले आओ। तभी मेरे यहां पूजा हो सकती है।" माताभक्त रावण चल पड़ा। मानसरोवरसे हररोज अेक सहस्र कमल तोड़कर वह कैलासनाथकी पूजा करने लगा। यह तपश्चर्या अेक हजार वर्ष तक चली।

अेक दिन न जाने कैसे, नौ कमल कम आये। पूजा करते करते बीचमें अुठा नहीं जा सकता था, और सहस्रकी संख्यामें अेक भी कमल कम रहे तो काम नहीं चल सकता था। अब क्या किया जाय? आशुतोष महादेवजी शीघ्रकोपी भी हैं। सेवामें जरा भी न्यूनता रही कि सर्वनाश ही समझ लीजिये। रावणकी बुद्धि या हिम्मत कच्ची तो थी ही नहीं। अुसने अपना अेक-अेक शिर-कमल अुतारकर चढ़ाना शुरू कर दिया। अैसी भक्तिसे क्या प्राप्त नहीं होता? भोलानाथ प्रसन्न हुअे। कहने लगे 'वर माग, वर माग। जितना मांगे अुतना कम

है।' रावणने कहा, 'मा पूजामें बैठी है। आपका आत्मलिंग चाहिये।' शब्द निकलनेकी ही देर थी। शंभुने हृदय चीरकर आत्मलिंग निकाला और रावणको दे दिया।

त्रिभुवनमें हाहाकार मच गया। देवाधिदेव महादेवजी आत्मलिंग दे बैठे। और वह भी किसको? सुरासुराके वैरी रावणको! अब तीनों लोकोंका क्या होगा? ब्रह्मा दौड़े विष्णुके पास। लक्ष्मी सरस्वतीसे पूछने गयीं। अिन्द्र मूर्छित हुआ। आखिर विघ्ननाशक गणपतिकी सबने आराधना की और अुनसे कहा, 'चाहे सो कीजिये। किन्तु यह लिंग लंकामें न पहुंचने पाये अैसा कुछ कीजिये।'

महादेवजीने रावणसे कहा था, 'लो यह लिंग। जहां जमीन पर रखोगे वहीं यह स्थिर हो जायगा।' महादेवजीका लिंग पारेसे भी भारी था। रावण अुसे लेकर पश्चिम समुद्रके किनारे चला जा रहा था। शाम होने आयी थी। रावणको लघुशंकाकी हाजत हुआी। शिव-लिंगको हाथमें लेकर बैठा नहीं जा सकता था, जमीन पर ना रखा ही कैसे जाता? रावणके मनमें यह अुधेड़बुन चल ही रही थी कि शिरनेमें देवताओंके संकेतके अनुसार गणराजी चरवाहेके लड़केका रूप लेकर गौओं चराते हुओ प्रकट हुओ। रावणने कहा, 'अे लड़के, यह लिंग जरा संभाल तो। जमीन पर मत रखना।'

गणेशने कहा, 'यह तो भारी है। मैं जानूंगा तो तीन बार आवाज दूंगा। अुतनी देरमें तुम आये तो ठीक, वरना तुम्हारी बात तुम जानो।'

हाजत तो लघुशंकाकी ही थी। अुसमें भला कितनी देर लगती? रावण बैठा। बैठा तो सही किन्तु न मालूम कैसे, आज अुसके पेटमें सात समुद्र भर गये थे! जनेअू कान पर चढ़ाने पर ना वापस भी नहीं जा सकता था। सिद्धि-विनायकने अिकरारके अनुसार तीन बार रावणका नामसे आवाज दी। और अर्‍र्‍र्‍र्‍की चीख मारकर लिंग जमीन पर रख दिया, मानो वजन असह्य मालूम हुआ हो! जमीन पर रखते ही लिंग पाताल तक पहुंच गया! रावण क्रोधके मारे लाल-लाल होकर आया और गणपतिकी खोपड़ी पर अुसने कसकर अेक घूंसा मारा। गजाननका सिर भूमिसे लपपच हो गया।

बादमें रावण दौड़ा लिंग अुखाड़ने। किन्तु अब तो यह बात असंभव थी। पाताल तक पहुंचा हुआ लिंग कैसे अुखाड़ा जा सकता था? सारी पृथ्वी कांपने लगी, किन्तु लिंग बाहर नहीं आया। आखिर रावणने लिंगको पकड़कर मरोड़ डाला। अिससे अुसके चार टुकड़े हाथमें आये। निराशाके आवेशमें अुसने चारों टुकड़े चारों दिशाओंमें फेंक दिये और बेचारा खाली हाथ लंकाको वापस लौटा।

मरोड़े हुअे लिंगका मुख्य भाग जहां रहा, वहीं है गोकर्ण-महाबळेश्वर। सारी पृथ्वी पर अिससे अधिक पवित्र तीर्थ-स्थान नहीं है।

* * *

गोकर्ण-महाबळेश्वर कारवार और अंकोला बंदरगाहोंके बीच स्थित तदड़ी बंदरगाहसे करीब छ मील अुत्तरकी ओर ठीक समुद्रके किनारे पर है। दक्षिणमें अिसका माहात्म्य काशीसे भी अधिक माना जाता है। लिंग अधिकतर जमीनके अंदर ही है। अुसकी जलाधारीके बीचोंबीच अेक बड़ा सुराख है। अुसमें अंदर अंगूठा डालने पर भीतरके लिंगका स्पर्श होता है। दर्शनका तो प्रश्न ही नहीं। वहांके पुजारी कहते हैं कि लिंगकी शिला अत्यंत मुलायम है। भक्तोंके स्पर्शसे वह घिस जाती है, अिसलिअे प्राचीन लोगोंने यह प्रबंध किया है। बहुत बरसोंके बाद शुभ मुहूर्त होने पर जलाधारी निकाली जाती है और आसपासकी चुनाअीको हटाकर मूल लिंगको दो-तीन हाथोंकी गहराअी तक खोल दिया जाता है। कुछ महीनों तक खुला रखनेके बाद सीपियोंको पीसकर बनाये हुअे चूनेसे आसपासकी चुनाअी फिरसे कर दी जाती है। यदि मैं भूलता नहीं हूं, तो अिस क्रियाको 'अष्टबंध' या अैसा ही कुछ नाम दिया जाता है।

हम कारवारमें थे तब अेक बार कपिलाषष्ठी जैसा दुर्लभ अष्टाधका योग आया। पिताजी, आअी (मां) और मैं — हम तीनों अिस यात्रामें गये। तदड़ी बंदरगाह पर मुझे अुठा लेनेके लिअे 'कुली' किया गया। अुसके कंधे पर बैठकर मैं गोकर्ण गया। कोटितीर्थमें स्नान किया। गोकर्ण-महाबळेश्वरके दर्शन किये। स्मशानभूमि और अुसकी रखवाली करनेवाले हरिश्चंद्रका दर्शन किया। हड्डियां डालने पर जिसमें

गल जाती है अैसे पानीका अेक तीर्थ देखा। अहल्याबाअीके अनमरम अुस साध्वीकी मूर्ति देखी। सिरमें चाटव निशानवाले और दो हाथोंवाले चरवाहे गजाननके दर्शन किये। ब्रह्माकी अेक मूर्ति देखी। और सबसे बडी बात तो यह थी कि रावणकी अुस मशहूर लघुशंकाका कुंड भी देखा। आज भी वह भरा हुआ है और अुसमें बदबू आती है। और भी बहुत कुछ देखा होगा, किन्तु वह आज याद नहीं है।

हां, अिस प्रदेशकी अेक खासियत बताना तो मैं भूल ही गया। घर चाहे गरीबका हो या अमीरका, फर्श तो गारेकी ही होगी, किन्तु वह काले संगमरमरके पत्थरके समान सख्त और चमकनेवाली होती है। सच-मुच अुसमें मुंह दिखाअी देता है। गरमीके दिनोंमें दोपहरके समय आदमी बगैर कुछ बिछाये गारेके अुस पलस्तर पर आरामसे सो सकता है। समय समय पर यह जमीन गोबर और काजल मिलाकर अुससे लीपी जाती है। किन्तु हाथसे नहीं लीपा जाता। सुपारीके पेड पर अेक तरहकी छाल तैयार होती है। अुससे फर्शको घिस-घिसकर चमकीला बनाया जाता है। अिस छालको वहांकी भाषामें 'पोवली' कहते हैं।

गोकर्णसे वापस लौटते समय तदडी तक समुद्री रास्तेसे जाकर यानी स्टीमलोंचमें जानेका विचार था। मोसमी तूफान शुरू होनेको बहुत ही थोडे दिन बाकी थे। आठ दिनके बाद आगबोटें भी बंद होनेवाली थीं। अिसलिअे वापस लौटनेवाले यात्रियोंकी भीडका पार नहीं था। तदडी बंदरसे चढनेवाले यात्रियोंको स्टीमरमें जगह मिलेगी या नहीं, अिस बातका संदेह था। अिसीलिअे हमने स्टीमलोंचमें बैठकर स्टीमर तक जल्दी पहुंचना पसंद किया था।

गोकर्णका बंदर बना हुआ नहीं था। किनारेसे मेरी छाती बराबर पानी तक तो चलकर जाना पडता था। वहांसे नावमें बैठकर स्टीम-लोंच तक जाना पडता था। नौजवान लोग नाव तक चलकर जाते, किन्तु औरतें तथा बच्चे तो कुलियोंके कंधे पर चढकर या दो कुलियोंके हाथोंकी पालकीमें बैठकर जाते।

शुरूमें ही अेक अपशकुन हुआ। अेक गरीब बुढ़िया शरीरसे कुछ स्थूल थी। किन्तु किराये पर दो कुली करने जितने पैसे अुसके

पास न थे। अुसने अेक लोभी कुलीसे कुछ अधिक मजदूरी देकर लालच देकर आनेको कन्धे पर अुठा ले जानेके लिअे राजी किया। वह था दुबला-पतला। वह किनारे पर बैठ गया। विधवा बुढ़िया अुसके कन्धे पर सवार हुअी। किन्तु ज्यों ही कुली अुठने गया, त्यों ही दोनों धम्मसे गिर पड़े। अितनेमें अेक नटखट लहर दौड़ते आकर दोनोंको कृतार्थ कर दिया!

यह बोट लगभग आखिरी होनेसे गोकर्णमें भी चढ़नेवाले यात्री बहुत थे। वे सबके सब स्टीमलोंचमें कैसे समाते? अिसलिअे सौ आदमी बैठ सकें अितना बड़ा अेक पडाव (यानी नाव) स्टीमलोंचके पीछे बांध दिया गया। और अुसके पीछे कस्टम्स विभागकी अेक अफसरकी सफेद नाव बांध दी गअी। मैंने देखा कि खानगी नावोंकी पतवारें कड़छी या पत्ते जैसी गोल होती हैं, जब कि कस्टमवालोंकी पतवारें क्रिकेट-बैटकी तरह लम्बी-लम्बी और चपटी होती हैं।

हमारा सफर ठीक समय पर निकला। अेक दो मील गये होंगे कि अितनेमें आसमान बादलोंसे घिर गया। हवा जोरसे बहने लगी। लहरें जोर जोरसे अुछलने लगीं, मानों बड़ी दावत मिल रही हो। नावें डोलने लगीं। और स्टीमलोंच परका खिंचाव भी बढ़ने लगा। अरे! यह क्या? बारिशके छींटे! बड़े बड़े रोड़ों जैसे छींटे! अब क्या होगा? लहरें जोर जोरसे अुछलने लगीं। स्टीमलोंच बेताब घोड़ेकी तरह अूपर-नीचे कूदने लगी। पीछेकी नावकी रस्सियां चर्र्र्र् चर्र्र्र् आवाज करने लगीं। अितनेमें स्टीमलोंच और नावके बीच अेक लहर अितनी बड़ी आअी कि नाव दिखाअी ही न दी।

मैं स्टीमलोंचमें बॉयलरके पास लकड़ीके तख्तोंके चबूतरे पर बैठा था। हमारे कप्तानको जल्दीसे जल्दी स्टीमर तक पहुंचना था। अुसने स्टीमलोंच पागलकी तरह पूरी रफ्तारमें छोड़ दी। चबूतरा गरम हुआ। मैं जलने लगा। समझमें न आया कि क्या करूं? जरा अिधर-अुधर हटना तो 'समुद्रास्सृप्यन्तु' होनेका डर था! और बैठना बिलकुल नामुमकिन हो गया था। अिस अुलझनसे मुझे बड़े भयानक ढंगसे छुटकारा मिला। समुद्रकी अेक प्रचंड लहर चढ़ आअी

और अुसने मुझे नखशिखान्त नहला दिया। अब चबूतरा गरम रहता ही कैसे? विनाश्री परेशान हुअे। आअी (मा) को तो कुलदेवका स्मरण हो आया 'मंगेशा! महारुद्रा! मायबापा! तून आता आम्हाला तार!' मूसलधार वर्षा होने लगी। हम स्टीमरोंचवाले तो कुछ सुरक्षित थे। किन्तु पीछेके अुन नावमालोंका क्या? गुरू शुरूमें तो स्टीमरगांचको पानी काटता था, अिसलिअे अुसमें पानी आसानीसे आ जाता था। किन्तु नावको तो हर हिलोर पर सवार ही होना था, अिसलिअे चाहे जितना डोलने-पर भी अुसके अंदर पानी नहीं आ पाता था। किंतु जब हवा और बारिसके बीच होड लगी और दोनोंका अट्टहास्य बढ़ने लगा, तब अेक ही लहरमें आधीसे करीब नाव भर जाने लगी। लहरें सामनेसे आती, तब तक तो ठीक था। नाव अुन पर सवार होकर अुस पार निकल जाती थी। कभी लहरोंके शिखर पर तो कभी दो लहरोंके बीचकी घाटीमें। कभी कभी तो नाव अेक हिलोर परसे अुतरती कि नीचेसे नअी लहर अुठकर अुसे अधरमें ही अुठा लेती थी। अैसी अनमोखी हलचल होने पर अंदर जो लोग खड़े थे वे धड़ाधड़ अेक-दूसरे पर गिर पड़ते थे।

लेकिन अब लहरें बाजुओंसे टकराने लगीं। नावके अंदर बैठी हुअी औरतों और बच्चोंको तो सिर्फ फूट फूटकर रोनेका ही अिलाज मालूम था। जितने जवामर्द थे वे सब डोल, गागर या डिब्बा जो भी हाथमें आता अुसीमें पानी भर-भरकर बाहर फेंकने लगे। कायर अेंजिनके यंत्रे भी अिससे ज्यादा तेजीसे क्या काम कर पाते? नाव खाली होती न होती अितनेमें अेकाध क्रूर लहर विकट हास्यके साथ 'धड़' से नावसे टकराती और अंदर घुस बैठती। अुस समय स्त्री बच्चोंकी चीखें और दहाड़ें कानोंको फाड़ डालती थीं। दिल चीर डालती थीं। कुछ यात्री अनसूया दत्तात्रेयको सहायताके लिअे पुकारने लगे, कुछ पंढरपुरके विठोबाको पुकारने लगे। कोअी अंबा भवानीकी मन्नत मनाने लगे, तो कोअी विघ्नहर्ता गणेशको पुकारने लगे। गुरू शुरूमें स्टीमरोंके कप्तान और खलासी हम सबको धीरज देते और कहते 'अजी आप डरते क्यों हैं? जिम्मेदारी तो हमारी है। हमने अैसे कअी तूफान देखे हैं।' किन्तु

देखते ही देखते मामला अितना बढ़ गया कि कप्तानका भी मुँह अुतर गया। वह कहने लगा 'भाअियो, रोनेसे क्या फायदा? अिन्सानको अेक बार मरना तो है ही। फिर वह मौत बिस्तरमें आये या घाट पर, शिकारमें आये या समुद्रमें। आप देख ही रहे हैं कि हम सब तरहकी कोशिश कर रहे हैं। किन्तु अिन्सानके हाथमें क्या है? मालिक जो चाहे वही होता है।' मैं अुसके मुँहकी ओर टकटकी लगाकर देख रहा था। यात्राके प्रारंभमें जो आदमी गाजरकी तरह लाल-लाल था, वही अब अरबीके पत्तोंकी तरह हरा-हरा हो गया था!

मैं अुस समय बिलकुल बालक था। किन्तु गंभीर अवसर पर बालक भी सच्ची स्थितिको समझ लेता है। पल पल पर मैं स्थानभ्रष्ट हो रहा था। अपने दोनों हाथोंसे पकड़कर मैं बड़ी मुश्किलसे अपने स्थानको सम्भाले हुअे था। हमारा सारा सामान अेक ओर पड़ा था। किन्तु अुसकी ओर देखता ही कौन? लेकिन पूजाकी देव-मूर्तियाँ और नारियल वगैराको जिस 'सावळी'में रखे हुअे थे, अुसे मैं अपनी गोदमें लेकर बैठना नहीं भूला था।

मेरे मनमें अुस समय कैसे कैसे विचार आ रहे थे! वह काल था मेरी मुग्ध भक्तिका। रोज सुबह दो-दो घंटे तो मेरा भजन चलता था। मेरा जनेअू नहीं हुआ था। अिसलिअे सन्ध्या-पूजा तो कैसे की जाती? फिर भी पिताजी जब पूजामें बैठते, तब पास बैठकर अुनकी मदद करनेमें मुझे खूब आनंद आता। मनमें आया, आज यदि डूबना ही भाग्यमें बदा हो, तो देवताओंकी यह 'सावळी' छातीसे चिपटाकर ही डूबूँगा। दूसरे ही क्षण मनमें विचार आया, माँके देखते ही नावमेंसे पानीमें लुढ़क जाअूँगा तो माँकी क्या दशा होगी? यह विचार ही अितना असह्य मालूम हुआ कि मेरी साँस रुक गअी! सीनेमें अिस तरह दर्द होने लगा, मानो पत्थरकी चोट लगी हो। मैंने अीश्वरसे प्रार्थना की कि 'हे भगवान्, यदि डुबाना ही हो तो अितना करो कि 'आअी' और मैं अेक-दूसरेको भुजाओंमें लेकर डूबें।'

हरेक बालककी दृष्टिमें अुसके पिता तो मानो धैर्यके मेरु होते हैं। बालकका विश्वास होता है कि आकाश भले टूटे, किन्तु

पिताका धैर्य नहीं टूट सकता। अिसलिअे जब अैसे अवसर पर बालक अपने पिताको भी दिङ्मूढ बना हुआ, घबडाया हुआ देखता है, तब वह व्याकुल हो अुठता है। मैं तूफानसे अितना नहीं डरा था, बरसातसे भी अितना नहीं डरा था, 'आदमकी बू आ रही है, मैं अुसे खाअूंगी' अैसा कहते हुअे मुंह फाडकर आनेवाली लहरोंसे भी अितना नहीं डरा था, जितना पिताजीका परेशान चेहरा देखकर तथा अुनकी रुंधी हुअी आवाज सुनकर डर गया।

हरेक आदमी कप्तानसे पूछता, 'हम कितनी दूर आ गये हैं? अभी कितना फासला बाकी है?' चारों ओर जहां भी नजर डालते वहां बारिश, आंधी और तरंगोंका ताडव ही नजर आता! अितना पानी गिरा, किन्तु आकाश जरा भी नहीं खुला। मैंने कप्तानसे गिड-गिडाकर कहा, 'लांचको कुछ किनारेकी ओर ले चलो न, जिससे यदि वह डूब ही गअी तो भी चंद लोग तो किनारे तक तैरकर जा सकेंगे।' वह अुत्साह-हीन हास्यके साथ बोला, 'कैसा बेवकूफ है यह लडका! किनारेसे जितने दूर हैं, अुतने ही सुरक्षित हैं। जरा भी पास गये तो शिलाओंसे टकराकर चकनाचूर हो जायंगे। आज तो जानबूझ कर हम किनारेसे दूर रह रहे हैं। स्टीमर तक पहुंच गये कि गंगा नहाये समझो। आज दूसरा अिलाज ही नहीं है।'

मैंने अिससे पहले कभी बडी अुम्रके लोगोंको अेक-दूसरेसे गले लगाकर रोते नहीं देखा था। वह दृश्य आज अुस नावमें देखा। अुसमें स्त्री-पुरुष अेक-दूसरेको भुजाओंमें लेकर फूट फूटकर रो रहे थे। दो-तीन बच्चोंवाली अेक मां अपने सब बच्चोंको अेक ही साथ गोदमें लेनेकी कोशिश कर रही थी। केवल पाच-पचीस जवामर्द जीतोड मेहनत करके समुद्रके साथ अ-समान युद्ध कर रहे थे। तूफान अितना बढ गया और स्टीमलांच तथा नाव अितनी अधिक डोलने लगी कि लोग डरके मारे रोना तक भूल गये। मृत्युकी अेक काली छाया सर्वत्र फैल गयी। होशमें थे सिर्फ नावके बहादुर नौजवान और खाकी-काली वर्दी पहने हुअे स्टीमलांचके खलासी। हमारा कप्तान हुक्म छोडते छोडते कभी परेशान हो अुठता; किन्तु खलासी बराबर अेकाग्र मनसे, बिना परेशान

हुओ, अक्रूर ढंगसे अपना अपना काम कर रहे थे। धर्मयोग क्या अिससे भिन्न होगा?

आखिरकार तदडी बदर आया। हम स्टीमरको देखते अुससे पहले ही स्टीमरने हमारी लॉंचको देख लिया। स्टीमरने अपना भोंपू बजाया 'भो ' मानो सबकी करुण वाणी सुनकर औश्वरने ही 'मा भै' की आश्वासवाणी की हो। हमारी स्टीमलॉंचने अपनी तीक्ष्ण आवाजमें जवाब दिया। सबके दिलमें आशाके अंकुर फूटे। चारों ओर जय-जयकार हुआ।

अितनेमें, मानो अपना अन्तिम प्रयत्न कर देखनेकी दृष्टिसे और हम दुर्बल मानवोंके सामने हारनेसे पहले आखिरी लड़ाओ लड़ लेनेके लिओ अेक बड़ी लहर हमारी लॉंच पर टूट पड़ी। और पिताजी जहां बैठे थे वहीं पर पीछेकी ओर गिर पड़े। मैंने घबराकर चीख मारी। अब तक मैं रोया नहीं था। मानो अुसका पूरा बदला मुझे अेक ही चीखमें ले लेना था। दूसरे ही क्षण पिताजी अुठ बैठे और मुझे छातीसे लगाकर कहने लगे, 'दत्तू, डरे मत। मुझे कुछ भी नहीं हुआ है।'

हम स्टीमरके पास पहुंच गये। किन्तु बिलकुल पास जानेकी हिम्मत कौन करे? कस्टमवाली नावको तो अुन लोगोंने कभीका अलग कर दिया था, क्योंकि लॉंच तथा बड़ी नावके झोंके वह सह नहीं सकती थी। अुसकी सुरक्षितता अलग होनेमें ही थी। स्टीमलॉंचने दूरसे स्टीमरकी प्रदक्षिणा कर ली। मगर किसी भी तरह पास जानेका मौका नहीं मिला। तरंगोंके धक्केसे लॉंच यदि स्टीमरके साथ टकरा जाती, तो बिलकुल आखिरी क्षणमें हम सब चकनाचूर हो जाते। आखिर अूपरसे रस्सा फेंका गया और हमारे खलासी लॉंचकी छत पर खड़े होकर लम्बे लम्बे बांसोंसे स्टीमरकी दीवालोंसे होनेवाली लॉंचकी टक्करको रोकने लगे। तरंगें अुसे स्टीमरकी ओर फेंकनेकी कोशिश करतीं, तो खलासी अपने लम्बे लम्बे बांसोंकी नोकोंकी ढाल बनाकर सारी मार अपने हाथों और पैरों पर झेल लेते। तिस पर भी अंतमें स्टीमरकी सीढ़ीसे स्टीमलॉंचकी छत टकरा ही गओ, और कड़ड़ आवाज करता हुआ अेक लम्बा पटिया टूटकर समुद्रमें जा गिरा।

में पास ही था, अिसलिअे स्टीमरमें चढ़नेकी पहली बारी मेरी ही आयी। चढनेकी काहेकी? गेंदकी तरह फेंके जानेकी! खुद कप्तान और दूसरा अेक खलासी लांचके किनारे खड़े रहकर अेक अेक आदमीको पकड़कर स्टीमरकी सीढीके सबसे नीचेके पाय पर खड़े खलासियोंके हाथमें फेंक देते थे। अिसमें खास सावधानी तो यह रखी जाती कि जब लांच हिलोरोंके गड्ढेमें अुतर जाती तब वे लोग राह देखते और दूसरे ही क्षण जब वह तरंगोंके शिखर पर चढ जाती और सीढी बिलकुल पास आ जाती, तब झट यात्रीको सौंप देते! दोनों ओरके खलासी यदि आदमीके हाथ पकड़ रखें तो दूसरे ही क्षण जब लांच तरंगोंके गड्ढेमें अुतरे तब अुसकी धज्जियां अुड़ जायं! मैं अूपर सीढ़ी पर चढा और मुड़कर देखने लगा कि मां आती है या नहीं। जब अेक बिलकुल अजनबी मुसलमानको मांको बाहें पकड़ते देखा तो मेरा मन बेचैन हो अुठा। किन्तु वह समय था जान बचानेका। वहां कोमल भावनाओंमें किस कामकी? थोड़ी ही देरमें पिताजी भी आ पहुंचे। देवताओंकी 'सावळी' तो मैंने कब पर ही रखी थी। अूपर अच्छी जगह देखकर पिताजीने हमें बिठा दिया और वे सामान लाने गये। मैं श्रद्धालु लड़का अवश्य था, पर अुस समय मुझे पिताजी पर सचमुच गुस्सा आया। भाड़में जाये सारा सामान! जान खतरेमें डालनेके लिअे दुबारा क्यों जाते होंगे? किन्तु वे तो तीन बार हो आये। आखिरी बार आकर कहने लगे, *'गोकर्ण-महाबळेश्वरके प्रसादका नारियल पानीमें गिर गया।'* अेक ही क्षणमें आओी और मैं दोनों बोल अुठे; आओीने कहा, 'अरे अरे!' और मैंने कहा, 'बस अितना ही न?'

लांचवाले सब यात्रियोंके चढ़नेके बाद नाववालोंकी बारी आयी। वे सब चढ़े। अुनके बाद लांच और नाव निशाचर भूतोंकी तरह चीखें मारती हुआी तटकी ओर किनारेकी ओर गयीं और किनारे पर तपश्चर्या करते बैठे हुअे यात्रियोंको थोड़े थोड़े करके लाने लगीं। तूफान अब कुछ ठंडा पड़ा था। मगर अंधेरी रात और अुछलती हुआी तरंगोंके बीच अुन लोगोंका जो हाल हुआ होगा, अुसका वर्णन कौन कर सकता है?

स्टीमर यात्रियोंसे ठसाठस भर गओ। जो भी बोलता, समुद्रमें डूबे हुओ अपने सामानकी बातें ही सुनाता। आखिर यात्री सब आ गये। मेहर मालिककी कितनोंकी जान न गयी।

स्टीमर आखिर छूटी और लग अपनी अपनी पुरानी यात्राओंके अैसे ही सतरनाक संस्मरण अेक-दूसरेको सुनाकर आजका दुःख हलका करने लगे। बडी देर तक किसीको नींद नहीं आओ। मैं कब सोया, कारवारका बंदरगाह सुबह कब आया, और हम घर पर कब पहुंचे, आज कुछ भी याद नहीं है। किन्तु अुस दिनका तूफानका वह प्रसंग स्मृतिपट पर अितना ताजा है, मानो कल ही हुआ हो। सचमुच:

दुःख सत्य, सुख मिथ्या, दुःख जनां पर धनम्।

अक्तूबर, १९२५

२३

भरतकी आंखोंसे

किनारे पर खडे रहकर समुद्रकी शोभाको निहारनेमें हृदय आनंदसे भर जाता है। यह शोभा यदि किसी अूंचे स्थानसे निहारनेको मिले तब तो पूछना ही क्या? जहाजके अूपरके हिस्सेसे या देवगढ जैसे टापूके सिर परसे समुद्रका किनारे पर होनेवाला आक्रमण देखनेमें अेक अनोखा ही आनंद आता है। मनमें यह भाव अुत्पन्न होते ही कि हम समुद्रके राजा हैं और तरंगोंकी यह फौज हमारी ही ओरसे सामनेके भूमि-भागको पादाक्रान्त कर रही है, हमारे हृदयमें अेक प्रकारका अभिमान स्फुरित होने लगता है। ध्यानसे देखने पर मालूम होता है कि समुद्रका हरा-हरा या काला-काला पानी मस्तीमें आकर सफेद बालूके किनारे पर जोरोंसे आक्रमण करता है और आखिरी क्षणमें '*अजी, यह तो महज विनोद ही था*' कहकर हंस पडता है। तब अुसके अिस मिथ्या-भाषण पर हम भी खिलखिला कर हंस पडते हैं।

समुद्र किनारे रहनेवालोंको जिस तरहके दृश्य कभी भी देखनेको मिल जाते हैं। मगर समुद्र और बालुका-पट जहां अखंड जलक्रीडा करते हों, अुस दिशामें समकोणमें अूंचाओ पर खडे रहकर बालुका पट जलविहार और तरंगोंका सिकता-विहार निहारनेका सौभाग्य यदि किसी दिन प्राप्त हो तो मनुष्य 'अद्य मे सफला यात्रा, धन्योऽहं अप्रसादत ।' क्यों नहीं गायगा ?

सन् १८९५में मैंने जिस गोकर्णकी यात्रा की थी और जिस गोकर्णके दर्शन मैंने श्री गंगाधरराव देशपांडेके साथ दस साल पहले किये थे अुसी गोकर्णके पवित्र किनारे पर संगवबेला* में समुद्रके दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त होनेसे मैं आनन्द-विभोर हो गया था। गोकर्णका समुद्र-तट काफी विस्तृत और भव्य है। दाहिनी यानी अुत्तरकी ओर कारवारके पहाड और टापू धुंधले क्षितिज पर अस्पष्ट-से दिखाओ देते हैं, बायीं यानी दक्षिणकी ओर रामतीर्थका पहाड और अुस पर खडा भरतका छोटा-सा मंदिर दिखाओ देता है। और सामने अगाध अनंत सागर 'अमर होकर आओ' कहता हुआ अहोरात्र आमंत्रण देता है। जिस तरहका हृदयको अुन्नत करनेवाला दृश्य अेक बार देख लेने पर भला कभी भूला जा सकता है ? रामतीर्थकी पहाडी पर जाकर वहांके झरनेमें स्नान करनेका यदि मयस्सर न किया होता, तो सागरके जिस भव्य दृश्यमें तैरते रहना ही मैंने पसंद किया होता। नारियलके बगीचा और सुरदरी शिलाओंको पार करके हम रामतीर्थ तक पहुंचे। वहांकी धाराके नीचे बैठकर नहानेका साहित्य जीवनानंद या स्नानानंद प्रसाद-मस्तक लेकर रामेश्वरके दर्शन किये। शाडिल्य महाराज नामक अेक साधुने अनरूप आगोंमें अुत्साह प्रकट करके यहांके मंदिरका निर्माण मुफ्तमें करा लिया था। यह मंदिर समुद्रमें घुसे हुअे अेक अुन्नत पहाड पर स्थित है। मंदिरकी अूंचाओ परसे बालुका पट और लहरोंका

* गायोंका दोहन करनेके बाद तथा गोशाला साफ करनेके बाद वनमें चरानेके लिअे अुन्हें छोड़ दिया जाता है, अुस समयको (सुबहके करीब नौ बजे) 'संगवबेला' कहते हैं। यह शब्द वेदकालीन है।

पट जहां अेक-दूसरेका आलिंगन करके क्रीड़ा करते हैं, अुसका मीलों तक फैला हुआ सौंदर्य हम देख सके। नारियलके दो-अेक वृक्षोंने अिसी स्थान पर खड़े रहकर सागर-सिकता-मिलनके दृश्यका आनंद सेवन करनेकी बात तय की थी। अपनी डालियां हिलाकर अुन्होंने हमसे कहा, 'आअिये, आअिये! बस यही स्थान अच्छा है। यहांसे सिकता-सागरके मिलनकी रेखा नजरके सामने सीधी दीख पड़ती है।'

यहांसे मैंने देखा कि पानीकी तरंगोंको सागरके गहरे पानीका सहारा था। लेकिन बालूके पटको सहारा कौन दे? कोअी पहाड़ी नजदीकमें नहीं थी, अिसलिअे नारियल और खरो जैसे पेड़ोंने यह जिम्मेदारी अपने सिर पर अुठा ली थी। ये अूंचे पेड़ और सागरका गहरा पानी — दोनोंके हरे रंगमें फर्क तो जरूर था, किन्तु अुनके कार्यमें कोअी फर्क नहीं मालूम होता था। पेड़ अपने पांवोंके नीचेकी बालूको आशीर्वाद देते और समुद्रका गहरा पानी लहरोंको आगे बढ़नेके लिअे प्रोत्साहन देता। यह दृश्य देखकर भला कौन तृप्त होगा?

किसी दृश्यसे मनुष्य तृप्ति अनुभव नहीं करता, अिसलिअे अेक जगह खड़े रहकर अुसीका पान करते रहना भी मनुष्यको पसन्द नहीं आता। मैंने देखा कि रामतीर्थके झरनेकी और रामेश्वरके मंदिरकी मानो रखवाली करनेके लिअे श्रीरामचन्द्रजीके प्रवचन प्रतिनिधि भरत महावी पहाड़ीके अूपर खड़े हैं। अुनके दर्शन तो करने ही चाहिये। और बन सके तो योग्य अूंचाअी पर जाकर अुनकी दृष्टिसे भी सागरको देखना चाहिये। बिना अूंचे चढ़े विशाल दृष्टि कैसे प्राप्त हो? सीढ़ियोंने निमंत्रण दिया, अिसलिअे नाचता और कूदता या अुड़ता हुआ मैं भरतके मंदिर तक पहुंच गया, मानो मुझे पर लग गये हों। वहां छोटे चतुर्भुज भरतजी सुंदर पीतांबर पहनकर समुद्र-दर्शन कर रहे थे।

मेरी दृष्टिसे भरतकी मूर्तिके आसपास मंदिर बनाना ही नहीं चाहिये था। अुन्हें ताप, पवन और बरसातकी तपश्चर्या ही करने देना चाहिये था। समुद्र परसे आनेवाले शीतल पवनमें सूर्यका ताप वे आसानीसे सह लेते। और लोग यह कैसे भूल गये कि भरत आखिर सूर्यवंशी राजपुत्र थे? वायुपुत्र हनुमानका और सूर्यवंशी राघवोंका

स्मरण करते हुअे हम वहां काफी देर तक खड़े रहे। हृदयमें भक्ति-भाव अुमड़ रहा था और सामने समुद्रके पानीमें ज्वार चढ़ रही थी।

अुस दिनके अुस भव्य और पावन दर्शनके लिअे रामतीर्थका और दिक्‌काल भरत महाराजका मैं सदा आभारी रहूंगा।

मअी, १९४७

२४

वेळगंगा — सीताका स्नान-स्थान

वेरूळग्रामका हरा कुंड देखकर लौटते समय रास्तेमें वेळगंगाका झरना देखा था। झरना अितना छोटा था कि अुसे नाला भी नहीं कह सकते। किन्तु अुसे 'वेळगंगा'का प्रतिष्ठित नाम प्राप्त हुआ है। नदीका *नाम सुनने पर अुसका अुद्‌गम कहां है, अिसकी खोज किये बिना क्या* रहा जा सकता है? किन्तु हम तो गुफाओंकी अद्‌भुत कारीगरीमें मस्त होकर विचर रहे थे, अिसलिअे हमें वेळगंगाका स्मरण तब नहीं हुआ। 'अशीदेव' कारीगरीवाली कैलासकी गुफाको देखकर हम जैन *तीर्थंकरोंकी अिन्द्रसभाकी ओर बढ़ रहे थे। अितनेमें श्री अच्युत* देश-पांडेने कहा, 'वेळगंगाका अुद्‌गम यहीं है।' नाम सुनते ही वेळगंगा दिमाग पर सवार हुअी।

अिन्द्रसभासे लौटते समय हम २९ वीं गुफामें जा पहुंचे। अनेक गुफाओंमें घूमनेके कारण काफी थकावट मालूम हो रही थी। सारे बदनकी हड्डियोंमें दर्द होने लगा था। ठीक अुसी समय बबअीके निकट स्थित घारापुरीकी अेलिफंटा गुफाका स्मरण करानेवाली यहांकी २९ वीं गुफाने भव्यताका कमाल कर दिखाया। यह कहना मुश्किल था कि घूम-घूम-कर हमारे पैर ज्यादा थके थे या देख-देखकर हमारी आंखें ज्यादा थकी थीं। हम निश्चय कर ही रहे थे कि अब नाश्तेके साथ थकावट अुतारनेके बाद ही आगे जायंगे, अितनेमें सीताके स्नान-स्थानका स्मरण हुआ।

अयोध्यासे जनस्थान तककी यात्रा सीताने पैदल की थी। वहांसे रावण अुसे अुठाकर लंका ले गया था। दुःखावेगमें सीताने दक्षिणका यह प्रदेश शायद देखा भी न होगा। किन्तु रामने रावणका वध करके अुसीके पुष्पक विमानमें बैठकर जब लंकासे अयोध्या तककी हवाअी यात्रा की, तब सीतामाताको नीचेकी प्राकृतिक शोभा देखकर कितना आनंद हुआ होगा! रामायणमें वाल्मीकिने प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताके पक्षपातका वर्णन जहां-तहां किया है। सृष्टि-सौंदर्य देखकर सीताको कितना अलौकिक आनंद होता था, अिसका वर्णन भवभूतिने भी किया है। सीताने यदि भारतके ललित और भव्य, सुन्दर और पवित्र स्थानोंका वर्णन स्वयं किया होता, तो मैं समझता हूं कि अुसके बाद संस्कृतके किसी भी कविने सृष्टि-वर्णनकी ओर पंक्ति भी लिखनेका साहस न किया होता।

सीतामाता पहाड़ोंको देखकर आनंदित होतीं, नदियोंको अपने आनंदाश्रुओंसे नहलातीं, हाथीके बच्चोंको पुचकारतीं, सारस-युगलोंको आशीर्वाद देतीं, सुगंधित फूलोंके सौरभसे अुन्मत्त होतीं और प्रत्येक स्थान पर सारे आनंदको राममय बनाकर अपने-आपको भूल भी जातीं। लंकामें राम-विरहसे झूरनेवाली सीता भी वहांकी ओक नदीसे प्रेरणा हुअे बिना न रह सकीं। आज भी लंकामें 'सीतावाका' वर्षा-ऋतुमें अपने दोनों किनारों परसे बह निकलती है और जितने खेतोंको डुबाती है अुन सबको सुवर्णमय बना देती है। सीताका जन्म ही जमीनसे हुआ था। भारतभूमिकी भक्तिके रूपमें आज भी वह हमें दर्शन देती है।

सीताको लगा होगा कि गोदावरीके विशाल प्रदेशमें चल-चलकर अब हम थक गये हैं। लक्ष्मणको वनफल लानेके लिअे भेज देंगे। और राम तो धनुष लेकर पहरा देने ही रहेंगे। तब अिस चट्टानाकार करारके नीचे वेळुकाका आतिथ्य स्वीकार करके थोड़ा-सा जलविहार क्यों न कर लिया जाय?

* * *

पहले तो हमारी वृत्ति किसी अनुकूल जगहमें बैठकर सुन्दर प्रपातका सिर्फ दर्शन करनेकी ही थी। अिसलिअे २९ नंबरकी गुफामें, गुफाकी बाअीं ओर और हमारी दाहिनी ओर, जो झरोखा दिखाअी देता था वहां हम गये। मनमें यह आशा तो अवश्य थी कि यदि नीचे जाया जा सकेगा, तो वहांका आनंद लूटनेमें हम चूकेंगे नहीं।

झरोखेमें देखा तो अेक पतला-सा प्रपात पवनके साथ खेलता हुआ नीचे अुतर रहा है और अपनी अंगुलियां हिलाकर हमें चुपचाप न्योता दे रहा है। मैं विचार करने लगा कि नीचे अुतरा जा सकेगा या नहीं? अितना समय खर्च करना अुचित होगा या नहीं? साथियोंको मेरी यह स्वच्छंदता रुचेगी या नहीं? मुझको अिस प्रकार अुलझनमें पड़ा हुआ देखकर घाटीमें दौड़-धाम करनेवाले नन्हें नन्हें पक्षी तिरस्कारसे हंस पड़े. "देखो तो, कितना अरसिक मनुष्य है! प्रपात अितने प्रेमसे न्योता दे रहा है और यह विचारमें डूबा हुआ है! अिन मानवोंमें काव्य लिखनेवाले कअी हैं, किन्तु काव्यका अनुभव करनेवाले विरले ही होते हैं। और यह सामनेवाला आदमी अपने-आपको प्रकृतिका बालक कहलवाता है। आंखें फाड़-फाड़कर प्रपातकी ओर देख रहा है। नीचेका स्फटिक जैसा निर्मल पानी देखकर अिसका हृदय भी अुमड़ पड़ता है। किन्तु यह साहस नहीं कर पाता। अिसके पैर नहीं अुठते। अिसे किसीने शाप तो दिया नहीं कि 'तू पत्थर बनकर पड़ा रहेगा।' फिर भी यह पत्थरसे चिपका हुआ है!"

पक्षियोंकी यह निर्भर्त्सना सुनकर मैं लज्जित हुआ, और होशमें आनेके पहले ही मेरे पैर सीढ़ियां अुतरने लगे। मैं सोच रहा था कि दाहिनी ओर वाले गड्ढेको लांघकर अुस पारसे प्रपातके पास जाया जाय, या बाअीं ओरसे कगारके पीछेसे होकर २८ नंबरकी छोटी-सी गुफा तक पहुंचा जाय और वहांसे प्रपातके जलकणोंका आनन्द लिया जाय? दाहिनी ओरका रास्ता लम्बा और सुरक्षित था; जब कि बाअीं ओरवाले रास्तेमें खतरा था। नहानेकी तैयारी करके ही मैं अुतरा था, अिसलिअे भीगनेका तो सवाल ही नहीं था।

२८ नंबरकी छोटी-सी गुफामें और दो मूर्तियां हैं; किन्तु अुस गुफाके अंदर विशेष काव्य नहीं है। काव्य तो बाहर ही बिखरा हुआ है। अिस गुफामें बैठकर यदि कोअी बाहर देखे, तो पानीके पतले परदेमें से अुसे अपने सामनेकी सृष्टिका जीवनमय विस्तार दिखाअी देगा। प्रपात तो वहां गिरता है, किन्तु वह अितना घना नहीं है कि आरपार कुछ दिखाअी ही न दे। यह गुफा पानीके परदेके पीछे ढंकी हुअी रहने पर भी बिलकुल भीगती नहीं, क्योंकि खिलाड़ी पवन भी पानीके तुषारोंको गुफाके अंदर नहीं ले जा सकता। गुफासे जरा बाहर आये तो फिर यह शिकायत मत कीजिये कि पवनने आपको गीला क्यों कर दिया।

हम अिस गुफासे नीचे अुतरे। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि पहाड़ी चतुष्पाद बनकर ही हमें अुतरना पड़ा। प्रपात जिस पत्थर पर गिरता है, वहीं मैंने अपना आसन जमाया। सौ फुटकी अूंचाअीसे जो पानी गिरता है, वह केवल गुदगुदा कर ही सन्तोष नहीं मानता। अुसने पहले सिर पर थप्पड़ें मारना शुरू किया; बादमें कंधे पर चपतें जमाअीं, फिर पीठ पर रप् रप् रप् रप् चाबुक बरसने लगीं और यात्राकी सारी थकावट अुतरने लगी। अक्सर हम पहले मालिश करा कर बादमें नहाते हैं। यहां तो मालिश ही स्नान था और स्नान ही मालिश! संतामाताने यहां आने वालोंको गोदकर पानीमें साफ-सुथरा कर लिया होगा।

किन्तु यह क्या? मैं घुमक्कड़ यात्री हूं या दुनियाका बादशाह हूं? मेरी पल्थीके नीचे यह रत्नखचित आसन यहांसे आ गया? पानीके तुषार चारों ओर अैसे फैल रहे हैं, मानो मोतियोंकी माला हो! और आसनके नीचे दो सुन्दर अिंद्रधनुष मुझे सम्राट्‌की प्रतिष्ठा प्रदान कर रहे हैं! अलकापुरीके कुबेरके मेरा वैभव किस बातमें कम है? अिंद्रधनुषकी दुहरी किनारवाले, चांदीके धागोंके आसन पर मैं बैठा हूं और मोतियोंकी मालाका अुत्तरीय ओढ़कर यहां आनंद कर रहा हूं। माथे पर सूर्यनारायणका चमकता हुआ छत्र है और चारों ओर ये अुड़ते हुअे द्विजगण जगन्नाथके स्तोत्र गा रहे हैं!

बदन साफ करनेके लिअे नहीं, बल्कि व्यायामका आनंद मनानेके लिअे पत्थर पर सवार होकर प्रपातके नीचे मैंने अपना सारा बदन मला। स्नान-पानका आनंद लूटा और रामरक्षा-स्तोत्रका स्मरण किया। सीतामैयाने जो स्थान पसंद किया, वहां रामरक्षा-स्तोत्रके गायनका ही स्फुरण होना स्वाभाविक था। और सिरसे लेकर पैर तकके सारे गात्रोंको मलकर साफ करते समय 'शिरो मे राघव पातु, भालं दशरथात्मजः' आदि श्लोकोंको याद करनेका यह न्याय कितना अुचित था!

*　　　*　　　*

स्वर्गको गये हुअे लोग भी यदि अंतमें मृत्युलोकमें वापस आते हैं, तो फिर जिस प्रपात-स्नानका नशा चढ़ने पर भी अुसमें से व्युत्थान करके फिर गद्यमय जीवनमें प्रवेश करनेकी आवश्यकता मुझे मालूम हुअी, जिसमें भला आश्चर्य कैसा? अिसलिअे आखिर अितने सारे आनंदका स्वेच्छासे त्याग करनेकी अपनी संयम-शक्तिकी सराहना करता हुआ मैं वापस लौटा। और नये कपड़े पहनकर नाश्तेके लिअे तैयार हुआ। नाश्ता क्या — वह तो कला-निरीक्षणके लिअे की हुअी दोपहर तककी तपस्या और प्रपात-स्नानकी शांतिके बादका अमृत-भोजन तथा वेळगंगाका कृपा-प्रसाद ही था।

गुफामें स्थिर होकर खड़े हुअे द्वारपालोंके यदि आंखें होतीं, तो अुन्हें जरूर हमसे अीर्ष्या हुअी होती!

सितम्बर, १९४०

२५
कृषक नदी घटप्रभा

घटप्रभा और मलप्रभा हमारी ओरके कर्णाटककी प्रमुख नदियां हैं। वे स्वभावसे किसान हैं। वे जहां जाती हैं वहां खेती करती हैं, जमीनको खाद देती हैं, पानी देती हैं और मेहनत करनेवाले लोगोंको समृद्धि देती हैं। जिसमें भी गोकाकके पास अेक बड़ा बांध बनाकर मनुष्यने अिस नदीकी शक्ति बढ़ा दी है। जहां नदीके पानीकी पहुंच न थी, वहां अिस बांधके कारण वह पहुंच गयी। घटप्रभाका नाम लेते ही गोकाकके पासका लम्बा बांध ध्यानमें जरूर आयेगा। बड़ी बड़ी नदियां जहां-तहांसे कच्चा माल-खींचकर ले जाती हैं, जब कि अैसी छोटी नदियां, बन सके वहांसे, थोड़ा थोड़ा करके अच्छा कीमती पक किसानोंको अपने पानीके साथ मुफ्तमें देकर अपने बालकोंका पालन करती हैं। सचमुच घटप्रभा कृषक जातिकी नदी है।

बेलगामसे अितना नजदीक होते हुअे भी गोकाकके पासका घटप्रभाका प्रपात अभी देखना बाकी ही है।

१९२६-'२७

२६
कश्मीरकी दूधगंगा

श्रीनगरमें भला पानीकी कमी कैसे हो?

सतीसर नामक पौराणिक सरोवरको तोड़कर ही तो कश्मीरका प्रदेश बना हुआ है। झेलम नदी मानो अिस अुपत्यकाकी लम्बाअी और चौड़ाअीको नापती हुअी सर्वत्र बहती है। अिसके अलावा जहां नजर डालें वहां कमल, सिंघाड़े तथा किस्म किस्मकी साग-सब्जी पैदा करनेवाले 'दल' (सरोवर) फैले हुअे दीख पड़ते हैं। जिस वर्ष जल-प्रलय न हो वही सौभाग्यका वर्ष समझ लीजिये। अैसे प्रदेशमें गाड़ीके सफरके रास्ते जैसे छोटे प्रवाहकी भला पूछें ही कौन?

फिर भी जैसे अेक प्रवाहको कश्मीरमें भी प्रतिष्ठा मिली है।

अिसमें पानी अधिक चाहे न हो, किन्तु यह प्रवाह अखंड रूपसे बहता है। न कम होता है, न बढ़ता है। अिसका पानी सफेद रंगका है, अिसीलिअे शायद अिसका नाम दूधगंगा रखा गया होगा। जिस नारायणाश्रममें हम रहते थे, अुससे नजदीकसे ही यह दूधगंगा बहती थी। अेक लम्बी लकड़ी डालकर अुस पर पुल बनाया गया था। नहानेके लिअे दूधगंगा बहुत अनुकूल है। अुसमें खड़ खड़ नहाया जा सकता है, और तैरना हो तो थोड़ा तैरा भी जा सकता है। बुवा बीमार थे तब बरतन माजनेमें, कपड़े धोनेमें और अन्य कामोंमें दूधगंगाकी मुझे काफी मदद मिलती थी। अुस अपरिचित प्रदेशमें जब हम दोनों बीमार पड़े, तब यदि दूधगंगाकी मदद हमें न मिलती तो हमारी क्या दशा हुअी होती?

कृतज्ञताके कारण दूधगंगाका माहात्म्य खोजनेकी अिच्छा हुअी। सार्वजनिक पुस्तकालयमें जाकर मैंने अनेक पुस्तकें ढूंढ निकालीं। यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि अितनी छोटी दूधगंगा बहुत दूरसे आती है और दूर दूर तक जाती है। किस ऋषिने दूधगंगाको जन्म दिया, किस-किसने अुसके किनारे तपस्या की आदि सब जानकारी मैंने खोज करके प्राप्त कर ली। अितिहासकी अनंत घटनाओंकी तरह यह जानकारी भी विस्मृतिके प्रवाहमें फिरसे बह गअी, और अब केवल कृतज्ञता ही केवल शेष रही है।

अितना याद है कि रोज सुबह मठके साधु स्नान करनेके लिअे नदी पर अिकट्ठा होते थे। और रातको जब सब सो जाते तब मैं दूधगंगाके किनारे बैठकर आकाशमें ध्रुवका ध्यान करता था। मेरा ध्यान भी अधिक न चला, क्योंकि कश्मीरमें ध्रुव अितना अूंचा होता है कि अुसकी ओर देखनेमें गर्दन दर्द करने लगती है। वहां सप्तर्षिमें से अरुन्धती-सहित वसिष्ठको सीधा सिर पर विराजमान देखकर कितना आश्चर्य मालूम होता था!

कश्मीर-तल-वाहिनी सती-कन्या दूधगंगाको मेरा प्रणाम।

१९२६-'२७

स्वर्धुनी वितस्ता

'संसारमें अगर कहीं स्वर्ग है,
तो वह यहीं है, यहीं है, यहीं है।'

सम्राट् जहांगीरने झेलम नदीके अुद्गमको देखकर अूपरका वचन कहा था। अुसका यह वचन यहांके अष्टकोनी तालाबके पास पत्थरमें खोद दिया गया है। सचमुच यह स्थान भूस्वर्गके पदके योग्य ही है। वेदकालमें अिस नदीका नाम था वितस्ता।

जहां अंग-अंगमें और रोम-रोममें प्राण फूंकता हुआ ठंडा मीठा पवन बहता है, जहां वनश्री अपने यौवनका पूरा-पूरा अुन्माद प्रगट करती है, जहांके पहाड़ अपने सौंदर्यसे मनमें सदेह पैदा करते हैं कि ये पहाड़ हैं या रंगभूमिका परदा, और जहांकी शांति सौम्यसे भरी हुआी है — वहींसे झेलमका अुद्गम हुआ है। जहांगीरने अिस अुद्गम-स्थान पर अेक अष्टकोनी तालाब बनवाया है। और अंदरका पानी? वह तो मानों नीलमणिका अनुल-रस हो! देखते ही मनमें आता है कि यहां नीलमें रंगे कपड़े किसीने धो डाले हैं। किन्तु अितना स्वच्छ और मीठा पानी अन्यत्र कहां मिलेगा?

अिस तालाबसे अेक ओरसे जो सुन्दर, सीधी नहर बहती है वही है हमारी वितस्ता-झेलम। अिस स्वर्गका आनंद लूटनेके लिअे मानों गंधर्व मछलियोंका रूप धारण करके अिस तालाब और नहरमें नहानेके लिअे अुतरे हैं। अैसी अुसकी शोभा है। अिस प्रदेशमें मछलियोंको पकड़नेकी यदि सख्त मनाही न होती तो भला अिस सौंदर्यकी क्या दशा हो जाती? मैंने अेक बड़ा बरतन नहरमें डुबो दिया तो अुसमें नहरकी पांच-सात मछलियां आ गआीं — अितनी भोली हैं वे। मैंने अुनको फिरसे नहरमें छोड़ दिया।

अिस स्थानको वेरीनाग कहते हैं। यहांसे आगे खनबल नामक अेक स्थान आता है। यहांसे झेलम नदी नावें चलाआी जा सकें अितनी बड़ी हो जाती है। खनबलके पास ही अनंतनाग नामक अेक सुन्दर तालाब

है। यहासे आगे सारी जमीन समतल है। कश्मीरकी सारी घाटी अिसी तरह चारों ओर सपाट है।

झेलमको सीधा चलनेकी सूझती ही नहीं। मोड लेती लेती मंद गतिसे यह आगे बढ़ती है। अुसके किनारे अेक बडी वैभवशाली संस्कृतिका विकास हुआ और अस्त भी हुआ। परन्तु वितस्ता आज भी जैसीकी तैसी ही बहती है।

खानबलसे आगे बीजब्यारा नामका अेक स्थान आता है। वहा किनारेका अेक खास पेड हमने देखा। नौ आदमियोंने हाथ फैलाकर अुसको आलिंगन किया और अुसके तनेको नापा। ठीक चौवन फुटका घेरा था!

बीजब्याराके मंदिरके बारेमें हमने यहा अेक मजेदार दन्तकथा सुनी, जो अंग्रेज लेखकोंने भी लिख रखी है।

धर्मांध मुसलमान जब यह मंदिर तोडनेके लिअे आये, तब यहाके पुजारियोंने अुनका न तो कोओी विरोध किया, न धन देकर मन्दिरको बचानेकी बात की। अुन्होंने कहा, "आअिये, आअिये, मंदिरको तोड डालिये। हमारे शास्त्रोंमें लिखा है कि यवन आयेंगे और मूर्तिका नाश करके मंदिरको तोड डालेंगे। हमारे शास्त्रोंमें जो लिखा है, वह झूठा होनेवाला नहीं है।" यह सुनकर गाजीको लगा, "अिनका मंदिर यदि तोडेंगे तो अिन काफिरोंके शास्त्र सच्चे साबित होंगे। अिससे बेहतर तो यह है कि यह अेक मंदिर छोड दिया जाय।" पता नहीं यह कहानी कहा तक सच है, किन्तु यह हमारे यहाके बनियेकी कहानी जैसी चतुराअीकी कहानी जरूर है। और यह बात भी सही है कि बीजब्याराका मंदिर मुसलमानोंके आक्रमण या अमलके दरम्यान भी टूटा नहीं।

यहासे कुछ दूरी पर अवन्तिपुर नामक अेक प्राचीन शहर जमीनके नीचे दबकर छोटी पहाडी बन गया है। खंडेमें खोदते समय पुरानी सुन्दर कारीगरी, कअी प्राचीन कोठिया और कोयलेका बना हुआ चावल वहा मिला है, जिन्हें मैंने खुद देखा है।

नदी अिधर अुधर घूमती-घामती अितनी धीरेसे बहती है कि उसका प्रवाह मालूम ही नहीं होता। नदीके प्रवाहकी विरुद्ध दिशामें

जब जाना होता है तब पतवार चलानेके बजाय किश्तीकी नावको काफी लम्बी डोरी बांधकर अेक या दो आदमी किनारे परसे खींचते चलते हैं। किश्ती प्रवाहमें ही चले, किनारे पर न आये, असलिअ नावमें बैठा हुआ मल्ली हाथमें रही पतवारको टेढ़ा पकड़ रखता है।

कश्मीरी शालोंके कोन पर आमके या काजूके आकारके जो बेलबूटे होते हैं वे यहांकी कारीगरीकी विशेषता है। कहते हैं कि झेलमके मोड़ देखकर यहांके कारीगरोंको ये बेलबूटे सूझे। अेक दफा हमने नदीमें अेक बंदरसे चौदह मीलकी यात्रा की। अितनेमें पिछले बंदर पर जरा देरीसे आया हुआ यात्री पैदल चलकर हमसे आ मिला। असे केवल ढाअी मील ही चलना पड़ा। अितने मोड़ लेती हुअी यह नदी बहती है।

अिन मोड़ोंके कारण प्रवाहका जोर टूट जाता है और नदीका पात्र घिसता नहीं। जब बाढ़ आती है तभी सिर्फ 'सर्वतः संप्लुतोदके' जैसी स्थिति हो जाती है। यहांके प्राचीन अिंजीनियर राजाओंने बाढ़के वक्त नदीको काबूमें रखनेके लिअे अैसे अनेक मोड़ तथा नहरें खोद रखी हैं।

यह अिलाज अितना असरकार है कि आज भी अुसीका अनुसरण करना पड़ता है। अेक बड़ी किश्तीमें से सूअरके दांतों जैसा अेक बड़ा राक्षसी हल नदीके तलकी जमीनको चीरता हुआ जाता है और अंदरके कीचड़को बिजलीके पंप द्वारा बाहर फेंकता जाता है। यह सारी प्रवृत्ति 'वराहमूलम्' (आजकलका बारामुल्ला) क्षेत्रमें देखनेको मिलती है।

बारामुल्ला कश्मीरकी घाटीका अुस पारका सिरा है। वहांसे आगे झेलम जोरोंसे दौड़ती है।

अिस सारे प्रदेशके बीचोंबीच कश्मीरकी राजधानी है। श्रीनगर शहर नदीके दोनों किनारों पर बसा हुआ है। नदीके अूपर थोड़े थोड़े अंतर पर सात पुल (कदल) बनाये गये हैं। अिसके सिवा, दोनों ओरसे शहरके अंदर तक नदीमें से नहरें खोदी हुअी होनेके कारण अनायास ही

प्रवाही शांत जलमार्ग मिलते हैं। नदीका मुख्य प्रवाह ही राजमार्ग है। बाकीकी नहरें अिस राजमार्गसे आकर मिलनेवाले गौण रास्ते हैं। सुखकी रास्तों पर जिस प्रकार गाड़ियां दौड़ती हैं, अुसी प्रकार यहां लम्बी और सकरी 'शिकारा' किश्तियां तीरकी तरह दौड़ती हैं। नदीमें किश्तियोंकी चाहे जितनी धूमधाम हो, वह बिना आवाजकी ही होती है।

दोपहरको जब महाराजाके मंदिरकी पूजा पूरी होती है और अगले दिनके निर्माल्य फूल नदीके घाट पर फेंक दिये जाते हैं, तब ये फूल करीब आधे मील तक आहिस्ता आहिस्ता लम्बी हारमें बहते हुअे बड़े सुन्दर दिखाअी देते हैं।

और अिस नदीके किनारे चलनेवाली प्रवृत्ति भी किस प्रकारकी है! कहीं शतरंजियां बुनी जाती हैं तो कहीं अप्रतिम गालीचे। अेक जगह अखरोटकी लकड़ी पर सुंदर कारीगरीका काम चल रहा है, तो दूसरी जगह रेशमका कारखाना भद्दे कीड़ोंको अुबालकर सुंदर मुलायम रेशम बना रहा है। चीन, तिब्बत तथा समरकंद और बुखाराके सौदागर यहां महीनों तक पड़ाव डाले पड़े रहते हैं और होशियार पंजाबी अुनसे तिजारत करनेमें मशगूल रहते हैं। जहां देखें वहां हाथोंमें ज्यादा लम्बी बांहवाले कोट पहने हुअे लोग घूमते नजर आते हैं।

आगे जाकर यही झेलम हिन्दुस्तानके बड़ेसे बड़े सरोवर वुलरमें जा गिरती है और अुसमें विलीन होकर गुप्त रूपसे लम्बी यात्रा करके दूसरे छोर पर बाहर निकलती है और बारामुल्लाकी ओर जाती है। वहां अिस नदीमें से अेक कृत्रिम नहर पैदा करके जो बिजली तैयार की जाती है वही कश्मीरके राज्यको पर्याप्त शक्ति देती है। अबटाबादके नजदीक यह नदी दिशा बदलती है और दौड़ती हुअी आगे बढ़ती है। झेलमकी सारी घाटी अपने सौंदर्यके लिअे प्रख्यात है।

लोककथा कहती है कि अकबर बादशाह अिस घाटीके सौंदर्यके नशेमें अूपरसे नीचे कूद पड़े थे। यह कवि-कल्पना भले हो, किन्तु घाटीको देखने पर अिस तरहका नशा चढ़ना संभव तो अवश्य जान पड़ता है। अैसी लोककथाअें किसी राजाके गौरवका वर्णन करनेकी अपेक्षा

नदीके मोटा गौदर्यकी तारीफ करनेके लिअे ही अर्थवादके तौर पर गढ़ ली जाती है।

जब हिन्दुस्तानका सच्चा अितिहास लिखा जायगा, तब अुसमें बडी बडी नदियोंके अनुसार देशके अलग अलग विभाग बनाये जायगे। अैसे अितिहासमें झेलमकी स्वर्गीय मरुद्‌गिरा विभाग मामूली नहीं होगा। सचमुच झेलमको स्वर्धुनीका ही नाम शोभा देता है।

१९२६–'२७

२८

सेवायता रावी

सिन्धु नदीको करभार देनेवाली पाच नदियोंमें वितस्ता — झेलम — और सुतुद्री दो ही महत्त्वकी मानी जाती हैं। बाकीकी नदिया अपने जिम्मे आया हुआ काम नम्रताके साथ पूरा करती हैं। जिस प्रकार किसी श्रेष्ठ पुरुषसे मिलनेके लिअे शिष्ट-मडल जाता है, अुसी प्रकार ये नदिया धीरे धीरे साथ मिलकर आखिर सिन्धुसे जा मिलती हैं। ब्यास सतलजसे मिलती है। चिनाब झेलमसे मिलती है और रावी अिन दोनोंसे मिलती है। मुलतानके पास तीन नदियोंका पानी लाती हुअी झेलम हिन्दुस्तानके अुस पारसे आनेवाली सतलजसे मिलती है। और अन्तमें अिन सबोंका बना हुआ पचनद सिन्धुमें मिलकर कृतार्थ होता है। सिन्धुसे बातें करनेवाले शिष्ट-मडलका अध्यक्षीय स्थान तो सतलजको ही मिल सकता है, क्योंकि वह भी सिन्धुकी तरह परलोकसे (हिमालयके अुस पारसे) ही आती है।

अिन पाच नदियोंमें मध्यम स्थान अिरावतीका यानी रावीका है। वेदोंमें अिरावा अर्थ है पानी, आह्लादक पेय। यों तो नदीमें पानी होता ही है। किन्तु अिस नदीके विशेष गुणको देखकर ऋषियोंने अुसे अिरावती नाम दिया होगा। ब्रह्मदेशकी अैरावती (अिरावान् = समुद्र) को

समुद्रके समान विस्तृत देखकर क्या यह नाम दिया होगा? रावी अितनी विस्तृत नहीं है।

स्वामी रामतीर्थकी जीवनीमें रावीका जिक्र अनेक जगह पर आता है। रावीको देखकर स्वामी रामतीर्थकी आंखें प्रेमसे भर आती थीं। वैराग्य और सन्यासके बच्चे विचार अुन्होंने अिस नदीके किनारे ही पक्के किये। किन्तु रावी तो सिख-गुरु अर्जुनदेव और सिख-महाराज रणजितसिंहके लिअे ही आंसू बहाती दिखाअी देती है।

मैं लाहौर गया था तब अिरावतीके पुण्यदर्शन कर पाया था। अुस समय वह कितनी शांत थी! अुसके विशाल पट पर सारा लाहौर अुलट पड़ा था। लोगोंकी धूमधाम और पैसेवालोंकी शान-शौकत तथा विलासके सामने रावीकी शांति विशेष रूपसे शोभा पाती थी। यहां रावीका दृश्य अैसा मालूम होता था मानो सारे लाहौरको अपनी गोदमें लेकर खेलाती हो!

अपना पावन और पोषक जल देनेके अलावा रावी अपने बच्चोंकी विशेष सेवा करती है। हिमालयके घन अरण्यमें चीड़, देवदार, बाक्स, सफेदा आदि आर्य वृक्षोंके घने नगर बसे हुअे हैं। कहीं कहीं तो अेन दोपहरके समय भी सूरजकी धूप जमीन तक बड़ी मुश्किलसे पहुंचती है। और वयोवृद्ध वृक्षोंका अेकाध पितामह जब अुन्मूल होकर गिर पड़ता है तब भी अुसका जमीन तक पहुंचना असंभव-सा हो जाता है। आसपासके वृक्ष अपनी बलवान भुजाओंमें अुसको अंतरिक्षमें ही थाम लेते हैं। मानो बाणशय्या पर पड़े हुअे भीष्माचार्य हों। बरसों तक अिस तरह अधर ही अधरमें रहकर ठंड, धूप तथा बारिश सहते हुअे आखिर अिस भीष्माचार्यका विशाल शरीर छिन्न-भिन्न और चूर्णित होकर लुप्त हो जाता है।

अैसे जंगलोंसे अिमारती लकड़ी काटकर लाना आसान बात नहीं है। अिसलिअे लोगोंने रावीका आश्रय लिया। रावीके किनारे जहां बड़े बड़े जंगल हैं वहां लकड़ी काटनेवाले जाते हैं और लकड़ीके बड़े बड़े लट्ठे काटकर रावीके प्रवाहमें छोड़ देते हैं। बस हो-हा करते हुअे वे चलने लगते हैं। कहीं कहीं पाठशालामें जानेवाले आलसी लड़कोंकी

भांति वे धीरे धीरे और रुकते रुकते भी चलते हैं। और कहीं कहीं सामके समय घरकी ओर दौडनेवाले गरूडोंकी तरह वे नाचते-कूदते, अूपर-नीचे होते, अेक-दूसरेसे टकराते हुअे दौडते जाते हैं।

जब सजीव जानवरोंको भी हांकनेके लिअे गडरियोंकी आवश्यकता होती है, तब ये निर्जीव लट्ठे अैसी किसी देखरेखके बिना मुकाम तक कैसे पहुंच सकते हैं? नदीका पानी घाट दूर था कि सब रुक गये। अेक रुका अिसलिअे दूसरा रुका। असके सहारे तीसरा रुका। 'आगे जानेका रास्ता नहीं है' कहकर चौथा रुका। 'क्या देखकर ये सब यहां खडे हो गये हैं, देखूं तो सही!' कहकर पांचवां रुका। रात बितानेके लिअे यह पडाव ठीक होगा, अैसा अनुमान करके सातवां, आठवां और दसवां रुका। बादमें आये हुअे तो यह मानने लगे कि हमारा मुकाम ही यही है, अब यात्रा करना बाकी नहीं रहा। जहां सब रुके 'सा काष्ठा सा परा गति'।

सुबह होते ही अिन लट्ठोंके गडरिये आते हैं और सबको आगे हांक ले जाते हैं। 'अरे भअी, चलो चलो' करते वह काफिला फिर कूच शुरू करता है। नदीका प्रवाह अच्छा हो वहां तक तो यह यात्रा ठीक चलती है। मगर जहां प्रवाह ज्यादा तेज, छिछला या पथरीला होता है वहां बडी मुश्किल होती है। अेकाध लम्बे लट्ठेको दो बड़े पत्थरोंका आश्रय मिल गया कि वह वहीं रुक जायगा और कहेगा 'मैं तो यहांसे हटनेवाला ही नहीं हूं। और दूसरोंको भी नहीं जाने दूंगा।' अैसी जगह पर अुन लट्ठोंके जानेके लिअे पान-घात ही रुकेंज नहीं होगी। वे रुक गअी कि सारा काफिला रुक गया समझिये। गड़रिये यहां तैर कर आनेकी हिम्मत भी नहीं करेंगे, क्योंकि अुनको अिन लट्ठोंसे अधिक अपना सिर प्यारा होता है। किनारे पर खडे रहकर लम्बे लम्बे बांसोंसे ठोल ठोल कर कडियोंको निकाला जा सकता है। किन्तु जो प्रवाहके बीचोंबीच रुक गये हों अुनका क्या?

मनुष्यने अिस आफतका भी अिलाज खोज निकाला है। हिमालयमें भैंसके समान बड़े जानवर रहते होंगे। अुनकी पूरी खाल अुतार कर अुसको सी लेते हैं और अुसका थैला बनाते हैं। गलेकी ओरसे

हवा भर कर अुसे भी सी डालते हैं। असिसे यह जानवर अप्सराकी तरह, बिना मांस या हड्डियोंका, हवासे भरा हुआ हो जाता है और पानी पर तैरने लायक बन जाता है। अुसके चार पांव भी हड्डियोंको निकालकर जैसेके तैसे रखे जाते हैं। फिर अिस तैरने हुअे फुग्गे या मशकको पानीमें छोड़कर ये गडरिये अुसके पेट पर अपनी छाती रख देते हैं और पांव हिलाते हिलाते तय किये हुअे मुकाम पर पहुंच जाते हैं। फुग्गेके कारण पानीमें तैरना आसान हो जाता है। फुग्गेके पांवोंको पकड़ रखने पर वह छातीके नीचेसे खिसकता नहीं और तेज प्रवाहमें कहीं पत्थरसे टकराने पर चोट खालको ही लगती है, अुस पर सवार हुअे आदमीको नहीं।

अितनी तैयारी होने पर वे लट्ठे भटकते कैसे रह सकते हैं? अेक अेकको तो आगे बढ़ना ही पड़ता है। पहाड़की घाटियोंको पार कर अेक बार बाहर निकल आने कि ये लट्ठे मनचाहे ढंगसे अलग अलग न हो जायं असिलिअे अुनके गडरिये सबको रस्सेसे बांधकर अुन पर सवार होते हैं और अुन्हें आगे ले जाते हैं।

लाहौरमें रावीके प्रवाह पर अिन लट्ठोंके कअी काफिले तैरते हुअे दीख पड़ते हैं। अुनके शत्रु अुनको पानीसे बाहर निकालकर अुनके टुकड़े टुकड़े कर डालते हैं, और फिर मनुष्योंके मकान या दूसरे साज-सामान तैयार करनेके लिअे दधीचि ऋषिकी तरह अुन्हें अपना शरीर अर्पण करना पड़ता है। अपने पर्वतीय सहोदरोंको मनुष्यकी सेवामें अिस प्रकार लाकर छोड़ते समय रावीको कैसा लगता होगा? रावी अितना ही कहती होगी : 'भाअियो, परोपकाराय अिदं शरीरम्।'

जून १९३७

२९

स्तन्यदायिनी चिनाब

कश्मीरसे लौटते समय पैर अुठते ही नहीं थे। जाते समय जो अुत्साह मनमें था, वह वापस लौटते वक्त कैसे रह सकता था? अिसी कारण, जाते समय जो रास्ता लिया था, अुसे छोड़कर पीर पुजालके पहाड़ोंको पार करके हम जम्मूके रास्तेसे आ रहे थे। श्रीनगरसे जम्मू तक गाड़ीका रास्ता भी नहीं है। हिम्मत हो तो पैदल चलिये, वरना कश्मीरी टट्टू पर सवार हो जाअिये। रास्तेमें प्रकृतिकी सुंदरता और जहांगीरकी विलासिताका कदम कदम पर अनुभव होता है। जहां देखो वहां बंधे हुअे जलाशय और पहाड़ोंमें बनाये हुअे रास्ते दीख पड़ते हैं। आज शिमलाकी जो प्रतिष्ठा है, वही या अुससे भी अधिक प्रतिष्ठा जहांगीरके समयमें श्रीनगरकी थी। अैसे बादशाही पहाड़ी रास्तेसे वापस लौटते समय भगवती चन्द्रभागाके दर्शन किये थे। लोग आज अुसे चिनाबके नामसे पहचानते हैं।

यदि मैं भूलता नहीं हूं तो हम रामबनके आसपास कहीं थे। सारा दिन और सारी रात चलना था। चांदनी सुंदर थी। थके-मांदे हम रास्ते पर पियक्कड़ आदमीकी तरह लड़खड़ाते हुअे चल रहे थे। पांवोंके तलुओंमें छाले निकल आये थे। घुटनोंमें दर्द था और निरास नींदका स्वागत हुआ था आधी थकानितमें। निद्रा सुखावह होती है; तन्द्रा वैसी नहीं होती।

अैसी हालतमें हम आगे बढ़ रहे थे, अितनेमें दायीं ओरकी गहरी घाटीमें से गंभीर ध्वनि सुनाअी दी। सामनेकी टेकरी परसे झुककर आया हुआ पवन शीतल-सुगंधित मालूम होने लगा। तन्द्रा अुड़ गअी। होश आया। और दृष्टि कलरवका अुद्गम खोजने दौड़ी। कैसा मनोहर दृश्य था! अूपरसे दूधके जैसी चांदनी बरस रही है। नीचे चन्द्रभागा पत्थरोंसे टकराकर सफेद फेन अुछाल रही है। और अुसका आस्वाद लेकर तृप्त हुआ पवन हमें वहांकी शीतलता प्रदान कर रहा है।

साथ आये हुअे अेक आदमीसे मैंने पूछा, "यह कोअी नदी है, या पहाड़ी प्रवाह है?" अुसने जवाब दिया, "दोनों है। यह तो मैया चिनाब है।" मैंने चिनाबको प्रणाम किया। नीचे तो अुतर नहीं जा सकता था। अतः दूरसे ही दर्शन करके पावन हुआ। प्रणाम करके कृतार्थ हुआ और आगे चलने लगा।

क्या यही है वेदकालीन भगवती चन्द्रभागा! यहीं ऋषियोंने अपने ध्यान और अपनी गायोंको यहां पुष्ट किया होगा। आज भी अुद्यमी लोग अिस नदी माताका दोहन कम नहीं करते। मेरी जीवन-स्मृति शुरू होती है अुसी समय पहाड़ों जैसे कद्दावर पंजाबी अिस नदीके किनारे पर नहरें खोदते थे। आज पचीस लाख अेकड़ जमीन अिस माताके दूधसे रसकस प्राप्त करती है और पंजाबी वीरोंका पोषण करती है। वेदकालीन चिनाबका सत्त्व आर्योंके अुत्कर्षमें काम आता था। रणजितसिंहके समयमें यही जल गुरुकी फतह पुकारता था। आजका रस भी अनिष्ट नहीं है। चिनाबका पानी बिलकुल निःसत्त्व नहीं हुआ है। पंचनदकी प्रतिष्ठा फिरसे जागेगी और सप्तसिंधुका प्रदेश भारतवर्षको भाग्यके दिन दिखलायेगा।

१९२६–'२७

[चिनाबका प्रवाह पंजाबकी भाग्यरेखा होनेके बजाय आज पंजाबकी बटवारेकी रेखा बना है, यह कितना दैवदुर्विलास है!]

जम्मूकी तवी अथवा तावी

किसी नदीके बारेमें कहने जैसा कुछ न मिले तो भी क्या? अुसमें स्नान करनेका आनंद कम थोड़े ही होनेवाला है! नदीका महत्त्व स्वतःसिद्ध है। अुसके नामके साथ कोअी अितिहास जुड़ा हुआ हो तो धन्य है वह अितिहास। नदीको अुससे क्या? अितिहासकी दिलचस्पी विग्रहके साथ अधिक होती है — जब कि नदीका काम संधिका, मेलजोलका होता है। किसानोंको और पथिकोंको, पशुओंको और पक्षियोंको अपने जलसे संतुष्ट करती हुअी नदी जब बहती है, तब वह 'आत्मरति, आत्मक्रीड और आत्मन्येव च संतुष्ट' जैसी मालूम होती है। आप नदीसे पूछिये, 'तेरा अितिहास क्या है?' वह जवाब देगी, 'मैं पहाड़की लड़की हूं। अगण्य मानव तथा तिर्यक् प्रजाकी माता हूं। मैं सागरकी सेवा करती हूं, और आकाशके बादल ही मेरे स्वर्गस्थान हैं। बस अितना अितिहास मेरी दृष्टिसे महत्त्वका है।' ज्यादा पूछो तो तावी कहेगी कि 'आसपासके प्रदेशको पिलानेके बाद मेरा जो पानी बचता है वह मैं चिनावको देती हूं। चिनाव अपना पानी झेलममें विसर्जन करती है। झेलम सिंधुसे मिलती है। और सिंधु हम सबका पानी सागरमें छोड़कर अपनेको और हम सबको कृतार्थ करती है। यही है हमारी सायुज्य मुक्ति। बाकी तुम पागलोंका अितिहास तुम जानो। दुश्मनी और पागलपनका अितिहास भला कभी लिखा जाता है? वह तो भूल जानेकी बात है, भूल जानेकी। क्या तुम दुश्मनी और जहरको कायम रखनेके लिअे अितिहास लिखते हो? अैसे अितिहासको दफना दो या धो डालो। सेवाका अितिहास ही सच्चा अितिहास है। किनारेवासी डोगरा, गद्दी और गुज्जर जैसी प्रजा मेरी संतान है। अुनका जीवन ही मेरा जीवन है।'

कश्मीरकी यात्रा पूरी करके हम जम्मू आये और रघुनाथजीके मंदिरमें ठहरे। पास में ही तवी बह रही थी। जम्मूकी ओरका तवीका किनारा खासा अूंचा है। तवी भी वैसी ही है जैसी बहुतसी नदियां

होती हैं। अुसमें असाधारण कुछ नहीं है। अेक महाराष्ट्रीय अिंजीनियरसे हम मिलने गये थे। अुन्होंने बताया कि 'तवीके अूपर बिजलीके यंत्र लगाये गये हैं। अिस बिजलीसे बहुतसा काम किया जा सकता है।' किन्तु तवीको अुससे क्या? वह तो निरन्तर बहती ही रहती है।

१९२६-'२७

३१

सिंधुका विषाद

हिमालयके अुस पार, पृथ्वीके अिस मानदंडके लगभग बीचमें, कैलासनाथजीकी आंखोंके नीचे चिर-हिमाच्छादित पुण्यका प्रदेश है, जिसके छोटेसे दायरेमें आर्यावर्तकी चार लोकमाताओंका अुद्गम-स्थान है। अुस पार और अिस पारका विचार यदि न करें, तो हम कह सकते हैं कि अुत्तर भारतकी लगभग सभी नदियां यहींसे झरती हैं।

हिमालय हिन्दुस्तानका ही है, और किसी देशका नहीं, मानो यही सिद्ध करनेके लिअे हिमालयके अुत्तरकी ओर बहनेवाले पानीका अेक-अेक बूंद अिकट्ठा करके, हिमालयके दोनों छोरोंसे घूमकर अुन्हें हिन्द महासागर तक पहुंचानेका काम सिन्धु और ब्रह्मपुत्र, दोनों नद अखंड रूपसे करते हैं। ये दो नद अैसे लगते हैं, मानो श्री कैलासनाथजीने भारतवर्षको अपनी भुजाओंमें लेनेके लिअे दो कारुण्यबाहु फैलाये हों। हिमालयकी रुकावट मानो सहन न होती हो अिस तरह सतलज और घाघरा हिमालयकी गोदमें से सीधा रास्ता निकाल कर मानसरोवरका जल भारतवर्षके दो बड़े प्रान्तोंको पिलाने लगती हैं। जब कि गंगा, यमुना और अुनकी असंख्य बहनें पिताका लिहाज रखकर अिस ओर रहते हुअे वही काम करती हैं। पंजाबकी पांच नदियां और युक्तप्रांतकी (अुत्तर प्रदेशकी) पांच नदियां मिलकर भारतवर्षकी समृद्धिको दसगुना बना देती हैं। ये दसों नदियां भारतीय हैं। केवल सिंधु और ब्रह्मपुत्रको अति-भारतीय कह सकते हैं।

भारतवासी गंगा मैयाको प्राप्त करके सिंधुको मानो भूल ही गये हैं। सिन्धुके तट पर आर्योंके धर्मप्रसिद्ध तीर्थ हैं ही नहीं। वैदिक देवताओंके देवता अिन्द्रको जिस प्रकार हम भूल गये हैं, अुसी प्रकार सप्त-सिंधुमें से मुख्य सिन्धु नदीको भी मानो हम भूल ही गये हैं। दक्षिण और पूर्वकी ओर महासाम्राज्योंकी स्थापना करके प्राचीन आर्य वायव्य दिशाके प्रति कुछ अुदासीनसे बने और अिस कारण हमेशाके लिअे खतरेमें आ पड़े। अुत्तरकी ओर तो हिमवानकी रक्षा थी ही। पश्चिमकी ओर ठेठ अन्दर तक राजपूतानेकी मरुभूमि और राजपूत तथा डागरा जातिके शौर्यसे पूरी रक्षा मिलती थी। अुससे बाहर वेगवती सिंधु रक्षा कर रही थी। अिससे आगे करतार (खिरथर) से लेकर हिन्दूकुश तक प्रचंड पर्वतमालाकी रक्षा थी। पहाड़ी परोपनिसदी (अफगान) लोगोंकी स्वातन्त्र्य-प्रियता भी विदेशियोंको अिस ओर आने नहीं देती थी। मगर जहां देशवासी ही अुदासीन हो गये, वहां पहाड़ी दीवारें और नदियां कितनी रक्षा कर सकती हैं? परोपनिसदी लोगोंमें यवन मिल गये और वाल्हीकसे पास हिन्दुस्तानकी जो शास्त्रीय फौजी सीमा थी, वह खिसकती खिसकती अटक तक आखिर अटक गअी। और अटकने भी विदेशियोंको अंदर आनेसे अटकानेके बजाय भारतवासियोंको बाहर जानेसे ही अटकाया! रानी सेमीरामिस हिन्दुस्तान आनेसे नहीं अटकी। फारसके सम्राट दरायस पंजाब और सिंधुसे सुवर्ण-करभार लेनेसे न अटके। युअेची तथा हूण लोग हिन्दुस्तान आनेसे न अटके। सिकंदर पांच नदियोंको पार करनेसे न अटका। महमूद या बाबरको भी यह अटक न अटका सकी। हमें मालूम होना चाहिये था कि जिस नदीने काबुल नदीके पानीका स्वीकार किया वह पश्चिमकी ओरसे आनेवाले लोगोंको नहीं अटकायेगी!

पश्चिम तिब्बतमें कैलासकी तलहटीमें सिन्धुका अुद्गम है। वहांसे सीधी रेखामें वायव्यकी ओर वह दौड़ती है, क्योंकि अंतमें अुसे नैऋत्यकी ओर जाना है। कश्मीरमें घुसकर लेहकी फौजी छावनीकी मुलाकात लेती हुअी काराकोरम पहाड़की रक्षामें वह सीधी आगे बढ़ती है। स्कार्डूके पास अुसे होश आता है कि मुझे हिन्दुस्तान जाना है। गिलगिटके किलेको

दूरसे देखकर वह दक्षिणकी ओर मुडती है। चित्रालकी ओर तो वह खुद जाना नही चाहती, लेकिन यह जाचनेके लिअे कि वहाका पानी कैसा है, वह स्वात नदीको अपने पास बुलाती है। स्वात भला अकेली क्यो आने लगी? अुसकी निष्ठा काबुल नदीके प्रति है। सफेद कोहरा पानी लानेवाली काबुलसे मिलकर वह अटकके पास सिन्धुसे आ मिलती है। अब सिन्धु पूरी पूरी भारतीय बन जाती है। स्वात और काबुलके पास सुननेके लिअे काफी अितिहास पडा है। सैंडरपाटसे कौन कौन लोग आये और गये, बैक्ट्रियाके यूनानी लोग किस रास्तेसे आये, और कर्नल यगहसबड वहासे चित्रालकी चढाअी पर कैसे गया — आदि सारा अितिहास ये दो नदिया बता सकती हैं। अमीर अमानुल्लाने गरमीके पागलपनमें परसो ही जो चढाअी की थी अुसकी बात यदि पूछे तो वह भी ये बता सकेंगी। और कोहाटकी क्रूरतासे भी सिन्धु अपरिचित नही है। वजीरिस्तान और बन्नूमें क्षात्र-धर्मको लज्जित करनेवाली जो घटनाअें घटी थी अुनकी कहानी कुरमके मुहसे सुनकर सिन्धुका जी कांप अुठता है। कुरु या कुरम नदी सिन्धुसे मिलती है तब अुसका प्रवाह बिगडता है। पहाडके अभावमें वह मर्यादामें नही रह पाता। छोटे बडे टापू बनाती बनाती सिन्धु डेरा अिस्माअिलखासे लेकर डेरा गाजीखा तक जाती है।

अब सिन्धु पाचों नदियोके पानीकी राह देखती हुअी सकरी होकर दौडती है। जम्मूकी ओरसे आनेवाली चिनाब कश्मीरी झेलम नदीसे मिलती है। लाहौरके वैभवका अनुभव करके तृप्त बनी हुअी रावी अिन दोनोंसे मिलती है। व्यासके पानीसे पुष्ट बनी सतलज अिन तीनोंके पानीमे जा मिलती है। और फिर अुन्मत्त बना हुआ पचनदका प्रवाह अपनी पूरी रफ्तारके साथ मिट्ठनकोटके पास सिन्धुके अूपर टूट पडता है। अितने बडे आक्रमणको सहकर, हजम करके, अपना ही नाम कायम रखनेवाली सिन्धुकी शक्ति भी अुतनी ही बडी होनी चाहिये।

सिन्धु न सिर्फ अपना नाम ही कायम रखती है, बल्कि यहासे वह अपने जीवनकी अुदार कृपाको अनेक प्रकारसे फैलाती हुअी आस-पासके प्रदेशको भी अपना नाम अर्पण करती है। 'त्यागाय संभृतार्था-

नाम्' के अुदाहरणरूप आर्य राजाओंका ही यह अनुकरण करती है। बडी बडी सात घाटियोंका पानी वह अिकट्ठा जरूर करती है, मगर सारा पानी अनेक मुखोंसे महासागरको देनेके लिअे ही। और बीचमें यदि कोअी गरजमंद आदमी अुसमें से मनमाना पानी वहीं ले जाना चाहे, तो सिन्धुको कोअी अेतराज नहीं है।

फिर भी गंगा मैयाकी अुदारता सिन्धुमें नहीं है। अिसलिअे अटक और सक्करसे लेकर हैदराबाद तक अुस पर पुल बनाये गये हैं। सक्करका पुल फौजी दृष्टिसे बहुत महत्त्वका है। सिंधुमें स्थित अेक बडे टापूसे लाभ अुठाकर यह पुल बनाया गया है। मगर रोहरीकी ओर जहां पानी गहरा है, वहां यह पुल किसी भी समय पलेकी तरह समेटकर अिकट्ठा किया जा सकता है। यदि फौजके लिअे सिन्धुको पार करना असंभव-सा बना देना हो, तो अेक मंत्र बोलते ही सारा पुल लुप्त हो सकता है। फिर शिकारपुर-सक्कर अलग और रोहरी अलग।

यह बात नहीं है कि शिकारपुर-सक्करको अंग्रेजोंने ही महत्त्व दिया है। यहांके हिन्दू व्यापारी प्राचीन कालसे बोलनघाटके रास्तेसे कंदहार जाकर मध्य अेशियामें तिजारत करते आये हैं। हिरात या मर्व, बुखारा या समरकंद, कहीं भी देखिये आपको शिकारपुरके व्यापारी जरूर मिल जायेंगे। शिकारपुरकी हुंडी मास्को और पिटर्सबर्ग (लेनिनग्राड) तक सकारी जाती थी। सक्करका स्मरण करें और बडे जहाजके समान पानीमें तैरनेवाले साधुबेला नामक टापूका स्मरण न हो यह असंभव है। साधुओंकी काव्यमय अभिरुचि हमेशा सुन्दरसे सुन्दर स्थान पसंद करती है। साधुबेलाके सौंदर्यकी अीर्ष्या सम्राट् भी करेंगे।

पता नहीं, सिन्धुको आराम लेनेकी सूझी या सिपाडे खानेकी; वह यहांसे मंचर सरोवरकी दिशामें दौडती है। किन्तु समय पर सावधान होकर या सिरधर (करतार) के कहने पर वह वापस लौटती है और सेवणसे आग्नेय दिशामें मुडकर हैदराबाद तक जाती है। यह प्रदेश कओी युद्धोंका साक्षी है। मालूम नहीं, जयद्रथके समयमें यहांकी स्थिति कैसी थी। मगर दाहिर और जच्चके समयमें यह प्रांत काफी पिछड़ा

हुआ रहा होगा। चन्द्रगुप्तके पहले अंगिनी साम्राज्यका सोना दे देकर निःसत्त्व हो जानेके कारण कहो, या यहांके ब्राह्मण राजाओंके अनाचारोंके कारण कहो, यहांकी प्रजा बिलकुल कंगाल और कमजोर हो गआी थी। ओीरानका बादशाह आये या सिकंदर आये बगदादका मुहम्मद-बिन-कासिम आये या सर चार्ल्स नेपियर आय, सिन्धु-तटवासी लोग हर समय हारे ही हैं।

जब सिकंदरने जहाजोंमें बैठकर सिन्धुका पार किया तब अुसने अपनी रक्षाके लिअे दोनों किनारों पर अपनी फौज चलाअी थी। आज अंग्रेजोंने सिन्धुकी रक्षाके लिअे नहीं, बल्कि पंजाबका गेहूं विलायत ले जानेके लिअे सिन्धुके दोनों तट पर रेल दौडाअी है। सिन्धुका प्रवाह काफी वेगवान होनेसे गंगाकी तरह अुसमें जहाज नहीं चल सकते। अिसी कारणसे कराचीके पासके केटी बंदरगाहका कोअी महत्त्व नहीं रहा है।

सिन्धुके मुखका प्रदेश सिन्धुके ही पुरुषार्थके कारण बना है। दूर दूरसे कीचड और बालू ला लाकर सिन्धु वहां अुंडेलती गअी है। नतीजा यह हुआ है कि अरबी समुद्रका हमेशा अत्यन्त सूक्ष्मतासे या 'बहादुरीसे' पीछे हटना पडा है।

सिन्धुका प्रवाह सिन्धु नामको शोभा दे अितना विस्तीर्ण और वेगवान है। गरमीके दिनोंमें जब पिघले हुअे बर्फके पानीका पूर अुसमें आता है, तब अुसको घोडे या हाथीकी अुपमा शोभा तो क्या दे, वह सूझती भी नहीं। अुसको तो जल-प्रलय ही कहना होगा। सागरकी लहरें जैसी अुछलती हैं, वैसी ही सिन्धुकी लहरें अुछलती हैं। मगर-मच्छोंके गुरु बन सकें, अैसे तैराक भी पूरके समय पानीमें कूदनेकी हिम्मत नहीं करते।

प्रेम-दिवानी सती सुहिणीकी ही, कच्चे घडेके आधार पर, अैसे प्रवाहमें कूदनेकी हिम्मत हो सकती थी। प्रेमका प्रवाह, प्रेमका वेग और परिणामके बारेमें प्रेमका निरादर महासिन्धुसे भी बडा होता है।

सितंबर, १९२९

३२

मंचरकी जीवन-विभूति

जिसने पानीको जीवन कहा, वह कवि था या समाजशास्त्री? मुझे लगता है वह दोनों था। बिना पानीके न तो वनस्पति जी सकती है, न पशु-पक्षी ही जी सकते हैं। तब फिर दोनोंका आश्रित मनुष्य तो बिना पानीके टिक ही कैसे सकता है? ईश्वरने पृथ्वीके पृष्ठभाग पर तीन भाग पानी और अेक भाग जमीन बनाकर यह बात सिद्ध की है कि पानी ही जीवन है। बेहोश आदमी आंखोंको पानीकी अेक ठंडी बूंद लगनेसे भी होशमें आ जाता है, तो फिर अनंत बूंदोंसे छलकाते हुअे सरोवरको देखकर जीवन कृतार्थ होने जैसा आनन्द यदि वह अनुभव करे तो अिसमें आश्चर्य ही क्या?

अनंत सागर और अुसकी अनंत तरंगोंको देखने पर मनुष्यको अुन्माद होना स्वाभाविक है। पर जिसके सामनेके किनारेकी थोड़ी झांकी ही हो सकती है, और अिस कारण आंखोंको जिसके विशाल विस्तारका माप पानेका आनंद मिल सकता है, अैसे शांत सरोवरका दर्शन मित्र-दर्शनके समान आह्लादक होता है। सागर अगाधमें कूद पड़नेके लिअे हमें बुलाता है, जब कि सरोवर अपनी दर्पण जैसी शीतल पारदर्शक शांति द्वारा मनुष्यको आत्म-परिचय पानेके लिअे प्रोत्साहन देता है। सरोवरमें हमें जीवनकी प्रसन्नताका दर्शन होता है, जब कि सागरमें जीवनकी प्रक्षुब्ध विराटताका साक्षात्कार होता है। सागरका तांडव-नृत्य देखकर जो मनुष्य कहेगा:

दिशो न जाने न लभे च शर्म।

वही मनुष्य विशाल सरोवरके किनारे पहुंचते ही 'हाश' करके गायेगा:

अिदानी अस्मि संवृत्तः, सचेता, प्रकृतिं गतः।

अिस प्रकार सागर और सरोवर जीवनकी दो प्रधान और भिन्न विभूतियां हैं।

मै जानता था — कभीका जानता था — कि जीवन-विभूतिका अैसा अेक सुभग दर्शन सिंधमें सदाके लिअे फैला हुआ है। किन्तु अुसे देखनेके सौभाग्यका अुदय अभी तक नहीं हो पाया था। जब मेरे लोकसेवक संस्कार-सपन्न रसिक मित्र श्री नारायण मलकानीने मुझे अिस बार सिंधमें घूमनेका आमत्रण दिया, तब मैंने अुनसे यह शर्त की कि अबकी बार यदि जीवन और मरण दोनोंका साक्षात्कार करानेके लिअे आप तैयार हो तो ही मैं आअूंगा। अिस तरहकी गूढ वाणीकी अुलझनमें मित्रको लम्बे समय तक डालना मैंने पसन्द नहीं किया। मैंने अुनको लिखा, जहा अेक अेक करके तीन युग दबे पडे हैं, और जहा मृत्युने अपना सबसे बडा म्यूजियम खोला है, वह 'मोहन-जो-दडो' * मुझे फिरसे देखना है। अुसी तरह जहा कमलकदकी जडमें से पैदा होनेवाले असख्य कमलों, अिन कमलोंके बीच नाचनेवाली छोटी-बडी मछलियों, अिन मछलियों पर गुजर करनेवाले रगबिरगे पक्षियों और कमलकद से लेकर पक्षियों तक सबको बिना किसी पक्षपातके अपने अुदरमें स्थान देनेवाले सर्वभक्षी मनुष्योंकी निश्चिंतताके साथ जहा वृद्धि होती है अुस जीवन-राशि मचर सरोवरका भी मुझे दर्शन करना है। नारायणकी स्थिति तो 'जो दिल-पसन्द था वही बैंगन खानेको कहा' जैसी हुअी होगी। अुन्होंने सिंधके सूफी दर्शनका पालन करके प्रथम लारकानाके रास्तेमें 'मौतके टीले' का दर्शन कराया, और अुसके पश्चात् ही जीवनकी अिस राशिकी ओर वे हमें ले गये!

सिन्धुके पश्चिम तट पर, जहा पजाबका गेहू कराची तक पहुचा देनेवाली रेलवे दौडती है, दादू और कोटरीके बीच बूबक स्टेशन आता है। बगैर पूछे आदमीको कैसे पता चले कि अबूबकर नामके दोनों छोरके अक्षर कम करके बूबक नामका सर्जन हुआ है? स्टेशनसे पश्चिमकी ओर चार मीलका धूल-भरा रास्ता पार करके हम बूबक पहुचे। वहाके लोग बाजे, शहनाअी और थोडी-बहुत दक्षिणा लेकर हमें लेने

* अुसका सही नाम है 'मूअन-जो-दडो'। अिसका अर्थ होता है मरे हुअे लोगोंका टीला।

आये। अुनके साथ सारा गाव घूमकर, गली-कूचोंको देखकर, हम अपने मिजबान श्री गोकुलजीके घर पहुंचे। अुनके आतिथ्यको स्वीकार करके खाया-पिया, दस-पद्रह मिनट तक स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया और वहाके गालीचों तथा रगाओी-रगाओी वद्र करके हम मगरके दर्शन करने निकले।

दो मीलका धूल-भरा रास्ता हम फिर तय करना पडा। अुसके बाद ही खेतोंके बीच अटगट बातें करनेवाली और गडरियोंकी कुटियाकी मुलाकात लेनेवाली अक नहर आओी। जहासे वह शुरू होती थी, वही नओी-पुरानी किश्तियोंका अक झुड कीचडमें पडा था। अुनमें से अेक बडी किश्ती हमने पसन्द की और अुसमें सवार हुअे। ('सवार' या 'असवार' यानी 'अश्वारोही'; हम तो नौकारोही हुअे थे।) अिस प्रकार हमने और दो मीलकी प्रगति की। दोनों ओर पानीके साथ क्रीडा करनेवाली रहट घुमाकेका पुण्य प्राप्त करनेवाले बैल हमने देखे। खुले वायुमडलमें ही अपना जीवन, अपना विनोद और अपना अुद्योग चलानेवाले किसान भी हमने वहा देखे। और जमीन तथा पानीके बीच आना-जाना करनेवाले बनजारे पक्षी भी देखे।

हमारे काफिलेके बीसों जन आनदके अुपासक बने थे। कुछने 'चल चल रे नौजवान — रुकना तेरा काम नही, चलना तेरी शान' वाला कूचगीत छेडा। अिसमें हसनेकी बात तो अितनी ही थी कि नौकारोही हम लोग पैदल कूच नही कर रहे थे, मगर लबे लबे बासोंसे कीचडको काचते कोचते आगे बढ रहे थे। हमारे पैर कोअी हलचल किये बिना अजगरोंकी अुपासना कर रहे थे। पर जब सभी खुश-मिजाज होते हैं, तब बातों तथा गीतोंमें औचित्यके व्याकरणकी कोअी परवाह नही करता।

जब मि० रेहानावहनको 'बेनवा फकीर' की गुरलीके सुर छेडनेका निमत्रण दिया गया तभी सच्चा रग जमा; ठीक अिसी समय हमारी नहरने अपना मुह चौडा करके हमारी किश्तीको सरोवरमें ढकेल दिया। फिर तो पूछना ही क्या? जहा देखो वहा जीवन ही जीवन फैला हुआ था! पद्रहसे बीस मील लबा और दस मील चौडा जीवनका

काव्यमय विस्तार ! ! पानीकी विस्तृत जलराशिकी शांति और बीच बीचमें हरे घासके टापुओंकी शांति ! प्रकृतिको अितना काव्य कैसे सूझा होगा ? मैंने गोखूमलजीसे कहा, 'यहां तो मेरा हृदय द्रवित होता जा रहा है।' अुन्होंने अुतनी ही रसिकताके साथ जवाब दिया: 'यदि आप नववरमें यहां आते तो यहांके लाखों कमलोंमें दब जाते। आपको यदि यह अुल्लास देखना हो तो अपने विष्णुशर्माको किसी भी साल लिखकर सूचना कर दीजिये। वे मुझे लिखेंगे और मैं आपके लिअे सब तैयारी कर रखूंगा। हमारा प्रदेश अितना अलग पड गया है कि आपके जैसे लोग शायद ही यहां आते हैं। जहां तक मुझे याद आता है, अिसके पहले यहां अेक ही महाराष्ट्रीय प्रोफेसर आये थे और वे भी आपकी ही तरह आनन्द-विभोर हो गये थे। हां, हर साल कुछ गोरे फौजी अफसर यहां मछलियां मारने या शिकार खेलने जरूर आते हैं। मगर अुससे हमें क्या लाभ हो सकता है ?'

दूरी पर अेक किश्ती दिखाअी दी। देहाती कोअी कुटुंब स्थलांतर करता होगा। अुनकी नारंगी रंगकी ओढनी तथा नीले रंगके पायजामेका प्रतिबिंब पानीमें कितना सुशोभित हो रहा था — मानो ग्रामीण काव्य ही आनंदमें आकर जल-विहार कर रहा हो! दूर दूर काले जल-कुक्कुट पानीकी सतह पर तैरते हुअे सुंदर-गूंजन कर रहे थे। हममें से कुछ लोगोंको किश्तीके किनारे बैठकर पानीमें पांव धोनेकी सूझी। अुन्होंने रिपोर्ट दी कि कहीं पानी बिलकुल ठंडा है और कहीं कुनकुना। अिसका कारण क्या है, यह तो लोग मुझसे ही पूछेंगे न? अैसी लहरी टोलीमें मैं हमेशा सर्वज्ञ होता हूं। मैंने फौरन कारण ढूंढ निकाला और सबको शास्त्रीय अुपपत्तिका संतोष प्रदान किया।

'वे सामने जो टेकरियां दिखाअी देती हैं, अुनका क्या नाम है?' मैंने आसपासके लोगोंसे पूछा। अुन्हें मेरे प्रश्नसे आश्चर्य हुआ। मानो अुन्हें मालूम ही नहीं था कि स्वदेशी टेकरियोंके नाम भी होते हैं। और अिधर प्रत्येक रूपके साथ यदि नाम न जुड़ा हो तो मेरी दार्शनिक आत्मा संतुष्ट नहीं होती। हमारी टोलीमें सूबकका अेक छोटा, नाजुक और शर्मीले स्वभावका लड़का अेक कोनेमें बैठा था। मैंने

अुसे 'अीसारदास' कहकर पुकारा। पाठशालामें पढ़ा हुआ भूगोल अुसके काम आया। अुसने तुरन्त कहा, 'सामनेकी टेकरियोंको खिरथर कहते हैं।' मैं हँस पड़ा और मेरे मुहसे अुद्गार निकल पड़ा: 'धन्य है करतार!' छुटपनमें हाला और सुलेमान पर्वतके नाम हमने रटे थे। आगे जाकर हाला पर्वतने करतारका नाम धारण किया था। अुसका कारण अितना ही था कि अंग्रेजोंने खिरथरकी स्पेलिंग की थी Kirthar। विदेशी लिपिके कारण हमारे यहां कभी अनर्थ हुअे हैं। यह अुनमें से ही अेक था। खिरथरकी टेकरियां अिस किनारेसे दस बारह मील दूर हैं। यहां सिंध पूरा होकर बलूचिस्तान शुरू होता है।

अब सूरज थककर खिरथरका आश्रय लेनेकी सोच रहा था। हमने भी सोचा कि अब लौटकर घर जाना चाहिये और रात बजनेसे पहले जठराग्निको आहुति देना चाहिये। नावने दिशा बदली और हम पूर्वकी ओरकी शोभा देखने लगे। 'यऽऽह सामने दूर जो नाव दिखाअी दे रही है वह अिस समय पश्चिमकी ओर कहां जाती होगी?' मैंने भाअी गोकुलजीसे पूछा। अुन्होंने बताया, 'अुस किनारे खिरथरकी बगलमें अेक गांव है। वहां महाशिवरात्रिका अेक मेला लगता है। अुस दिन हिन्दू लोग महाशिवरात्रिके कारण वहां अिकट्ठा होते हैं। मुसलमान भी अुस दिन वहीं अपने किसी पीरके नाम पर अिकट्ठा होते हैं। बहुत बड़ा मेला लगता है। ये लोग शायद मेलेके लिअे ही जा रहे होंगे।' हम गये अुस दिन फरवरीकी २१ तारीख थी। महाशिवरात्रि बिलकुल पास यानी २४ तारीखको थी। हमारे कार्यक्रममें फेरबदल किया ही नहीं जा सकता था। 'आज यदि २४ तारीख होती तो मैं जल्दी निकलकर अुस गांवमें जरूर जाता। मैं महाशिवरात्रिका व्रत रखता हूं। हिन्दू और मुसलमानोंको अेकहृदय होकर अेक ही अीश्वरकी भक्ति करनेके लिअे हजारोंकी तादादमें अेक ही जगह अिकट्ठा हुअे देखकर अपने हृदयको पवित्र करनेका मौका मैं न छोड़ता। शिवरात्रिके दिन जिस वृत्तिसे हिन्दू और मुसलमान प्रेमसे अिकट्ठा होते हैं, वही वृत्ति यदि हिन्दुस्तानमें सर्वत्र फैल जाय तो हमारा बेड़ा पार! वह दिन हिन्दुस्तानके लिअे सुदिन तथा शिवदिन हो जाय।'

अितना कहकर मैं खामोश हो गया। अब किसीके साथ बातें करनेमें मेरी दिलचस्पी न रही। मैं दूर दूर तक देखने लगा। पृथ्वी पर या आकाशमें नहीं, बल्कि कालके अुदरमें देखने लगा। कोलंबस जिस प्रकार श्रद्धापूर्वक अमरीकाको खोजता जाता था, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानका भव्य भविष्य किस दिन होगा अिसकी मैं श्रद्धाकी दृष्टिसे खोज करने लगा।

'वह सामने जो हरे हरे खेत दीख पड़ते हैं अुनमें पीछे तमाकू या भांगकी खेती होती है।' बूबाके अेक साथीने मेरा ध्यान भंग किया। हमने सरोवरमें से नहरमें प्रवेश किया था। नहरके किनारे, बांधकी कमानी पर, पैरोंका बाथकर खड़े हुअे बगुले मछलियोंका ध्यान कर रहे थे। झोंपड़ियोंमें से चूल्हेका धुआं निकलने लगा था। आगे बूबाके अूंचे अूंचे पौरस मकानोंके स्थापत्यको निहारने लगी। अिन मकानोंमें कुछ 'मप' बगुलाकी तरह सिर अूंचा करके वायुमंडलके पैंतरेमें खड़े थे। हमने तमाकू और भांगके खेत भी पार किये। भांगके विषयमें सरकारी नीतिका अितिहास सुना। और घर लौटकर समय पर भोजन करने बैठे।

किन्तु मेरा मन तो मचरके 'ठठ' (बाघ) पर महाशिवरात्रिका आनन्द ले रहा था।

मार्च, १९४१

३३

लहरोंका तांडवयोग

[कराचीके पास कीआमारीसे जरा दूर मनोरा नामक अेक टापू है। वहां अेक सुन्दर मंदिर है। टापू पर अधिकतर पोर्टट्रस्टके लोग और थोड़ी-सी फौज रहती है। मनोरा टापू कराचीका गहना तथा समुद्रका खिलौना है। अिसके दक्षिणके छोर पर अेक बड़ी चट्टान है, जिस पर समुद्रकी लहरें टकराती हैं। अिससे आगे काफी दूर तक अेक बड़ी दीवार खड़ी करके लहरोंको रोका गया है। अिससे यहां लहरोंका अखंड सत्याग्रह देखनेको मिलता है। यह दृश्य देखनेके लिअे मैं अेक बार गया था।

हिंदी-साहित्य-सम्मेलनमें भाग लेनेके लिअे अिस साल कराची गया, तब दुबारा वह दृश्य देख आया। लहरोंका असर अुन पत्थरों पर चाहे न भी हो, परन्तु हृदय पर अुनका असर हुअे बिना थोड़े ही रहता है! हृदय और समुद्र दोनों स्वभावसे ही अूर्मिल हैं।]

कोअी प्राकृतिक दृश्य पहली बार देखकर हृदय पर जो असर होता है, वह दूसरी बार देखने पर नहीं होता। पहली बार सब नया ही नया होता है। अुस समय अज्ञात वस्तुओंका परिचय करना होता है। कदम कदम पर आश्चर्य और चमत्कृतिका अनुभव होता है। दूसरी बार अुसी जगह जाने पर किन किन बातोंकी आशा करनी चाहिये, अिसका मनुष्यको खयाल होता है। अिसलिअे अुसकी मात्रामें चमत्कृतिके लिअे गुंजाअिश कम रहती है। परिचित वस्तुके प्रति प्रेम हो सकता है; आश्चर्य और चमत्कृति तो अपरिचितके लिअे ही हो सकती है।

अैसी ही प्रेमपूर्ण किन्तु अुत्सुकता-रहित वृत्तिसे मैं कराचीके पासके मनोराकी लहरें देखनेके लिअे अबकी बार गया। यह आशा भी मनमें थी कि पुराने किन्तु नौजवान मित्रोंसे अिस रम्य स्थान पर विस्रब्ध वार्तालाप हो सकेगा। लहरें तो वहां हैं ही; अुनको देखकर आनन्द जरूर होगा। अिससे विशेष कुछ नहीं होगा — अिस प्रकार मनको समझाकर मैं वहां गया।

पिछली बार जब गया था तब मैंने अुछलती लहरोंके धवल हास्यको पकड़नेके लिअे तरह तरहके फोटो खींचे थे। मगर अुनमें से अेक भी अच्छा नहीं आया था। अिस कारण अिन लहरोंके प्रति मनमें थोड़ा गुस्सा होते हुअे भी अितना विश्वास था कि वार्तालापके लिअे वहां अनुकूल वायुमंडल अवश्य मिलेगा।

किन्तु वहां जाकर मैंने क्या देखा? पिछली बार जो दृश्य देखा था और जिसके काव्यमय चित्रोंको मैंने चित्तमें संग्रह करके रखा था, अुन्हें फीके बना कर चित्तमें से धो डालनेवाला लहरोंका अेक अखंड तांडव अेकाअेक दीख पड़ा! अब बातचीत काहेकी और विस्रंभ कथा काहेकी! मुझे तो वहां मानो अुन्मत्त करनेवाला नशा ही मिल गया। वहां मैं यदि अकेला होता तो अिन लहरोंके तांडवमें कूदकर अुनके साथ अेकरूप होनेके भीतरी खिंचावको रोक पाता या नहीं, यह मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता।

अेक आदमी गाने लगे तो दूसरेको गानेकी स्फूर्ति अवश्य होगी। अेक सियार रात्रिकी शांतिके खिलाफ यदि बगावत करे तो दूसरे क्रांतिकारी सियार अपने फेफड़ोंकी कसरत जरूर करेंगे। अजी, तंबूराकी सितारके मुख्य तारको अपने प्राणोंके साथ छेड़ दीजिये, तुरन्त नीचेके तार अपने-आप अपना आनंद-झंकार शुरू कर देंगे। तो फिर मेरे जैसा प्रकृति-प्रेमी जीव कुदरतकी भव्यताके दर्शन करके अुससे अपना भिन्नत्व यदि भूल जाय तो मानवीय सयानापनकी दृष्टिसे अुसमें आश्चर्य भले हो, किंतु वह अनहोनी बात नहीं है।

जिस प्रकार हाथीकी सारी शोभा अुसके गंडस्थलमें केंद्रीभूत होती है, किलेकी संपूर्ण शोभा अुसके गजेन्द्र-भव्य बुर्जसे होती है, जहाजकी शोभा अुसके तूतक (अूपरके डेक) से परिपूर्ण होती है, अुसी प्रकार मनोराके अिस छोर पर किलेके समान जो दीवार खड़ी है अुनके कारण यह टापू यहां विशेष रूपसे शोभा पाता है, और समुद्रकी लहरें भी यहीं दगक्रीडा करके अपनी खुजली (कंडु) शान्त करती हैं। यह कंडु-विनोद सतत चलता रहे तो भी देखनेवाला अूबता नहीं। अिसलिअे यह दृश्य चिर-मनोहारी होता ही है। परन्तु यहां पर आदमीने अेक लंबी दीवार बना-

कर समुद्रकी लहरोंको बेहद छेडा है, और अब जितने साल हो गये फिर भी लहरें जिस अधिक्षेप (अपमान) को न तो आज तक सह सकी हैं, न आगे सहनेवाली हैं। जितनी बार अुन्हें जिस अपमानका स्मरण होता है, अुतनी ही बार वे बडी फौज लेकर जिन दीवारों पर टूट पडती हैं और जिन पत्थरोंका प्रतिकार करनेके लिअे अेक-दूसरेको भडकाती जाती हैं। कैसा अुनका यह अुन्माद! कैसी अुनकी दृढ़ प्रतिज्ञा! कैसा अुनका यह प्राणघातक आक्रमण! आज तो अुनका यह अमर्ष चरम सीमाको पहुंच गया था। फिर पूछना ही क्या था! मानो वीरभद्र सारे शिवगणोंको अेकत्र करके लहरोंके रूपमें यहां प्रलय-काल मचाना चाहता हो!

अेक अेक लहर मानो अुछलती पहाडी-सी मालूम होती थी। अेककी अतुल शोभाको देखकर वैसी ही दूसरी लहरोंको अुसकी कदर करना चाहिये। किन्तु जिसके बदले, दोनों अेक होकर अेक नयी ही अूंचाओ पर पहुंचती हैं और आसपासकी लहरोंको भी अुतनी ही अूंचाओ तक चढनेके लिअे अुत्तेजित करती जाती हैं। और यह ताडव नृत्य, अेक क्षणके लिअे भी रुके बिना, अखंड रूपसे चलता रहता है। टकटकी लगाकर जिस ताडवको देखते रहिये तो अुसमें अेक प्रचंड ताल मालूम होता है। मानो शिव-ताडव-स्तोत्रका प्रमाणिका वृत्त अपनी शक्ति आजमाने लगा है, और दिल भर आने पर प्रवाह-वेग बढनेसे देखते ही देखते प्रमाणिकाका पचचामर छन्द हो जाता है। और फिर अपनी सुधबुध भूलकर पुष्पदंत भी अुस तालके साथ ताडव-नृत्य करने लगता है।

जिस तरफ लहरोंका आक्रमण अधिकसे अधिक जोरदार है, और जहां टकरानेवाली लहरें चकनाचूर हो जाती हैं तथा आकाशमें अुनसे अिन्द्रधनुषको झेलनेवाला बडा परदा तैयार होता है, वहीं कुछ सीढ़ियां अखंड स्नान करते हुअे ऋषियोंकी तरह ध्यान करती बैठी हैं। लहरोंका पानी अुनके सिर पर गिरकर हंसता हुआ और गोमुखिका-वध करता हुआ सीढ़ियां अुतरता जाता है। दिल्ली-आगरेमें और कश्मीर या मैसूरके वृंदावनमें मनुष्यने विलासके जो साधन निर्माण किये हैं और पानीका प्रवाह श्रावण-भादोंकी बडी धाराओंमें बहाया है, अुसका यहां स्मरण हुअे बिना नहीं रहता।

मगर कुछ लहरें तो अुन लम्बी दीवारके साथ टकराकर अुसके सिर पर पानीकी लम्बी लम्बी धारायें फेंकनेमें ही मशगूल रहती हैं। लहर टकराती है, दीवार पर सवार होती है और दीवारकी चौड़ाओीका अनादर करके सामनेकी ओर कूद पड़ती है और छोटीकी पिचकारियां दूरसे हमारी ओर दौड़ती आती हैं — यह दृश्य हर तरहसे अुन्मादक होता है। और यह महोत्सव मनाने आये हुअे हम लोगोंका स्वागत करनेका कर्तव्य मानो अपने सिर आ पड़ा हो, अैसा समझकर अिन धाराओं तथा अुस पलमें ही फैलनेवाले पानीके कण सारी हवाको शीतल बना देते हैं। जब यह खारी ओस आंखकी पलकों पर, नाककी नोक पर और आश्चर्यसे खुले हुअे ओठों पर जमती है, तब लगता है कि हम भी नागरिक या ग्रामवासी नहीं हैं, बल्कि वरुणके सामुद्रिक राज्यकी प्रजा हैं।

और महासागरके अूपरसे दौड़कर आनेवाला शुद्ध पवन कहता है: "अिस दृश्यका आतिथ्य स्वीकारनेकी पूरी शक्ति तुम्हारे पामर हृदयमें कहांसे होगी! चलो, मैं तुम्हें दूर दूरसे लाये हुअे ओझोन (प्राणवायु) की दीक्षा देता हूं, पाथेय देता हूं। ओझोन जब तुम्हारे दिलमें भर जायगा, तब तुम्हारे फेफड़े प्राणपूर्ण होंगे, पवित्र होंगे। अुसके बाद ही तुम यहांका वातावरण तथा अुदावरण सहन कर सकोगे।" और सचमुच, प्राणवायुके श्वासोच्छ्वाससे हरेकके मुंह पर अुषाकी लालिमा छा गयी थी। हम आठों जन आठ दिशाओंमें देख देखकर भी तृप्त नहीं होते थे।

अिसी स्थान पर हमारे पहले अेक सिंधी सज्जन अेक बड़ी शिला पर बैठकर चुपचाप अिस काव्यमें आतप्रोत होकर भावनामें मग्न रहे थे। वे न बोलते थे, न चलते थे, न हंसते थे, न गाते थे। तल्लीन होकर जरा डोल रहे थे। हम बातें कर रहे थे, हृदयके अुद्गार प्रकट कर रहे थे। मगर अुन सज्जनको अिसकी क्या परवा? अुन्हें मनुष्यकी मौज नहीं मनाना था, बल्कि लहरोंकी मस्तीको आनना था, अुसे पी जाना था। अेक पैर पर दूसरे पैरकी पल्थी लगाकर, अुस पर ठुड्डी रखकर और सिरको अेक ओर झुकाकर वे समुद्रका ध्यान कर रहे थे।

अुनकी बालोंकी मांगमें सीकर-बिन्दुओंकी मुक्तामाला चमक रही थी। मानो वरुणदेवने अपना वरद हस्त अुनके सिर पर रख दिया हो!

हमने स्थान बदल बदल कर अनेक दृष्टिकोणोंसे यह दृश्य देखा। अिससे लहरोंके मनमें हमारे प्रति सद्भावकी जागृति हुआी। वे कहने लगीं, "आओ आओ, अितनी दूरसे क्या देख रहे हो? तुम पराये नहीं हो। पास आओ, मौज मनाओ, लहरोंका आनन्द लूटो, हंसो और कूदो। यह क्षण और अनंत काल — अिनके बीच कोअी फर्क नहीं है। चलो, आ जाओ।" लहरोंकी शिष्टता भिन्न प्रकारकी होती है। न्योता देते समय वे हाथ नहीं पकड़ती, बल्कि पांव पखारती हैं। हमने सभ्यतासे अिस स्वागतको स्वीकार करके कहा, "सचमुच आनेका जी होता है। मगर अभी नहीं। अभी हमारा काम पूरा नहीं हुआ है। काफी बाकी रहा है। हमारे मनके कअी संकल्प अभी अधूरे हैं। जिस भारतमाताके चरणोंका तुम अखंड रूपसे प्रक्षालन कर रही हो, वह अभी तक आजाद नहीं हुअी है। मनुष्य-मनुष्यके बीचका विग्रह शांत नहीं हुआ है। गरीब तथा दुखी हुअी जनताके साथ जब तक पूरी अेकताका हम अनुभव नहीं करते, तब तक तुम्हारे साथ अेकता अनुभव करनेका अधिकार हमें कैसे प्राप्त होगा? तुम मुक्त हो, अखंड कर्मयोगी हो, सतत कार्य करते हुअे भी तुम्हारे लिअे कर्तव्य जैसा कुछ नहीं रहा है। हम तो कर्तव्योंका पहाड़ सामने देखते हुअे भी आलस्यमें पड़े हैं। तुम्हारी पंक्तिमें खड़े रहकर नाचनेका अधिकार हमें नहीं है। तुम हमें प्रेरणा दो। हमारे दिलमें तुम्हारी मस्ती भर दो। तुम्हारा वेदान्त हमारे चित्तमें बो दो। फिर हमें अपना कार्य पूरा करनेमें, भारतको आजाद करनेमें देर नहीं लगेगी। और यह अेक संकल्प यदि पूरा हुआ, तो बिना किसी विषादके हम तुम्हारे पास दौड़ आयेंगे। तुम्हारे साथ अद्वैत सिद्ध करेंगे। और अिसमें यदि हड्डियां, चमड़ी या मांस शिकायत करने लगें, तो जिस प्रकार कष्ट देनेवाले कपड़े फाड़ दिये जाते हैं, अुसी प्रकार अिस शरीरको हम चकनाचूर कर डालेंगे और फिर अुसके टुकड़ोंके नये नये आकारोंको देखकर हंसने लगेंगे।"

"ठीक है। जब अनुकूल हो तब आना। तुम आओ या न आओ; हमारा यह ताण्डव-नृत्य तो चलता ही रहेगा। जीवनका राम पूरा करके गोपियां जिसमें मिल गयी हैं। संसारके चक्रव्यूहसे मुक्त हुओ तमाम मानुजन, फकीर और औलिये अिसमें आ मिले हैं। विज्ञानवीर तथा सत्यके अुपासक अिसमें मिलकर गान हो गये हैं। अिसीलिओ हमारा यह मंच अखंड अशान्ति मचाते हुओ भी शान्तिका सागर-संगीत सुना सकता है।

"क्या तुम्हें सुनाओ़ी देता है यह संगीत?"

जून, १९३७

३४

सिन्धुके बाद गंगा

फरवरीकी १५ या १६ तारीखको ठेठ पश्चिमकी ओर रोहरी-सक्करके बीच सिन्धुके विशाल पट पर जल-विहार करनेके बाद और २८ फरवरीको कटरीके समीप अुसी सिन्धुके अन्तिम दर्शन करनेके बाद, बारह-पंद्रह दिनके भीतर ही पूर्वकी ओर पाटलिपुत्रके निकट गंगाका पावन प्रवाह देखनेको मिला। यह कितने सौभाग्यकी बात है! आर्योकी वंदित माता सिन्धु और अुन्हीं भारतीयोंकी सनातन माता गंगाके दर्शन अिस प्रकार अेकके बाद अेक होते रहें तो अुस सौभाग्यका स्वागत कौनसा नदी-पुत्र नहीं करेगा? गंगाको जिस प्रकार अुसके पानीका अुपयोग करनेवाला भगीरथ मिला अुसी प्रकार यदि सिन्धुको भी मिल जाता, तो राजस्थान और सिन्धका अितिहास दूसरे ही ढंगसे लिखा जाता। सिन्धु बिना किसीके कहे, अनेक दिशाओंमें बहती है और अपना पात्र बदलनेमें संकोच नहीं करती। तब यदि भगीरथ और जह्नु जैसे धुरंधर अिंजीनियर अुसे मिल जाते, तो वह सिन्ध तथा सौवीर देशोंके लिअे क्या क्या न करती? क्या आज भी रोहरी और सक्करके बीच अपना पानी अेकत्र करके नहरोंके सात प्रवाहों द्वारा

यह स्वच्छंद-विहारिणी सिन्धु अपना स्तन्य सिंधु देशको पिलाने नहीं लगी है?

सिन्धु नदी पंजाबके सात प्रवाहोंका पानी अेकत्र करके मिट्ठन-कोट और रनीर तक युक्तवेणी रहती है, वही सिन्धु सक्कर-रोहरीके बाद पहले-पहल मुक्तवेणी हो जाती है और कोटरीके बाद घेटी बंदर तक तो न मालूम कितने मुखोंसे समुद्रमें जा मिलती है।*

गंगा नदी गोआलंदो तक युक्तवेणी रहती है। गोआलंदोमें गंगा और ब्रह्मपुत्राके मिलनेसे अनके अमर्याद प्रवाहोंकी अैसी अराजकता मच जाती है कि मुक्तवेणी और युक्तवेणीका भेद ही नहीं किया जा सकता। कलकत्ताके बाद सुन्दरवनका गंगा देखनेको जरूर मिलता है। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि गंगाका विस्तार अितना ही है।

गांधी-सेवा-संघकी अंतिम बैठकके लिअे हम मालीकांदा गये थे। तब असाम प्रांतसे शिलांगके रास्ते गुरमा घाटी होकर वापस लौटे थे। जाते और आते समय भगवती गंगाके विविध दर्शन किये थे। किन्तु सम्राट् अशोकके पाटलिपुत्र (आजकलके पटना) के समीप गंगाकी शोभा अनोखी है। पटनाके पास मैंने भिन्न भिन्न समय पर कमसे कम तीन-चार बार गंगा पार की होगी। फिर भी यहां गंगाके दर्शनकी नवीनता कम होती ही नहीं। मेरा खयाल है कि नेपालकी यात्रा

* जिस प्रदेशमें अनेक प्रवाह आकर अेक नदीमें मिल जाते हैं, अुस सारे प्रदेशको अंग्रेजीमें 'region of tributaries' कहते हैं। और जहां अेक नदीमें से अनेक प्रवाह निकल कर चारों ओर फैल जाते हैं अुस प्रदेशको 'region of distributaries' कहते हैं। हमारे यहां यही भाव व्यक्त करनेके लिअे 'युक्तवेणी' और 'मुक्तवेणी' शब्द कामसें लाये गये हैं।

जब नदी समुद्रको मिलनेके लिअे दो या अधिक मुखोंमें विभक्त होती है, तब बीचके अुस तिकोने प्रदेशको अुसी आकारके ग्रीक अक्षर परसे 'delta' कहते हैं। हमें अैसे प्रदेशको 'नदीका पंखा' कहना चाहिये।

समाप्त करके मैं मुजफ्फरपुरसे पटना गया तब पहले पहल पटना गया था। फागुन मासके दिन थे। जहां जायें वहां आमके मौरसे हवा महक रही थी। और अजनबी मैं पटनाके छोटे बड़े रास्तों पर मतवालेकी तरह अपने अन्तःकरणमें वसन्तोत्सव मना रहा था। वहां जो गहरी छाप मन पर पड़ी, वह आज भी मौजूद है। फिर भी उसके बाद जब जब मैं पटना गया हूं, तब तब कुछ न कुछ नवीनता मैंने वहां अवश्य पायी है।

श्री राजेन्द्रबाबू जहां रहते हैं और जहां बिहार विद्यापीठ चल रहा है, वह सदाकत आश्रम गंगाके ठीक किनारे पर ही है। आश्रमके सामनेका रास्ता लांघकर तीन फुटके बांध पर चढ़ते ही गंगाकी विस्तीर्ण जलराशि पश्चिमसे आकर पूर्वकी ओर बहती हुई नजर आती है। उस पारका किनारा देखनेकी यदि कोशिश करें, तो जमीनकी एक पतली-सी रेखाके सिवा कुछ दिखाई ही नहीं देता। चकित होकर आप गांवमें आये हुए किसी आदमीसे पूछें कि 'गंगाका पाट कितना चौड़ा है!' तो वह तुरन्त हंसकर कहेगा, 'यह जो सामने दीख पड़ता है वह केवल एक टापू है। उसके आगे भी गंगाका प्रवाह है। उस पारका किनारा यहांसे दिखाई नहीं पड़ता।'

सामने जो पतली-सी लकीर दिखाई देती है वह एक चौड़ा टापू है, यह सुनने पर भी यकीन नहीं होता कि पानीके इतने बड़े विस्तारके बाद, लकीरके उस पार और भी विस्तार हो सकता है। एक बार संदेह मनमें पैदा हुआ कि वह कुतूहलका रूप अवश्य धारण कर लेता है। कुतूहल परिपक्व होने पर उसमें से सवाल उठता है। और सवालके जैसी वेदना बनानेवाली दूसरी कोई वस्तु भला हो सकती है?

सदाकत आश्रममें रहे तब तक रोज गंगाके किनारे टहलना हमारा काम था। क्योंकि गंगाकी मस्तानी-सुनील मोहिनी न होती, तो भी किनारे पर खड़े पुराण-पुरुष जैसे वृक्षोंकी पंक्ति हमें खींचे बिना न रहती। सह्याद्रि या हिमालयके उत्तुंग वृक्ष जिसने देखे हैं, उसका जी ललचानेकी शक्ति मामूली वृक्षोंमें कहांसे आवे? किन्तु गंगाके

तट पर, पटनाके आसपास, योजनों तक चलते रहिये — चारों ओर ऊंचे-ऊंचे वृक्ष अपनी पुष्ट शाखायें चारों दिशाओंमें ऊपर और नीचे दूर दूर तक फैलाये हुओ नजर आते हैं। किसी समय, पटना सम्राट् अशोकके साम्राज्यकी राजधानी था। आज वही पटना वृक्षोंके अेक विशाल साम्राज्यका पोषण करता है।

अैसे स्थान पर खड़े रहकर, जो न तो बहुत दूर हो और न बहुत पास, अिन बड़े वृक्षोंके अग-प्रत्यगोंकी शोभाको यदि ध्यानसे निहारें, तो अुनका स्वभाव, अुनकी चित्तवृत्ति और अुनकी कुलीनताका खयाल आये बिना नहीं रहता। सभी वृक्ष तपस्वी नहीं होते। कुछ मौनी ध्यानी जैसे दिखाओ देते हैं, कुछ क्रीड़ाप्रिय होते हैं; कुछ वियोगी विरही जैसे, तो कुछ अल्हड़ प्रेमी जैसे। परन्तु किसी भी स्थितिमें वे अपना आर्यत्व नहीं छोड़ते। कुछ वृक्षोंकी शाखायें ऊपर जितनी फैली हुओ होती हैं, मानों टूटते हुओ आसमानको बचानेका काम अुन्हींके जिम्मे आया हो।

चार बूढ़े सज्जन शान्तिसे गंभीर बातें कर रहे हैं और तुतलाते हुओ बच्चे अुनकी गोदमें अुछल-कूद मचा रहे हैं — क्या अैसा दृश्य आपने कभी देखा है? बूढ़े बच्चोंको डाटते नहीं, कोमलतासे साथ अुन्हें पुचकारते हैं। फिर भी अुनकी गंभीर बातचीतमें खलल नहीं पड़ती। गंगाके किनारे गजानन मंत्रणा चलानेवाले अिन पेड़ोंके बीच जब छोटे-बड़े पक्षी मीठा कलरव करते हैं, तब ठीक वही वृद्ध-अर्भक-दृश्य नये ढंगसे आंखोंके सामने आता है।

फाल्गुन पूर्णिमाके आसपासके दिन थे। शामको अगर घूमने निकलते तो 'चंदामामा' पेड़ोंकी ओटमें से दर्शन देते ही थे। हमने यहां अेक नये आनंदकी खोज की। जिस प्रकार अलग अलग प्रकारकी अंगूठियोंमें जड़ने पर हीरा नयी नयी शोभा दिखाता है, अुसी प्रकार अलग अलग पेड़ोंकी ओटमें चांद नयी नयी छवि धारण करता था। अेक बार मोर जैसी दो शाखाओंके बीचमें अुसे खड़ा करके हमने देखा। दूसरी बार गोल-कीपर (goal-keeper)या लक्ष्यपाल जैसे अेक बड़े पेड़को अुसे चन्द्रकी हवा-गेंद (फूटबॉल) की तरह अुछालते हुओ

देगा। दीवाघाटके बंदरगाहके पास अेक जगह तो दो पेड़ोंके बीच चन्द्रमा अिस तरह जमकर बैठा था कि मालूम होता था मानो "यह चांद तेरा नहीं है, मेरा है" कहकर पेड़ आपसमें लड़ रहे हों। और अन्तमें अिन दोनोंका झगड़ा निपटानेके लिअे चांदने मुंह बनाकर कहा, "तुम दोनोंमें से मैं किसीका भी नहीं हूं, जाओ।' अितना कहकर वह ठहरा नहीं। वह तो सीधा अूंचा ही चढ़ता गया। चंद्रकी अिस तटस्थताकी कद्र करके हम थोड़े आगे बढ़े ही थे, अितनेमें वह अपना न्यायाधीशपन भूलकर अेक पेड़में जाकर छिप गया! और अन्तमें भुजाओंमें जकड़े जानेके कारण हंसने लगा।

मनमें संकल्प अुठा — अैसे चांदनीके दिनोंमें कुछ समय सामनेके अुस निर्जन टापूमें बिता सकें तो कितना अच्छा हो! होली और धुलेंडीके दिन तो छोड़ ही देने पड़े, क्योंकि लोग होली पीकर अुन्मत्त हो गये थे, और अुन्होंने दो दिन तक गंगा-किनारेके कीचड़ और पेड़ोंके रंगोंका अनुकरण करनेका निश्चय किया था। जब वे अिससे निवृत्त हुअे, तब हम अेक नावकी व्यवस्था करके चल पड़े।

चंद्र निकले अुसके पहले रवाना होनेमें भला मजा कैसे आवे? किन्तु चंद्रको जल्दी थी ही नहीं। निकला भी तो प्रकाश नहीं देता था। किसीको पता चले बिना जिस प्रकार कोअी नया धर्म स्थापित होता है, अुसी प्रकार चंद्रमा निकला। अुसका प्रकाश अितना मंद था कि स्वातिको भी अुस पर तरस आ रहा था। जब चंद्र ही अितना मंद था, तब वफादार चित्रा अदृश्य रहे, अिसमें आश्चर्य क्या? शनि और गुरु मंत्र पढ़ते हुअे पश्चिमकी ओर अस्त हो रहे थे। नारकाविन झाड़ीके स्वामी अगस्ति दक्षिण पर आरोहण कर रहे थे। हमारी नाव चलने लगी। पानीमें चन्द्रका अेक लम्बा स्तम्भ दिखाअी देने लगा। प्रथम स्थिर, बादमें तरल। हम ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गये त्यों त्यों पानीका पृष्ठभाग अधिकाधिक चंचल होता गया, और भांति भांतिकी आकृतियोंका प्रदर्शन करने लगा।

मेरे मनमें विचार आया कि पानीके जत्थे और रफ्तारके साथ ये आकृतियां भी बदलती हैं। तो अिनका अध्ययन करके हरेकको अलग

अलग नाम देकर असी योजना क्यों न बनायी जाय कि नदीकी रफ्तार दिखानेके लिअे अुन आकृतियोंका नाम ही बता दिया जाय? अुच्च और नीच ध्वनिको हम यदि 'सा, रे, ग, म, प, ध, नी' जैसे नाम दे सकते हैं, अत्यत अुग्र तापको (white heat) शुभ्रकांति अुष्णता कह सकते हैं, तो नदीकी रफ्तारको गोमूत्रिका-वेग, वलय-वेग, आवर्त-वेग, विवर्त-वेग आदि नाम क्यों नहीं दे सकते?

अिस कल्पनाके साथ ही मैं विचारोंके आवर्तमें अुतर गया और विचार कब प्रकट हुआ, अिसका पता ही न चला। हम मझधारमें पहुंचे और मुझे प्रार्थना सूझी। अैसे स्थान पर आंखें मूंदकर क्यों अंधेरी प्रार्थना की जा सकती है? हमारा प्रार्थना-स्वामी जब हमारे सामने विविध रूपमें प्रत्यक्ष विराजमान हो, तब आंखें मूंदकर हम गुहा-प्रवेश किसलिअे करें? 'रसो वै स' कहकर जिसे हम पहचानते हैं, वह जब रसपूर्ण भूमि, पवित्र जल, सौम्य तेज, आह्लादकारी पवन और पितृ-वात्सल्यसे हमारी ओर देखनेवाले आकाशके विस्तार आदिके विविध रूपोंमें प्रकट हो और 'विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिन, रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।' श्लोक हम गाते हों, तब सारा जीवन-दर्शन नये सिरेसे सोचा जाता है। गहरा विचार लम्बा होता ही है, अैसी कोअी बात नहीं है। रसका निवर्तन कब होता है और परिवर्तन किस तरह होता है, अिसकी सारी मीमांसा मैंने तीन-चार क्षणोंमें ही मनमें कर ली और देखते ही देखते प्रार्थनामें ताजगी आ गअी। 'रघुपति राघव राजाराम'की धुन शुरू हुअी, और चपल मन जीवन-रसकी गंभीर मीमांसा छोड़कर तुरन्त पूछने लगा, 'श्री रामचन्द्रजीने गुहककी सहायतासे गंगा किस स्थान पर पार की होगी? गुहककी नाव हमारी नावके जितनी चौड़ी होगी या किसी पेड़के तनेसे बनाअी हुअी नन्हीसी डोंगी जैसी होगी?'

बातकी बातमें हम अुस टापू पर पहुंच गये। और सलिल-विहार छोड़कर हमने सिकता-विहार शुरू किया। चमकीली बालू चमकीले पानीसे कम आनंददायक नहीं थी। टापूके किनारे थोड़ी दूब अुगी हुअी थी। अेक क्षणका विचार करके हमने निश्चय कर लिया कि यहां

साप, बिच्छू, काटा कुछ भी नहीं हो सकता। यहा तो अक्षुण्ण बालू ही बिछी हुआी है। यदि कोआी निशानी है तो वह अस्थिर-मति पवनकी लहरोंकी ही। गगाकी लहरोंके कारण रेतमें बनी हुआी आकृतियोंको मिटानेकी क्रीडा मनमौजी पवन किस प्रकार करता है, असका आलेख यहा देखनेको मिलता था। रेत पर बनी हुआी आकृतिया अैसी दिखाआी देती थी, मानो पाठशालाके बच्चे थककर सो गये हों और अुनकी कापिया तथा स्लेटें किताबोंके साथ अिधर-अुधर बिखर पडी हों। कही मनचले, लहरी पवनकी लिखावट दिखाआी देती, तो कही लहरोंकी स्वर-लिपि रेतमें अंकित दिखाआी देती थी। अिनमें अपने पदचिह्न अंकित करनेको मेरा जी नहीं होता था। किन्तु बालूके झट टूट जानेवाले पपडे जब पैरों तले टूट जाते, तब पापड खाने जैसा मजा आता था। पैरोंसे आनंदको सारे शरीरने अनुभव किया और अुसे लगा कि दरअसल मूसलकी तरह खडे खडे चलनेमें पूरा मजा नहीं है। All rights reserved का दावा करनेवाला कोआी गवा वहा नहीं था। अिसलिअे हमने निःशंक होकर रेतमें लोटनेकी सोची। किन्तु दुर्भाग्यवश अिस बातमें हमारे साथियोंका अेकमत नहीं हो सका। किसीकी प्रतिष्ठा अिसमें बाधक हुआी, तो किसीका कैर्य आडे आया। हमारे खलासी तो हमें वहीं छोडकर किसीसे मिलने टापूके दूसरे छोर पर चले गये। शराबखानेके नौकर पियक्कडोंकी ओर जिस दृष्टिसे देखते हैं, अुसी दृष्टिसे अुन्होंने हम सौंदर्य-पिपासु लोगोंकी ओर देखा होगा।

गया काग्रेसके बाद हम चपारणकी ओर गये थे, तब अिसी स्थानसे हमने गंगा पार की थी। अुस समय आश्रमके दो विद्यार्थियोंने अेक मीठा भजन गाया था 'मंगल करहु दयाऽऽऽ करी देवी'। अिस स्थान पर आते ही वह सब याद आया और मैं भीमसेनका अनुकरण करके मुक्तकंठसे गाने लगा। साथियोंने अुदारताके साथ मुझे सह लिया। अिससे मैं और भी चढ गया और मथुराबाबूसे कहने लगा, "मुझे छपरासे मुंगेर तक नावमें जाना है। कितना समय लगेगा?" अैसी यात्रा मेरे नसीबमें है या नहीं, अीश्वर जाने! किन्तु कल्पनामें तो मैंने वह पूरी भी कर ली।

आकाशमें ब्रह्महृदय अस्त होनेकी तैयारी कर रहा था। महाश्वान अपनी मृगयामें मशगूल था। अगस्तिकी झोंपडी अब अपनी जगह पर आ गयी थी। और कृत्तिका तटस्थतासे स्मित कर रही थी। पुनर्वसुकी नावने अपना अग्रभाग जरा झुका करके दक्षिणकी यात्रा शुरू की, और हमें अिस बातकी याद दिलाओी कि हम अिस टापूके निवासी नहीं हैं, यहांसे हमें वापस लौटना है और परियोंकी सृष्टिको छोड़कर मानवकी सृष्टिमें अुतरना है। हम तुरन्त टापूके किनारे पर आ गये और पुनर्वसुकी तरह अपनी नाव हमने दक्षिणकी ओर बढ़ाओी।

'फिर यहां कब आयेंगे?' अैसा विषाद मनमें नहीं अुठा। गंगोत्रीसे लेकर हीरा बंदर तक गंगाके अनेक बार दर्शन करके मैं पावन हुआ हूं और मैयाकी कृपासे आगे भी अनेक बार दर्शन होंगे। अब अिस पूर्णानंदमें घट-बढ़ होनेकी संभावना नहीं है। अिसीलिअे वापस लौटते समय मुहसे शांतिपाठ निकल पड़ा:

ॐ पूर्णम् अद, पूर्णम् अिद; पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् अेवावशिष्यते॥

अप्रैल, १९४१

३५
नदी पर नहर

श्रावण पूर्णिमाके मानी हैं जनेअूका दिन; और प्रमाद ब्राह्मण्यको भूल जायं तो राखीका दिन। अुस दिन हम रुड़की पहुंचे। मजाकिये वेणीप्रसादने देखते ही देखते मुझसे दोस्ती कर ली और कहा, 'अजी बाबाजी, आज तो आपके हाथसे ही जनेअू लेंगे। यहांके ब्राह्मण वेदमंत्र बराबर बोलते ही नहीं। आप महाराष्ट्र के हैं। आप ही हमें जनेअू दीजियेगा।' वेणीप्रसादके मामा परम भक्त थे। अुनसे जनेअूके बारेमें चर्चा चली। अुत्तर भारतके ब्राह्मण चाहते हैं कि वे ही नहीं बल्कि तीनों द्विज वर्ण नियमित रूपसे जनेअू पहनें और संध्यादि नित्यकर्म करें। मगर यहांके लोगोंकी बड़ी अनास्था है।

जिससे ठीक विपरीत, दक्षिणमें जब ब्राह्मणेतर जनेअू मागते है, तब महाराष्ट्रके ब्राह्मण 'कलौ आद्यन्तयो स्थिति' के वचनके अनुसार अैसी बेहूदी जिद लेकर वैठते हैं, मानो बीचके दो वर्ण है ही नहीं। (सौभाग्यसे आज वह स्थिति नही रही।) जिन्हे जनेअू पहननेका अधिकार है, वे अुसे पहननेके बारेमें अुदासीन रहते है, और जो हाथापाओी करके भी जनेअू पहननेका अधिकार प्राप्त करना चाहते है, अुनके लिअे अपना द्विजत्व सिद्ध करनेमें कठिनाओी पैदा की जाती है' यह चर्चा सुनकर वेणीप्रसादको लगा कि 'आज हमें जनेअू मिलनेवाली नहीं है।' अुसने दलील पेश की 'कलियुगमें क्या नही हो सकता? नदी पर यदि नदी सवार हो सकती है, तो महाराष्ट्रके ब्राह्मण भी हमें जनेअू दे सकते हैं।' दलील मजूर हुअी। किन्तु विषय बदला और कलियुगके भगीरथोकी बहादुरीके अुदाहरण-स्वरूप गगाकी नहरके बारेमें बातें चली।

दोपहरके समय हम लोग मानवका यह प्रताप देखने निकले। गगाकी नहर शहरके समीपसे जाती है। लडके अुसमें मछलियोकी तरह अेक खेल खेल रहे थे। नहरके किनारे किनारे हम अुस प्रख्यात पुल तक गये। वह दृश्य सचमुच भव्य था। पुलके नीचेसे गरीब ब्राह्मणीके समान सोलाना नदी बह रही थी और अूपरसे गगाकी नहर अपना चौडा पाट जरा भी सकुचित किये बिना पुल परसे दौडती जा रही थी। पुलके अूपर पानीका बोझ अितना ज्यादा था कि मालूम होता था, अभी दोनो ओरकी दीवारे टूट जायेंगी और दोनो ओरसे हाथीकी झूलके समान बडे प्रपात गिरना शुरू होगे। पुलकी दीवार पर खडे रहकर नहरके बहावकी ओर देखते रहनेसे दिमाग पर अुसका असर होता था। दुखी मनुष्यको जिस प्रकार अुद्वेगके नये नये अुभार आते हैं, अुसी प्रकार नहरके जलमें भी अुभार आते थे। किन्तु ससुराल आयी हुअी बहू जिस प्रकार अपनी सब भावनायें नये घरमें दबा देती है, अुसी प्रकार गगा नदीकी यह परतत्र पुत्री अपने सब अुभारोको दबा देती थी। अुसका विस्तार देखकर प्रथम दर्शनमें तो मालूम होता था मानो यह कोअी धनमत्त सेठानी है। किन्तु नजदीक जाकर देखने पर श्रीमतीके नीचे परतत्रताका दुख ही अुसके वदन पर दीख पडता था।

अूपरसे नीचे देखने पर निम्नगा सोलानाका क्षीण किन्तु स्वतंत्र बहाव दोनों ओरसे आकर्षक मालूम होता था। चुभता केवल अितना ही था कि नहरकी दोनों ओरकी दीवारोंमें परिवाहके तौर पर कओी सूराख रखे गये थे, जिनमें से नहरका थोड़ा पानी अिस तरह सोलानामें गिर रहा था मानो अुस पर अहसान कर रहा हो।

हम पुलसे नीचे अुतरे और सोलानाके किनारे जा बैठे। अूचेसे दिये जानेवाले अुपकारको अस्वीकार करने जितनी मानिनी सोलाना नहीं थी। मगर कोअी कृपा अवतरित होगी, अैसी लोभी दृष्टि रखने जितनी हीन भी वह न थी। हीनता अुसमें जरा भी नहीं थी। और मानिनीकी वृत्ति अुसको शोभती भी नहीं। अुसकी निर्व्याज स्वाभाविकता प्रयत्नसे विकसित अुदात्त चारित्र्यसे भी अधिक शोभा देती थी।

भगीरथ-विद्यामें (अिरिगेशन अिंजीनियरिंगमें) पानीके प्रवाहको ले जानेवाले छ प्रकार बताये गये हैं। अुनमें अेक प्रवाहके अूपरसे दूसरे प्रवाहको ले जानेकी योजनाको अद्भुत और अत्यन्त कठिन प्रकार माना गया है। अिस प्रकारके रेलके या मोटरके मार्ग हमने कओी देखे हैं। मगर, जहां तक मैं जानता हूं, हिन्दुस्तानमें अिस प्रकारके जल-प्रवाहका यह अेक ही नमूना है। संस्कृतिके प्रवाहकी दृष्टिसे यदि सोचें, तो सारा भारतवर्ष अैसे ही प्रकारसे भरा हुआ है। यहां हरअेक जातिकी अपनी अलग संस्कृति है, और कओी बार आमने सामने मिलने पर भी वे अेक-दूसरीसे काफी हद तक अस्पृष्ट रह सकी हैं!

१९२६–'२७

३६

नेपालकी बाघमती

कश्मीरकी जैसे दूधगंगा है, वैसे नेपालकी वाघमती या बाघमती है। अितनी छोटी नदीकी ओर किसीका ध्यान भी नहीं जायेगा। किन्तु बाघमतीने अेक अैसा अितिहास-प्रसिद्ध स्थान अपनाया है कि अुसका नाम लाखोंकी जबान पर चढ़ गया है। नेपालकी अुपत्यका अर्थात् अठारह कोसके घेरेवाला और चारों ओर पहाड़ोंसे सुरक्षित रमणीय अण्डाकार मैदान। दक्षिणकी ओर फर्पिंग-नारायण अुसका रक्षण करता है। अुत्तरकी ओर गौरीशंकरकी छायाके नीचे आया हुआ चंगु-नारायण अुसको सम्भालता है। पूर्वकी ओर विशंगु-नारायण है और पश्चिमकी ओर है अिचंगु-नारायण।

हिमालयकी गोदमें बसे हुअे स्वतंत्र हिन्दू राज्यके अिस घोंसलेमें तीन राजधानियां अैसी हैं, मानों तीन अंडे रख गये हों। अत्यन्त प्राचीन राजधानी है ललितपट्टन, अुसके बादकी है भादगांव, और *आजकलकी है काठमाडू या काष्ठमंडप। नेपालके मंदिरोंकी बनावट हिन्दु-*स्तानके अन्य स्थलोंकी बनावटके समान नहीं है। मंदिरकी छतसे जहां बरसातके पानीकी धारायें गिरती हैं वहां नेपाली लोग छोटी-छोटी घंटियां लटका रखते हैं। और बीचमें लटकनेवाले लोलकको पीतलके पत्ते पीपल-पान लगा दिये जाते हैं। जरा-सी हवा लगने ही वे नाचने लगते हैं। यह कला अुन्हें सिखानी नहीं पड़ती। अेकसाथ अनेक घंटियां किणकिण किणकिण आवाज करने लगती हैं। यह मंजुल ध्वनि मंदिरकी शांतिमें खलल नहीं डालती, बल्कि शांतिको अधिक गहरी और मुखरित करती है। भादगांवकी कअी मूर्तियां तो शिल्पकलाके अद्भुत नमूने हैं। शिल्प-शास्त्रके सब नियमोंकी रक्षा करके भी कलाकार अपनी प्रतिभाको कितनी आजादी दे सकता है, अिसके नमूने यदि देखने हों तो अिन मूर्तियोंको देख लीजिये। मालूम होता है यहांके मूर्तिकार कलाको अतिमानुषी ही मानते हैं।

खेतोंमें दूर दूर भव्याकृति स्तूप अैसे स्वस्थ मालूम होते हैं, मानो समाधिका अनुभव ले रहे हों।

और काठमाडू तो आजके नेपाल राज्यका वैभव है। नेपालमें जानेकी अिजाजत आसानीसे नही मिलती। अिसीलिअे परदेके पीछे क्या है, अवगुंठनके अंदर किस प्रकारका सौंदर्य है, यह जाननेका कुतूहल जैसे अपने-आप अुत्पन्न होता है, वैसे नेपालके बारेमें भी होता है। आठ दिन रहनेकी अिजाजत मिली है। जो कुछ देखना है, देख लो। वापस जाने पर फिर लौटना नही होगा। अैसी मनस्थितिमें जहां देखो वहां काव्य ही काव्य नजर आता है।

पशुपतिनाथका मंदिर काठमाडूसे दूर नही है। यह अैसा दिखता है मानो मंदिरोंके झुंडमें बड़ा नदी बैठा हो। निकटमें ही वागमती बहती है। रेतीली मिट्टी परसे अुसका पानी बहता है, अिसलिअे वह हमेशा मटमैला मालूम होता है। अुसमें तैरनेकी अिच्छा जरूर होती है, मगर पानी अुतना गहरा हो तभी न? गुह्येश्वरी और पशुपतिनाथके बीचमें यह प्रवाह बहता है, अिसी कारण अुसकी महिमा है।

पशुपतिनाथसे हम सीधे पश्चिमकी ओर शिशु-भगवानके दर्शन करने गये। रास्तेमें मिली वागमतीकी बहन विष्णुमती। अिस नदी पर जहां तहां पुल छाये हुअे थे। पुल काहेके? नदीके पट पर पानीसे अेक हाथकी अूंचाअी पर लकड़ीकी अेक अेक बित्ता चौड़ी तख्तियां। सामनेसे यदि कोअी आ जाय तो दोनों अेकसाथ अुस पुल परसे पार नहीं हो सकते। दोनोंमें से किसी अेकको पानीमें अुतरना पड़ता है। यहीं वहीं पानी अधिक गहरा होता है, वहां तो आदमी घुटनों तक भीग जाता है।

शिशु-भगवानकी तलहटीमें ध्यानी बुद्धकी अेक बड़ी मूर्ति सूर्यके तापमें तपस्या करती है। टेकरी पर अेक मंदिर है। अुसमें तीन मूर्तियां हैं। अेक बुद्ध भगवानकी; दूसरी धर्म भगवानकी, तीसरी संघ भगवानकी! हरेकके सामने घीका दीया जलता है। और अेक कोनेमें लकड़ीकी बनायी हुअी अेक चौखटमें पीतलकी अेक पोली लाट खड़ी कर रखी है, जिस पर 'ॐ मामे. पामे हूम्' (ॐ मणिपद्मेऽम्)का पवित्र मंत्र कअी बार खुदा

हुआ है। दस्ता घुमाने पर लाट गोल गोल घूमती है। रुद्राक्ष या तुलसीकी माला फेरनेकी अपेक्षा यह सुविधा अधिक अच्छी है। हर चक्करके साथ अुस पर जितनी बार मंत्र लिखा हुआ है अुतनी बार आपने मंत्रका जाप किया और अुतना पुण्य आपको अपने-आप मिला गया, अिसमें सदेह रखनेका कोअी कारण नही है। 'नात्र कार्या विचारणा'। तथागतको अपने सदेशका यह स्वरूप देखनेको नही मिला यह अुनका दुर्भाग्य है, और क्या? अिसी मंदिरके पास पीतलका बनाया हुआ अिंद्रका वज्र अेक चबूतरे पर रखा है। भगिनी निवेदिताको अिसका आकार बहुत पसद आया था। अुन्होने सूचना की थी कि भारतवर्षके राष्ट्रध्वज पर अिसका चित्र बनाया जाय।

बाघमतीके किनारे धान, गेहू, मकअी और अुड़द काफी पैदा होते हैं। अरहर वहा नही होती। मालूम नही, अिन लोगोने अिसे पैदा करनेकी कोशिश की है या नही। रुअी पैदा करनेके प्रयत्न अभी अभी हुअे हैं।

बाघमती नेपाली लोगोकी गगा-मैया है। गोरक्षनाथ अुनके पिता हैं।

१९२६–'२७

३७

बिहारकी गंडकी

छुटपनमें मैने अितना ही सुना था कि गडकी नदी नेपालसे आती है और अुसमें शालिग्राम मिलते हैं। शालिग्राम अेक तरहके हाग जैसे प्राणी होते हैं, अुन्हे तुलसीके पत्ते बहुत पसद आते हैं, पानीमें तुलसीके पत्ते डालने पर ये प्राणी धीरे-धीरे बाहर आते हैं और पत्ते खाने लगते हैं; अुन्हे पकड़कर अदरके जीवको मार डालते हैं और काले पत्थर जैसे ये शख साफ करके पूजाके लिअे बेचे जाते हैं, लेकिन आजकलके धूर्त लोग काले रंगकी शिलाका अेक टुकड़ा लेकर अुनमें सुराख करके नकली शालिग्राम

बनाते है, अैसी बड़ी बातें सुनी थी। अिसलिअे बड़ी दिनोंसे मनमें था कि अैसी नदीको अेक बार देख लेना चाहिये।

मुझे याद है कि स्वामी विवेकानंदने कहीं लिखा है कि नर्मदाके पत्थर महादेवके बाणलिंग हैं और विष्णुके शालिग्राम बौद्ध स्तूपोंके प्रतीकके तौर पर गडकीमें से लाये हुअे पत्थर हैं। पेरिसकी बड़ी प्रदर्शनीके समय अुन्होंने किसी भाषण या लेखमें जाहिर किया था कि बाणलिंग और शालिग्राम बौद्ध जगतके दो छोर सूचित करते हैं।

गगा नदीका जहा अुद्गम है, वहींसे वह दोनो ओरसे कर-भार लेती हुअी आगे बढती है। अुसकी माडलिक नदिया अधिकाशत: अुत्तरकी ओरकी यानी बायीं तरफकी हैं। चबल और शोणको यदि छोड दें, तो महत्त्वकी कोअी नदी दक्षिणसे अुत्तरकी ओर नहीं जाती। गगाकी दक्षिण-वाहिनी माडलिक नदियोंमें गडकी गगाके लिअे बिहारका पानी लाती है।

हम सब मुजफ्फरपुर गये थे तब अेक दिन गडकीमें नहाने गये। बिहारकी भूमि है अनासक्तिके आद्य प्रवर्तक सम्राट् जनककी धर्म-भूमि, अहिंसा-धर्मके महान प्रचारक महावीरकी तपोभूमि; अष्टागिक मार्गके सशोधक बुद्ध भगवानकी विहार-भूमि। ये सब धर्मसम्राट् अिस नदीके किनारे अहर्निश विचरते होंगे। अुनके असख्य सहायकोंने तथा अनुयायियोंने अिसमें स्नान-पान किया होगा। सीतामैयाने बचपनमें अिसमें कितना ही जल-विहार किया होगा। वही गडकी मुझे अपने दैव्य-पावनत्वसे कृतार्थ करे — अिस खयालके साथ मैंने अुसमें स्नान किया। नदीके पानीको किसी भी प्रकारकी जल्दी नहीं थी। अुसमें किसी प्रकारका अुत्पात न था। वह शातिसे बहती जाती थी, मानो मारको जीतनेके बाद बुद्ध भगवानका चलाया हुआ अखड ध्यान ही हो।

१९२६–'२७

गयाकी फल्गु

संस्कृतमें फल्गुके दो अर्थ होते हैं। (१) फल्गु यानी निःसार, क्षुद्र, तुच्छ, और (२) फल्गु यानी सुन्दर। गयाके समीपकी नदीका फल्गु नाम दोनों अर्थोंमें सार्थक है। पुराण कहता है कि अुसे सीताका शाप लगा है। सीताके शापमें शक्ति थी या नहीं, किन्तु अुसे किसीका शाप लगा है यह तो हम अपनी आंखों देख सकते हैं। जहां भी देखें, बालू ही बालू दिखाओ देती है। बेचारा क्षीण प्रवाह जिसमें गिर कर डूबा जा सके ऐसा भी तो नहीं। यात्री लोग जहां तहां खोदकर गड्ढे तैयार करते हैं। लड़कियां बड़े चावसे लम्बी डोरी बांधकर हलकी तरह अुसे अिन गड्ढोंमें फेंकती हैं, जिससे नीचेका कीचड़ निकल कर गड्ढा अधिक गहरा होता है और अधिक पानी देता है।

अतएव श्रद्धावान यात्री फल्गुके तटमें 'सनान' करके पितरोंके लिअे चावल पकाते हैं और पिंड तैयार करते हैं। चावल, पानी, मटकी, गोबर आदिकी सारी व्यवस्था हमारे लिअे सब कर रखी है। नियमके अनुसार पैसा दे दीजिये, पंडा सब सामग्री ले आता है। गोबरके थपेरे सुलगाकर अुन पर चावलकी मटकी रख दीजिये, अमुक विधिके पूरे होने तक चावल तैयार हो ही जायगा।

फल्गुके किनारे मंदिर और धर्मशालाओंकी संख्या बहुत है। अिनमें भी श्री गदाधरजीके मंदिरका शिखर तो अनायास हमारा ध्यान खींचता है।

फल्गुकी सच्ची शोभा देख लीजिये, गयासे बोधगयाकी ओर जाते समय। बालूका लम्बा-चौड़ा पाट, आसपास ताड़के अूंचे अूंचे पेड़ और अिनके बीचसे टेढ़ा-मेढ़ा बहता हुआ फल्गुका क्षीण प्रवाह। मगर अुसे क्षुद्र या निःसार कौन कहेगा? यहां रामचन्द्र और सीताजी आयी थीं। भगवान बुद्ध यहां घूमे थे। और कअी महापुरुष यहां श्राद्ध करने आये थे। अिस महातीर्थको निःसार तो कह ही नहीं सकते। आखिर फल्गु यानी सुन्दर — यही अर्थ सही है।

१९२६-२७

गरजता हुआ शोणभद्र

'अयं शोण शुभ-जलोऽगाधः पुलिन-मण्डितः ।
'कतरेण पथा ब्रह्मन् संतरिष्यामहे वयम्?'॥
अेवम् अुक्तस् तु रामेण विश्वामित्रोऽब्रवीद् अिदम् ।
'अेष पन्था मयोद्दिष्टो येन यान्ति महर्षयः'॥

आसेतु-हिमाचल भारतवर्षके बारेमें अेक ही साथ विचार करनेवाले क्षत्रिय गुरु-शिष्यकी अिस जोडीके मनमें शोणनद पार करते समय क्या क्या विचार आये होंगे? प्रकृतिके कवि वाल्मीकिने विश्वामित्र और राम, दोनोंके प्रकृति-प्रेमका सुन्दरतासे वर्णन किया है। तीनों जनगण-हितकारी मूर्तियां। अुनकी भावनाओंका स्रोत भी शोणभद्रकी तरह ही बहता होगा, और आसपासकी भूमिको सुफलित करता होगा।

अमरकंटकके आसपासकी अुन्नत भूमि भारतवर्षके लगभग मध्यमें पडी है। वहांसे तीन दिशाओंकी ओर अुसने अपनी करुणाका स्तन्य छोड दिया है। भौगोलिक रचनाकी दृष्टिसे जिनके बीच काफी साम्य है, किन्तु दूसरी दृष्टिसे संपूर्ण वैषम्य है, अैसे दो प्रांतोंको अुसने दो नदियां दी हैं। नर्मदा गुजरातके हिस्से आयी, और महानदी अुत्कलको मिली।

अमरकंटकका तीसरा स्रोत है पीवरकाय शोणभद्र। नर्मदा सुदीर्घा है, महानदी अष्टावक्रा है और शोणभद्र सुघोष है। करीब पांच सौ मीलका पराक्रम पूरा करके वह पटनाके पास गंगासे मिलता है। शोणके कारण ही शोणपुरका स्थान मशहूर है। कहते हैं कि ग्राहके साथ गजेंद्रकी लडाओी गंगा-शोणके संगमके समीपस्थ दहमें ही हुआी थी। मानो अिसी प्रसंगको चिरस्मरणीय करनेके लिअे अब भी शोणपुरमें लाखों लोगोंका मेला होता है, और अुसमें सैकडों हाथी बेचे जाते हैं।

सिन्धु और ब्रह्मपुत्रके साथ शोणभद्रको नर नाम देकर प्राचीन ऋषियोंने अुसका समुचित आदर किया है। बनारससे गया जाते समय अिस महाकाय और महानाद नदके दर्शन हुअे थे। गाडी बडे पुल परसे जाती है और शोणभद्रका पुलिन-मंडित महापट दिखता रहता है।

सकरी घाटीमें अपना विकास रुकनेके कारण अधीरताके साथ जब दौड़ता हुआ वह यकायक विशाल क्षेत्रमें पहुंचता है, तब कहां जाऊं और कहां न जाऊं यह भाव अुसके चेहरे पर स्पष्ट रूपसे दिखाओ देता है। 'नाल्पे सुखम् अस्ति, यो वै भूमा तत् सुखम्'—यह माननेवाले *महर्षिगण शोणके किनारे अच्छा अुतार खोजते हुअे जब घूमते होंगे,* तब अुनके मनमें क्या क्या विचार आते होंगे? यह तो विश्वामित्र या अुनके मखत्राता प्रभु श्री रामचंद्रजी ही जानें।

१९२६–'२७

४०

तेरदालका मृगजल

मेरे विवाहके बाद कुछ ही दिनोंमें हम शाहपुरसे जमखंडी गये। पिताजी हमसे पहले वहां पहुंच गये थे। रातको हम कुडची स्टेशन पर अुतरे। वहांसे रातको ही बैलगाड़ीमें रवाना हुअे। दोनों बैल सफेद और मजबूत थे। रंग, सींगोंका आकार, मुखमुद्रा और चलनेका ढंग सब बातें दोनोंमें समान थीं। हमारे यहां अैसी जोड़ीको 'खिल्लारी' कहते हैं। *अिन बैलोंने हमें चौबीस घंटोंमें पैंतीस मील पहुंचा दिया।*

जमखंडी जाते हुअे रास्तेमें अितिहास-प्रसिद्ध तेरदाल आता है। हम तेरदालके पास पहुंचे तब मध्याह्नका समय था। दाहिनी ओर दूर दूर तक खेत फैले हुअे थे। काफी दूर, लगभग क्षितिजके पास, अेक बड़ी नदी बह रही थी। पानी पर सख्त धूप पड़नेके कारण वह चमचमा रहा था। *और पानी कितने वेगसे बह रहा है अिसका भी* कुछ कुछ खयाल होता था। अितनी सुंदर नदीके किनारे पेड़ कम क्यों हैं, अिसका कारण मैं समझ न सका। मैंने गाड़ीवानसे पूछा, 'अिस नदीका नाम क्या है? कितनी बड़ी दिखाओ देती है? कृष्णा *नदी तो नहीं है?' गाड़ीवान हंस पड़ा।* कहने लगा, '*यहां नदी कहांसे* आयेगी? वह तो मृगजल है। पानीके अिस दृश्यसे बेचारे प्यासे हिरन

घोमेमें आ जाते हैं और धूपमें दौड़-दौड़कर और पानीके लिअे तड़प-तड़प कर मर जाते हैं। अिसीलिअे अुसको मृगजल कहते हैं।'

मृगजलके बारेमें मैंने पढ़ा तो था। मृगजलमें अूपरके पेड़का प्रतिबिंब भी दिखाअी देता है, रेगिस्तानमें चलनेवाले अूंटोंके प्रतिबिंब भी दिखाअी देते हैं आदि जानकारी और अुसके चित्र मैंने पुस्तकोंमें देखे थे। मगर मैं समझता था कि मृगजल तो अरबिस्तानमें ही दिखाअी देते होंगे। सहाराके रेगिस्तानकी अिक्कीस दिनकी यात्रामें ही यह अद्भुत दृश्य देखनेको मिलता होगा। हिन्दुस्तानमें भी मृगजल दिखाअी दे सकते हैं, अिसकी यदि मुझे कल्पना होती, तो मैं अितनी आसानीसे और अितनी बुरी तरहसे धोखा नहीं खाता।

अब मैं देख सका कि हम ज्यों ज्यों गाड़ीमें आगे बढ़ते जाते थे, त्यों त्यों पानी भी आगे खिसकता जाता था। मैंने यह भी देखा कि अुस पानीके आसपास हरियाली नहीं थी, और पानीका पट आसपासकी जमीनसे नीचे भी नहीं था। जमीनकी सतह पर ही पानी बहता था! अूपरकी हवामें भी धूपका असर दिखाअी देता था। फिर तो मृगजलकी मौज देखनेमें और अुसका स्वरूप समझनेमें बहुत आनंद आने लगा। बेचारे बैल अधमुंदी आंखोंसे अपनी गतिके तालमें अेक समान चल रहे थे। कोअी बैल चलते चलते पेशाब करता, तो अुसका आलेख जमीन पर बन जाता था और थोड़ी ही देरमें सूख जाता था। हम आधे-आधे घंटेमें सुराहीसे पानी लेकर पीते थे, फिर भी प्यास बुझती नहीं थी।

अैसा करते करते आखिर तेरदाल आया। धर्मशाला पत्थरकी बनी हुअी थी। देशी रियासतका गांव था; अिसलिअे धर्मशाला अच्छी बनी हुअी थी। मगर सख्त धूपके कारण वह भी अप्रिय-सी मालूम हुअी। मुकाम पर पहुंचनेके बाद मैं तालाबमें नहा आया। साथमें पूजाकी मूर्तियां थीं। बेंतकी पेटीमेंसे अुन्हें निकालकर पूजाके लिअे जमाया। अुनमें अेक शालिग्राम था। वह तुलसीपत्रके बिना भोजन नहीं करता; अिसलिअे मैं सीढ़ी धोतीसे, किन्तु नंगे पैरों तुलसीपत्र लानेके लिअे निकल पड़ा। अेक घरके आंगनमें सफेद कनेरके फूल भी मिले और तुलसीपत्र भी मिले। दोपहरका समय था। पेटमें भूख थी, पैर जल रहे थे, सिर

गरम हो गया था — असे त्रिविध तापमें पूजा करने बैठा। देवता कुछ कम न थे। अीश्वर अेक अवश्य है, मगर सबकी ओरसे अेक ही देवताकी पूजा करता तो वह चल नहीं सकता था। पूजा करते समय मेरी आंखोंके सामने अंधेरा छा गया। बडी मुश्किलसे मैंने पूजा पूरी की और खाना खाकर सो गया।

स्वप्नमें मैंने हिरनोंके अेक बडे झुण्डको गेंदकी तरह दौडते हुअे मृगजलका पानी पीने जाते देखा।

अैसा ही अेक मृगजल दाडीयात्राके समय नवसारीसे दाडीके समुद्र-किनारेकी ओर जाते समय देखनेको मिला था। हमें यह विश्वास होने हुअे भी कि यह मृगजल है, आंखोंका भ्रम तनिक भी कम नहीं होता था। वेदान्तका ज्ञान आंखोंको कैसे स्वीकार हो?

आजकल कलकत्तेकी बोल्तारकी सडक पर भी दोपहरके समय अैसा मृगजल चमकने लगता है जिससे यह भ्रम होता है कि अभी अभी बारिश हुअी है। दौडनेवाली मोटरोंकी परछाअियां भी अुनमें दिखाअी देती हैं। भगवानने यह मृगजल शायद अिसीलिअे बनाया है कि ज्ञान होने पर भी मनुष्य मोहवश कैसे रह सकता है, अिस सवालका जवाब अुसे मिल जाय।

१९२५

४१
चर्मण्वती चंबल

जिनके पानीका स्नान-पान मैंने किया है, अुन्हीं नदियोंका यहां अुपस्थान करनेका मेरा संकल्प है। फिर भी अिसमें अेक अपवाद किये बिना रहा नहीं जाता। मध्य देशकी चंबल नदीके दर्शन करनेका मुझे स्मरण नहीं है। किन्तु पौराणिक कालके चर्मण्वती नामके साथ यह नदी स्मरणमें हमेशाके लिअे अंकित हो चुकी है। नदियोंके नाम अुनके किनारेके पशु, पक्षी या वनस्पति परसे रखे गये हैं, अिसकी मिसालें बहुत हैं। दृषद्वती, सारस्वती, गोमती, वेत्रवती, कुशावती, शरावती, बाघमती,

हाथमती, साबरमती, अिरावती आदि नाम अुन अुन प्रजाओंको सूचित करते हैं। नदीके नामसे ही अुनकी संस्कृति प्रकट होती है। तब चर्मण्वती नाम क्या सूचित करता है? यह नाम सुनते ही हरेक गोसेवकके रोंगटे खड़े हुअे बिना नहीं रहेंगे।

प्राचीन राजा रतिदेवने अमर कीर्ति प्राप्त की। महाभारत जैसा विराट ग्रंथ रतिदेवकी कीर्ति गाते थकता नहीं। राजाने अिस नदीके किनारे अनेक यज्ञ किये। अुनमें जो पशु मारे जाते थे, अुनके खूनसे यह नदी हमेशा लाल रहती थी। अिन पशुओंके चमड़े सुखानेके लिअे अिस नदीके किनारे फैलाये जाते थे; अिसीलिअे अिस नदीका नाम चर्मण्वती पड़ा। महाभारतमें अिस प्रसंगका वर्णन बड़े अुत्साहके साथ किया गया है। रतिदेवके यज्ञमें अितने ब्राह्मण आते थे कि कभी कभी रसोअियोंको भूदेवोंसे विनती करनी पड़ती कि 'भगवन्! आज मांस कम पकाया गया है; आज केवल पचीस हजार पशु ही मारे गये हैं। अिसलिअे सब्जी-कचूमर अधिक लीजियेगा।'

अुस समयके हिन्दूधर्ममें और आजके हिन्दूधर्ममें कितना बड़ा अंतर हो गया है! यूनानी लोगोंके 'हैकेटॉम' को भी फीका सिद्ध करें अितने बड़े यज्ञ करके हम स्वर्गके देवताओंको तथा भूदेवोंको तृप्त करेंगे, अैसी अुम्मीद अुस समयके धार्मिक लोग रखते थे। बादके लोगोंने सवाल अुठाया:

> वृक्षान् छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर-कर्दमम्
> स्वर्गः चेत् गम्यते मर्त्यैः नरकः केन गम्यते?

'पेड़ोंको काटकर, पशुओंको मारकर और खूनका कीचड़ बनाकर यदि स्वर्गको जाया जाता हो, तो फिर नरकको जानेका साधन कौनसा है?' अिस चर्मण्वती नदीके किनारे कअी लड़ाअियां हुअी होंगी। मनुष्यने मनुष्यका खून बहाया होगा। मगर चंबलका नाम लेते ही राजा रन्तिदेवके समयका ही स्मरण होता है।

यदि आज भी हमें अितना अुद्वेग मालूम होता है, तो समस्त प्राणियोंकी माता चर्मण्वतीको अुस समय कितनी वेदना हुअी होगी?

१९२६-'२७

४२

नदीका सरोवर

हमारे देशमें अितने सौंदर्य-स्थान बिखरे हुअे है कि अुनका कोअी हिसाब ही नही रखता। मानो प्रकृतिने जो अुडाअूपन दिखाया अुसके लिअे मनुष्य अुसे सजा दे रहा है। आश्रममें जिन्हें चौबीसो घटे बापूजीके साथ रहने तथा बातें करनेका मौका मिला है वे जैसे बापूजीका महत्त्व नही समझते और बापूजीका भाव भी नहीं पूछते, वैसा ही हमारे देशमें प्रकृतिकी भव्यताके बारेमें हुआ है।

हम माणिकपुरसे झासी जा रहे थे। रास्तेमें हरपालपुर और रोहाके बीच हमने अचानक अेक विशाल सुदर दृश्य देखा। पता ही नही चला कि यह नदी है या सरोवर? आसपासके पेड किनारेके अितने समीप आ गये थे कि अिसके सिवा दूसरा कोअी अनुमान ही नही हो सकता था कि यह नदी नहीं हो सकती। मगर सरोवरकी चारो बाजू तो कमोबेश अूची होनी चाहिये। यहा सामने अेक अूचा पहाड आसपासके जगलको आशीर्वाद देता हुआ खडा था, और पानीमें देखनेवाले लोगोको अपना अुलटा दर्शन देता था। दाढी रखकर सिर मुडानेवाले मुसलमानोंकी तरह अिस पहाडने अपनी तलहटीमें जगल अुगाकर अपने शिखरका मुडन किया था।

पुलकी बाअी ओर पानीके बीचोबीच अेक छोटा-सा टापू था— दो अेक फुट लबा और अेक हाथ चौडा और पानीके पृष्ठभागसे अधिक नही तो छ अिच अूचा। अुसका घमड देखने लायक था। वह मानो पासके पहाडसे कह रहा था, 'तू तो तट पर खडा खडा तमाशा देख रहा है, मुझको देख, मैं कितना सुन्दर जल-विहार कर रहा हू!'

तब यह नदी है या सरोवर? अभी अभी बेलाताल स्टेशन गया। अिसलिअे लगा कि अिस प्रदेशमें जगह जगह तालाब होंगे। किन्तु विश्वास न हुआ। डिब्बेमें बैठे हुअे लोगोको अवश्य पूछा जा सकता था। मगर अेक तो पैसेंजर गाडी होने हुअे भी दीपावलीके दिन होनेके कारण

अुसमें स्थानिक यात्री नहीं थे, और यदि होने भी तो अुनसे अधिक जानकारी पा सकनेकी अुम्मीद थोडे ही रखी जा सकती थी। युगों तक जीवन-यात्रा विषम बनी रही, अिस कारण लोगोंके जीवनमें से सारा काव्य सूख गया है। अिसलिअे जो भी सवाल पूछा जाय, अुसका जवाब विषादमय अुपेक्षाके साथ ही मिलता है। लोगोंकी भलमनसाहत अभी कुछ बाकी है, किन्तु काव्य अुत्साह और कल्पनाकी अुडान अब स्मृतिशेष हो गये हैं।

पर अितना सुन्दर दृश्य देखनेके बाद क्या विषादके विचारोंका सेवन किया जा सकता है? यात्रामें मैं हमेशा अेक-दो नक्शे अपने साथ रखता ही हूं। बलिहारी आधुनिक समयकी कि असे साधन अनायास मिल जाते हैं। मैंने 'रोड मॅप ऑफ अिन्डिया' निकाला। हरपालपुर और मअुरानीपुरके बीचसे अेक लंबी नदी दक्षिणसे अुत्तरकी ओर दौडती है, बेतवामें जा मिलती है और बेतवाकी मददसे हिमतपुरके पास अपना नीर यमुनाके चरणोंमें चढा देती है। 'मगर अिस नदीका नाम क्या है?' मैंने नक्शेसे पूछा। वह आलसी बोला: 'देखो, यहीं लिखा हुआ होगा!' और सचमुच अुसी क्षण नाम मिला — धसान! अितने सुंदर और शांत पानीका नाम 'धसान' क्यों पडा होगा? यह तो अुसका अपमान है। मैं अिस नदीका नाम प्रसन्ना रखता। मंदसोता कहता या हिमालयसे माफी मांगकर अुसे मंदाकिनीके नामसे पुकारता।

मगर हमें क्या मालूम कि जिस लोककविने अिस नदीका नाम धसान रखा, अुसने अुसका दर्शन किस ऋतुमें किया होगा? वर्षा मूसलधार गिर रही होगी, आसपासके पहाड बादलोंको खींचकर नीचे गिरा रहे होंगे, और मस्तीमें झूमनेवाले नीर हाथीकी रफ्तारसे अुत्तर दिशाकी ओर तेजीसे दौड रहे होंगे। शंका पैदा हुअी होगी कि समीपकी टेकरियां कायम रहेंगी या गिर पडेंगी। अैसे समय पर लोककविने कहा होगा, 'देखो तो अिस धसान नदीकी शरारत, मानों महाराज पुलकेशीकी फौज अुत्तरको जीतनेके लिअे निकल पडी है!'

किन्तु अब यह नदी अितनी शांत मालूम होती है, मानों गोकुलमें शरारत करनेके बाद यशोदा माताके सामने गरीब गाय बना हुआ कन्हैया हो!

मुबह नाश्तेके समय अितनी अनसोची मेजबानी मिलने पर अुसे कौन छोड़ेगा?

अघाकर खानेके बाद रिश्तेदारोंका स्मरण तो होना ही है। अब अिस धसानका मंगल दर्शन अिष्ट मित्रोंको किस प्रकार कराया जाय? न पास कैमरा है न ट्रेनसे फोटो खींचनेकी सुविधा है। और फोटोकी शक्ति भी कितनी होती है? फोटोमें यदि सारा आनंद भरना संभव होता, तो घूमनेकी तकलीफ कोअी न अुठाता। मैं कवि होता तो यह दृश्य देखकर हृदयके अुद्गारोंकी अेक सरिता ही बहा देता। मगर वह भी भाग्यमें नहीं है। अिसलिअे 'दूधकी प्यास छाछसे बुझाने' के न्यायसे यह पत्र लिख रहा हूं। भाग्यकी भक्ति करनेवाला कोअी समानधर्मी झांसीसे करीब पचास मीलके अंदर आये हुअे अिस स्थानका दर्शन करनेके लिअे जरूर आयेगा।

स्टेशन बरवासागर, १४–११–'३९

ता० १६–११–'३९

धसानसे आगे बढ़े और ओरछाके पास बेतवा नदी देखी। यह नदी भी काफी सुन्दर थी। अुसके प्रवाहमें कभी पत्थर और कभी पेड़ थे। अुसके लावण्यमें फीका कुछ भी नहीं था। दूर दूर तक ओरछाके मंदिर और महल दिखाअी देते थे, कीचड़का दर्शन कहीं भी नहीं हुआ। यह अनाविला नदी देखकर हम झांसी पहुंचे। वहां श्री मैथिलीशरणजीके भाअी — सियारामशरणजी और चारुशीलाशरणजी अपने परिवारके अन्य लोगोंके साथ भोजन लेकर आये थे। मेरे मनमें संदेह था कि काव्य पढ़-पढ़कर काव्यका सर्जन करनेवाले हमारे कवि जिस तरह प्रकृतिका प्रत्यक्ष दर्शन हृदयसे नहीं करते, अुसी तरह अिन कवि-बन्धुओंने भी धसान और बेतवाके बारेमें शायद कुछ न लिखा होगा। अिसलिअे मैंने अुनसे साफ साफ कह दिया कि 'आपने यदि अिन दो नदियों पर कुछ भी न लिखा हो, तो आप निंदाके पात्र हैं।' सियारामशरणजीने अपने विनयसे मुझे पराजित किया। अुन्होंने कहा, 'भैयाजीने (मैथिलीशरणजीने) अिन नदियोंके बारेमें गाने हुअे

यहां है कि सौंदर्यमें बुंदेलखंडकी ये नदियां गंगा-यमुनासे भी बढ़कर हैं। अिसलिअे मेरे बड़े भाअी तो आपके अपालंभमें नहीं आयेंगे। हां, मैंने खुद अिन नदियोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा है। मगर मैं यहां अभी बूढ़ा हो गया हूं। मुझे तो अभी बहुत लिखना है।"

अुनसे मालूम हुआ कि धसानका मूल नाम था दशार्ण। और यह तो मुझे मालूम था कि बेतवाका नाम था वेत्रवती। दशार्ण = दशाअण = दशाण = धसान। अितना ध्यानमें आनेके बाद धसान नामके बारेमें मैंने जो अूटपटांग कल्पना की थी, वह पत्तोंके महलकी तरह गिर पड़ी। किसी तरहके सबूतके बिना केवल कल्पनाके सहारे खोज करनेवाले मेरे जैसे कअी लोग अिस देशमें होंगे। अुनकी गलती बतानेके लिअे जो जानकारी चाहिये अुसके अभावमें अैसी निरी कल्पनायें भी अितिहासके नामसे रूढ़ हो जाती हैं, और आगे जाकर रूढ़ियोंके अभिमानी लोग जोशसे साथ अैसी कल्पनाओंसे भी चिपटे रहते हैं।

मैंने अेक दफा 'वती-मती' वाली नदियोंके नाम अिकट्ठा किये थे। अिसीलिअे वेत्रवती ध्यानमें रही थी। जिसके किनारे बेंत अुगते हैं वह है वेत्रवती। दृषद्वती (पथरीली), सरस्वती, गोमती, हाथमती, बाघमती, अैरावती, साबरमती, वेगमती, 'माहिष्मती (?), चर्मण्वती (चंबल), भोगवती (?), शरावती। अितनी नदियां तो आज याद आती हैं। और भी खोजने पर दूसरी पांच-दस नदियां मिल जायेंगी। महाभारतमें जहां तीर्थयात्राका प्रकरण आता है, वहां कअी नाम अेकसाथ बताये गये हैं। परशुराम, विश्वामित्र, बलराम, नारद, दत्तात्रेय, व्यास, वाल्मीकि, सूत, शौनक आदि प्राचीन युगके भूगोलवेत्ताओंसे यदि पूछेंगे, तो वे काफी नाम बतायेंगे या पैदा कर लेंगे। हमारी नदियोंके नामोंके पीछे रही जानकारी, कल्पना, काव्य और भक्तिके बारेमें आज तक भी किसीने खोज नहीं की है। फिर भारतीय जीवन भला फिरसे समृद्ध किस तरह हो?

नवंबर, १९३९

४३

निशीथ-यात्रा

जबलपुरके समीप भेड़ाघाटके पास नर्मदाके प्रवाहकी रक्षा करनेवाले संगमरमरके पहाड़ हम रात्रिके समय देख आयेंगे, यह खयाल शायद मध्यरात्रिके स्वप्नमें भी न आता। किन्तु 'सबिन्दु सिन्धु सुस्खलत् तरंगभंग-रंजितम्' कहकर जिसका वर्णन हम किसी समय सध्या-वदनके साथ गाते थे अुस शर्मदा नर्मदाके दर्शन करनेके लिअे यह अेक सुन्दर काव्यमय स्थान होगा, अैसी अस्पष्ट कल्पना मनके किसी कोनेमें पड़ी हुअी थी।

हिमालयकी यात्राके समय मैं रास्तेमें जबलपुर ठहरा था। किंतु अुस समय भेड़ाघाटकी नर्मदाका स्मरण तक नहीं हुआ था। गंगोत्री और अुसके रास्तेमें आनेवाले श्रीनगरके चिन्तनके सामने नर्मदाका स्मरण कैसे होता? नर्मदा-तटकी गहननाके महादेवको छोड़कर मैं गंगोत्रीकी यात्राके लिअे चल पड़ा था।

फैजपुर काग्रेसके समय हमने केवल अजंता जानेका सोचा था। किन्तु रेलवे कंपनीने झोन टिकट निकाले और हममें अिधर-अुधर अधिक घूमनेकी वृत्ति जगा दी। जबलपुरकी यात्रा यदि मुफ्तमें होती है, तो क्या न हो जायें? — यों सोचकर हम चल पड़े। यह सच था कि हम किसी खास कामके लिअे जबलपुर नहीं जा रहे थे, मगर अेक दिन सिर्फ मौज करना है, अैसी भी हमारी वृत्ति नहीं थी।

देशके अलग अलग धार्मिक स्थल, अैतिहासिक स्थान, कला-मदिर और निसर्ग-रमणीय दृश्य देखनेको मैंने कभी निरी नयन-तृप्ति नहीं माना है। मदिरमें जाकर जिस प्रकार हम देवताका दर्शन करते हैं, अुसी प्रकार भूमाताकी अिन विविध विभूतियोंके दर्शनके लिअे मैं आया हूँ, अिसी भावनासे मैंने अब तक की अपनी सारी यात्रायें की हैं। अपने देशकी रग-रगकी जानकारी मुझको होनी चाहिये और अिस जानकारीके साथ साथ भक्तिमें भी वृद्धि होनी चाहिये, अैसी मेरी अपेक्षा रहती है।

ज्यों ज्यों मैं यात्रा करता हूं और अभिमान तथा प्रेममें हृदयको भर देनेवाले दृश्य देखता हूं, त्यों त्यों अेक चीज मुझे बेचैन किया करती है यह मेरा अितना सुन्दर और भव्य देश परतंत्र है, जिसके लिअे मैं जिम्मेदार हूं। पारतन्त्र्यका लांछन लेकर मैं अिस अद्भुत-रम्य देशकी भक्ति भी किस प्रकार कर सकता हूं? क्या मैं वह सकता हूं कि यह देश मेरा ही है? मैं देखता हूं अिसमें तो कोअी संदेह नहीं है, क्योंकि अुसने मुझे पैदा किया है, वही मेरा पालन-पोषण अखण्ड रूपसे कर रहा है; वही मुझे रहनेके लिअे स्थान, खानेके लिअे अन्न और आरामके लिअे आश्रय देता है, अपने बालबच्चोंको मैं अुसीके सहारे, निश्चित होकर छोड सकता हूं, जिस अुज्ज्वल अितिहासके कारण मैं संसारमें सिर अूंचा करके चलता हूं, वह आर्योंका प्राचीन अितिहास भी अिसी देशने मुझे दिया है। अिस प्रकार मैंने अपना सर्वस्व देशसे ही पाया है। किन्तु यह देश मेरा है, यों कहनेके लिअे मैंने देशके लिअे क्या किया है? मेरा जन्म हुआ अुसके साथ ही मैं देशका बना, मगर यों कहनेके पहले कि 'यह देश मेरा है' मुझे जिंदगी भर मेहनत करके अिसके लिअे खप जाना चाहिये।

मनमें अिस तरहके विचारोंका आवर्त अुठने पर मैं क्षण भर बेचैन हो जाता हूं, किन्तु अिसी अस्वस्थतामें से धर्मनिष्ठा पैदा होकर दृढ़ बनती है। अिसी बेचैनीके कारण स्वराज्यका संकल्प बलवान होता है और देशके लिअे — देशमें असह्य कष्ट अुठानेवाले गरीबोंके लिअे — यत्किंचित् भी कष्ट सहनेका जब मौका मिलता है, तब मुझे लगता है कि मैं अुऋण हुआ हूं। और ज्यों ज्यों यात्रा करता रहता हूं, त्यों त्यों मनमें नयी शक्तिका संचार होने लगता है। युवकोंसे मैं हमेशा कहता आया हूं कि 'स्वदेशमें घूमकर देशके और देशके लोगोंके दर्शन करनेका तुम अेक भी मौका मत छोड़ना।'

अिस प्रकारकी अुत्कट भावनाका अुदय जब हृदयमें होता है, तब अैसा लगता स्वाभाविक है कि पासमें कोअी न हो तो अच्छा। अपनी नाजुक भावनाओंको शब्दोंमें लिखकर लोगोंके सामने रखना अुतना कठिन नहीं है। किन्तु अिन भावनाओंसे बेचैन होने पर हमारी

जो विह्वल दशा हो जाती है और हम मतवाले बन जाते हैं, अुसे कोअी देखे यह हमें सहन नहीं होता। अिसी कारण मैं जब जब भक्ति-यात्राके लिअे नत पडता हूं, तब तब मुझे लगता है कि मैं अकेला ही जाअूं और अेकान्तमें ही प्रकृतिका अनुनय करूं तो अच्छा होगा।

किन्तु मेरी जाति है कौवेकी। अकेले अकेले सेवन किया हुआ कुछ भी मुझे हजम नहीं होता। अिसलिअे अनिच्छासे ही क्यों न हो, मैं सब लोगोंसे कह देता हूं मुझसे अब रहा नहीं जाता मैं तो यह चला। लिहाजा कोअी न कोअी मेरे साथ हो ही लेता है। लगातार लगता है कि अिनके साथ जानेसे हमारे चमचक्षुओंको अिनके प्रेम-चक्षुओंकी मदद मिलेगी, और अपना देश हम चार आंखोंसे जी भरकर देख सकेंगे। मेरी अिस स्थितिका वर्णन मैंने अपने अेक मित्रको जिक्र कर कहा था कि मैं खोजता हूं अेकान्त किन्तु पाता हूं लोकान्त।'

आखिर अिस सबका नतीजा यह होता है कि मुझे समुदायके साथ यात्रा करनी पड़ती है और अिसलिअे अपनी अुछलनेवाली मनोवृत्तियोंको दबा देना पड़ता है। और अेक ओर मनके अन्तर्मुख बनकर चिंतन-मग्न होने पर भी दूसरी ओर मुझे बाहरके लोगोंके वायुमंडलके अनुकूल बनना पड़ता है।

यात्रामें हो या किसी महत्त्वके काममें हो, मंगलाचरणमें कोअी विघ्न न आये तो मुझे कुछ खोया-खोया-सा मालूम होता है। निर्विघ्न प्रवृत्ति यदि मैंने अपनी स्वप्नसृष्टिमें भी न देखी हो, तो जागृतिमें भला वह कहांसे आयेगी? बड़े अुत्साहके साथ हम भुसावलसे रवाना हुअे और अिटारसीमें ही पहली ठोकर खाअी। पहलेसे सूचना देने पर भी अिटारसीके स्टेशन-मास्टर गाड़ीमें हमारे लिअे कोअी प्रबंध नहीं कर सके थे। नया डिब्बा जोड़ दें तो अुसे खींचनेकी ताकत अेंजिनमें नहीं थी, क्योंकि अिटारसीके पहले ही गाड़ीमें ज्यादा डिब्बे जोड़े गये थे और सब डिब्बे ठसाठस भरे हुअे थे।

क्या अब यहींसे वापस लौटना पड़ेगा? कितनी निराशा! सोचा, मनको दूसरी दिशामें मोड़ दें और दिलजोअीके लिअे यहांसे होशंगाबाद तक मोटरमें जाकर नर्मदामाताके दर्शन कर लें और फैजपुरकी ओर

यहां आकर हम बड़ी दुविधामें पड़े। निकटमें ही अेक टेकरी पर महादेवजीके मंदिरको घेरकर चौसठ योगिनियां तपस्या करती हुआी बैठी थीं। तपस्या करते करते अहल्याकी तरह वे शिलारूप बन गआी होंगी। रामके चरणोंका स्पर्श होनेके बजाय मुसलमानोंकी लाठियोंका स्पर्श होनेके कारण अिनमें से बहुत-सी योगिनियोंकी काफी दुर्दशा हुआी है। अिस टेकरीके अुस पार धुवांधार नामक अेक मशहूर प्रपात है। अुसे देखने जायें या संगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे नौका-विहार करें?

विहार करनेके लिअे नौकायें केवल दो ही थीं। अिसलिअे हम सब किसी अेक बात पर अेकमत हो जायं जिसमें लाभ नहीं था। लिहाजा हमने दो टोलियां बनायीं। यह स्थान संगमरमरकी शिलाओंके लिअे मशहूर था, अिसलिअे बड़ी टोलीने अुस ओर जाना पसन्द किया। अिसमें शक नहीं कि थोड़ा अुजियाला जो बचा था अुसीमें यह स्थान देख लेनेमें अक्लमंदी थी। हमारी दूसरी टोलीने योगिनियोंका दर्शन करके धुवांधार जानेका निर्णय किया और हम सीढ़ियां चढ़ने लगे। सब योगिनियोंके दर्शन हमने अपने हाथकी बिजलीकी अेक छोटी-सी मशालकी मददसे किये। मूर्तियां सुन्दर ढंगसे बनाअी हुआी और कलापूर्ण लगीं। मंदिरके भीतर विराजमान महादेव तथा अुनका नंदी भी देखने लायक हैं।

मनमें विचार आया कि जब किसी लड़ाअीमें हम घायल होते हैं, तब तुरन्त अिलाज करके हम अच्छे हो जाते हैं। गांवमें रोगसे किसीकी मौत होती है, तो हम तुरन्त अुसे जला देते या दफना देते हैं। जब जमीन पर दूध गिरता है तब हम अुसके धब्बोंका अमंगलकारी समझकर अुन्हें जमीन पर रहने नहीं देते, अुन्हें पोंछ डालते हैं। अैसा मनुष्य-स्वभाव होते पर भी हमने खंडित मूर्तियां ज्यों-की-त्यों क्यों रहने दीं? क्या धर्मान्ध मुसलमानोंके अत्याचारोंका स्मरण करानेके लिअे? या खुद अपनी कायरता और सामाजिक गैर-जिम्मेदारीको स्वीकार करनेके लिअे? अप्रतिम कलामूर्तियां बनानेकी कला यदि देशमें से नष्ट हो गअी होती, तो अिस प्रकारके प्राचीन अवशेषोंके नमूनोंको सुरक्षित रखना

अुचित माना जाता। किन्तु मैंने देखा है कि आबूमें देलवाड़ेके मंदिरोंमें संगमरमरकी कारीगरी करनेवाले कुटुंबोंको हमेशाके लिअे नियुक्त कर लिया गया है, मंदिरके किसी हिस्सेमें जब कुछ खंडित होता है तो तुरन्त अुसकी मरम्मत करके अुसको पहलेकी तरह बना दिया जाता है। अिसी तरह लाहौरके अजायबघरमें भी मैंने देखा है कि मूर्तियोंका कोअी कुशल सर्जन घायल मूर्तियोंके हाथ, पैर नाक, ओठ आदिको सीमेन्टकी मददसे अिस ढंगसे ठीक कर देता है कि किसीको पता तक न चले। मगर हमारे मंदिर योग्य और पुरुषार्थी लोगोंके हाथमें हैं ही कहां? हमारे समाजकी स्थिति लावारिस ढोरों जैसी है।

योगिनियोंके आशीर्वाद लेकर हम टेकरीसे नीचे अुतरने लगे। अब भी कुछ प्रकाश बाकी था। अिसलिअे हम हसते-खेलते किन्तु द्रुत गतिसे धुआंधारकी खोज करने निकल पड़े। जो गायें आगे दौड़ रहे थे अुनकी लगाम खींचनेका और जो पीछे पड़ रहे थे अुन्हें चाबुक लगानेका काम अेक ही जैसका करना पड़ता था। मेरा अनुभव है कि नयी आजादीसे बहकनेवाले बछड़ों या भेड़ोंको ज्यों ज्यों पास लानेकी कोशिश की जाती है, त्यों त्यों सबको छोड़कर दूर दूर भागनेमें अुन्हें बड़ी बहादुरी मालूम होती है, फिर अुन पर रुष्ट होकर अुन्हें वापस लानेमें होनेवाले कष्टके कारण सबपतिको भी अपना महत्त्व बढ़ा हुआ-सा मालूम होता है। परस्पर खींचातानीके कष्टोंका आनन्द दोनोंसे छोड़ा नहीं जाता।

जहां भी हमारी नजर जाती, सफेद पत्थर ही पत्थर नजर आते थे। जबलपुरका ही यह प्रदेश है! किन्तु अेक जगह तो हमें संग-जराहतका ढेर ही मिल गया। संग-जराहत अेक अद्‌भुत चीज है। वह पत्थर जरूर है, मगर बिलकुल चिकना। मानो पेन्सिलका सीसा। छुटपनमें अेक बार मुझे संग्रहणी हो गअी थी। अुस समय अिस संग-जराहतका चूरा छानकर मावेकी बरफीमें मिलाकर मुझे खिलाया गया था। तबसे अुस पर मेरी श्रद्धा जमी हुअी है। आंवकी वजहसे जब आंतोंमें घाव हो जाते हैं तब अुन्हें भरनेमें यह पूरा मदद करता है; और घाव भरनेके बाद वह अपने-आप पेटके बाहर निकल जाता

है। पत्थरका चूरा हजम थोडे ही हो सकता है ? पेटमें रहे तो रोग हो जाय। मगर वह अपना काम पूरा होते ही अुपकारके वचनोंकी वसूली करनेके लिअे भी अधिक दिन रहनेकी गलती नहीं करता।

अब तो चारों ओर काफी अंधेरा छा गया था। सर्वत्र भयानक अेकांत था। हमारी टोली अिस अेकांतको चीरती हुअी आगे चल रही थी, मानो अनन्त समुद्रमें कोअी नाव चल रही हो। हवा कुछ रुधी हुअी-सी लगती थी। कब पानी गिरेगा, कहा नहीं जा सकता था। अूपर आकाशमें देखा तो काले काले बादलोंके बीच अेक ओर सिर्फ अेक तारका चमक रही थी। चमकती क्या थी ? बेचारी बड़े दुःखके साथ झांक रही थी, मानो किसी बड़े मकानकी खिडकीसे कोअी अेकाकी वृद्धा निर्जन रास्ते पर देख रही हो। हम आगे बढ़े। अब जमीन भी अच्छी खासी गीली थी। बीच-बीचमें पानी और कीचड़के गड्ढे भी आते थे।

अंधेरा खूब बढ गया। गड्ढोंमें से रास्ता निकालना कठिन-सा मालूम होने लगा। आगे जानेका अुत्साह बहुत कम हो गया। अैसे कठिन स्थान पर अंधेरी रातके समय हम यहां तक आये, अिसीको यात्राका आनंद मानकर हमने वापस लौटनेका विचार किया। मनमें डर भी पैदा हुआ — अैसे निर्जन और भयावने स्थानमें कहीं चोरोंसे मुलाकात न हो जाय!

कुछ लोगोंको अकेले यात्रा करते समय चोर-डाकुओंका डर मालूम होता है। जब समुदाय बड़ा होता है, तब यह डर मानो सबके बीच बंट जाता है और हरअेकके हिस्से बहुत कम आता है। फिर अेक-दूसरेके सहारे हरअेक अपना अपना डर मन ही मनमें दबा भी सकता है। कुछ लोगोंका अिससे बिलकुल अुलटा होता है। अकेले होने पर अुन्हें अपनी कोअी परवाह नहीं होती। अपना कुछ भी हो जाय। मार-पीटका प्रसंग आ जाये तो जी-भर लड़ते हुअे खानेके साथ सारे बदन पर मार खानेमें विशेष नुकसान नहीं लगता। और यदि अहिंसक वृत्ति हो तो बिना गुस्सा किये और बिना डर कर भारी मार खाने रहनेमें अनोखा आनन्द आता है। सत्याग्रही

वृत्तिसे पायी हुई मारका असर मारनेवाले पर ही होता है; क्योंकि अहिंसक मनुष्यको मारनेवालेकी अपने ही मनके सामने प्रतिक्षण फजीहत होती है।

मगर जब बड़ी टोलीके साथ होते हैं, तब भरोसा नहीं होता कि कौन किस प्रकार व्यवहार करेगा। बच्चे और औरतें यदि साथ हों तब कुछ अलग ही ढंगसे सोचना पड़ता है। अपने-आपको खतरेमें डालनेमें जो मजा आता है वह अैसे अवसरों पर अनुभव नहीं होता। सभी सत्याग्रही हों तो बात अलग है। किन्तु बड़ी खिचड़ी-टोली साथमें लेकर खतरेके स्थान पर कभी भी नहीं जाना चाहिये। श्रीकृष्णके कुटुम्ब-कबीलेको ले जानेवाले वीर अर्जुनकी भी क्या दशा हुआी थी, यह तो हम पुराणोंमें पढ़ते ही हैं।

अैसे अंधेरेमें शिलाओंके बीचसे यहां तक जायें और वहां क्या देखनेको मिलेगा, अिसकी कुछ कल्पना ही नहीं थी। अतः मनमें आया, यहींसे वापस लौटना अच्छा होगा। अितनेमें दाहिनी ओर अेक छोटी-सी टूटी-फूटी कुटिया दीख पड़ी। अैसे निर्जन स्थानमें चोर भी चोरी काहेकी करेंगे? मगर चोरी करके थकने पर शांति और निश्चिन्तताके साथ बैठनेके लिअे यह स्थान बहुत सुन्दर है। चोरोंको ढूंढने निकलने-वाले लोगोंको यहां तक आनेका खयाल भी नहीं आयेगा। तो क्या अिस कुटियामें निरंजनका ध्यान करनेवाला कोअी अलख-अगोचर साधु रहता होगा? हम कुटियाके नजदीक गये। अंदर कोअी नहीं था! तब तो यह कुटिया साधुकी नहीं हो सकती। फकीर दिनभर कहीं भी घूमता रहे; रातको अपनी मसजिदमें आना वह कभी नहीं भूलेगा। और बावाजी रात बाहर कहीं बितानेके बजाय अपनी सहचरी धूनीके सम्पर्कमें ही बितायेंगे।

तब यह कुटिया मछलियां मारनेवाले किसी मच्छीमारकी होगी। किसीकी भी हो, हमें अिससे क्या मतलब? आजकी रात हमें यहां थोड़ी बितानी है? जरा आगे जाने पर यकीन हुआ कि रास्ता ठीक न होनेसे अंधेरेमें अिससे आगे जाना खतरा मोल लेना है। अतः मैंने हुक्म छोड़ा: 'चलो, अब वापस लौटें।' अितनेमें मानो सत्व-परीक्षा

शिला पर बैठकर प्रार्थना करें।' प्रार्थनाके लिअे अितना पवित्र स्थान और अितना शुभ समय हमेशा नहीं मिलता। सब तुरन्त बैठ गये और 'य ब्रह्मा वरुणेन्द्र ' की ध्वनि धुवाधारके कानों पर पड़ी।

जिस प्रकार भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न राग गाये जाते हैं, अुसी प्रकार भिन्न भिन्न स्थलों पर मुझे भिन्न भिन्न स्तोत्र सूझते हैं। हिन्दुस्तानके दक्षिणमें कन्याकुमारी मैं तीन बार गया तब मुझे गीताका दसवां और ग्यारहवां अध्याय सूझा। विभूतियोग और विश्व-दर्शनयोगका अुत्कट पाठ करनेके लिअे वही अुचित स्थान था। और जब सीलोनके मध्यभागमें — अनुराधापुरके समीप — महेन्द्र पर्वतके शिखर पर मध्यास्तके समय पहुंचा था, तब पाटलिपुत्रसे आकाशमार्ग द्वारा आकर अिस शिखर पर अुतरे हुअे महेन्द्रका स्मरण करके मैंने ओशावास्योपनिषद् गाया था। दैव जाने अनात्मवादी बुद्ध-शिष्योंकी आत्माको ओशोपनिषद् सुनकर कैसा लगा होगा! और पूनासे जब शिवनेरी गया, तब मसजिदकी अूंची दीवारोंकी सीढ़ियां चढ़कर दूरसे श्री शिवाजी महाराजके बाल्यकालकी क्रीडाभूमिके दर्शन करते समय न मालूम क्यों माण्डुक्योपनिषद् गाना मुझे ठीक लगा था। यह अुपनिषद् श्रीसमर्थको प्रिय था, अैसा माननेका कोअी सबूत नहीं है। फिर भी 'नान्तःप्रज्ञं न बहिःप्रज्ञं नोभयतःप्रज्ञं न प्रज्ञानघनम् न प्रज्ञं नाप्रज्ञम्।' यह कंडिका बोलते समय मैं शिव-कालीन महाराष्ट्रके साथ तथा आत्मारामकी अभेद-भक्ति करनेवाले साधु-सन्तोंके साथ बिलकुल अेकरूप हो गया था। अुस समय मनमें यह भाव अुठा था — 'मैं नहीं चाहता यह अलग व्यक्तित्व, अेकरूप सर्वरूप हो जाय अिस समस्त दृश्यके साथ।' धुवाधारकी मस्ती तथा अुसके तुषारोंका हास्य देखकर यहां स्थितप्रज्ञके श्लोक गाना ठीक लगा।

अुत्कट भावनाओंका सेवन लम्बे समय तक करते रहना जरूरी नहीं है। अेक आलापमें अेक अखिल भावसृष्टिको समाया जा सकता है। अेक जलबिंदुमें प्रचण्ड सूर्य भी प्रतिबिम्बित हो सकता है। अेक दीपशलाकासे युगोंका अज्ञान हटाया जा सकता है। अेक क्षणमें हमने धुवाधारके वायुमण्डलको अपना बना लिया। आंखोंकी

ध्वनि कितनी अजीब होती है! धुवाधारका पान मुहसे करना असभव था। हम कुभ-सभव अगस्ति थोडे ही थे! मगर हमारी दो नन्ही पुतलियोंने अखड बहनेवाले अिस प्रपातका आ-कठ पान किया। मुझे लगता है कि अैसे दृक्-पानका 'आ-कठ' कहनेके बदले 'आ-पल्क' कहना चाहिये। हम सबने अपनी अपनी आखोंमें यह लूट अेक क्षणमें भर ली और वापस लौटे। हमारा यह भूतोंका साथ तरह तरहकी बातें करता हुआ तथा गर्जना करता हुआ मोटरके अड्डे पर आ पहुचा।

यहा भेडाघाटकी सगमरमरकी शिलायें देखकर लौटी हुअी टोली हमसे मिली। अेक-दूसरेके अनुभवोंका आदान-प्रदान करके हमने अिस टोलीको बुजुर्गाना सलाह दी कि 'अिस समय धुवाधार जाना बेकार है। आप तैल-वाहनमें बैठकर सीधे जबलपुर चले जािये। आप जहा हो आये हैं वहा थोडा नौका-विहार करके हम तुरन्त लौट आयेंगे।' मालूम नही, हमारी यह सलाह अुन्हें पसद आयी या नही। मगर अुसको माने सिवा अुनके लिअे कोअी चारा नहीं था।

रास्तेकी ओरसे अुतरते हुअे और अधेरेमें लडखडाते हुअे हम प्रवाहके किनारे तक पहुचे और दो टोलियोंमें बटकर दो नावोंमें चढ बैठे। हमारी नाव आगे बढी। सर्वत्र शातिका ही साम्राज्य था और अुसकी गहराअीकी माना थाह लगानेके लिअे बीच बीचमें हमारी नावकी पतवारे तालबद्ध आवाज करती थी। चद्र अपनी टिमटिमाती मशाल सिर पर रखकर मानो यह सुझा रहा था 'आसपासकी यह शोभा दिनके समय कैसी मालूम होती होगी अिसकी कल्पना कर लीजिये।' कभी स्थानो पर बिलकुल अधेरा था। बीच बीचमें चादनीके धब्बे दिखाअी पडते थे। आकाश निरभ्र न था। अिसलिअे चादनी छाछके समान पतली बन गअी थी। आकाशके बादल बीच बीचमें मलमलके जैसे पतले दीख पडते थे, अत अुनकी ओर भी ध्यान खिच जाता था। दोनों ओर सगमरमरकी शिलायें कितनी अूची मालूम होती थी! अूची और भयावनी। मानो राक्षसोंका समूह बैठा हो! और अिन

शिलाओंके बीचमें नर्मदाका प्रवाह मोड ले लेकर अपना चक्रव्यूह रच रहा था।

अूची अूची शिलायें या पहाड जहां अेक-दूसरेके बहुत पास आ जाते हैं, वहां 'प्राचीन कालमें अेक सरदारने अपने घोडेको अेड लगाकर अिस शिखरसे सामनेके शिखर तक कुदाया था' जैसी दंतकथा चलती ही है। बंदर तो सचमुच अिस प्रकार कूदते ही हैं। यहां भी आपको अिस प्रकारकी दंतकथायें नाववालोंके मुंहसे सुननेको मिलेंगी।

यहां अिन शिलाओंके बीच कअी गुफाअें भी हैं। अिनमें ऋषि-मुनि ध्यान करनेके लिअे अवश्य रहते होंगे। और मध्ययुगमें राज-कुलोंके आपद्ग्रस्त लोग तथा स्वतंत्रताकी साधना करनेवाले देशभक्त भी यहीं आत्मरक्षाके लिअे छिपते रहे होंगे। और फिर छछूंदरोंकी तरह नावें अिन लोगोंको गुप्त रूपसे आहार, समाचार और आश्वासन पहुंचाती रहती होंगी। अिन गुफाओंको यदि वाचा होती, तो अितिहासमें जिसका जिक्र तक नहीं है, अैसा कितना ही वृत्तांत वे हमें बतातीं।

खोहके बीचोंबीच नावसे जाते हुअे हम अेक अैसे स्थान पर आ पहुंचे, जिसे शांतिका गर्भगृह कह सकते हैं। यहां हमने पतवारें बंद करवायीं, और अिस डरसे कि कहीं शांतिमें भंग न हो जाय हमने श्वास भी मंद कर दिया। प्रार्थनाके श्लोक हमने वहां गाये या नहीं, अिसका स्मरण नहीं है। किन्तु मैंने मन ही मन सोलह ऋचाओंका पुरुषसूक्त बडी श्रद्धाके साथ वहां गाया। बादमें लगा कि अितनी शांतिमें तो अपने-आप समाधि ही लगनी चाहिये। पता नहीं कितना समय नौका-विहारमें बीता। अितनेमें डब डब डब करती हुअी दूसरी नाव वहां आ पहुंची। अुसमें जो टोली थी अुसने अेक मंजुल गीत छेडा। आसपासकी खोहें अिसकी प्रतिध्वनि करें या न करें अिस दुविधामें संकोचसे अुत्तर दे रही थीं।

नाववालेने कहा, 'अब अिससे आगे जाना असंभव है; यहांसे लौटना ही चाहिये।' अतः दौडते मनको पीछे खींचकर हम बोले: 'चलो! पुनरागमनाय च!'

अब यदि जाना हो तो वर्षाके अन्तमें, चादनीके दिन देखकर, दिनरात अिस मूर्तिमन्त काव्यमें तैरते रहनेके लिअे ही जाना चाहिये। सचमुच, यह रमणीय स्थान देखकर मनने निश्चय किया कि यदि फिर कभी यहा आना न हो, तो यहासे निकलना ही नही चाहिये।

अक्तूबर, १९३७

४४

धुवांधार

अेक, दो, तीन। धुवाधार अभी अभी मैंने तीसरी बार देख लिया। धुवाधार नाम सुन्दर है। अिस नाममें ही सारा दृश्य समा जाता है। किन्तु अबकी बार अिस प्रपातको देखते देखते मनमें आया कि अिसको धारधुवा क्यो न कहू? धार गिरती है, फवारे अुडते है और तुरन्त अुसके तुषार बनकर कुहरेके बादल हवामें दौडते है। अत धारधुवा नाम ही सार्थक लगता है। मगर यह नाम चल नही सकता।

जबलपुरसे गोल गोल पत्थर तथा चमकीले तालाब देखते देखते हम नर्मदाके किनारे आ पहुचते हैं। रास्तेका दृश्य कहता है कि यह काव्यभूमि है। चारो ओर छोटे-बडे पेड खेल खेलनेके लिअे खडे है। बगलमें अेक बडा टीला टूट कर गिर पडा है। किन्तु अुसके सिर पर खडे पेड अपनी आधी जड अलग पड जाने पर भी शोकमग्न या चिंतातुर नही मालूम होते। अैसे पेडोसे जीवन-दीक्षा लेकर ही आगे बढा जा सकता है।

टीला टूटना तो है, किन्तु टूटा हुआ हिस्सा आसानीसे जमीदोज नही होता। अिस टीलेने अेक दो मीनार और अेक बडा शिखर बना लिया है जो कहते हैं कि यदि विनाशमें से भी नयी सृष्टिकी रचना न कर पायें तो हम कल्प-कवि कैसे? टीलेके अूपरसे नीचेके पत्थरो और पानीका दृश्य दृढता और तरलताके विचार अेक ही साथ

मनमें पैदा कर रहा था। पुल पार करके हम आगे आये और योगि-नियोंकी टेकरीके नीचेका कभी बार देखा हुआ सामान्य दृश्य देखा। यह दृश्य अितना गरीब है कि अुसके प्रति गुस्सा नहीं आता। यहां गरीब कारीगर पत्थरोंसे छोटी-बड़ी चीजें बनाकर बेचनेके लिअे बैठते हैं। सफेद, काले लाल, पीले आसमानी और रंगबिरंगे संग-मरमरके शिवलिंगोंकी बगलमें संग-जराहतके डिब्बे, शिवालय हाथी और अन्य छोटे-बड़े खिलौने मानो स्वयंवर रचकर खड़े रहते हैं। जिसकी नजरमें जा जब जाता है वह अुसे अुठाकर ले जाता है। आज ये खिलौने अेक आसन पर बैठे हुअे हैं। कल न मालूम कौनसा खिलौना कहां चला जायगा? कुछ तो हिन्दुस्तानके बाहर भी जायंगे। और वहां बरसों तक धुवांधारका धारावाहिक संगीत याद करके चुपके चुपके सुनायेंगे।

यहांसे धुवांधार तक पैदल जानेकी तपस्या मैंने दो बार की थी। पहली यात्रा रातके समय की थी। दूसरी सुबह स्नानके समय की थी। दोनोंका काव्य अलग ही था। आज तीसरा प्रहर पसंद किया था। अिस समय अधिक तपस्या नहीं करनी पड़ी। ब्योहार राजेन्द्र-सिंहजीने अपना तैल-वाहन (मोटर) दिया था, अतः हम लगभग धुवांधार तक बिना कष्टके पहुंच गये। संग-जराहतके खेतके पास अुतरकर, वहांकी तीन दुकानें पार करके, पत्थरोंके बीचसे होकर हम धुवांधार पहुंचे। पत्थर ज्यों ज्यों अड़चनें पैदा करते थे, त्यों त्यों चलनेका मजा बढ़ता जाता था। अैसा करते करते हम धुवांधारके पास पहुंचे।

प्रपात यानी जीवनका अध:पात। मगर यहां वैसा मालूम नहीं होता। पहली बार गये थे दिनभरमें और अंधेरेमें। आकाशके बादल चांदके खिलाफ षड्यंत्र रचकर बैठे थे। अतः चांदनी रात होते हुअे भी वहां अमावास्याकी-सी भीषणता थी। अमावास्याकी रातमें आकाशके सितारे अिस भीषणताको हलका कर अुड़ा देते हैं। मगर बादलोंके सामने अिसकी भी आशा न रही। परिणामस्वरूप अुस रातको स्वयं धुवांधारको अपनी भव्यतासे हमें प्रसन्न करना पड़ा। रातकी प्रार्थना करके हमने वह आनंद हजम किया और वापस लौटे।

दूसरी बार गये थे त्रिपुरी कांग्रेसके बाद करीब नौ-दस बजे की बढ़ती हुआी धूपके स्वागतका स्वीकार करने हुअे। धुवाधारके संपूर्ण दर्शन हम अुसी समय कर पाये थे। मार्चका महीना था। अतः पानीमें गरमीकी अनुका अकाल न था। पहाडीकी कुछ टढ़ोमेढ़ी सुन्दरी सीढ़ियां अुतरकर हमने नीचेसे धुवाधारको निरख देखा था। पानीकी वह गति और फव्वारेकी वह चंचलता चित्तको आश्चर्यकारक ढंगसे स्थिर करती थी। *पानीकी ओर अनिमिष देखते ही रहना ऐसा अनुभव होता है मानो* नवनवोन्मेषशालिनी धारायें वेगकी समाधि लगाकर खड़ी हैं। अिसी समय मैं देख सका कि वहांके संगीवाके पत्थर अूपरसे चाहे जैसे दीखते हों, लेकिन अंदरसे तो वे प्रेमका रंग मिलानेवाले (लाल रंगके) ही हैं। पानीके जोरके कारण पत्थरका अेक टुकड़ा अुड गया था और अंदरका गुलाबी लाल रंग साफ दिखाओ देने लगा था, मानो अुसे घाव पड गया हो।

धुवाधार देखनेका अच्छेसे अच्छा समय है दीपावलीका। बारिश न होनेसे रास्तेमें कहीं कीचड नहीं था। वर्षा ॠतुमें जब आते हैं तब सारा प्रदेश जलसे भरा होनेके कारण प्रपातके लिअे गुंजाअिश ही नहीं होती। जहां हृदयको हिला देनेवाला प्रपात है, वहीं वर्षा ॠतुमें सिरमें चक्कर लानेवाले भंवर दिखाओ देते होंगे। अिन भंवरोंका रुद्र स्वरूप देखनेके लिअे यदि यहां तक आया जा सकता हो, तो मैं यहां आये बिना नहीं रहूंगा। भंवर भ्रान्तिका प्रतीक है। अुसका आकर्षण कुछ अनोखा ही होता है। कभी कभी मौतको न्योता देने-वाला भी!

दीवालीके समय जलराशि सबसे अधिक पुष्ट, प्रपातकी शोभा सबसे अधिक समृद्ध, और मीठी धूपके सवनके बाद तुषारके बादलोंकी चुटकियां सबसे अधिक आह्लादक होती हैं। आजका दृश्य वैसा ही था, जैसी हमने आशा रखी थी। तुषारके बादल दूरसे ही नजर आते थे। रसोईका धुआं देखकर जिस प्रकार अतिथिको आनंद होता है, अुसी प्रकार अिस धुअेंके बादलको देखकर ही मैं कल्पना कर सका कि आज किस प्रकारका आतिथ्य मिलनेवाला है। धारधुवा जैसा प्रपात

जब देखनेके लिअे जाते हैं, तब वहां बनाया हुआ पटियेका कामचलाअू छोटा पुल भी कलापूर्ण और आतिथ्यशील मालूम होने लगता है। हम परिचित किनारे पर जाकर बैठे ही थे कि स्नेहार्द्र पवनने तुषारकी अेक फुहार हमारी ओर भेजकर कहा, 'स्वागतम्', 'सुस्वागतम्'! अेक क्षणमें अंदर हमारा सारा श्रम-स्वेद अुतर गया। हम ताजे हो गये और ताजी आंखोंसे धुवाधारको देखने लगे।

धुवाधार यानी पत्थरोंके विस्तारमें बनी हुआी अर्धचंद्राकार घाटी। अुसमें से जब पानीका जत्था नीचे कूदता है तब बीचमें जो कांचके जैसा हरा रंग दीख पड़ता है वह जहरके समान डर पैदा करता है। अुसकी बाआीं ओर यानी हमारी दाआीं ओरकी शिला हाथीके सिरकी तरह आगे निकली हुआी है। अुस परसे जब पानी नीचे गिरता है तब मालूम होता है मानो असंख्य हीरोंके हार अेक अेक सीढ़ी परसे कूदते-कूदते अेक-दूसरेके साथ होड़ लगा रहे हैं। ज्यों ज्यों वे कूदते जाते हैं त्यों त्यों हंसते जाते हैं, और पानीको पीस पीसकर अुसमें से सफेद रंग तैयार करते जाते हैं। बीचका मुख्य प्रपात घाटीमें गिरते ही अितने जोरोंसे अूपर अुछलता है कि आतिशबाजीके बाणोंको भी अुससे ओीर्ष्या हो सकती है। अेक फव्वारा अूपर अुडकर जरा शिथिल पड़ता है कि अितनेमें दूसरे फव्वारे नये जोरसे अुसके पीछे पीछे आकर और धक्का देकर अुसे तोड़ डालते हैं और फिर अुसे जलरूप पृथ्वीके आकर्षणको भूलकर धुअेंके रूपमें व्योम-विहार शुरू कर देते हैं। ये तुषार जरा अूपर आते हैं कि पवनके झोंके अुन्हें अुड़ाते अुड़ाते चारों ओर फैला देते हैं। धुअेंकी ये तरंगें जब हवामें हल्के-गाढ़े रूपमें दौड़ती हैं, तब बादलके अत्यन्त सुन्दर चेहरे दिखाअी देते हैं।

और नीचे! नीचेके पानीकी मस्तीका वर्णन तो हो ही नहीं सकता। पानी मानो अद्वैतानंदमें फिसल पड़ा। जितना नीचे गिरा, अुतना ही अूपर अुठा। अुसने हरे रंगमें से सफेद फेन पैदा किया और जीमें आया वैसा विहार किया। अिस अपूर्व आनंदको याद करके नीचेका पानी बार बार अुभर आता था। धोंसीघाट परके सावनके पानीकी अुपमा यदि अरसिक न होती तो नीचेके पानीके अुभारकी तुलना मैं

अुगीसे करता। मगर धोंगीके गावुनका पानी गदा होता है। अुसमें गति और मस्ती नही होती, बेपरवाही और ताडव भी नही होता। और न हास्य फीका पडते ही चेहरे पर फिरसे निर्मल भाव धारण करनेकी कला अुसमें पारा होती है। यहाका पानी देखकर धोंगीघाटका स्मरण ही क्या हुआ? अुसमें किसी प्रकारका औचित्य ही नही था!

मनुष्य यदि समाधिकी मस्ती चाहता हो तो अुसे यहा आना चाहिये। अुसे किसी भी कारणसे निराश नही होना पडेगा।

अिस ओरके (दायें) टीलेकी दो सीढिया अबकी बार मैं फिर अुतरा। अिस बार यहा अुपनिषद् सूझा। अूपर सूरज तप रहा था और मैं गा रहा था —'पूषन्नेकर्षे! यम! सूर्य! प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्, समूह तेजो।' जब पाठका अत करीब आया और मैं बोला 'ॐ क्रतो स्मर, कृत स्मर।' तब यकायक तीन-चार सालका मेरा सारा जीवन अेकसाथ अिस जीवन-धाराके सामने खडा हुआ और मुझे लगा मानो मैं अपना जीवन अिस मस्त जीवनकी कसौटी पर कस रहा हू और यह देखकर कि वह पूरी तरह खरा अुतर नही रहा है, परेशान हो रहा हू। दूसरे ही क्षण अिन तीन वर्षोकी स्मृतिके भी तुषार बनकर आकाशमें अुड गये और मैं प्रपातके साथ अेकरूप हो गया। सचमुच यह प्रपात पूर्ण है। और मैं भी अिस पूर्णका ही अेक अश हू, अत. तत्वत पूर्ण हू। हम दोनो वि-सदृश नही है, अेक ही परम तत्त्वकी छोटी-बडी विभूतिया है। यह भान जाग्रत होते ही चित्त शात हुआ और मैं अूपर आया।

चि० सरोजिनी भी यह सारा दृश्य अुत्कट नयनोसे अघाकर पी रही थी। अिस सारे आनदको किस तरह समझें, किस तरह हजम करें और किस तरह व्यक्त करें, अिस बातकी मीठी परेशानी अुसकी आखोमें दिखाओी दे रही थी।

यहासे तुरन्त लौटकर चौसठ योगिनियोके दर्शन करने थे, नर्मदा-प्रवाहके रक्षक सफेद, पीले, नीले पहाड देखने थे। अत बहू जिस प्रकार पीहरसे ससुराल जाते समय दोनो ओरके सुख-दु खके

मिश्रित भाव अनुभव करती हुई जाती है, असी प्रकार धुवाधारको हार्दिक प्रणाम करके हम वापस लौटे।

हिन्दुस्तानमें अिस प्रकारके अनेक प्रपात अखंड रूपमें बहते रहते हैं और मनुष्यको भव्यताके तथा अुन्मत्त अवस्थाके सबक सिखाते रहते हैं। हजारों साल हुअे — लाखों नहीं हुअे अिसका विश्वास नहीं है — धुवाधार अिसी तरह सतत गिरता रहा है। श्रीरामचन्द्रजी यहां आये होंगे। विश्वामित्र और वसिष्ठ यहां नहाये होंगे। चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्तके सैनिकोंने यहां आकर जल-विहार किया होगा। श्री शंकराचार्यने यहां बैठकर अपने स्तोत्रोंका सर्जन किया होगा। कलचुरि तथा वाकाटक वंशके वीरोंने अिसी पानीमें अपने घावोंको धोया होगा और अहल्यादेवीने यहीं बैठकर चौसठ योगिनियोंका स्मारक बनानेका संकल्प किया होगा। और भविष्यकालमें धुवाधारके किनारे क्या क्या होगा, कौन बता सकता है? खुद धुवाधारको ही यह मालूम नहीं है। वह तो सतत गिरता रहता है और तुषारोंके रूपमें अुड़ता रहता है।

नवबर, १९३९

४५

शिवनाथ और ओब

कलकत्ता आते और जाते समय अनेक नदियोंसे मुलाकात होती है। अिस प्रदेशका अितिहास मुझे मालूम नहीं है, अिसकी शर्म आती है। यहांके लोग कितने सरल और भले मालूम होते हैं! अुन्होंने यदि मनुष्य-संहारकी कला हस्तगत की होती, तो अुनका नाम अितिहासमें अमर हो जाता। कुछ लोग मरकर अमर होते हैं। कुछ लोग मारनेवालोंके रूपमें अमर होते हैं। मलिक काफूर, काला पहाड़ आदि दूसरी कोटिके लोग हैं।

अिन नदियोंके किनारे लड़ाअियां हुअी हों तो मुझे मालूम नहीं। अिसलिअे मेरी दृष्टिसे अिन नदियोंका जल फिलहाल तो विशेष पवित्र है।

चर्मण्वतीने यज्ञ-पशुओंके खूनका लाल रंग धारण किया। शोण और गंगाने सम्राटोंका महत्त्वाकांक्षी रक्त हजम किया। अिन नदियोंने भी वैसा ही किया हो तो कोअी आश्चर्य नही। मगर जब तक मुझे मालूम नही है, तब तक अिस अनिश्चयका लाभ मैं अुन्हे देता हू।

किन्तु अिन नदियोंके किनारे कअी साधुओंने तप अवश्य किया होगा और कृतज्ञतापूर्वक अुनके स्तोत्र भी गाये होंगे। यह भी मुझे मालूम नहीं है। फिर भी मैं अपनेको भारतवासी कहता हू!

* * *

अेक बार मैं द्रुग गया था तब शिवनाथ नदीका मुझे थोडा परिचय हुआ था। गोंड भील आदि पर्वतीय जातियोंकी वह माता है। सारे छत्तीसगढकी तो यह स्तन्यदायिनी है। अुसकी करुण कथा* चित्तको गमगीन करनेवाली है। पुण्य-सलिला नदीकी कहानी क्या अैसी होती है? किन्तु नदी बेचारी क्या करे? विजयी आर्योंने यदि अुसकी कथा गढी होती तो अुसमें अुल्लासका तत्त्व मिल जाता। यह तो हारी हुअी, दबी हुअी और अुलझनमें पडी हुअी आदिम-निवासियोंकी जातिके संस्मरणोंके साथ बहनेवाली नदी है! अुसकी कहानिया तो वैसी ही गमगीनी-भरी होंगी।

कलकत्तेके रास्ते पर शिवनाथ नदी बार बार मिलती है और कहती है "राजाओंके और साधुओंके अितिहासमें तुम संतोष मत मानना। विजेताओंके और सम्राटोंके अितिहासमें तुम्हें लोक-हृदय नही मिलेगा। ब्राह्मण और श्रमण मुल्ला और मिशनरी, किसीने भी जिनका दुःख नही जाना अैसे पहाडी लोगोंके दुःख-दर्दका अध्ययन करनेकी दीक्षा मैं तुम्हे दे रही हू। क्या यह दीक्षा लेनेका साहस तुममें है?'

हिन्दुस्तानकी मूक जनताको वाचाल अेकता देनेके हेतुसे मैं हिन्दुस्तानीका प्रचार कर रहा हू। अिसी कामके सिलसिलेमें अभी मैं पूना हो आया। अिसी कामके लिअे अब रामगढ जा रहा हू। वहाकी कांग्रेसमें तमाम प्रान्तोंके लोग आयेंगे। गांधीजीके आग्रहके कारण कांग्रेसके

* देखिये 'दुर्दैवी शिवनाथ'

अधिवेशन अब देहातोंमें होने लगे हैं। यह सब ठीक है। मगर क्या रामगढ़में भी ये पर्वतीय लोग आयेंगे? बिहारके 'सान्याल' और 'हो' शायद आयेंगे। किन्तु पता नहीं शिस शिवनाथके पुत्र आयेंगे या नहीं।

* * *

आज सुबहसे अनेक नदियां देखीं। लम्बे लम्बे और चौड़े पत्थरोंवाली नदी भी देखी और कीचड़वाली नदी भी देखी। जिसके किनारे अेक भी पेड़ नहीं है अैसी नदी भी देखी, और जिसने अेक ओर पेड़ोंकी अेक मोटी दीवार खड़ी की है अैसी नदी भी देखी। सफेद बगुले अुसके पट पर कीचड़में अपने पैरोंकी आकृतियां बना रहे थे। मगर अिस चरण-लिपिमें मैं कोअी अितिहास नहीं पा सका, न किसी दस्तावेजका हल खोज सका। नदी आखिरी लिखती जाती है और निरंतर अपना लिखा लेख मिटाती जाती है। और नये लेखक-पाठकोंकी राह देखती रहती है।

हम झारसूगुडा जंक्शनके पास जा रहे हैं। अेक छोटा-सा स्टेशन पास आ रहा है। अितनेमें हमारे रास्तेके नीचेसे बहती हुआी अेक सुन्दर नदी हमने देखी। सभी नदियां सुन्दर होती हैं, मगर अिस नदीमें असाधारण सुन्दर आकृतियां बनानेकी कला नजर आयी। पानीके स्रोतमें भंवर पैदा होते होंगे। भाओीके कारण पानीको विशेष रूप प्राप्त होता होगा। अूपरसे यह सब देखकर मुझे रवीन्द्रनाथके चित्र याद आये। अिस नदीकी आकृतियां भी बिना कुछ बोले, बिना कोअी बोध दिये, हृदय तक पहुंचती थीं और वहां हमेशाके लिअे अपनी छाप डाल देती थीं। अिसीका नाम है सच्ची कला!

मगर अिस नदीका नाम क्या है? परिचय हो और नाम न मिले, यह कितनी विचित्र स्थिति है! अितनेमें अीब स्टेशन आया। हमने लोगोंसे पूछा, 'अिस नदीका नाम क्या है?' अुन्होंने बताया 'अीब'। 'नदीके नाम परसे ही स्टेशनका नाम पड़ा है।' तब अुसमें औचित्य नहीं है, अैसा कौन कहेगा? मगर मनमें संदेह जरूर पैदा हुआ। यहां भेडेन नामक अेक नदी अीबसे मिलती है। स्टेशन भेडेनके किनारे है। अीब जरा बड़ी है; अिसी कारण भेडेनके साथ

अन्याय करके अुसका नाम स्टेशनको नहीं दिया गया। भेडेन कोअी मामूली नदी नहीं है। काफी चौडी है। दूरसे आती है। मगर वह किसी तरहका गर्व न रखते हुअे अपना पानी अीबको सौंप देती है और अपने नामका आग्रह भी नहीं रखती। मैंने अीबसे पूछा 'देखो, अुदारतामें यह भेडेन तुमसे श्रेष्ठ है या नहीं?' अीबने जरा-सा आकृतियोंवाला स्मित करके कहा "यह तो तुम मनुष्य जानो! भेडेनने अपना नाम छोडकर अपना नीर मुझे दे दिया, अिस अुदारताकी तारीफ करनेके बजाय अुसके अर्पणकी दीक्षा लेकर अुसके जैसी बनना मुझे अधिक पसंद है। देखो, अुसका और मेरा नीर अिकट्ठा करके महानदीको देनेके लिअे मैं संबलपुर जा रही हूँ। वहां मैं भी अपना नाम छोड दूँगी। अिस प्रकार अुत्तरोत्तर नामरूपका त्याग करनेसे ही हम सबको महानदीका महत्त्व प्राप्त हुआ है, और वह भी सागरको अर्पण करनेके लिअे ही।"

और जाते जाते अीबने अनुष्टुभ् छंदमें अेक पंक्ति गा सुनाअी:

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति पुरु तत् अवसीदति।
सर्वे यत्र विलीनाः स्युः तत् नामम् आप्नुयात्॥

* * *

अीबका यह संदेश सुनकर ही मैं समझ गया।

मार्च, १९६०

शिवनाथके बारेमें अेक लोककथा भी दी हुअी है। वही कथा आज मैं यहां अपनी भाषामें देना चाहता हूं।

शिवा नामक अेक गोंड लड़की थी। जंगली गोंड जातिकी होते हुअे भी वह संस्कारी और रसिक थी। अुस पर गोंड जातिके ही अेक लड़केका दिल बैठ गया। लड़कीके दिलको आकर्षित कर सके, अैसा अेक भी गुण अुसमें नहीं था। स्वच्छंदतासे पेश आना और धमकियां देकर लोगोंसे काम निकालना, बस अितना ही अुसे मालूम था। वह शिवाका ध्यान करता रहता था और अुसे पानेका कोअी रास्ता न देखकर परेशान होता रहता था। आखिर अपनी जातिके रिवाजों अनुसार अुसने मौका देखकर शिवाका हरण किया और राक्षस-पद्धतिसे अुसके साथ विवाह किया।

विवाह-विधि पूरी करना अुसके लिअे आसान था, मगर शिवाको अपनी बनाना आसान काम नहीं था।

शिवा जैसी संस्कारी और भावनाशील लड़की अुसकी ओर भला क्यों देखने लगी? और वह जड़मूढ़ अनुनय जैसी चीजको क्या समझे? अुसने पतिकी हुकूमत चलानेकी कोशिश की। लड़कीने अबलाका सामर्थ्य प्रकट किया। शिवाको लूटकर लानेवाला युवक शिवाके शुद्ध हृदयके सामने हारा। अुसका क्रोध भड़क अुठा। शरीरको ही सब-कुछ समझनेवाला आदमी शरीरके बाहर जा ही नहीं सकता। अुसने गुस्सेमें शिवाको मार डाला और अुसके शरीरके टुकड़े अेक गहरी घाटीमें फेंक दिये।

जहां शिवाका शव गिरा वहींसे तुरन्त अेक नदी बहने लगी। यही है हमारी यह शिवनाथ, जो आगे जाकर महानदीमें अपना पानी छोड़ देती है।

आज सुबह हम बेमेतरा जानेके लिअे निकले। रास्तेमें अेक दुर्घटना हुअी। हमारी दौड़ती हुअी मोटर अेक बैलगाड़ीसे टकरा गअी और अेक बैलका सींग टूट गया। हम रुके और अुसकी मदद करनेके लिअे दौड़े। मुझे बैलका लटकनेवाला सींग काटनेकी सलाह देनी पड़ी। और जहांसे खून बह रहा था वहां पेट्रोलकी पट्टी बांधनी पड़ी।

सारा वायुमंडल करुण तथा गमगीन बन गया। अिस हालतमें शिवनाथका दुबारा दर्शन हुआ। यहां नदीका पट सुन्दर है। आसपासके पत्थर जामुनी लाल रंगके थे। नदीका पात्र भी सुन्दर था। प्रतिबिंब काव्यमय मालूम होता था। मगर शिवाकी करुण कथा मनमें रम रही थी। अतः अिस दर्शनमें भी विषादकी ही छाया थी।

शायद शिवनाथकी तकदीर ही अैसी हो। आखिर मनका विषाद कम करनेके लिअे यह पत्र लिख डाला। अब दिल कुछ हलका मालूम होता है।

मअी, १९४०

४७

सूर्याका स्रोत

बारिशमें होते हुअे हम कासाका सर्वोदय केन्द्र देखने गये। वहां जानेके लिअे ये दिन अच्छे नहीं थे, अिसीलिअे तो हम गये। बारिशके दिनोंमें छोटी-छोटी 'नदियां' रास्ते परसे बहने लगती हैं, अुनमें पानी बढ़ने पर मोटर बसें भी घंटों तक रुकी रहती हैं। हमने सोचा कि हमारे सर्वोदय-सेवक हमारे आदिम-निवासी भाअियोंके बीच कैसे काम करते हैं यह देखनेका यही समय है।

भारतके पश्चिम किनारेके अेक सुंदर स्थानसे मेरा घनिष्ठ परिचय है। बम्बअीके अुत्तरमें करीब सौ मीलके फासले पर बोरडी-घोलवडका स्थान है। वहां मैं महीनों तक रहा था। और वहांके समुद्रकी लहरोंसे रोज खेलता था।* समुद्रका पानी भी जब भाटाके कारण पीछे हटता था तब मील डेढ़ मील तक पीछे चला जाता था। और सारा समुद्र किनारा गीले टेनिस कोर्टके जैसा हो जाता था। हम पांच-दस

* अिस स्थानका वर्णन मैंने अपने 'मरुस्थल या सरोवर' लेखमें विस्तारसे किया है।

लोग अिस गीली रेतीके मैदान पर होकर समुद्रकी लहरें ढूढ़ने चले जाते थे। जब ज्वार आता तब पानीकी लहरें हमारा पीछा करती थी और हम किनारेकी ओर दौडते आते थे। पानीकी लहरें धावा बोलें और हम अपनी जान लेकर किनारे तक दौडते आ जायें, यह खेल बडे मजेका था। देखते देखते सारा खुला मैदान बडे सरोवरका रूप ले लेता है और वायु पानीके साथ खेल करती है। अैसे खारे पानीमें और रेतीमें भी अेक जगह तरवडके पेड अुगे थे। अुनके चिकने-चिकने पत्ते देखकर मै कहता कि य बडे 'होनहार बिरवान ' हैं।

अिस विशाल सरोवर-मैदानमें अुदावरण*-प्रजाकी बहुत बडी सृष्टि बसी है। किस्म किस्मके शख, किस्म-किस्मके केकडे और अैसे ही छोटे-मोटे प्राणी वहा रहते थ और अुनके कवच और हड्डिया समुद्र किनारे देखनेको मिलती थी।

बोरडीमें मैं रहने गया, तब वहा अेक ही अच्छा हाओीस्कूल था। अब वह अेक अच्छा और बडा शिक्षा-केंद्र हो गया है। बाल-शिक्षण, प्रौढ-शिक्षण, नयी तालीम आदिम-निवासियोंकी तालीम, अध्यापन-केंद्र आदि अनेक सस्थायें वहा पर स्थापित हो गयी है। अब तो बोरडी राजनैतिक जागृतिका, शिक्षा-वितरणका और समाज-सेवाका अेक प्रधान केंद्र बना हुआ है।

बोरडीके दक्षिणमें मैं अेक दफा घोलवणी भी गया था। वहाके कारीगर ठप्पा बनानेकी कलामें सारे हिन्दुस्तानमें अद्वितीय गिने जाते हैं। कांचकी चूडिया भी वहा अच्छी बनती है।

अबकी बार घोलवणी और बोरडीके बीच डहाणू हो आया। यह स्थान भी समुद्रके किनारे है। अुसका प्राकृतिक दृश्य बोरडीसे कम सुन्दर नहीं है।

---

* वातावरण = पृथ्वीके गोलेको घेरनेवाला हवाका आवरण या वायुमडल।

अुदावरण = पृथ्वी परकी जमीनको घेरनेवाला पानीका आवरण। अुद् = पानी।

पचास पौन सौ बरस पहले अीरानसे आये हुअे चंद अीरानी खानदान यहां बसे हुअे हैं। घर पर अीरानी भाषा बोलते हैं। अब ये लोग अीरानसे प्राचीन कालमें आये हुअे पारसी लोगोंके साथ कुछ-कुछ घुलमिल रहे हैं, और गुजराती और मराठी अुत्तम बोलते हैं। अिन अीरानियोंके बगीचे और वाड़ियां खास देखने लायक हैं। खेतीके आधुनिक विज्ञानसे और मेहनत-मजदूरीसे अिन लोगोंने लाखों रुपये कमाये हैं। हमारे देशमें बसकर अिन लोगोंने अिस देशकी आमदनी बढ़ायी है और यहांके किसानोंको अच्छेसे अच्छा पदार्थपाठ सिखाया है। ये लोग हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

*　　　　*　　　　*

डहाणूसे सोलह मीलका फासला तय करके हम कासा गये। मेरे अेक पुराने विद्यार्थी श्री मुरलीधर घाटे बारह-पन्द्रह बरससे ग्राम-सेवाका काम करते आये हैं। अिसी साल अुन्होंने — और अुनकी सुयोग्य धर्मपत्नीने — कासाका केंद्र अपने हाथमें लिया। और देखते-देखते यहांका सांस्कृतिक वातावरण समृद्ध बना दिया। आचार्य श्री शंकरराव भिसेकी प्रेरणासे यह सब काम चल रहा है।

डहाणूसे कासा पहुंचते हुअे सामने अेक बहुत अूंचा पर्वत-शिखर दीख पड़ता है। शिखरका आकार देखते हुअे अिस पहाड़को अुच्च-शृंग कहना चाहिये। दरयाफ्त करने पर मालूम हुआ कि शिखरके शृंगका पत्थर मजबूत नहीं है। पत्थरको पकड़कर कोअी अूपर चढ़ने जाये तो पत्थरके टुकड़े हाथमें आ जाते हैं। मुझे डर है कि हजार दो हजार बरसके अंदर यह सारा शृंग हवा, पानी और धूपसे घिस जायगा और पहाड़की अूंचाअी अेकदम कम हो जायगी। अिस पहाड़के शिखर पर श्री महालक्ष्मीका मंदिर है। कहा जाता है कि कोअी गर्भिणी स्त्री महालक्ष्मीके दर्शनके लिअे अूपर चढ़ गयी और मर गयी। महालक्ष्मीने पुजारीको स्वप्नमें आकर कहा कि अपने भक्तोंके अैसे कष्ट मैं बरदाश्त नहीं कर सकती, मुझे नीचे ले चलो। अब अुसी पहाड़की तराअीमें महालक्ष्मीका दूसरा मंदिर बनाया गया है।

वासाके नजदीक अेक अच्छी-सी नदी बहती है, जिसका नाम है सूर्या। अिस नदीके बारेमें भी अेक लोककथा है।

जब पांडव अिस रास्तेसे तीर्थयात्रा करने जा रहे थे तब भीमको अिच्छा हुअी कि स्थान देवता श्री महालक्ष्मीसे शादी करे। पूछने पर महालक्ष्मीने कहा कि चंद योजनके फासले पर जो सूर्या नदी बहती है असके प्रवाहको अगर तुम मोड़कर मेरे अिस पहाड़के पांवके पास ले आओगे तो मैं तुमसे शादी करूंगी। बात अितनी ही है कि यह सारा काम अेक रातके अंदर होना चाहिये। अगर सुबहका मुर्गा बोला और तुम्हारा काम पूरा न हुआ तो हमसे तुम्हारी शादी न होगी। भीमने वादा किया। बड़े-बड़े पत्थर लाकर असने नदीके प्रवाहको रोक दिया। थोड़ी-सी जगह बाकी थी असके लिअे पत्थर न मिलने पर असने अपनी पीठ ही अड़ा दी। फिर तो पूछना ही क्या? नदीका पानी बढ़ने लगा और धीरे-धीरे महालक्ष्मीकी पहाड़ीकी ओर मुड़ने लगा। महालक्ष्मी घबड़ा गयी कि अब अिस निरे मानवीके साथ शादी करनी होगी। देवोंमें चालबाजी बहुत होती है। हारनेकी नौबत आती है तब वे कुछ-न-कुछ रास्ता ढूंढ़ ही निकालते हैं।

अिधर भीम बांधके पत्थरोंके बीच पीठ अड़ाकर राह देख रहा था कि पानी पहाड़ी तक कब पहुंच जाता है। अितनेमें महालक्ष्मीने मुर्गेका रूप धारण किया और सुबह होनेके पहले ही कुकूच कूं करके आवाज दी। बेचारा भोला भीम निराश हुआ कि समयके अंदर अपना प्रण पूरा नहीं हो सका। वह अुठा। अुतनी जगह मिलते ही बढ़ा हुआ पानी जोरोंसे बहने लगा और पानीके साथ भीमकी मुराद भी बह गयी!

अिसी तरह धूर्त देवोंका और बलशाली असुरोंका झगड़ा भी अनगिनत लोककथाओंमें और पुराणोंमें पाया जाता है।

हम अनेक हरे-हरे खेतोंको पारकर सूर्याके किनारे पहुंचे। बारिशके दिन थे। पानी खूब बढ़ा हुआ था और भीम-बांधके सिर परसे नीचे कूद पड़ता था। दृश्य बड़ा ही मनोहारी था। जहां पानी जोरसे बहता था, वहां हमने अपनी कल्पनाका भीम बैठा हुआ देखा।

हमने अुसे प्रणाम किया। अुसने सिरसे अपना सिर हिलाया। और वह फिर ध्यानमें मग्न हो गया।

हम लौटकर थाना आये। वहाका काम देखा। आदिम जीवनको प्रकट करनेवाली प्रदर्शनी देखी। कुछ खाना खा लिया, लोगोंसे बातें की और फिर बसमें बैठकर महालक्ष्मीका मंदिर देखने गये। रास्तेमें आदिम-निवासी जातिके लोगोंकी कुटिया और अुनके खेत देखे। यह जाति पिछड़ी हुअी जरूर है किन्तु अुसने अपने जीवनका आनंद नहीं खोया है। महालक्ष्मीका मंदिर पहाड़ीके नीचे अेक रमणीय स्थान पर है। देवीके भक्त दूर-दूर तक फैले हुअे हैं। हर साल अेक बड़ा बड़ा मेला लगता है। देखते-देखते अेक लाख लोगोंकी यात्रा भर जाती है। असे यात्रियोंके रहनेके लिअे यह लोगोंने अभी यहां पर अेक अच्छी धर्मशाला बांध दी है। अुसे जाकर देखा। संगमरमरके पत्थर पर दाताओंके नाम खुदे हुअे थे। नाम पढ़कर मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ। सबके सब नाम अफ्रीकाके दक्षिण रोडेशियामें बसे हुअे गुजराती धोबियोंके थे। किसीने सौ शिलिंग दिये थे। किसीने हजार दिये थे। कहां दक्षिण रोडेशिया, कहां गुजरात और कहां थाना जिलेमें मराठी लोगोंके बीच यह गुजरातियोंका बनाया हुआ आराम-घर!

स्वराज्य सरकारकी मददसे अिन आदिम-निवासियोंके नवयुवक अब अुन्नतिके साथ नयी-नयी बातें सीख रहे हैं और अपनी जातिके अुद्धारकी बातें सोच रहे हैं। मैंने अुनको कहा, तुम अितने पिछड़े हुअे हो कि अपनी जातिके ही अुद्धारके लिअे प्रयत्न करना तुम्हारे लिअे ठीक है। लेकिन मैं तो वह दिन देखना चाहता हूं कि जब तुम लोग केवल अपनी ही जातिका नहीं किन्तु सारे भारतके अुद्धारका सोचने लगोगे। केवल अपनी जातिके ही नहीं किन्तु सारे देशके नेता बनोगे। जो अपनी ही जमातका सोचते हैं, अुनका पिछड़ापन दूर नहीं होता। जो सारी दुनियाका सोचते हैं, सारी दुनियाकी सेवा करते हैं, वही अपनी और अपने लोगोंकी सच्ची अुन्नति करते हैं।

मैंने अपने मनमें प्रश्न पूछा, अगर अिन लोगोंमें भीमके जैसी शक्ति आयी और यहांके अिर्द-गिर्दके सबमें, सफेदपोश लोगोंमें स्थानीय

देखना महालक्ष्मीके जैसी चतुरगली आर्या ता परिणाम क्या होगा! फिर तो केवल पानीकी सूखी नदी नहीं बहेगी!

कलियुगका माहात्म्य समझकर नहीं किन्तु समयसत्ती स्थापनाके लिअे हमें अिन आदिम-जातियोंका अपनेमें पूरी तरह समा लेना चाहिये। चार वर्णोंकी पुन: स्थापनाकी बात और आदिम-जातिके 'अुद्धारकी' परायापनकी भाषा अब हम छोड़ देनी चाहिये। अिनमें और हममें कोअी भेद ही नहीं रहना चाहिये।

सितम्बर, १९५१

४८

अवरी ओव

मैं कलकत्तासे वर्धा जा रहा था। गाड़ीमें रातको बिना कुछ ओढ़े सोया था। ओढ़नेकी जरूरत न थी, फिर भी यदि ओढ़ लेता तो चल सकता था। सुबह पांच बजे जब जागा तब हवामें कुछ ठंड मालूम हुअी, और बाहरकी गर्मी न लेनेका पछतावा हुआ। आखिर 'अब क्या हो सकता है?' कहकर अुठा। कवियोंको जितना भविष्यकाल दिखाअी देता है, अुतना ही बाहरका दृश्य दिखाअी देता था। सारा दृश्य प्रसन्न था, मगर पूरा स्पष्ट नहीं था।

अितनेमें अेक नदी आयी। पुलके दो छोरोंके बीच अुसकी धारायें अनेक पत्तियोंमें बट गयी थीं। हरेक नदीके बारेमें अैसा ही होता है। मगर यहां स्पष्ट मालूम होता था कि अिस नदीने कुछ विशेष सौंदर्य प्राप्त किया है। पतले अंधेरेमें प्रभातके समयका आकाश यह तय नहीं कर पाता था कि पानीकी चांदी बनायें या पुराने जमानेका चमकते लोहेका आअीना बनायें?

हम पुलके बीचमें आये। मैं प्रवाहका सौंदर्य निहारने लगा। अितनेमें अैसा लगा मानो किसीने पानीके अूपर सफेद रंग छिड़क

दिया है और धीरे धीरे अुसकी अबरी* बन गयी है। यह रूप देखकर मैं खुश हो गया। अभी अभी दिल्लीमें जामिया मिलियाके छोटे बच्चोंको कागज पर अबरीकी आकृतियां बनाते हुअे मैंने देखा था। मुझे ये प्राकृतिक आकृतियां बहुत आकर्षक मालूम होती हैं।

अिस नदीका नाम क्या है? कौन बतायेगा? मैंने सोचा, नाम न मिला तो मैं अुसे अबरी नदी कहूंगा।

नदी गयी और यह कहांसे है यह जाननेकी मेरी अुत्कंठा बढ़ी। क्योंकि अुसके बाद धुआं छोड़नेवाली अेक दो चिमनियां दिखाओ दी थीं। और निकटके गांवमें बिजलीके दीप भी दिखाओ दिये थे। स्लीपिंग टामिस टेकर निकालकर मैंने अुससे पूछा 'पांच अभी ही बजे हैं। हम कहां है?' अुसका जवाब सुनते ही मुंहसे परिचयका आनंदोद्गार निकला 'ओहो! यह तो हमारी औब है!' रायगढ़ जाते समय अुसने कितनी सुन्दर आकृतियां दिखाओ थीं! मैंने अुसे कृतज्ञताकी अंजलि भी दी थी। औबको मैं पहचान कैसे न सका? अबरीका यह कला-विलास सभी नदियां थोड़े ही जानती हैं!

तो अिस औब नदीने अबरीकी कला कौनसी चित्र-शालामें सीखी होगी? या शायद दुनियाने अबरी-कला सबसे प्रथम अिसीसे सीखी होगी।

मअी, १९४१

---

* किताबकी जिल्द पर या अुसके अंदर जो रंगीन आकृतियोंवाला कागज अिस्तेमाल किया जाता है, और जिसको अंग्रेजीमें marble paper कहते हैं, अुसके लिअे देशी शब्द है 'अबरी'।

तेंदुला और सूखा

आज मैं अेक अनमोल और असाधारण आनंद अनुभव कर सका।

हम वर्धासे द्रुग आये हैं। आसपासके दो गांवोंमें राष्ट्रीय ग्रामशिक्षा (बेसिक अेज्युकेशन) शुरू करनेके लिअे शिक्षक तैयार करनेवाली अेक संस्थाका अुद्घाटन करनेको हम सुबह चार बजे द्रुग आ पहुंचे। नहा-धोकर नाश्ता किया और बालोडके लिअे रवाना हुअे।

द्रुगसे बालोड ठीक दक्षिणकी ओर ३७ मील पर है। रास्ता सीधा है। मानो रूलसे रेखायें आंककर बनाया गया हो। मीलों तक सीधी रेखामें दौडते रहनेसे जिस प्रकार अलसा-पन होता है अुसी प्रकार अेक तरहका नशा भी मालूम होता है। बालोडके पास पहुंचे और किसीने कहा कि यहांसे पास ही तेंदुला बंद और केनाल है। मामूली-सी वस्तु भी स्थानिक लोगोंकी दृष्टिमें बडे महत्त्वकी होती है। भाअी तामस्करने जब कहा कि व्याख्यानके बाद हम यह बंद देखने चलेंगे तब विशेष अुत्साहके बिना मैंने 'हां' कह दिया था। वहां कुछ देखने योग्य होगा, अैसा मेरा खयाल ही न था। 'हां' कहा केवल स्थानिक लोगोंके आतिथ्यका अुत्साह भंग न होने देनेकी भलमनसाहतके कारण।

खासी ३७ मीलकी जो यात्रा की अुसमें गड्ढ आदि कुछ भी नहीं थे। जमीन सर्वत्र समतल थी। गुजरातकी तरह यहांकी जमीनमें झाडोंकी अडचन भी नहीं है। अिस तरहकी समतल जमीन देखनेके बाद अेकाध नदी-नाला देखनेको मिले, अेकाध बांध नजरके सामने आये तो मनको अुतना व्यंजन मिलेगा अिस खयालसे मैंने जाना कबूल किया था। जिसने पूनाके बंडगार्डनसे लेकर भाटघरके प्रचंड बांध तक अनेक बांध देखे हैं, अुसका कुतूहल यों सहज जाग्रत नहीं हो सकता।

बेजवाडामें कृष्णा नदीका भव्य बांध, गोकाकके पास घटप्रभाका बाल्य-परिचित बांध, लोणावलाके दो तीन आकर्षक बांध, मैसूरमें वृंदा-

वनका पोषण करनेवाला बादशाही कृष्णसागर, दिल्लीके निकट यमुनाका रमणीय 'ओखला' का बांध और नासिकसे मोटरके रास्ते पचास मील दूर जाकर देखा हुआ 'प्रवरा' नदीका सुन्दरतम और रोमांचकारी बांध — अैसे अनेक जलाशय जिसने देखे हैं, वह गिरनारकी तलहटीका 'गटका-वामला' जैसा बांध देखकर सन्तुष्ट भले हो, मगर अुसका कुतूहल बाल्यावस्थामें तो हो ही नहीं सकता।

भावनगरके पासके बोर तालाबका वर्णन मैंने लिखा है। बेजवाडाकी कृष्णा नदीको मैंने श्रद्धांजलि अर्पित की है। दूसरोंके बारेमें अब तक कुछ लिखा नहीं है अिस बातका मुझे दुःख है। फिर भी आज किसी भव्य जलराशिके दर्शन होंगे, अैसी अुम्मीद मुझे न थी। व्याख्यान, सभाषण और भोजन समाप्त करके हम तेंदुला केनाल देखनेके लिअे वाहनारूढ हुअे और बांधकी ओर दौड़ने लगे। बांध परसे मोटर ले जानेकी अिजाजत पानेके लिअे अेक आदमी आगे गया था। अुसकी राह देखनेका धीरज हममें न था। अिजाजत मिल ही जायगी, अिस खयालसे हम तेज रफ्तारसे आगे बढ़े और बांधके पास पहुंचे। बांधके अूपर गये, और —

मैं तो अवाक् हो गया!

कितना लंबा और चौड़ा पानीका विस्तार! और पानी भी कितना स्वच्छ!! मानो आकाश ही आनंदातिशयमें द्रवीभूत होकर नीचे अुतर आया हो! और पानीका रंग? जामुनी, नीला, फीरोजी, सफेद और गुलाबी!! और वह भी स्थायी नहीं। आकाशके बादल जैसे जैसे दौड़ने जाते थे, वैसे वैसे पानीका रंग भी बदलता जाता था। छोटी तरंगोंके कारण पानीकी तरलता तो मिलती ही थी; तिस पर अूपरसे अुसमें यह रंग-परिवर्तनकी चंचलता आ मिली। फिर तो पूछना ही क्या था? जहां देखो वहां काव्य डोल रहा था, चमत्कार नाच रहा था। अपना महत्त्व किसके कारण है, यह दोनों ओरके किनारे जानते थे। अतः वे अदबके साथ जलराशिकी खुशामद करते थे।

अिस बांधकी खूबी अुसके विस्तारके अलावा अेक दूसरी विशेषतामें है। तेंदुला और सुखा दोनों नदियां बहनें हैं। तेंदुला बड़ी बहन

है। वह २०–४० मील दूरसे आती है। अुसके मुकाबलेमें सुखा केवल बालिका है। तीन मील दौडकर ही वह यहा आ पहुचती है। ये दोनो जहा अेक-दूसरेके पास आती हैं, वहीं यह प्रेममूर्ति बाध मानो यह कह कर कि 'मेरी सौगध है तुम्हे जो आगे बढी तो!' दोनोके सामने आडा सो गया है। करीब तीन मील लबा बाध अिन दो नदियोको रोकता है। और फिर अपनी मरजीके अनुसार थोडा थोडा पानी छोड देता है। कच्ची मिट्टीका अितना बडा बाध हिन्दुस्तानमें तो क्या सारे ससारमें और कही नही होगा! बाधके नीचेकी १५ मील तककी अभिमानी जमीन अैसा अुपकारका पानी लेनेसे अिनकार करती है। अत यह नहर अुसके बादके ६०–७० मील तक दोनो ओरके खेतोकी सेवा करती है। बाधकी वजहसे अूपरकी बहुत-सी जमीन पानीमें डूब गअी है अिसकी कल्पना केवल आखोसे कैसे हो? तलाश करनेपर पता चला कि करीब तीन सौ बीस वर्गमील जमीन पर गिरनेवाला पानी यहा जमा हुआ है। पानीका विस्तार सालह वर्गमील है। १९१० में अिस बाधका काम आरभ हुआ और पौन करोडसे अधिक रुपया खर्च होनेके बाद ही वह पूरा हुआ। बारिशमें अिन दोनो नदियोका पानी अेकत्र होता है। और फिर तो सारा जलमग्न दृश्य देखकर 'सर्वत सप्लुतोदके' का स्मरण हो आता है। जब बीचका टापू अपना सिर जरा अूचा करनेका प्रयास करता है, तब अुसकी यह परेशानी देखकर हमें हसी आती है। आज अिस टापू पर कुछ अूचे पेड 'यद् भावि तद भवतु' वृत्तिसे अिस बाढकी प्रतीक्षामें खडे है। अुन्हें अुस लाल किनारवाली किश्तीमें बैठकर थोडे ही भाग जाना है? अैसे पेड जब तक टिक सकते है, शानके साथ रहते है। और अतमें जडे खुली पडने पर पानीमें गिर पडते हैं।

गरमीमें जब दो नदियोके पात्र अलग अलग हो जाते है, तब धूप तथा विरहके कारण वे अधिक सूखने न पायें, अिस हेतुसे बीचमें अेक नहर खोदकर दोनोका पानी अेक-दूसरेमें पहुचानेका प्रबध कर दिया जाता है।

जाननेवाले जानते हैं कि नदियोंका भी हृदय होता है। अुनमें वात्सल्य होता है, चारित्र्य होता है और अुन्माद तथा पश्चात्ताप भी होता है। ये दो बहनें यहां जो कुछ करती हैं अुसमें अेक-दूसरेकी दोभाकी अीर्ष्या जरा भी नहीं करती। मत्सर या सापत्न्य-भाव अुनके चेहरे पर बिलकुल नहीं दीख पड़ता। अुन्हें अिस बातका भान है कि बाधरूपी जबरदस्त गयमो कारण अुनकी शक्ति बहुत कुछ बढ़ी है। केवल बहते रहना ही नदीका धर्म नहीं है। फैलना और आर्शीर्वाद-रूप बनना भी नदी-धर्म ही है तमाम नदियोंको यह नसीहत देनेके लिअे ही मानो वे यहा फैली हुअी है।

नदीके किनारे पेड खड़े हों, तो वहां अेक तरहकी शोभा नजर आती है। और ये पेड जब अुसके पात्रको ढकनेका वृथा प्रयत्न करते हैं, तब अिस विफलतामें से भी वे सफल शोभा अुत्पन्न करते हैं।

हम अुस किनारेके पेडोंकी मुलाकात लेने गये। समय दोपहरका था। निद्रालु पेड नदीके साथ बातें करते करते नींदमें डूब रहे थे और चारों ओर अुष्ण-शीतल शांति फैली हुअी थी। सिर्फ तरह तरहके पक्षी मद मजुल कलरव करके अेक-दूसरेको अिस काव्यका आनद लूटनेके लिअे प्रोत्साहित कर रहे थे।

और लाल मकोडे, जिन्हें मराठीमें 'वापमुग्धा' या 'अुर्वील' कहते हैं, अेक किस्मके चिकने पदार्थसे पेड़ोंके चौडे पत्तोंको अेक-दूसरेसे चिपकाकर अिस सारे काव्यको भरकर रखनेके लिअे थैलियां बना रहे थे। मेरी आंखें भी दिलकी थैली बनाकर अुसमें सामनेका दृश्य भरनेके लिअे सारे प्रदेशको चूम रही थीं।

नदीको अिसमें कोअी अेतराज नहीं था।

मार्च, १९४०

५०

अृषिकुल्याका क्षमापन

आज महाशिवरात्रिका दिन है। रातके सब काम अेक तरफ रखकर सरिता सरित्पति और सरित्पतिका ध्यान करनेके निश्चयसे मैं बैठा हूँ। सरितायें लोकमातायें हैं। अुनकी 'जीवनलीला' को अनेक प्रकारसे याद करके मैं पावन हुआ हूँ। पूर्वजोंने कहा है कि नदीका पूजन स्नान दान और पानके विविध रूपसे करना चाहिये। मुझे लगा : केवल स्नान-दान-पान ही क्यों? भक्ति ही करनी है तो फिर वह चतुर्विधा क्यों न हो? अैसा सोचकर मैंने नदीका गान करनेका निश्चय किया। 'लोकमाता' और प्रस्तुत 'जीवनलीला' अिन दो ग्रंथोंमें यह गान सुननेको मिल सकता है।

अब जब कि प्रवास कम हो गया है और सरित्पति सागरका निमंत्रण भी कम सुनाअी देने लगा है मैं दिलमें सोच रहा था कि सरित्पिता पहाडोंका कुछ श्राद्ध करूँ। अितनेमें अेक छोटीसी पवित्र नदीने आकर कानमें कहा "क्या मुझे बिलकुल भूल गये?" मैं शरमाया और तुरन्त अुसको स्मरणांजलि अर्पण करनेके बाद ही पहाडोंकी तरफ मुडनेका निश्चय किया। यह नदी है कलिंग देशमें केवल सवा सौ मीलकी मुसाफिरी करनेवाली अृषिकुल्या।

अृषिकुल्या नदीका नाम तक मैंने पहले नहीं सुना था। मैं अशोकके शिलालेखोंके पीछे पागल हुआ था। जूनागढ़के शिलालेख मैंने देखे थे। फिर अुडीसाके भी क्यों न देखूँ? अैसा खयाल मनमें आया। कलिंग देशका हाथीके मुँहवाला धौलीका शिलालेख मैंने देखा था। फिर अितिहास-दृष्टि पूछने लगी कि थोडा दक्षिणकी ओर जाकर वहाँका जौगडका विख्यात शिलालेख कैसे छोड सकते हैं? अुसको तृप्त करनेके लिअे गंजामकी तरफ जाना पडा। वह प्रवास बहुत काव्यमय था। लेकिन अुसका वर्णन करने बैठूँ तो वह अृषिकुल्यासे भी लम्बा हो जायगा।

यह नदी चिल्का सरोवरमें मिलनेके बजाय सरासर तर धँसे गअी और समुद्रसे ही क्यों मिली अिसका आश्चर्य होता है। शायद सागर-स्नानका सौभाग्य प्राप्त करनेके लिअे अुसने सरासर तक दौड लगाअी होगी। लेकिन यहांके समुद्रमें कोअी अुत्साह दिखाअी नहीं देता। रेतके साथ खेलते रहना ही अुसका काम है।

ऋषिकुल्या वैसे छोटी नदी है फिर भी शायद नामके कारण अुसकी प्रतिष्ठा बडी है। क्योंकि अितनी छोटीसी नदीका कर-भार देनेके लिअे पद्मा और भागुवा ये दो नदियां आती हैं। और भी दो-तीन नदियां अुसे आकर मिलती हैं। लेकिन कागजपर समझनेसे थोडे ही समृद्धि होती है? गरमीके दिन आये कि सब ठनठन गोपाल!

ऋषिकुल्याके किनारे अुसी नामका अेक छोटासा गांव है। छोटासा गांव सुन्दर नहीं हो सकता अैसा थोडे ही है? जहां नदियोंका संगम होता है वहां सौंदर्यको अलगसे न्योता नहीं देना पडता। और यहां पर तो ऋषिकुल्यासे मिलनेके लिअे महानदी आअी हुअी है। दोनों मिलकर गन्ना अुगाती हैं चावल अुगाती हैं और लोगोंको मधुर भोजन खिलाती हैं। और जिनको अुन्मत्त ही हो जाना है, अैसे लोगोंके लिअे यहां ताडकी भी सुविधा है। अिस 'देवभूमि' में लोगोंके सुरा-पानको अुचित कहें या अनुचित? जो सुरा पीते हैं सो सुर यानी देव; और जो नहीं पीते सो असुर — अैसी लोगोंकी सुर-असुरकी व्याख्या भिन्न प्रकार है।

ऋषिकुल्या नाम किसने रखा होगा? अिसके पडोसकी दो नदियोंके नाम भी अैसे ही काव्यमय और संस्कृत हैं। 'रसधारा' और 'लांगुल्या' जैसे नाम यहांके आदिवासियोंके दिये हुअे नहीं प्रतीत होते।

यह सारा प्रदेश कलिंगके गजपति आंध्रके वेंगी तथा दक्षिणके चोल राजाओंकी महत्त्वाकांक्षाओंकी युद्धभूमि था। तब ये सब नाम चोलके राजेन्द्रने रखे या कलिंगके गजपतियोंने, यह कौन कह सकेगा?

जौगडका अितिहास-प्रसिद्ध शिलालेख देखकर वापस लौटते हुअे शामके समय ऋषिकुल्याका दर्शन हुआ। संस्कृत साहित्यमें दधिकुल्या, घृतकुल्या, मधुकुल्या जैसे नाम पढकर मुंहमें पानी भर आता था।

अुपिकुल्याका नाम सुनकर मैं भक्तिनम्र हो गया और अुसके तट पर हमने शामकी प्रार्थना की।

छोटीसी नदी पार करनेके लिअे नाव भी छोटीसी ही होगी। अुस दिनका हमारा दैव भी कुछ अैसा विचित्र था कि यह छोटीसी नाव भी आधी-परधी पानीसे भरी हुअी थी। अंदरका पानी बाहर निकालनेके लिअे पासमें कोअी लोटा-कटोरा भी नहीं था। अिसलिअे जूते हाथमें लेकर हमने नावमें खुले पांव प्रवेश किया। अिच्छा थी कि नदीमें पांव गीले न हो जायें। लेकिन आखिर नावमें जो पानी था अुसने हमारा पद-प्रक्षालन कर ही दिया। खड़े रहते हैं तो नाव लुढ़क जाती है। बैठते हैं तो धोती गीली होती है। अिस द्विविध संकटमें से रास्ता निकालनेके लिअे नावके दोनों सिरे पकड़कर हमने कुक्कुटासनका आश्रय लिया और अुसी स्थितिमें बैठकर वेदकालीन और पुराणकालीन अृषियोंका स्मरण करते करते अुनकी यह कुल्या पार की। तबसे अिस अृषिकुल्या नदीके बारेमें मनमें प्रगाढ़ भक्ति दृढ़ हुअी है। कुक्कुटासनका 'स्थिर-सुख' जब तक याद रहेगा तब तक निशीथ-कालका वह प्रसंग भी कभी भूला नहीं जायगा।

वहांके अेक शिक्षकके पाससे अृषिकुल्याके बारेमें जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिश की। अुन्होंने अुड़िया भाषामें लिखा हुआ अेक दीर्घ-काव्य परिश्रमपूर्वक लिखकर मेरे पास भेज दिया। अब तक अुस काव्यका आस्वाद मैं नहीं ले सका हूं। अृषिकुल्याके प्रति भक्तिभाव दृढ़ करनेके लिअे आधिक काव्यकी जरूरत भी नहीं है। मेरे खयालसे महा-शिवरात्रिके दिन किया हुआ अृषिकुल्याका यह क्षमापन-स्तोत्र अुसको मंजूर होगा और वह मुझ अकवीको अुपस्थान करनेके लिअे हार्दिक और सुदीर्घ आशीर्वाद देगी।

महाशिवरात्रि
२७ फरवरी १९५७

सहस्रधारा

पुराना व्रण शायद मिट भी सकता है, किन्तु पुराने संकल्प नहीं मिट सकते। पचीस वर्ष पहले मैं देहरादूनमें था, तब सहस्रधारा देखनेका संकल्प किया था। अुत्कटा बहुत थी, फिर भी अुस समय जा नहीं सका था। कुछ दिनों तक अिसका दुःख मनमें रहा, किन्तु बादमें वह मिट गया। सहस्रधारा नामक कोअी स्थान संसारमें कहीं है, अिसकी स्मृति भी लुप्त हो गअी। मगर संकल्प कहीं मिट सकता है?

आचार्य रामदेवजीने बहुत आग्रह किया कि मुझे अुनका कन्या-गुरुकुल अेक बार देख लेना चाहिये। मुझे भी यह विकसित होती हुई संस्था देखनी थी। पिछले साल नहीं जा सका था। अतः अिस साल वचन-बद्ध होकर मैं वहां गया। अब प्रवृत्तिके पीछे पागल नहीं बनना है, अब तो सत्संग मिलना है, संस्थायें देखनी हैं, राष्ट्रीय सवालोंकी चर्चा करनी है, अच्छे अच्छे आदमी ढूंढकर अुन्हें काममें लगाना है, सेवकोंके साथ विचारोंका और अनुभवोंका आदान-प्रदान करना है — आदि विविध धारायें मनमें चल रही थीं। तब सहस्र-धाराका स्मरण भला कहांसे होता? मैं तो हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी चर्चामें ही मशगूल था। अितनेमें युवक रणवीर मुझसे मिलने आये। किसीने अुनकी पहचान कराअी। अुन्होंने अपने आप कहा, देहरादूनमें देखने लायक स्थानोंमें फॉरेस्ट कॉलेज है, फौजी पाठशाला है, और प्राकृतिक दृश्योंमें गुच्छूपानी और सहस्रधारा है। आखिरका नाम सुनना था कि पचीस वर्षकी विस्मृतिके पत्थरोंकी कब्रको तोड़कर पुरानी स्मृति और पुराना संकल्प भूतकी तरह आंखोंके सामने खड़े हो गये। अब अिस संकल्पको गति दिये बिना कोअी चारा ही न था।

वेग-वाहन (मोटर)का प्रबंध हुआ और अुत्तरकी ओर पांच-सात मीलका रास्ता तय करके हम राजपुर पहुंचे। यहांसे अूपर मसूरी जानेका रास्ता है। हम राजपुरसे करीब ढाअी मील पूर्वकी ओर जंगलमें पैदल

अूपरसे जब पानी गिरता है तब अुतना आश्चर्य नहीं होता। मगर यहां तो अपनी जिद न छोड़नेवाली मिट्टी परसे पानी गिरता है। मैं तो देखता ही रहा। पानीके भव्य दृश्यमें अितना नशा होता है पर शराबियोंको यदि मालूम हो जाय तो वे शराबका नशा छोड़कर अहर्निश यहीं आकर बैठे रहें। अक क्षणके लिअ तो मैं भूल ही गया कि हमें वापस लौटना है। भले अक क्षणके लिअे मगर जब हम प्रकृतिके साथ अकरूप हो जाते हैं तब यह सचमुच अद्वैतानंद होता है। अपना होश भूल जानेके बाद आनंदके सिवा और कुछ रह ही नहीं सकता।

तब क्या जिसे हम जड़ सृष्टि कहते हैं वह जड़ नहीं है, बल्कि अद्वैतानंदकी समाधिमें अकतान होकर पड़ी है? असका जवाब भला कौन दे सकता है? और कौन सुन भी सकता है?

रणवीर कहने लगे 'अब हम जरा आगे चलेंगे।' अब देरी करनेकी मेरी अिच्छा न थी। मगर थोड़ा बाकी रह गया अैसा विषाद मनमें न रहे अिसलिअे मैं आगे बढ़ा। नीचे पानी बह रहा था। धीरे धीरे हम नीचे अुतरे ही थे कि सुगंधककी महक आने लगी। नीचे अुतरकर थोड़ासा पानी पिया। कहते हैं कि तमाम चर्म-रोगोंके लिअे यह पानी बहुत मुफीद है। अिस पानी और अुसके अद्भुत गुणोंके बारेमें मैं सोच रहा था, किन्तु दिल तो अभी देखे हुअे प्रपातकी धब-धब आवाजके साथ ही ताल साध रहा था। अितनेमें दाहिनी ओर अूपर अेक सूखी हुअी खोहकी छतमें पानीकी बूंदें गिरती दिखी। अुनकी आवाज अैसी हो रही थी मानो अत्यंत सौम्य और मंद-प्राय जलतरंग या वृंदगायन हो।

यही है सच्ची सहस्रधारा। हजारों बूंदें अिस गुफाके अूपरसे और अंदरसे टप टप गिरती हैं। मगर अुनकी आवाज नहीं होती। शांतिके साथ ये बूंदें सतत गिरती रहती हैं। अब ओरसे हम अूपर चढ़े। वहां अेक गहरी गुफा थी। बीचमें स्तंभके समान पत्थरका भाग था। हम अुसके अिर्दगिर्द घूमे। चारों ओर सहस्रधाराकी बरसात हो रही थी। मालूम होता था मानो सारा पहाड़ पिघल रहा है। हम काफी

भीग गये। अेक घटा तेजीसे चलकर आनेसे शरीरमें गरमी शुरू थी। अिसलिअे भीगते समय विशेष आनंद महसूस हुआ। कितना ठंडा है यहाका दृश्य! यहां रहनेके लिअे मनुष्यका जन्म कामका नहीं। यहां तो वेदमन्त्रोंका चातुर्मास्यमें रटन करनेवाले मेंढकोंका अवतार लेकर रहना चाहिये। जो हृदय कुछ समय पहले शक्तिशाली प्रपातके साथ अेकरूप हो गया था, वही यहां अेक क्षणमें अिस रिमझिम रिमझिम सहस्रधाराके वारुनन्दके साथ तन्मय हो गया। मैंने रावजीको जी भरकर धन्यवाद दिया और कहा 'अितना हिस्सा यदि देखना बाकी रह जाता तो सचमुच मैं बहुत पछताता।' बारिशसे रक्षा करनेवाली अगस्त्य गुफाअें मैंने देखी हैं। मगर ग्रीष्मकालमें भी अपने पेटमें बारिशका मजा रखनेवाली गुफा तो पहले-पहल यहीं देखी। गोलोंके मध्यभागमें अेक स्थान पर चित्रावाली अेक बड़ी गुफा है; अुसमें से अेक नन्हा-सा झरना झरता है। मगर अिस प्रकारकी अखंड बारिश तो यहीं पहले-पहल देखी। हमें वापस लौटनेकी जल्दी थी। मगर अिस बारिशको जल्दी नहीं थी। अुसको अपना जीवनकार्य मिल चुका था। पत्थरों पर जमी हुअी काओीके कारण पांव फिसलते थे; और यहांके सौंदर्य, पावित्र्य और शान्तिके कारण पांव यहां चिपकते थे। जीमें आता था कि जितना अधिक समय अिस स्थितिमें बीते अुतना ही लाभ है।

आखिर यहांसे लौटना ही पड़ा। अब तो दुगुनी रफ्तारसे जाना था। रास्ते पर चंद मजदूर और स्त्रियां जल्दी जल्दी चलते हुअे नजर आये। बेचारे गरीब लोग! ये बड़ी कठिनाअियोंसे अैसे स्थान पर जीवन बिताते हैं। मगर हमें तो अिसी बातकी अीर्ष्या हुअी कि अिन्हें सहस्रधाराकी अमृतमयी दृष्टिके नीचे रहनेको मिलता है।

अुतरते समय तो अुतर गये थे मगर अब अंधेरेमें चढ़ेंगे कैसे, यह सवाल था। मनमें आया, अेकाध लाठी मिल जाय तो अच्छा हो। वहां अेक देहाती दुकान थी। दुकानदारसे हमने पूछा, 'भैया, अेक अच्छीसी लकड़ी दे दोगे?' मैं अेक कानसे नहीं सुनता, तो दुकानदार दोनों कानोंसे बहरा था! मेरी बात अुसकी समझमें नहीं आती थी। मैं

अमीर बन गया था। आखिर अेक साथीने अिशारेसे अुसको समझाया। अुसने तुरन्त अन्दरसे अपनी बागकी लकडी ला दी। पैसे दिये तो अुसने लेनेसे अिनकार कर दिया। और लकडी लेकर मानो मैंने ही अुस पर अहसान किया हो अैसी धन्यता अपनी आंखोंमें दिखाकर वह कहने लगा, 'ले जाअिये आप ले जाअिये।' रणजीतने अुसके कानोंमें जाकर कहा, 'ये महमान तो महात्मा गांधीके आश्रमसे आये हैं।' तब अुसकी धन्यता और मेरे संकोचका कोअी पार न रहा। लकडी लेकर मैं तो भागा।

अब हमारा बोलना बन्द हो गया। पैर दौडते जा रहे थे और मैं मनमें प्रार्थना करता जा रहा था। आकाशमें गुरु और शुक्र चन्द्रकी कुछ टीका कर रहे थे।

मोटरवाले भाअी पहाडके शिखर पर बैठकर हमारी राह देख रहे थे। जब हम मिले तब वे कहने लगे, 'आप दौडते गये और दौडते आये, और मैं अुतने समय शांतिसे अिस घाटीके भव्य विस्तारका, डूबते हुअे प्रकाशका और पलटते हुअे रंगोंका आनंद लूटता रहा। अब आप बताअिये, अधिक आनंद किसने लूटा?'

मैंने प्रतिध्वनिकी तरह पूछा 'सचमुच, किसने लूटा?'

दिसंबर, १९३६

५२

गुच्छुपानी *

गुच्छुपानी कुदरतका अेक सुन्दर खेल है। मैं सन् १९३७ में देहरादून गया था तब अेक दिनकी फुरसत थी। कुछ साथियोंने कहा, "चलो हम 'गुच्छुपानी' देखनेके लिअे चलें।" अन्य साथियोंने 'सहस्रधारा' देखनेका आग्रह किया। गुच्छुपानी नाम तो अच्छा लगा, लेकिन विस्मृतिके आवरणके नीचे दबे हुअे पुराने संकल्पने अपना मत सहस्रधाराके पक्षमें दिया। अिसलिअे अुस समय गुच्छुपानी देखना रह गया।

१९३९ में कन्या-गुरुकुलके अुत्सवके निमित्तसे देहरादून जाना पड़ा। अिस वक्त गुच्छुपानी मुझे बुलाये बगैर थोड़ा ही रहनेवाला था? देहरादूनसे गुच्छुपानी आरामसे जानेके लिअे दो-तीन घंटे काफी हैं। मोटर तो क्या पैदल आने-जानेमें भी तीन साढ़े-तीन घंटेसे ज्यादा समय नहीं लगता। पहले तो, करीब ढाई मील तक मोटरके लिअे बनाया हुआ आस्फाल्टका चक्करदार रास्ता हमें धीरे-धीरे अूंचे-अूंचे पेड़ोंके बीचसे होकर अूपर चढ़ाता है, और सामनेके पहाड़ पर चमकती मसूरीकी गंधर्व-नगरीका दर्शन कराता है। वहांके बंगलोंकी टेढ़ी-मेढ़ी कतार जब सन्ध्या-किरणोंसे चमकने लगती है तो अैसा आभास होता है मानो चकमकके चौरस टुकड़े बिखरे पड़े हों।

रास्ता छोड़कर हम बायीं ओरके खेतमें अुतरे तो सामने सारे बाढ़-वृक्षोंकी अेक घटा दिखाअी देने लगी। अिस घटाके बीचसे होकर पहाड़की अेक लड़की पत्थरोंके साथ खेलती दक्षिणकी ओर दौड़ती जाती है अुसका दर्शन हुआ। अिस समय अुसके पात्रमें पानी नहीं था। सिर्फ टेढ़े-मेढ़े लेकिन चमकीले सफेद पत्थर ही वहां बिखरे हुअे थे। आम तौर पर बिना पानीकी नदी हम पसन्द नहीं करते। लेकिन जब दोनों ओर अूंची-अूंची टेकरियां होती हैं और सारा प्रदेश निर्जन-रम्य

* अर्थात् पहाड़को चीरकर बहता झरना।

होता है तो सूखी हुअी नदी भी भीषण-रमणीय रूप धारण करती है। पानीका प्रवाह भले न हो, लेकिन हरे-हरे जंगलमें से होकर सफेद धवल पत्थरोंकी पट्टी जब पहाड़ोंके बीचसे अपना रास्ता निकालती आगे बढ़ती है तो मनमें सहज ही खयाल आता है कि ये पत्थर स्कूलके बच्चोंकी तरह गलेमें दौड़ते दौड़ते कतारबंद रुक गये हैं।

हम आगे बढ़े फिर चढ़े फिर अुतरे। ज्यादातर झाड़ोंमें से गुजरना था, अिसलिअ दूर-दूर देखनेके बजाय आसमानकी ओर देखकर ही संतोष मानना पड़ता था। बीच-बीचमें पीले और सफेद फूलोंका अुडाअू-पन देखकर लगता था कि यहां किसीका बंगला होगा, लेकिन दूसरे ही क्षण यकीन हो जाता था कि अैसे दृश्य देखकर ही शहरके बंगले-वालोंको अपने बंगलेके अिर्द-गिर्द फूलके पौधे लगानेका खयाल आया होगा। बंगलेकी चार दीवारें तो कुदरतकी गोदसे बिछुड़े हुअे मानवके लिअे ही हैं। यहां तो कुदरतका विशाल महल है। चार दिशाअें अुसकी चार दीवारें हैं और आसमानका कटाह अुसका गुंबद। रात होनेसे पहले ही अिस गुंबदमें चांद तारोंका चंदोवा नियमपूर्वक ताना जाता है। हवाके बिगड़ने पर चंदोवा मैला न हो अिस दृष्टिसे कभी-कभी अुसके अूपर बादलका पर्दा डाल दिया जाता है।

फूल खुशीसे हंस रहे थे। क्या मालूम किसको देखकर हंस रहे थे! अपने आनेकी सूचना तो हमने दी नहीं थी और दी भी होती तो अपने शिकारियोंका आगमन अुनको भाता या नहीं यह भी अेक सवाल है।

बीच-बीचमें छोटी झोपड़ियां और अिन झोंपड़ियोंको अपमानित करनेवाले चूने-मिट्टीके घर भी आते रहते थे। रास्ते और म्युनिसिपैलिटीकी सुविधासे महरूम घर वनश्रीके साथ अच्छी तरहसे हिलमिल गये थे और वहांके देहाती जीवनकी शान बढ़ाते थे। गोरोंकी फौजी नौकरीसे निवृत्त हुअे गुरखे सैनिक यहां कुदरतकी गोदमें निवृत्तिका आनंद महसूस करते हैं और अपनी वृद्ध पहाड़ी हड्डियोंको आराम देते हैं।

हम आगे बढ़े। आगे यानी सीधा आगे नहीं। पहाड़ी पग-डंडियोंके चक्रव्यूहमें तो जैसा रास्ता मिलता जाता है, वैसे आगे बढ़ना

पड़ता है। बायीं ओर जाना हो तो भी कभी-कभी दाहिनी ओरका रास्ता लेकर अुसकी खुशामद करते-करते आगे बढ़ना पड़ता है। चि० मदनने कहा, "आसपासका सुन्दर दृश्य और आसमानके पल-पलमें बदलते दृश्य हमारा ध्यान अपनी ओर खींचते हैं, लेकिन अेक पलके लिअे भी पैरकी ओरसे असावधान हुअे तो अिस पहाड़ी नदीके पत्थरोंकी तरह लुढ़कना पड़ेगा।" अुसकी बात सच थी। बड़े-बड़े पत्थरों पर पैर रखकर चलनेमें खास मजा आता है। लेकिन वे समानान्तर थोड़े ही होते हैं? अिसलिअे कौनसा पत्थर कहां है, मनुष्यके पांवका बोझ सिर पर आने पर भी अपने स्थानसे डिगे नहीं अैसा धीरोदात्त पत्थर कौन है? — अिस तरह रास्तेका 'सर्वे' करते-करते जहां आगे बढ़ना होता है वहां हरेक कदममें अपना चित्त लगाना पड़ता है। हाथमें पूनी लेकर सूत कातते समय जैसे तकुओंमें हमारा ध्यान भी कतता है, वैसे ही अिस तरहकी पहाड़ी यात्रामें कदम-कदम पर हमारा चित्त यात्राके साथ ओतप्रोत होता है और अिससे ही यात्राका आनंद गहरा होता है।

अब तो अेक लम्बी-चौड़ी नदी नीचे दिखाअी देने लगी। दाहिनी ओरकी दरीसे आकर बाअीं ओर दो शाखाओंमें वह विभक्त हो जाती थी। सामनेकी टेकरी परसे तारघरके खंभोंने पांच-सात तारोंको तानके शुरू करके अिस पार दूर तलहटीमें अिस तरह झेली थी, मानो किसी बच्चेने अपने हाथ और अपनी आंखें यथासंभव तान कर नदीकी चौड़ाई बतानेकी कोशिश की हो।

अुस नदीके पट पर होकर दो छोटे प्रवाह, किसी राजाके अस्त हुअे वैभवकी तरह धीमे-धीमे जा रहे थे। पानी तो बच्चोंके हास्य और स्मित जैसा ही निर्मल था। अिच्छा हुअी कि थोड़ा पानी पेटमें पहुंचा दूं। लेकिन धर्मदेवजीकी रसिकता बीचमें आयी। अुन्होंने कहा, "देखिये, सामने झरना दिखाअी देता है। अेक समय था जब मैं अुसका पानी यहां आकर रोज पीता था। चलिये वहीं चलें।"

हम गये। वहां अेक छोटी पहाड़ीकी कमर पर अेक छोटा-सा ताल था। अमृत जैसे झरनेको अुसमें से निकलनेका सूझा। किसी परोपकारी

आदमीको अुस तालके नजदीक अेक लकडीकी परनाली लगानेकी अिच्छा हुअी, अिसलिअे हम लोगोंको जलदान स्वीकारनेमें आसानी हुअी। पानी पीनेके पहले पश्चिमकी ओर ढलते सूर्यको अेक मनोमय अर्घ्य देना मैं न भूला।

अब तो जिस दिशामें सूर्य-किरणें फैल रही थीं, अुस ओर धीरे-धीरे नदीके पटमें हम चढने लगे। आगे क्या दिखाअी देगा अुसकी निश्चित कल्पना नहीं हो सकती थी। नदीका मूल होगा? या अूपरसे पानी गिरता होगा? या सहस्रधाराकी तरह पानीमें गधक होगा? अैसी अनेक कल्पनाअें मनमें अुठती थीं। अिस झरनेके नामके मुताबिक अुसका रहस्य भी हमारे लिअे गुह्य था। माना जाता है कि गुच्छु शब्द गुह्य परसे आया है।

सुदूर अेक कोटर दिखाअी देता था। वहां पहुंचे तो कुछ और ही निकला। वहां हमें मालूम हुआ कि गुच्छुपानीके मानी क्या हैं।

रेलवे लाअिन डालनेके लिअे जिस तरह पहाड तोडकर सुरंग या टनल खोदी जाती है, अुसी तरह अेक आग्रही झरनेने सारी टेकरीको आरपार बींधकर अपना रास्ता निकाला था। नहीं, नहीं, यह तो गलत अुपमा दे दी। जिस तरह फौलादकी करवत लकडी या 'पोरबंदरी' पत्थरको काटती-काटती नीचे अुतरती जाती है अुसी तरह अिस झरनेने अेक टेकरी सीधी काट डाली है। अिसमें किसी तरकीबसे काम नहीं लिया गया। वज्रकाय पाषाणोंको बींधकर पानी जब आरपार निकल जाता है, तो आश्चर्यचकित मन सवाल पूछ बैठता है कि समर्थ कौन है? अडिग पहाड और अुसके प्राचीन पत्थरोंकी अभेद्य दीवारें या पल भरका भी विचार किये बगैर अपना बलिदान देनेको तैयार चपल और तरल नीर?

अुस विवर या गुफामें घुसनेकी कोशिश करते-करते दिल थोडा-सा कांप अुठे तो अुसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं, अितना अद्भुत था वह दृश्य। यह मौतके मुंहमें प्रवेश करने जैसा साहस था। अंदर दाखिल होते ही मुझे तो गीताके ग्यारहवें अध्यायके श्लोक याद आने लगे। फिर भी पहाड और जलकी शक्तिके द्वारा

अपना सामर्थ्य व्यक्त करनेवाली प्रकृतिमाताके स्वभाव पर विश्वास रखकर हम लोग अंदर दाखिल हुअे।

अुस टेकरीके कुदरती वज्रलेपमें चुने हुअे काले, धौले और लाल गोल पत्थर अैसे दिखाअी देते थे मानो सीमेन्टसे चुने गये हों। और जलका नम्र प्रवाह पैरोंके नीचे छोटे-छोटे पत्थरों परसे अपनी विजय-गाथा गाता हुआ दौडता चला जा रहा था। सिर अूंचा करके देखा तो पानी द्वारा टेकरीको काटकर बनाअी हुअी सामी बीस-तीस फुटकी दो दीवारें अपने लाखों बरसोंके अितिहासकी गवाही दे रही थीं। मेरे बजाय कोअी भूस्तरशास्त्री यहां आया होता तो पहले वह यह देखता कि यह पत्थर ग्रेनाअीटके हैं या सेंडस्टोनके? फिर दीवारकी अूंचाअी क्या है, पानीका ढाल कितना है, हर दसवें साल पानी कितना गहरा जाता है, अिन सबका हिसाब लगाकर वह अिस कुदरती सुरंगकी अुम्र निश्चित करके कहता, "अिस पहाडी प्रवाहको गले पचास हजार या दो लाख सालोंसे चला आ रहा है।" पासकी दीवारमें फंसे हुअे रंग-बिरंगे पत्थरोंको देखकर वह अुनकी अुम्र पूछता और अुनके जाडेपर बैठी हुअी मिट्टीको वज्रलेप सीमेन्ट होने कितने साल बीते होंगे अुसका हिसाब लगाकर टेकरीकी अुम्र भी (हमारे लिअे) निश्चित कर देता। और यदि अुसको यहां हुअे भूकंपका अितिहास किसीसे मालूम हो जाता तो अपने गणितमें अुसके मुताबिक परिवर्तन करके अुसने नये निर्णय भी दिये होते। अिस वज्रलेप सीमेन्टके बीचमें चमडे या बारीक जाल जैसी डिजाअिन कैसे बनी और अुसमें से पानीके बारीक फुहारे क्यों निकलते हैं, यह भी बताया होता। सचमुच नक्षत्र-विद्याके समान यह भूस्तर-विद्या भी अद्भुत-रम्य है। मनोविज्ञानसे अुनकी खोज कम अटपटी नहीं है। ये तीन विद्यायें मानव-बुद्धि-कलाका अद्भुत-रम्य विलास हैं।

हम अुस गुफामें दूर तक चले गये। अेक जगह अूंचे भी चढना पडा। पासमें ही पानीका छोटा-सा प्रपात गिर रहा था। थोडा आगे बढ़े तो पत्थर और चूनेसे बनी हुअी दो दीवारें देखकर कोशिश करने पर भी मैं अपना हंसना रोक न सका। मानवने सोचा कि पहाडका हृदय बींधकर आरपार निकलनेवाले पानीको हम दो दीवारोंसे रोक सकेंगे!

मेरी भावनाको समझते ही वह निर्जीव पाषाण मुझसे कहने लगा, "और मैं भी अुसी कारण हँसता हूँ।" पहाड़का चीरा हुआ हृदय भग्न होने पर भी भव्य दिखाई देता था। लेकिन मानवकी टूटी हुअी दीवारें अुसके मनोरथकी तरह तिरस्कार और हास्यका भाव पैदा करती थी। किसी अुद्दाम आदमीको तमाचा पड़े और अुसका मुँह मुरझाया हुआ दिखाई दे, जिस तरह अिन दीवारोंको अधिक समय तक देखनेकी अिच्छा भी नहीं होती थी। लम्बे अर्से तक किसीकी फजीहतके साक्षी भी हम कैसे रह सकते हैं?

अंदर आगे बढ़कर साथ अुस विवरकी शोभा बढ़ती ही जाती थी। अितनेमें अुन दो दीवारोंके बीच अेक बड़ा पत्थर गिरता गिरता अटका हुआ दिखाई दिया। अूपरसे वह कूदा होगा। और पासकी स्नेहमयी दीवारोंने अुससे कहा होगा, 'अरे भाअी ठहर जा, पानीके खेलमें खलल न पहुँचा।" बेचारा क्या करे! लटका हुआ वहीं खड़ा है। अुलटे सिर लटकते हुए पानीका खेल मजेमें देखना अुसकी किस्मतमें लिखा था। अुस पर तरस खाते हुअे हम आगे बढ़े तो अेक दूसरा पत्थर अुसी तरह लटकता हुआ और अपनी पीठ पर अपनेसे तीन गुने बड़े पत्थरका बोझ लादे खड़ा हुआ दिखाई दिया। हम अुसके नीचेसे भी गुजरे। अगर पासकी दीवारें जरा (सरककर) चौड़ी हो जातीं, तो हमारी हड्डियाँ चकनाचूर हो जातीं और दो-चार क्षणोंके लिअे पानीका रंग लाल-लाल हो जाता। फिर कुदरत कहती कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। दो-चार मानव यहाँ आये होंगे और अुन्होंने अपनी निरर्थक जिज्ञासाकी कीमत चुकाअी होगी। यह बात ध्यानमें रखनेके योग्य थोड़ी ही है! अुसके जैसे दूसरे मानव जब कभी यहाँ आ पहुँचेंगे तब पत्थरोंमें दबे हुअे कुछ अवशेष अुनको मिलेंगे। और वे सच्ची-झूठी कल्पनाओं पर सवार होकर अेकाध प्रकरण खड़ा करेंगे। बस और क्या?

चलते-चलते हम थके तो नहीं, लेकिन ठंडे पानीमें नुकीले पत्थरों पर नंगे पैर चलते-चलते पैर दुखने लगे जिसका अिनकार नहीं हो सकता। लेकिन अुस गुफा-प्रवासकी अद्भुतताका अनुभव करते करते

हम अघा गये। अंदर आगे बढ़ते-बढ़ते भला कितना बढ़ सकते थे? आखिर आगे बढ़नेका हौसला मंद हो गया। लेकिन मन कहने लगा, हारकर वापस कैसे जाय? यहां तक आये हैं तो आरपार जाना ही चाहिये। जो दूसरा सिरा न देखे वह मानवी मन नहीं है।

आगे बढ़ते ही पाट थोड़ा चौड़ा हुआ और पानीकी भीषणता कम हो गओी। अिसलिअे रायाने बनकर हमने मान लिया कि अब आगेका दृश्य नीरस ही होगा। वहां न गये तो चलेगा। हम वापस लौटे। फिर वही दृश्य, वही डर! वही जिज्ञासा और वही भावनायें!!

अुस गुफासे बाहर निकलते निकलते पूरे सोलह मिनट लगे!!! मैंने अपनी आदतके मुताबिक अिस यात्राके स्मारकके तौर पर दो सुन्दर मुलायम पत्थर ले लिये। और अंधेरेमें तेज कदम बढ़ाते-बढ़ाते घर लौटे। मनमें अेक ही सवाल अुठ रहा था: कौन समर्थ है? ये वज्रकाय पुराने पहाड़ या यह नम्र किन्तु आग्रही जीवनधर्मी सत्याग्रही नीर?

५३
नागिनी नदी तीस्ता

जब मैं कुछ साल पहले दार्जिलिंग और कालिंगपांगकी ओर गया था, तब मैंने तीस्ता नदीका प्रथम दर्शन किया था। प्रथम दर्शनसे ही तीस्ताके प्रति असाधारण प्रेम बंध गया। अगर तीस्ताके बारेमें कुछ पौराणिक कथा या माहात्म्य मैं जानता होता तो अुसके प्रति मनमें भक्ति पैदा हो जाती। लेकिन यह तूफानी नदी हिमालयके पहाड़ोंके बीचसे अपना रास्ता निकालती, चट्टानोंसे टकराती, प्रवाहके बीच पड़े हुअे छोटे-बड़े पत्थरोंका मथन करती और तरह-तरहकी गर्जना करती हुअी जब दौड़ती जाती है, तब अुसका अुत्साह, अुसका दृढ़ निश्चय और अुसका अमर्ष देखकर अुसके प्रति प्रेम और आदर बंध जाते हैं, भक्ति नहीं।

जब तीस्ताका प्रथम दर्शन हुआ, तब मनमें सवाल अुठा कि अिस नदीका पहाडी जीवन कुछ तो देखना ही चाहिये। जोरोंसे बहनेवाली पहाडी नदीके अूपर जो बेंतके या रस्सीके रास्तेनुमा पुल बांधे जाते हैं, अुन पर खडे होकर प्रवाहकी ओर देखनेमें अेक विचित्र अनुभव होता है। अैसा लगता है कि यह पुल नदीके प्रवाहका मुकाबला करते हुअे अूपरकी ओर जोरोंसे दौड रहा है। जितना ज्यादा समय तक हम ध्यानसे देखते हैं, अुतनी ही यह प्रतीप-गामी भ्रान्ति बढती जाती है।

अेक दिन मैंने मनमें कहा कि अिसे भ्रान्ति क्या मानें? यह अेक तरहकी दीक्षा है। अिस अनुभवके द्वारा निसर्ग हमें कहता है 'जितनी बेपरवाहीसे यह पानी पहाडसे आकर मैदानकी ओर दौड रहा है और सागरको ढूंढ रहा है, अुतनी ही बेपरवाहीसे और अदम्य कुतूहलसे अिस प्रवाहके किनारे-किनारे पूरा रास्ता मोड लेकर अूपरकी ओर चले जाओ और अिस नदीका अुद्गम-स्थान ढूंढ लो।'

जब पहाडकी कोअी नदी सरोवरसे निकलकर आती है, तब अुसे सर-यू या सरो-जा कहते हैं। जब वह पर्वत-शिखरकी गोदमें अिकट्ठी हुअी हिमराशिसे निकलती है, तब अुसे हैमवती कहना चाहिये। यों तो पर्वतसे निकलनेवाली सब नदियोंका सामान्य नाम पार्वती है ही। हिमालय-पिताकी अिन सब लडकियोंके नाम अगर अेकत्र किये जाय तो अुनकी संख्या कअी सहस्र हो जायगी।

तीस्ताका असली नाम त्रिस्रोता है। अुत्तर-पूर्व अफीकामें नील नदीके दो अलग-अलग अुद्गम हैं और दोनों सात दूर दूरके दो सरोवरोंसे ही निकलते हैं — सफेदरंगी नील और नीलरंगी नील। दोनोंके संगमसे मिश्र देशकी माता बडी नील बनती है। अुसी तरह तीस्ता भी तीन स्रोतोंके संगमसे बनी हुअी है। अेक स्रोतका नाम है 'लाचुंग चू' (चू यानी नदी)। यह नदी 'कान् चेन् झौंगा' शिखरके दक्षिणसे निकलती है। दूसरे स्रोतका नाम है 'लाचेन् चू'। यह नदी पाव हुन् री शिखरके अुत्तरसे निकलकर तथा चो ल्हामो और गोरडामा दो सरोवरोंका जल लेकर रास्ता निकालती निकालती प्रथम पश्चिमकी ओर बहती है, फिर धीमे-धीमे दक्षिणकी ओर मुडती है।

अिन दोनोंका संगम जहां होता है, वहां चुंग थांगका बौद्ध-मंदिर है। लाचून् चू और लाचेन् चू अिन दो नदियोंके संगमसे जो नदी बनती है, अुसे पचहिमावर (थान् चेन् डोंगा), सीम् व्हो और सिनो लो चू अिन तीन गगनभेदी शिखरोंकी गोदमें जो हिमराशियां हैं अुनका पानी लानेवाली तालूंग चू मिलती है, तब अिन तीन स्रोतोंसे तीस्ता बनती है। और फिर वह सीधी दक्षिणकी ओर बहने लगती है। कुछ आगे जाने पर अुसे दाहिनी और बाओं ओरसे छोटी-मोटी अनेक नदियां मिलती हैं। अिनमें महत्त्वकी हैं दिक् चू, रोरो चू, रोंगनी चू, रंगपो चू, और बड़ी रंगीत चू।

जहां-जहां दो नदियोंके संगम होते हैं वहां-वहां अेक बौद्ध मंदिर पाया ही जाता है, जिसे यहांके लोग गोम्पा कहते हैं।

जब मैंने तीस्ताके आकर्षणसे सबसे पहले अिन पहाड़ोंमें प्रवेश किया था, तब मैंने रंगीत नदीका संगम और रंगपो नदीका संगम देखा था। संगमके दोनों स्रोतोंके रंग यहां अलग-अलग होते हैं। अबकी बार अिन दो संगमोंको तो आंख भरके देखा ही, लेकिन सिक्कीमकी राजधानी गंगतोकके पूर्वकी नदी रोरो चू और रोंगनी नदीका संगम भी मैंने सिंगटममें देखा। संगम यानी जीवित काव्य।

महाविजय पानेके लिअे अनेक राजाओंकी सेनाअें जैसे अेकत्र होती हैं और अुनकी सबल-शक्ति बढ़ती है, वैसे ही अिन सब नदियोंका जल-भार पाकर तीस्ता नदी जलवती, वेगवती और मंगलशालिनी बनती है और पहाड़ोंसे लड़ते-लड़ते मैदानमें आ पहुंचती है। यहां वह सिलीगुड़ी तक न जाकर जलपायगुड़ीके रास्ते पाकिस्तानमें प्रवेश करती है और रंगपुरका दर्शन करते हुअे आखिरमें ब्रह्मपुत्रसे जा मिलती है।

हमारे पुरखोंने नदियोंके दो विभाग बनाये हैं। जब कोअी नदी अनेक नदियोंका पानी लेकर पुष्ट होती है, तब अुसे युक्तवेणी कहते हैं। सफेद गंगा, श्याम यमुना और 'गध्ये गुप्ता' सरस्वती मिलकर प्रयागराजके पास त्रिवेणी बनती है। पंजाबमें सिंधु सात नदियोंका पानी पाकर युक्तवेणी बनती है। बादमें जाकर जब वह नदी स्वयं अनेक विभागोंमें बंट जाती है और अनेक मुखोंसे समुद्रमें मिलती है,

तब अुसे मुक्तवेणी कहते हैं। नदियोंके जीवनको हम दूसरी तरहसे भी दो विभाग बना सकते हैं। पहाड़ोंका बद्ध जीवन और खुले मैदानका मुक्त जीवन। गंगानदीका पार्वत जीवन हरद्वारके पास खतम होता है। फिर तो जहां जमीन मजबूत है, वहां वह अेक धारा बना लेती है। लेकिन जहां भूमि बंगालके जैसी बिना पत्थरवाला और समतल होती है, वहां अुसकी अनेक धाराअें भी बनती हैं। हम कह सकते हैं कि नदीका पार्वत जीवन कुमारीके जीवनके जैसा अल्हड़ होता है। मैदानमें आते ही अनेक बालकोंको स्तन्यपान कराने-करानेवाली वह प्रजाओंकी माता बनती है। दार्जिलिंग और कालिंगपांगके पहाड़ोंसे निकलनेके बाद तीस्ताको सिर्फ अेक-दो बंधन सहन करने पड़ते हैं और वे हैं — असमकी ओर जाने-वाली रेलोंके पुलोंके। अेक है भारतवर्षका नया बनाया हुआ असम-लिंकका पुल और दूसरा है हमारा ही बनाया हुआ लेकिन पाकिस्तानके हाथमें गया हुआ रंगपुरके नजदीकका दूसरा पुल।

तीस्ता नदीका मैदानी जीवन कुछ विचित्र-सा है। तिब्बतकी यद्धपि प्रथाका शायद अुसे स्मरण है। अेक समय था जब तीस्ता गंगा नदीसे मिलती थी। अिन सौ-दो-सौ बरसोंके अन्दर अुसने अनेक पराक्रम किये हैं और वहांके लोगोंसे 'पागला' नाम भी प्राप्त किया है। आज भी अुसका अेक प्रवाह छोटी तीस्ताके नामसे पहचाना जाता है दूसरा प्रवाह है बूढ़ी तीस्ता और तीसरा है मरा तीस्ता। अुसने अपना जलभार करतोया नदीको देकर देखा, घाघातको भी दिया। मैदानमें तो वह युक्तवेणी भी बनती है और मुक्तवेणी भी। तीस्ताके चंचल स्वभावको पहचानना और अुसका अनुनय करना मनुष्यके लिअे आसान नहीं है। वह अितना स्थलान्तर करती है कि अुसके अनेक प्रवाहोंको स्थायी नाम देना और अुनको याद करना भी मुश्किल है।
कहते हैं कि 'कालिकापुराण' में तीस्ताका जिक्र है। वहां कथा अैसी है कि देवी पार्वती किसी असुरसे लड़ती थी। वह मस्त असुर कहता था कि मैं शिवजीकी अुपासना करूंगा, लेकिन पार्वतीकी नहीं। पार्वतीका और अुस असुरका घोर युद्ध हुआ। लड़ते-लड़ते असुरको बड़ी प्यास लगी। अुसने शिवजीसे प्रार्थना की कि 'प्रभु, मेरी प्यास बुझा

दो!' और कैसा आश्चर्य! प्रार्थना शिवजीके चरणों तक पहुंचते ही पार्वतीके स्तनोंसे स्तन्यधारा बहने लगी। यही है हमारी तीस्ता। कहते हैं असुरेश्वरकी तृष्णा बुझानेका काम अिस नदीने किया, अिसलिअे अिसका नाम हुआ तृष्णा और तृष्णाका ही प्राकृत रूप है तीस्ता। हमारे ध्यानमें नहीं आता कि नदीको कोअी तृष्णा कैसे कह सकता है। 'तृष्णा' का 'तण्हा' हो सकता है। लेकिन णकारका लोप ही हो जाना ठीक नहीं लगता है।

कुछ भी हो, तीस्ताका जीवन-क्रम शुरूसे आखिर तक आकर्षक और स्मरणीय है। पहाड़ोंमें जहां ये नदियां बहती हैं, वहां गरमी बहुत रहती है। अिसलिअे मलेरियाके जन्तु, दंश-मशक भी बहुत होते हैं। शायद यही कारण होगा कि तीस्ताके नाम कोअी लोकगीत नहीं पाये जाते हैं।

लेकिन अब तो हम लोगोंने विज्ञान-युगमें प्रवेश किया है। मलेरियाके मच्छरोंका अिलाज हो सकता है। जहां नदी जोरोंसे बहती है, वहां अुस पर यंत्रका जीन कसकर अुससे काफी काम लिया जा सकता है। तीस्ताका अुद्गम शायद पांच-सात हजार फुटकी अूंचाअी पर है। जब यह पहाड़ी मुल्क छोड़ती है, तब अुसकी अूंचाअी समुद्रकी सतहसे सिर्फ सात सौ फुटकी होती है। देखते-देखते जो नदी छः हजार फुटकी अूंचाअी खोती है, अुससे कासे घाटे-गो काम लिये जा सकते हैं। आरेसे लकड़ी चीरनेका और आटा पीसनेका काम तो ये नदियां करती ही हैं। अब अिनसे बिजली पैदा करनेका बड़ा काम लिया जायगा। फिर तो सारे सिक्कीम राज्यका रूप ही बदल जायगा।

हमारे धर्मप्राण पूर्वजोंकी यंत्रबुद्धि भी धर्मकार्यमें ही लगती थी। अेक जगह पर हमने देखा कि पहाड़के सोतेके सामने अेक चक्र रखकर अुसके जरिये 'ओम् मणिपद्मे हुं' के जापका लकड़ीका बल्ला या लाठ घुमाया जाता है। और अिस तरह जो यांत्रिक जाप होता है अुसका पुण्य यंत्रके मालिकको मिलता है।

अैसे पुण्यका बड़ा हिस्सा नदीको ही मिलना चाहिये।

७-१०-'५६

५४

परशुराम कुंड

भारतकी करीब करीब अुत्तर-पूर्व सीमाके पास लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्मकुंड या परशुराम कुंड नामका अेक तीर्थस्थान है। तिब्बत, चीन और ब्रह्मदेशकी सरहदके पास, वन्य जातियोंके बीच भारतीय संस्कृतिका यह प्राचीन शिविर था। पश्चिम समुद्रके किनारे सह्याद्रिकी तराअीमें जिनने ब्राह्मणोंको बसाया अैसे भार्गव परशुरामने सारे भारतकी यात्रा करते करते अुत्तर-पूर्व सीमा तक पहुंचकर ब्रह्मकुंडके पास शांति पायी। यह है अिस स्थानका माहात्म्य।

जबसे मैं असम प्रान्तमें जाने लगा तबसे परशुराम कुंड जाकर स्नान-पान-दानका सुख पानेकी मेरी अिच्छा थी। राजनैतिक, भौगोलिक और सामयिक कठिनाअियोंके कारण आज तक वहां न जा सका था। लेकिन जब सुना कि महात्माजीकी चिता-भस्मका विसर्जन अन्यान्य तीर्थोंके जैसा परशुराम कुंडमें भी हुआ है तब वहां जानेकी अुत्कंठा बढ़ी। अिस साल सुना कि असम प्रान्तके कअी लोकसेवक १२ फरवरीको सर्वोदय मेलेके निमित्त वहां जानेवाले हैं, तब तो मनका निश्चय ही हो गया कि अिस मौकेको छोड़ना नहीं चाहिये। पलासबाड़ीके पास कअी बरसोंसे चलनेवाले मोमान आश्रमके श्री भुवनचन्द्र दासको मुझे बुलानेमें कुछ भी तकलीफ न पड़ी।

बार बार भू-भ्रमण करके भूगोल-विद्याको बढ़ानेवाले हमारे जो प्रधान भूगोलविद् पुराणोंमें पाये जाते हैं अुनमें नारद व्यास, दत्तात्रेय परशुराम और बलरामके नाम सब जानते हैं। जिनमें भी व्यास और परशुराम अपनी-अपनी विभूतिकी विशेषताके कारण चिरजीवी हो गये हैं। भारतीय संस्कृतिके संगठन और प्रचारका कार्य महर्षि व्यासने जैसा किया वैसा और किसीने नहीं किया होगा। अिसीलिअे तो अुनको वेद-व्यास (organiser) का अुपनाम मिला। अुनका असली नाम था कृष्ण द्वैपायन।

और परशुराम थे अगस्त्य ऋषिके जैसे संस्कृति-विस्तारक (pioneer of culture)। प्राचीन कालमें मनुष्य-जातिको जीनेके लिअे दारुण युद्ध करना पड़ता था — जंगलोंके साथ और जंगली पशुओंके साथ। जंगलोंने आक्रमण करके मानव-संस्कृतिको कअी बार हजम किया है। अिसका सबूत आज भी कम्बोडियामें आन्कोर वाट और आन्कोर थॉममें मिलता है। अूंचे-अूंचे राजप्रासाद और बड़े बड़े मंदिरोंके शिखरों तक मिट्टीके ढेर लग गये, और जंगलके महा-वृक्षोंने अपनी पताका अुन पर लगा दी। हमारे यहां भी अनेक छोटे-बड़े मंदिर अश्वत्थ और पीपलकी जड़ोंके जालमें फंसकर टेढ़े-मेढ़े हो गये पाये जाते हैं।

अैसे युगमें परशु (कुल्हाड़ी) लेकर मानव-संस्कृतिका रक्षण और विस्तार करनेका काम किया था भगवान परशुरामने। पुराणकी कथा कहती है कि जन्मके साथ परशुरामके हाथमें परशु था। धनी मां-बापके घर जिसका जन्म हुआ है अुसके बारेमें अंग्रेजीमें कहते हैं कि 'He is born with a silver spoon in his mouth'— चांदीका चम्मच मुंहमें लेकर ही यह लड़का जन्मा है। अैसी ही बात परशुरामकी थी।

परशुराम जातिका ब्राह्मण था, लेकिन अुसके सब संस्कार क्षत्रियके थे। जंगलोंका नाश करनेके लिअे कुल्हाड़ी चलाते चलाते अुसने सम्राट् सहस्रार्जुनके हजार हाथों पर भी कुल्हाड़ी चलायी। और क्षत्रियोंके आतंकसे चिढ़कर अुसने अुनके विरुद्ध २१ बार युद्ध किया। क्षात्र पद्धतिसे क्षत्रियोंका नाश करनेकी कोशिश अिस क्षत्रिय ब्राह्मणने २१ बार की। अुसीका अनुभव अुसके अनुगामी ब्राह्मण क्षत्रिय गौतम बुद्धने अेक गाथामें ग्रथित किया है

नहि वेरेन वेरानि सम्मंतीध कुदाचन ।

अिस परशुरामके क्रोधी पिताने अपने अन्य पुत्रोंको आज्ञा दी कि 'तुम्हारी माता कुलटा है, अुसे मार डालो।' अुन्होंने अिनकार किया। जमदग्निकी क्रोधाग्नि और भी बढ़ गयी। अुसने परशुरामको

और मुड़कर कहा, 'बेटा, तुम मेरा काम करो। अिस रेणुकाको मार डालो।' कुल्हाडी चलानेकी आदतवाले आज्ञाधारी पुत्रको सोचना नहीं पड़ा। अुसने माताका सिर तुरन्त अुड़ा दिया। पिता प्रसन्न हुअे और कहा, 'चाहे जितने वर माग। तूने मेरा प्रिय काम किया है।' पुत्रको अब मौका मिल गया। पिताकी सारी तपस्या चार वरमें अुसने निचो ली। 'मेरी माता फिरसे जीवित हो। मेरे भाअियोंको आपने शाप देकर जड़ पाषाण बनाया है वे भी जीवित हों। अपनी हत्या और राजाकी बात वे भूल जायं। मैं मातृहत्याके पापसे मुक्त हो जाअू और चिरजीवी बनूं। पिताने कहा, 'और तो सब दे दूंगा लेकिन मातृ-*हत्याका पाप धो डालनेकी शक्ति मेरी तपस्यामें भी नहीं है।' मायूस* होकर परशुराम वहांसे चला गया। आगे जाकर परशुधर रामको धनुर्धर रामने परास्त किया, क्योंकि युद्धशास्त्र बढ़ गया था। परशुकी अपेक्षा धनुष-बाणकी शक्ति अधिक थी, और दूर तक पहुंचती थी। परशुरामने भारत-भ्रमणमें सारी आयु बितायी। अनेक तीर्थोंका और सन्तोंका दर्शन किया। चित्तवृत्तिमें अुपशमका अुदय हुआ और लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्म-कुंडमें अुसके हाथकी कुल्हाडी छूट *गयी। यही शस्त्र-संन्यासके अिस तीर्थस्थानका माहात्म्य है। परशु*-रामकी जीवन-कथामें पश्चिम किनारेसे लेकर अुत्तर-पूर्व गिरि तकका भारतका, किसी जमानेका, सारा अितिहास आ जाता है। परशुराम कुंडकी यात्रा करके कअी साधु-संतोंने यहांकी वन्य जातियोंका भारतकी संस्कृतिके संस्कार दिये हैं। अिस प्रदेशका लोक-मानस कहता है कि रुक्मिणी हमारे यहांकी ही राजकन्या थी, अिसलिअे श्रीकृष्ण हमारे दामाद होते हैं।

जिस तरह प्राचीन कालसे सांस्कृतिक अग्रदूत यहां आये, वैसे 'अवेर' का अुपदेश करनेवाले बुद्ध भगवानके शिष्य भी यहां आते होंगे। बौद्ध भिक्षु हिमालय लांघकर तिब्बत भी गये थे, और जहाजके रास्ते चीन भी गये थे। अुसके बाद असम प्रान्तमें अहिंसा धर्मकी नयी बाढ़ आयी थी शंकरदेवके जमानेमें। श्री शंकरदेव जंगली शाक्त थे। अुस पंथके दुराचारसे अूबकर वे वैष्णव हुअे और अुन्होंने सारे

असम प्रान्तमें धर्मोपदेश, नाट्य, संगीत, चित्रकारी आदि द्वारा समाज-शुद्धिका और संस्कृति-विस्तारका काम दीर्घकाल तक किया। असी तरह चैतन्य महाप्रभुके वैष्णव धर्मका प्रचार मणिपुरकी तरफ हुआ। शंकरदेवका प्रभाव असम प्रान्तके पर्वतीय लोगोंमें पड़ना अभी बाकी है।

अहिंसा-धर्मकी ताजी और सबसे बड़ी बाढ़ महात्मा गांधीजीके सत्याग्रह-स्वराज्य-आन्दोलनसे असम प्रान्तमें पहुंची। अुसका अधिकसे अधिक असर पड़ना चाहिये खासी, नागा, मिशमी, अबोर, डफला आदि पहाड़ी जातियों पर। अिसके लिअे शिलांग, कोहीमा, मणिपुर, सादिया आदि प्रधान केन्द्रोंके अिर्दगिर्द अनेक आश्रमोंकी स्थापना करना जरूरी है।

अिनमें सादिया अेक अैसा स्थान है जिसके आसपास ब्रह्मपुत्रको मिलनेवाली अनेक नदियों और अुपनदियोंका पंखा बनता है। नोआ डिहंग, टेंगापानी, लाहित, डिगारू, देवपाणी, कुण्डिल, डिबंग, सेसेरी, डिहंग, लाली आदि अनेक नदियां अपना पानी दे देकर ब्रह्मपुत्रको जलपुष्ट बनाती हैं। सादियासे अनेक रास्ते अनेक दिशामें जाकर अनेक वन्य जातियोंकी सेवा करते हैं। खुद सादियाके अिर्दगिर्द जो चुलेकाटा मिशमी लोग रहते हैं वे स्वभावके सौम्य हैं। अिसीलिअे शायद अुनके अंदर सभ्य समाजके सभी दुर्गुण और रोग फैल गये हैं। मूल ब्रह्मपुत्रका अुत्तरी नाम दिहंग है। अुसके भी अूपर जब यह मानस सरोवरसे निकलकर हिमालयके समानांतर पूरबकी ओर बहती आती है, तब अुसे सानपो कहते हैं।

अिन सब नदियोंके किनारे हमारे जो पहाड़ी भाअी रहते हैं अुनको अपनाना हमारा परम कर्तव्य है। यह काम सरकारके जरिये पूरी तरह नहीं होगा। अुसके लिअे परशुराम और बुद्धके जैसे संस्कृति-धुरीण महापुरुषोंकी आवश्यकता है। अर्थात् अुनके पास नयी दृष्टि, नयी शक्ति और नया आदर्श होना चाहिये।

यह सारा काम कौन करेगा? भारतके नवयुवकोंका और युवतियोंका यह काम है। अीसाअी मिशनरियोंने अपनी दृष्टिसे भला-बुरा

बहुत कुछ काम किया है। अुनकी नीयत हमेशा साफ रही है, अैसा भी हम नहीं कह सकते। अैसी हालतमें देशके नेताओंको चाहिये कि वे दीर्घ दृष्टिसे *अिन सब स्थानोंका निरीक्षण करें और* नवयुवकोंको मानवताके नामसे शुद्ध संस्कृतिकी प्रेरणा देनेके लिअे अिस प्रदेशमें भेजें।

वर्धा, २१-३-५०

५५
दो मद्रासी बहनें

अिन दो बहनोंके प्रति मेरी असीम सहानुभूति है। मद्रास शहरने जैसा अिनका महत्त्व बढाया है, वैसी ही अिनकी अुपेक्षा भी की है।

यों तो मद्रास शहरका महत्त्व भी कृत्रिम है। न अुसके पास कोअी सुन्दर पर्वत है, न कोअी महानदीकी खाडी है। तिजारतकी दृष्टिसे या फौजी दृष्टिसे मद्रासका कोअी असली महत्त्व नहीं है। लेकिन अितिहास-क्रमके कारण अंग्रेजोंको यही स्थान पसन्द करना पडा। यहांके स्थानिक लोगोंका प्रेम अिस शहरके प्रति कम था अैसा तो कोअी नहीं कह सकते। जिन भारतीयोंने या धीवर आदिवासियोंने अिस शहरका नामकरण 'चन्नपट्टनम्' यानी सुवर्णनगरी किया होगा, क्या अुन्होंने अिस शहरके भाग्यके बारेमें पहलेसे सोचा होगा?

कुछ भी हो, जबसे अंग्रेजोंने यहां अपनी कोठी डाली तबसे अिस शहरका भाग्य और वैभव बढता ही गया है और अैसे शहरकी सेवा करनेवाली अिन दो बहनोंका भाग्य भी बदलता गया है। अेकका नाम है 'कूवम्' और दूसरीका नाम है 'अड्यार'। ये दोनों नदियां पूर्वगामी होकर बंगालके अुपसागरसे यानी पूर्व-समुद्रसे मिलती हैं।

मद्रास और अुसके आसपासकी भूमि बिलकुल समतल है। यहां छोटे-बड़े अनेक तालाब व सरोवर हैं। लेकिन अब अुनकी कोअी शोभा नहीं रही।

तर्क-बुद्धि कहती है कि जमीन अगर समतल हो और पथरीली न हो तो नदीको अपना पात्र सीधा खोदनेमें या चलानेमें कोअी बाधा नहीं होनी चाहिये। लेकिन नदियोंका ऐसा नहीं है। कुछ दूर तक नदी अेक ओर मुड़ेगी, वहांसे चक्कर मोड़ लेगी और दूसरी ओर पहुंच जायगी। फिर आगे बढ़ते हुअे दिशा बदल देगी। और अिस तरह नागमोडी वक्रगतिसे आगे बढ़ती जायगी।

पहाड़ी नदियोंकी तो लाचारी होती है। पर्वत और टेकरियोंके बीच जहांसे मार्ग मिल सुगी मार्गसे जानेके लिअे व बाध्य होती हैं। तीस्ता कहेगी "मैं स्वभावसे नागिनी नहीं हूं। वक्रगति मेरा स्वभाव नहीं, किन्तु वह मेरा भाग्य है।" काश्मीरमें बहनेवाली वितस्ता या झेलम अपना ऐसा बचाव नहीं कर सकेगी। करीब करीब चक्राकार घूमते जाना और आगे बढ़नेका तनिक भी अुत्साह नहीं रखना, यह है काश्मीर-कुल वाहिनी वितस्ताका स्वभाव। बिहारमें बहनेवाली असंख्य नदियोंके बारेमें भी यही कहा जा सकता है। किसी समय मुझे बिहार प्रांतमें अनेक जगह हवाअी जहाजसे मुसाफिरी करनी पड़ी थी। पता नहीं कितनी बार बिहारके आकाशको मैंने अनेक दिशाओंसे बींध दिया होगा। हवाअी-जहाजसे दूर दूरकी लम्बी मुसाफिरीमें भी काफी अूंचाअीसे मैंने बंगाल और बिहारकी नदियां देखी हैं और अुनका वक्र-मार्ग-नैपुण्य देखकर अुनका आदर किया है।

भारत-भूमिका अेक बड़ा मानचित्र बनाकर अुस पर अगर केवल नदियोंके मार्गकी रेखायें खींची जायें तो वह वक्र-रेखाओंका महोत्सव बड़ा ही चित्ताकर्षक होगा। नदीको दाहिनी ओर और बायीं ओर मुड़े बिना संतोष ही नहीं होता। अेक ओरके अूंचे किनारेको घिसते जाना और दूसरी ओरके निम्न किनारेको हर साल डुबोकर कुछ समयके लिअे वहां जल-प्रलयका दृश्य खड़ा करना यह नदियोंकी खासियत थोड़ा ही है।

लेकिन जब नदियां बड़े-बड़े शहरोंकी बस्तीमें फंस जाती हैं अथवा दयालु होकर अपने दाना और मनुष्यको बसने देती हैं, तब अनका वह स्वच्छंद विहार मर्यादित किये बद हो जाता है और तबसे अनका जीवन तांगा खींचनेवाले घोड़े जैसा हो जाता है। अैसी हालतमें नदियां अगर अपना मार्ग कायम रखें तो भी अनकी शोभा तो नष्ट हो ही जाती है।

लंदनमें टेम्स नदी, पेरिसमें सीन नदी और रिम्सदनमें टाम नदी अिन तीनोंकी बंधन-दुर्दशा देखकर मेरा हृदय कभी बार रोया है। और जब मानिनी और स्वच्छंद विहारिणी नील-नदी लाचार होकर अल्काहेरा (कायरा) शहरके बीचमें जाती है, तब तो दुःखके साथ क्रोध भी जाग्रत होता है। और नदीका अपमान करनेवाली मानव-जातिका शासन कैसे किया जाय अैसे विचार भी मनमें अुठते हैं।

अड्यार और कूवम् अिन दोमेंसे कूवमको बंधनका दुःख ज्यादा सहन करना पड़ा है, क्योंकि वह शहरके बीचसे बहती है। अड्यार शहरके दक्षिण किनारे पर होनेसे अुसे कुछ अवकाश मिला है।

लेकिन — यहां पर भी लेकिन आ गया है — जहां मनुष्यने अपमान नहीं किया, वहां अिस सरिताका सरित्पतिने अपमान किया है। बिचारी अुत्साहके साथ समुद्रको मिलने जाती है और बेकदर समुद्र अूंची-अूंची लहरोंके साथ रेत ला-लाकर अुसके सामने अेक बहुत बड़ा बांध या सेतु खड़ा कर देता है।

देवी बागनीका ब्रह्मविद्या-आश्रम जब सबसे पहले मैं देखने गया था, तब सागर-सरिता-संगमकी भव्यता देखनेके हेतु नदीके मुख तक पहुंच गया था। और क्या देखता हूं — खंडिता अड्यार अपना पानी ला-लाकर मार्ग-प्रतीक्षा कर रही है और समुद्र अपने खड़े किये हुअे बांधको अुस ओर लहरोंका विकट हास्य हंस रहा है। समुद्रके प्रति मनमें क्रोध तो आया ही। क्या अिसमें तनिक भी दाक्षिण्य नहीं है? थोड़ा-सा तो मार्ग देता। लेकिन सरिता और सरित्पतिके बीच फैले हुअे सेतु परसे चलते चलते मनमें यही विचार आया कि अड्यारके अपमानमें मैं भी शरीक हूं। सेतु परसे अुस पार जानेके

बाद वापस तो आना ही पडा। अुसके बाद आज तक कभी बार मद्रास गया हू, भगवती अड्यारका दर्शन भी किया है, लेकिन अुस बाघ परसे जानेका जी ही नही हुआ।

कूवम्‌के पानीसे अड्यारका पानी ज्यादा स्वच्छ मालूम होता है। यहाकी हवा स्वच्छ होनेसे पानी चमकीला भी दीख पडता है। अिस नदीके बीच अुत्तरकी ओर अेक लक्ष्मीपुत्रका सफेद प्रासाद है। वह नदीकी शोभाका भ्रष्ट नही करता। नदीके कारण वह ज्यादा अुठाव-दार हो गया है।

मै जब जब अड्यार गया हू, अुसके किनारेके नारियलका मीठा पानी मैंने पिया है और अुसीको अुस लोकमाताका प्रसाद माना है। अड्यारके साथ कूवम्‌का दर्शन भी होता ही है। लेकिन अुसके लिअे तो आज तक मनमे दया ही दया पैदा हुअी है, हालाकि मद्रासके सेंट जॉर्ज फोर्टके कारण अुसकी शोभा साधारण कोटिकी नही है।

अंग्रेजोने अड्यारसे लेकर कूवम् तक अेक छोटी नहर दौडायी है, जिसे अुन्होने 'बकिंगहेम केनाल' का नाम दिया है। अिस केनालसे क्या लाभ हुआ है सो तो मैं नही जानता। लेकिन अुसका नाम जितनी दफा मैंने सुना अुतनी दफा वह मुझे अखरा ही है।

ये नदिया मद्रास शहरके बीच न होती तो शायद अिन्हें मै श्रद्धाजलि भी नही दे पाता। लेकिन अिनका माहात्म्य और सौन्दर्य बढानेका काम मद्रासके हाथो नही हो सका। मद्रासने अिनसे सेवा ली, लेकिन अिनकी सेवा नही की, यह विषाद तो मद्रासके बारेमें मनमें रह ही जाता है।

२ जून, १९५७

प्रथम समुद्र-दर्शन

पिताजीका तबादला गानागम वारमार हो गया और हम लोगोंने सातारासे हमेशाके लिअे विदा ली। घर पर नरशा नामका अक बैल था। अुसे हमने मामाके घर रहगुदी भेज दिया। महादूका छुट्टी देनी ही पड़ी। बेचारेने रो-रो कर अपने सुपुर्द कर दी। मोरगावी मथुराको छोड़ते समय माने अुसको अपनी अक पुरानी किन्तु अच्छी साड़ी दे दी और अुसने हम सबको बहुत दुआयें दी। घरके बहुत सारे सामान-असबाबको ठिकाने लगाकर हम पहले शाहपुर गये और वहां कुछ रोज रहकर वेस्टर्न अिण्डिया पेनिनशुलर रेलवेसे मुरगाव गये। रास्तेमें गुर्जीके स्टेशन पर पानीके फव्वारे छूट रहे थे जिन्हें देखनेमें हमें बड़ा मजा आया। लोंढ़े पर गाड़ी बदल कर हम डब्ल्यू० आओ० पी० रेलवेके डिब्बेमें बैठ गये।

गोवा और भारतकी सरहद पर कैसल रॉक स्टेशन है। वहां पर कस्टमवालोंने हम सबकी तलाशी ली। हमारे पास चुंगीके लायक भला क्या हो सकता था? लेकिन सफरमें बच्चोंके खानेके लिअे डिब्बे भर-भरकर छोटे-बड़े लड्डू लिये थे। अुन्हें देखकर कस्टमके सिपाहीके मुंहमें पानी भर आया। अुसने निःसंकोच लड्डू हमसे मांग ही लिये। वह बोला, "आपके ये लड्डू हमें खानेको दे दीजिये।" मैंने सोचा कि हमारे लड्डू अब यहीं पर खतम हो जायेंगे। माका दिल पिघल गया और वह बोली, "ले भैया अिसमें क्या बड़ी बात है?" लेकिन पिताजीने बीचमें दखल देते हुअे कहा, 'दूसरे किसीको भी दे दो, लेकिन अिस सिपाहीको देना तो रिश्वत देने जैसा है।"

सिपाही बोला, "हम किसीसे बहुत थोड़े ही जायेंगे? आपके पास चुंगीके लायक चीजें मिली होतीं और हमने आपसे चुंगी वसूल न की होती, तो आपका लड्डू देना रिश्वतमें शुमार हो जाता।"

पिताजीको बहुत न मानकर माने अुन तीनोंको अेक-अेक बड़ा लड्डू दिया। घीमें तले हुअे और चीनीकी चाशनीमें पगे हुअे लड्डू अुन बेचारोंने शायद अुससे पहले कभी खाये न होंगे। अुन्होंने लड्डुओंके टुकड़े अपने मुहमें ठूसकर अपने गालोंके लड्डू बना लिये।

पिताजीकी ओर देखकर मां बोली "क्या मैं घरके चपरासियोंको खानेको नहीं देती थी? ये तो मेरे लड़कोंके समान हैं। अिन्हें खानेको देनेमें धर्म किस बातका? आज तक अैसा कभी नहीं हुआ कि किसीने मुझसे कुछ मांगा हो और मैंने देनेसे अिनकार किया हो। आज ही आपको रिश्वत कहांसे टपक पड़ी?"

बेलगांवसे लेकर तिनअी घाट तककी शोभा देखकर आंखें तृप्त हो गयीं। यह कहना कठिन है कि अुसमें देखनेका आनन्द अधिक था या अेक-दूसरेको बतानेका। हमने दाहिनी तरफकी खिड़कियोंसे बायीं तरफकी खिड़कियों तक और फिर बायीं तरफकी खिड़कियोंसे दाहिनी तरफकी खिड़कियों तक नाच-कूदकर डिब्बेमें बैठे हुअे मुसाफिरोंके नाकों-दम कर दिया।

फिर आया दूधसागरका प्रपात। वह तो हमसे भी जोरशोरसे कूद रहा था। हमने अिससे पहले कोअी जल-प्रपात नहीं देखा था। अितना दूध बहता देखकर हमको बड़ा मजा आया। हमारी रेलगाड़ी भी बड़ी रसिक थी। प्रपातके बिलकुल सामनेवाले पुल पर आकर वह खड़ी हुअी और पानीकी ठंडी-ठंडी फुहार खिड़कीमें से हमारे डिब्बेमें आकर हमको गुदगुदाने लगी। अुस दिन हम सोनेके समय तक जल-प्रपातकी ही बातें करते रहे।

हम मुरगाव पहुंच गये। आजकल मुरगावको लोग मार्मागोवा कहते हैं। हम स्टेशन पर अुतरे और रेलकी बहुतसी पटरियोंको लांघकर अेक होटलमें गये। वहां भोजन करनेके बाद मैं अिधर-अुधर पड़ी हुअी सीपियां लेकर खेलने लगा। अितनेमें केशू दौड़ता हुआ मेरे पास आया। अुसकी विस्फारित आंखें और हांफना देखकर मुझे लगा कि अुसके पीछे कोअी बैल पड़ा होगा।

अुसने चिल्लाकर कहा, 'दत्तू, दत्तू जल्दी आ! जल्दी आ! देख, यहां कितना पानी है! अरे देख द वे गोपिया। समुद्र है समुद्र! चल मैं तुझे दिखा दूं।' बचपनमें अकारण जोश दूसरेमें आ जानेके लिअ अुसके कारणका ज्ञान होनेकी जरूरत नहीं हुआ करती। मुझमें भी वैसा जैसा जोश भर गया और हम दोनों दौड़ने लगे। गादूने दूरसे हमको दौड़ते देखा तो वह भी दौड़ने लगा, और हम तीनों पागल जैसे आगे दौड़ने लगे।

हमने क्या देखा! सामने अितना पानी अछल रहा था जितना आज तक हमने कभी नहीं देखा था। मैं आश्चर्यसे आगे पाकर बोला, 'अबबबब ! कितना पानी!' और अपने दोनों हाथोंको अितना फैलाया कि छातीमें तनाव पैदा हो गया। केशू और गादूने भी अपने अपने हाथोंको फैला दिया। अगर अुस हालतमें पिताजीने हमको देख लिया होता, तो अुन्होंने कैमरा लाकर हमारी तसवीरें खींच ली होतीं। 'कितना पानी है! अितना सारा पानी कहांसे आया? देखो तो, धूपमें कैसा चमकता है!' हम अेक-दूसरेसे कहने लगे। बड़ी देर तक हम समुद्रकी तरफ देखते रहे फिर भी जी नहीं भरा। अब जिस पानीका किया क्या जाय? बिलकुल क्षितिज तक पानी ही पानी फैला हुआ था और अुसमें चुप भी न रहा जाता था। अुसके साथ हम भी नाचने लगे और जोर-जोरसे चिल्लाने लगे, "समुद्र! समुद्र!! समुद्र!!!" हर बार 'समुद्र' शब्दके 'मुद्र' को अधिकसे अधिक फुलाकर हम थकते थे। समुद्रकी विशालता लहरोंके खेल और दिगन्तकी रेखाका दृश्य पहली ही बार देखनेको मिला। अिससे हमें जो अत्यधिक आनन्द हुआ अुसे प्रकट करनेके लिअ हमारे पास अन्य कोअी साधन ही न था। जिस तरह समुद्रकी लहर अुछलकर, फूट-कर फट जाती है अुस तरह हम समुद्रको रट लगाकर तालके साथ नाचने लगे, लेकिन हम लहरें तो थे नहीं अिसलिअे अन्तमें थक कर अिधर-अुधर देखने लगे तो अेक तरफ अेक अेक कमरे जितनी बड़ी अींटें चुनी हुअी हमने देखीं। अुनमें से कुछ टेढ़ी थीं तो कुछ सीधी। अुस समय मुझे दुकानमें रखी हुअी साबुनकी बट्टियां और

दियासलाईकी डिब्बियोंकी उपमा सूझी। वास्तवमें यह मुरगावका घाट था, जो बड़ी बड़ी ईंटोंसे बनाया गया था। शिवजीके नाटकी तरह समुद्रकी लहरें आ आकर उस चबूतरेके साथ टक्कर ले रही थीं।

हम घर लौटे और समुद्र कैसा दिखता है उसके बारेमें घरके अन्य लोगोंको जानकारी देने लगे। समुद्रके साक्षात्कारसे बेचारे दूध-सागरकी तूतीकी आवाज अब कौन सुनता?

सूर्य समुद्रमें डूब गया। सब जगह अंधेरा फैल गया। हम खाना खाकर घाटके साथ लगे हुए जहाज पर चढ़ गये। लालटेन ताराओं जो बड़ा जहाजमें होता है उसके पासकी बेंच पर बैठकर बाबू और मैं यह देखने लगे कि ऊँट जैसी गर्दनवाले भारी बोझ उठानेके यंत्र (क्रेन) बड़े-बड़े बोरोंको रस्सियोंसे बाँधकर कैसे ऊपर उठाते हैं और उस तरफ रख देते हैं। हमारे सामनेके क्रेनने एक बड़े ढेरमें से बोरे निकालकर हमारे जहाजमें पेटा भर दिया। क्रेनकी घर्र घर्र आवाजके साथ मल्लाह जोर जोरसे चिल्लाते 'आरिया! आरिया!' — 'आब्या! आब्या!' जब वे 'आरिया' कहते तब क्रेनकी जंजीर चढ़ जाती और 'आब्या' कहते तब वह ढीली पड़ जाती। कहते हैं कि ये अरबी शब्द हैं।

हम यह दृश्य देखनेमें मशगूल थे कि इतनेमें हमारे पीछेसे, मानो कानमें ही 'भों ओं ओं   'की बड़े जोरकी आवाज आयी। हम दोनों डरके मारे बेंचसे झट कूद पड़े और पागलकी तरह इधर-उधर देखने लगे। हमारे कानोंके परदे मानो फटे जा रहे थे। इतने नजदीक इतने जोरकी आवाज बर्दाश्त भी कैसे हो? कहाँ तो दूरसे सुनाई देने-वाली रेलकी 'कू   ऊ   ऊ   'वाली सीटी और कहाँ यह भैंसकी तरह रेंकनेवाली 'भों ओं   'की आवाज! आखिरकार यह आवाज रुक गयी, लकड़ीका पुल पीछे खींच लिया गया, आने-जानेके रास्ते परसे निकाला हुआ कटीला रस्सा फिरसे लगा दिया गया और 'धग धग' करते हुए हमारे जहाजने किनारा छोड़ दिया। देखते देखते अंतर बढ़ने लगा। किसीने रूमालको हवामें फहराकर तो किसीने सिर्फ हाथ हिलाकर एक-दूसरेसे विदा ली। जैसे मोरों पर चढ़ लोगोंको

पर दीप-स्तंभ था। यह अुसकी विशेषता थी। अिस दीप-मीनारके पास अेक पतली ध्वज-डंडी मुश्किलसे दीख पड़ती थी। समुद्र-किनारे खेलते-खेलते थक जानेके बाद दीप-मीनारका जलता दीया रात प्रथम देखनेकी हमारे बीच होड़ लगती थी। कभी-कभी मनमें यह विचार अुठता था कि पानीके अिसी विशाल पट परसे जब हम कारवार आये तब रातको स्टीमरमें से देवगढ़ क्यों न देखा?

किसी स्टीमरके आते वक्त देवगढ़की ध्वज-डंडी पर लाल ध्वज चढ़ाया जाता था। अुस वक्त कारवार बन्दरगाहके नजदीककी ध्वज-डंडी पर भी ध्वज चढ़ाया जाता था। यहांका आदमी दूरबीन लेकर देवगढ़की ओर ताकता रहता था। वहां ध्वज दिखाओ देने पर यह यहां भी ध्वज चढ़ाता था। कभी-कभी मैं दूर देवगढ़ पर चढ़ा हुआ ध्वज देख सकता था और अपने साहसको आश्चर्यचकित कर देता था।

अेक दफा मैंने पिताजीसे पूछा, "देवगढ़ पर दीया कौन जलाता है? ध्वज कौन फहराता है?" अुन्होंने जवाब दिया, "वहां अेक खास आदमी रखा गया है। शाम होते ही वह दीया जलाता है। दूरसे आती हुआी आगबोटको देखकर वह ध्वज चढ़ाता है। देवगढ़का दीया देखकर नाविकोंको पता चलता है कि कारवारका बन्दरगाह आ गया। वे जानते हैं कि दीयेके नीचे चट्टान है। अिसलिअे वे दीयेके पास नहीं जाते।"

"दीप-मीनारकी सम्हाल रखनेवाले मनुष्यके लिअे खानेकी क्या सुविधा होगी? वह मीठा पानी कहांसे लाता होगा?" मैंने सवाल किया।

"नावमें बैठकर खाने-पीनेकी सब चीजें वह कारवारसे ले जाता है। देवगढ़ पर शायद टांका या कुआं होगा, जिसमें बारिशका पानी जमा कर रखते होंगे।"

"क्या हम वहां नहीं जा सकते? चलें, हम भी अेक दफा वहां हो आयें। वहां हमेशा रहनेमें तो बड़ा मजा आता होगा। शाम होते ही दीया जलाना; और आगबोटकी सीटी बजते ही ध्वज चढ़ाना। बस,

जितना ही नाम? बाकीका सारा समय अपना! हम जिस तरह चाहें व्यतीत कर सकते हैं। न कोअी हमसे मिलने आवेगा, न हम किसीसे मिलने जायेंगे। चलें, अेक दफा हम वहां हो आयें।"

पिताजीने हमारे घरके मालिक रामजीसेठसे तफसीलसे पूछा। अुन्होंने अपने जहाजके कप्तानसे बातचीत की। और दूसरे ही दिन देवगढ़ जाना तय हुआ। हम सब गाड़ीमें बैठकर बन्दरगाह पर गये। बड़ी किश्तीमें बैठने पर सब मजा आया। पाल फैलाकर और डांडे खेलते हम चले। अन्दाज सुन्दर आता था, लेकिन जल्दी आगे बढ़नेका नाम न लेता था। बहुत समय लगा तो पिताजीने रामजीसेठसे कारण पूछा। रामजीसेठने कप्तानसे पूछा। अुसने कहा, 'पवन अनुकूल नहीं है, टेढ़ा है। पवनकी दिशाका खयाल करके पाल चढ़ाये गये हैं। जहाज आगे बढ़ता है, लेकिन देवगढ़ पहुंचते पहुंचते शाम हो जायेगी।" मुझे तो कोअी आपत्ति न थी। सारा दिन डोलनेका आनन्द मिलेगा और शाम होते ही दीप-मीनारका दीया नजदीकसे देखनेको मिलेगा। लेकिन अितनी अच्छी बात पिताजीके ध्यानमें न आयी। अुन्होंने कहा, 'यह तो ठीक नहीं है।" कप्तानने कहा, "पवन प्रतिकूल है। अिससे सामने हम क्या करें? थोड़ी दूर जानेके बाद यदि यही पवन जोरसे बहने लगा तो जितना अंतर काटना भी मुश्किल है।" रामजीसेठने पिताजीसे पूछा, "अब क्या करें?" पिताजीने कहा, 'और कोअी अुपाय ही नहीं है। वापस जायेंगे।

हुक्म हुआ, "वापस चलो।' पालोंकी व्यवस्था बदल दी गयी। किस तरह यह सब फेरफार किया जाता है यह देखनेमें मैं मशगूल था। अितनेमें हमारा जहाज धक्के तक वापस आ पहुंचा। अितनी दूर जानेमें अेक पहर लगा था। लेकिन वापस आनेमें पांच मिनट भी न लगे! घर लौटते वक्त सिर्फ तांगेके घोड़े ही जल्दी नहीं करते।

हम जैसे गये वैसे ही खाली हाथ लौट आये। फीका मुंह लेकर घर आया, मानो अपनी फजीहत हुअी हो। सहपाठियोंसे मैंने अितना भी न कहा कि हम देवगढ़ जानेको निकले थे।

अिसके बाद करीब पांच साल तक मैं कारवार रहा। लेकिन फिर कभी मैंने देवगढ जानेकी कोशिश न की। सूर्यास्तके समय देवगढ़का दीया दिखने पर मैं अपने मनसे यह सवाल पूछता था कि अुस पर्वतके देशमें क्या होगा? चालीस वर्षके बाद, यानी आजसे दस वर्ष पहले फिर अेक दफा मैं कारवार गया था। लेकिन तब भी देवगढ़ न जा सका।

अिस बार यह निश्चय करके ही कारवार गया कि देवगढ़ देखे बिना नहीं लौटूंगा। वहांके मित्रोंसे मैंने कह दिया था कि देवगढ़के लिअे अेक दिन जरूर रखें।

देवगढ़में देखने लायक खास तो कुछ नहीं है। लेकिन छप्पन सालका बचपनका मेरा सम्बन्ध देवगढ़के साथ सलग्न था। अुससे मुक्त करनेकी जरूरत थी।

देवगढ़ कारवारके किनारेसे लगभग तीन मील दूर समुद्रमें आया हुआ अेक बेट है। कारवार बंदरगाहकी यह सबसे बड़ी शोभा है। समुद्रकी सतहसे पहाड़ीकी अूंचाअी २१० फुट है और अुस परकी दीप-मीनार ७२ फुट अूंची है।

शराबबंदीके कारण कस्टमवालोंको समुद्रका पहरा देना पड़ता है। अुसके लिअे अुनके पास अेक वाफर* होती है। अुसके द्वारा हमें ले जानेकी व्यवस्था की गअी थी। हमारा यह सैरका कार्यक्रम दूसरे जरूरी कार्यक्रमोंके आड़े न आवे अिसलिअे हम सुबह जल्दी अुठे और बंदरगाह पर पहुंच गये। हम अितने अरसिक नहीं थे कि सुबहकी प्रार्थना और जलपान घर पर करें। खलासी लोग जरा देरसे आये, अतः घोड़ेकी तरह दौड़ती हुअी हमारी वाफरके तालके साथ चल रही हमारी प्रार्थना सुननेके लिअे कारवारके पहाड़के पीछेसे सविता नारायण भी आ पहुंचे। सविता नारायणको अर्घ्य देकर सुनाअी प्रार्थना कितनी खिल अुठी थी! समुद्रके पानी भी प्रार्थनाकी प्रसन्नताके कारण चमकती लहरोंके साथ आये थे। मैंने जमीनकी ओर देखा। दाहिनी ओर कारवारका बंदरगाह

* भापसे अँजिनसे चलनेवाली नाव — स्टीमलॉच।

छोटी-बड़ी नौकाओंको जगाता था और खेलाता था। अुसके पासकी घाटीके नारियलके पेड़ पवनकी राह देखते खड़े थे। शनिवारकी तार, जो आजकल छपती नहीं है, फड़फड़ पन्ना मेरे फाड़कर नाहक डरती थी। अुसके बाद सागर पर चारचारकी चौड़ाअीका नापन हुअे बाढ़ी नदी तक फैले थे। जिस तरह भारतीय युद्धके गजा [illegible] मुहमें दौड़ अुसी तरह तीन-चार जहाज खाड़ी नदीके मुहमें घुस रहे थे। और सदाशिव-गढ़का पहाड़ सहज भृगराज बनकर सारे प्रदेशकी रक्षा करता था।

प्रार्थना पूरी होने पर हमारी वाफरन समुद्रकी पीठ पर जो रास्ता बनाता था और अुस पर जो डिजाअिन शीघ्रतासे अदृश्य हो रही थी अुस ओर मेरा ध्यान गया, अुस डिजाअिनमें सुन्दरताकी हरेक खूबी प्रकट हुअी थी।

अुस टापूको दिखाये बगैर रहूंगा ही नहीं, अैसा निश्चय करके व्यवस्थाके सब ब्योरोंकी ओर सावधानीसे ध्यान रखनेवाले भाअी पद्मनाथ कामतने मुझे दक्षिणकी ओरके पहाड़की तराअीके नीचे फैला हुआ बड़भागी किनारा दिखाया। किसी समय युरोपियन स्त्रियां वहां नहाती होंगी। अिसलिअे अुसका नाम Ladies Beach (युवती-तट) पड़ा है।

कारवारकी संस्थाओंके आगेवान यदि बाबरकर भी हमारे साथ सफरमें आये थे। हमारे आनंदकी वृद्धि करनेके लिअे भाअी कामत अपने साथ चित्रकार श्री रमानंदको लाये थे। रमानंदने चितारी और बड़े मेहमानोंकी सभिरोंमें शोभा दे अैसी नम्रता धारण करके ठीक-ठीक आत्म-विलोपन किया था। लेकिन बीच समुद्रमें आते ही पहाड़, बादल, सूरज, पक्षी, जहाजके पाल और समुद्रकी अूर्मियां अिन सबके प्रभावके नीचे अुनकी कलाकार आत्मा हमारी हस्तीका भान भूल गयी और वे अनेक दिनोंके भूखे किसी साधुकी तरह आसपासके सौन्दर्यका अनिमेष दृष्टिसे भक्षण करने लगे। हमने अंगुलि-निर्देश करके अुनकी ओर दूसरोंका ध्यान खींचा। लेकिन अिससे अुनका ध्यान नहीं बंटा। सिर्फ नन्ही सुन्दरकी पलकें आगे सरकीं और घूमती थीं।

नहीं लूट सकते। नावका नशा जितना मादक होता है कि अुसमें गायन स्वर फूट निकलता है।

वाफरमें बैठनेका आनंद किस नौकासे कुछ कम है। वह अिसलिअे कि अुसकी रफ्तारमें मानवका बाहुबल बिलकुल खर्च नहीं होता। किसान जब हाथसे पतवारवाली नावको चलाता है तब रसमग्न होता है। अुसमें ही पुरुषार्थका अवकाश कायम मिलता है। लेकिन वाफरके द्वारा पानीको चीरते हुअे जानेका आनंद सारे शरीरको मिलता है। वाफर जब सीधी दौड़ती जाती है तब अुसकी गति हमारी रग-रगमें पहुंचती है। मोटर चलानेकी अपेक्षा वाफर चलानेका आनंद अनंत गुना बढ़कर है।

अिस आनंदको लूटते-लूटते और यह विचार करते-करते कि समुद्रका पानी यहां कितना गहरा होगा हम देवगढ़की ओर चले। मुझे अेक विचार आया कि पानी सबसे नीचे है वह अूपरके पानीके भारसे कुचल नहीं जाता होगा? अूपरके पानीसे नीचेका पानी अधिक गाढ़ा और घना होना ही चाहिये। अमुक मछलियां तो अुस गाढ़े पानीको चीरकर नीचे अुतर ही नहीं सकती होंगी। पारेके सरोवरमें अगर हम पड़ें तो लकड़ीके टुकड़ेकी तरह सबके अूपर ही तैरते रहेंगे। अमुक प्राणियों मछलियोंका भी नीचेके गाढ़े पानीमें यही हाल होता होगा।

ज्यों ज्यों देवगढ़का तट नजदीक आता गया, त्यों त्यों आस-पासके छोटे-छोटे तट और चट्टान स्पष्ट दीखने लगीं। आकाश और समुद्र जहां मिलते हैं वह क्षितिज-रेखा भी आज बहुत ही स्पष्ट थी। मानो काली स्याहीसे खींचा गया है कि यहां पृथ्वी पूरी होती है और स्वर्ग शुरू होता है।

दो जहाज अपने पालमें पवन भरकर सफरको रवाना हुअे थे। अुन पालोंके पेटमें पवनके साथ अुगते सूरजकी किरणें भी घुस गयी थीं। अैसा महसूस होता था कि अिस भारसे पाल फट जायेंगे। पाल अितने चमकते थे कि वे रेशमके हैं या हाथी-दांतके यह तय करना मुश्किल था। जब पवन पालमें घुसता है तब वैसे पालकी डिजाअिन अुसमें अधिक शोभती है।

अब हम देवगढ़के बिलकुल नजदीक आ गये थे। सारी पहाड़ी टेकरी छोटे-बड़े पेड़ोंसे ढकी हुअी थी। अपरकी दीप-मीनार अपना दर्जा सम्भालकर आकाशकी ओर अंगुलि-निर्देश कर रही थी। अब वाफरके लिअे आगे जाना असंभव था। बाकीका थोड़ा और छिछला अंतर काटनेके लिअे हमारी वाफरने अपने साथ अेक नन्हा-सा किश्ती बांध लिया था। अुस छोटीसी नावमें हम अुतरे और बेटके किनारे पहुंचे। अुतरते ही पके बेरके लाल-लाल फलोंने हमारा स्वागत किया। हम अूपर चढ़ते-चढ़ते बड़े-बड़े वृक्षोंकी शाखायें तथा बरगदकी जड़ें निहारते-निहारते दीप-मीनारकी तलहटी तक पहुंचे। दीप-मीनारके दीपकार अेक भले मुसलमान थे। अुन्होंने हमारा स्वागत किया। बेट पर दीप-मीनारके कारण कुछ लोग रहते थे। अुनके कारण थोड़े बकरे और मुर्गे भी रहते थे (और समय समय पर बा-कायदा मरते भी थे)। समुद्र किनारेसे अुड़ते-अुड़ते आकर यहांके पेड़ों पर आराम करनेवाले और प्राकृतिक खादके फव्वारे छोड़नेवाले पक्षी तो अृषि-मुनियों जैसे ही पवित्र माने जाने चाहिये।

वाफरमें बैठकर हमने सुबहकी आश्रमकी अुपासना की थी, यहां अेक चट्टान पर बैठ कर सबोंने पेटकी अुपासना की। आसपासकी शोभा अपार देखनेके बाद दीप-मीनारके पेटमें होकर हम अूपर गये।

दीयेमें से 'विखरती' निकली किरणोंको खूबीसे मोड़कर पानीके पृष्ठभागके समानान्तर अुनका बड़ा प्रवाह दौड़ानेके लिअे अनेक प्रकारके बिल्लोरी कांचसे बनायी हुअी दो ढालोंको हमने ससंभ्रम देखा। पेराबोला और हाअीपरबोलाके गणितका अुसमें पूरा अुपयोग किया जाता है। शंकुछेदका * रहस्य जो जानता है वही अिसका रहस्य समझ सकेगा। अुसके बाद अुस दीयेका दूसरा अेक और चक्कर लगाकर हमने दूर तक सामुद्रीय शोभा निहारी और जितनेसे संतोष न पाकर हम दीयेके आसपासकी गैलरीमें जाकर स्वतंत्रतासे दसों दिशायें देखने लगे।

---

* Conic sections.

जिस दृश्यको देखनेकी अभिलाषा मैं छप्पन सालसे सेता आया था, वह दृश्य आज देखा। आशाको पारण मिला। अैसा लगता था मानो सारा बेट अेक बड़ा जहाज है, दीप-मीनार अुसका मस्तूल (mast) है, और हम अुस पर चढ़कर चारों ओर पहरा देनेवाले खलासी हैं। यह सच है कि जहाजके मस्तूलकी तरह यह दीप-मीनार डोलती न थी लेकिन अभी-अभी बाफरवा सफर किये हुअे हमारे 'पियक्कड़' दिमाग अिस त्रुटिको दूर कर रहे थे।

अितनी अूंचाअीसे चारों ओर देखनेमें अेक अनोखा आनंद आता है। कुतुबमीनार परसे हिन्दुस्तानकी अनेक राजधानियोंका स्मशान देखने-से मनमें जो विषाद पैदा होता है सो यहां नहीं होता। यहांसे दिखनेवाले समुद्रमें प्राचीन कालसे आजतक अनेक जहाज डूब गये होंगे, लेकिन अुसकी गमगीनी यहांके वातावरणमें बिलकुल नहीं दीख पड़ती। समुद्रमें भूत और भविष्यके लिअे स्थान ही नहीं होता। वहां वर्त-मानकाल और सनातन अनंतकाल, अिन दोनोंका ही साम्राज्य चलता है। जब तूफान होता है तब लगता है कि यही समुद्रका सच्चा और स्थायी रूप है। और जब आजकी तरह सर्वत्र शांति होती है तब लगता है कि तूफान तो माया है। सचमुच समुद्रका मुंह बुद्ध भगवानकी शांति और अुनके अुपशमका ध्यान करनेके लिअे ही सिरजा गया है।

अितने बड़े समुद्रको आशीर्वाद देनेकी शक्ति पितामह आकाशमें ही हो सकती है। आकाश शांत चित्तसे चारों ओर फैल गया था और समुद्र पर रक्षणका ढक्कन ढांकता था। ढक्कन पर कुछ भी डिजाअिन न थी, यह पक्षियोंसे सहन न होता था। अतः वे अुस पर तरह तरहकी रेखाअें खींचनेका अस्थायी प्रयत्न करते थे। जिस तरह बच्चे किसी गंभीर आदमीको हंसानेके लिअे अुसके सामने डरते डरते थोड़ी वानर-चेष्टाअें करके देखते हैं, अुसी तरह समुद्रका नीला रंग आकाशकी नीलिमाको हंसानेका प्रयत्न कर रहा था।

भगवानका अैसा विराट दर्शन होते ही भगवद्गीताका ग्यारहवां अध्याय याद आना चाहिये था, लेकिन अितने प्राचीन कालमें जानेके

५८

मरुस्थल या सरोवर

असी घटनाओं नियमित हो जानेसे क्या अुनकी अद्भुतता मिट जाती है?

कुछ घंटे पहले पानी कहीं भी नजर नहीं आता था। अुत्तरसे लेकर दक्षिण तक सीधा समुद्र-तट फैला हुआ है। पश्चिमकी ओर जहां आकाश नम्र होकर धरतीको छूता है वहां तक — क्षितिज तक — पानीका नामोनिशान नहीं है और भी लहर नहीं दीखती। यह स्थान पहली बार देखनेवालेको लगता कि यह कोओी मरुस्थल है। बारिशके कारण स्थल भीग गया है। या यों लगता कि यह कोओी दलदल है जिस पर केवल घास नहीं है। जहां तक दृष्टि पहुंच सकती है वहां तक सीधी समतल जमीन देखकर कितना आनंद मालूम होता है। अैसी समतल जमीन तैयार करनेका काम किसी अिजीनियरको सौंपा जाय तो अुसे बेहद मेहनत करनी पड़ेगी। मगर यह है कुदरतकी कारीगरी। अूंचे अूंचे पहाड़ोंमें भव्यता होती है जब कि अैसे समतट* प्रदेशोंमें विशालता विशेषता होती है। हम अिस विशालताका पान करनेमें मग्न थे अितनेमें दूर क्षितिज पर जहाजके जैसा कुछ नजर आया। जमीन पर जहाज? क्या बात है? अितनेमें दक्षिणसे लेकर अुत्तर तक फैली हुआी और भूरी रेखा गहरी होने लगी। बीच बीचमें अुस पर सफेद लहरें दिखाओी देने लगीं। पानीका लश्कर आया। सेनापतिके हुक्मके अनुसार 'अेक-कतार' में लहरें आगे बढ़ने लगीं। आता आता पानी आगे आया! वह आधे तट पर फैल गया! सूरज आकाशमें चढ़ता जाता था, धूप बढ़ती जाती थी और लहरोंका अुन्माद भी बढ़ता जाता था। क्या ये लहरें अीश्वरका सांगा

* सम-तट = stretched evenly अुदाहरणके लिओ, गंगामुखके पासका सुन्दरवनका प्रदेश समतट कहलाता था।

समाप्त हुआ। ओीश्वरने मानो अपनी प्राणशक्ति वापस खींच ली। अब अेक अेक लहर किनारेकी ओर दौड़ती आती है फिर भी यह साफ दिखाओी दे रहा है कि पानी पीछे हट रहा है।

चला, पानी हटने लगा। क्या समुद्रने अुस पार बड़ा गड्ढा है, जिसे भर देनेके लिअे यह सारा पानी दौड़ता जा रहा है? आगेकी लहरोंको वापस लौटते देखकर बादमें आयी हुओी लहरें बीचमें ही विरत हो जाती हैं और दौड़ते दौड़ते ही रुक पड़ती हैं। सागरके पानीका अंदाज भला कौन लगाये? अुसे किस तरह नापें? अितना पानी आया क्यों और जा क्यों रहा है? क्या अुसे कोओी पूछनेवाला नहीं है? या कोओी पूछनेवाला है अिसीलिअे वह अितना नियमित रूपमें आता है और जाता है? ज्यों ज्यों सोचने लगते हैं त्यों त्यों अिस घटनाकी अद्भुतताका असर मन पर होने लगता है। ज्वार और भाटा क्या चीज है? समुद्रका श्वासोच्छ्वास? अुनका अुपयोग क्या है? ज्वार और भाटा यदि न होते तो समुद्रका क्या हाल होता? समुद्र-जीवी प्राणियोंके जीवनमें क्या क्या परिवर्तन होता? चंद्र और सूर्यका आकर्षण और पृथ्वीकी सतहका सागरका विभाजन आदि चर्चाअें तो ठीक हैं, मगर अिनके पीछे अदृश्य क्या है यह जाननेकी ओर ही मन अधिक दौड़ता है। पर यह जिज्ञासा अभी तक तृप्त नहीं हुआी है।

जितनी बार हम ज्वार और भाटा देखते हैं अुतनी ही बार वे समान रूपसे अद्भुत लगते हैं। और अिस बातकी प्रतीति होती है कि ओीश्वरकी सृष्टिमें चारों ओर वह ज्ञानमय प्रभु सनातन रूपसे विराजमान है।

'सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः' कहकर हृदय अुसे प्रणाम करता है। सृष्टि महान है तो अुसका सिरजनहार किस कैसा होगा? अुसे कौन पहचानेगा? क्या खुद अुसे अिस बातकी परवाह होगी कि कोओी अुसे पहचाने?

बोरडी, १ मओी, १९२७

कि ठीक अिसी प्रकारसे अेक स्थानका सर्जन प्रकृतिने पूर्वकी ओर भी कर रखा है।

राष्ट्रभाषा-प्रचारके सिलसिलेमें जब मैं अिससे पहले बलवसार अुत्कल आया था, तब बालासोरका काम पूरा करके चांदीपुर देखनेके लिअे खास तौर पर यहां आया था। रास्तेमें जगह जगह पानीके गड्ढोंमें अुगे हुअे नील-कमल देखकर मेरे हर्षका पार नहीं रहा था। कमल यानी प्रसन्नताका प्रतीक। सुन्दरता, कोमलता, ताजगी और पवित्रता जब अेकत्र हुअी तब अुन्होंने कमलका रूप धारण किया। कमल जब सफेद होता है तब वह तपस्विनी महाश्वेताका स्मरण कराता है। वही कमल जब लाल होता है तब गन्धर्व-नगरी पर राज्य करनेवाली कादम्बरीकी शोभा दिखलाता है। किन्तु नील-कमल तो प्रत्यक्ष कुंजविहारी श्रीकृष्णकी ही भूमिका अदा करता मालूम होता है। संभव है हमारे देशमें नील-कमल अधिक देखनेको नहीं मिलते, अिसलिअे मुझे अैसा लगा हो। मगर अिस मार्ग पर नील-कमलोंको देखकर मुझे अपार आनंद हुआ अिसमें कोअी संदेह नहीं।

बालासोरसे चांदीपुरका रास्ता लगभग सीधा है। किनारेके डाक-बंगलेके दरवाजे तक पहुंच जाते हैं तब तक भी समुद्रका दर्शन नहीं होता। मगर जब होता है तब वह अपनी विशालतासे चित्तको हर लेता है। पिछली बार जब हम गये थे तब ज्वार धीरे धीरे बढ़ रहा था, और नाजुक लहरें क्षितिजके साथ समानान्तर रेखा बनाकर धीमे धीमे आगे बढ़ रही थीं। क्षितिजसे किनारे तक आते समय लहरें अितनी सीधी और समानान्तर आती थीं, मानो कोअी दो-तीन मील लम्बी तनी हुअी रस्सीको खींचकर आगे ला रहा हो। मेरे साथ यदि कोअी विद्यार्थी होता तो मैं अुसे समझा देता कि नोटबुकमें जो रेखायें खींचते हैं, वे अिसी तरह सुन्दर और समानान्तर खींचनी चाहियें। जमीन जब सब ओरसे समतल होती है तब अंग्रेज लेखक अुसे टेनिस-कोर्टकी अुपमा देते हैं। मगर यहां टेनिस कोर्ट और कहां मीलों तक फैली हुअी लम्बी और चौड़ी सिकता-स्थली!

चि० मदालसाने अैसी कभी डिब्बियां चुन लीं। अुनके आरपार सुराख होनेस अुनकी माला बनानेकी कल्पना सहज सूझ सकती थी।

समुद्रका तट, अुसकी लहरें, लाल केकड और ये सीपें अिन सबकी बातें करते करते हम वापस लौटे। कुछ नील-कमल भी हमने साथ ले लिये और भारतवर्षके दर्शनमें अेक और कोमली वृद्धि हुअी अैसे मनाघके साथ घर लौटे।

अबकी जब फिरसे बालासोर आये तब जिस सारे दृश्यका प्रत्यक्ष स्मरण हो आया और अुसे श्रद्धाकी अंजलि अर्पण करनेके लिअे फिर चांदीपुर जानेका कार्यक्रम हमने तय किया।

आकाशमें बादल घिरे हुअे थे। फिर भी हमने यह आशा रखी थी कि चांदीपुर पहुंचने पर पानीमें से निकलते हुअे सूर्यके दर्शन करेंगे। अतः साढे तीन बजे अुठकर नित्यविधि पूरी की, चार बजे डॉ० भुवनचन्द्रजीने मोटर मंगवाअी और मोटर-वेगसे आठ मीलका अंतर तय किया। रास्तेमें न तो खड्डे थे, न श्रीकृष्णकी आंखोंसे होड करनेवाले नील-कमल थे। मुझे लगभग यही विश्वास था कि वे लहरें भी हमें देखनेको नहीं मिलेंगी। अष्टमीका चांद आकाशमें फीका चमक रहा था। अतः मैंने माना था कि यहां सिर्फ छलकता हुआ शांत सरोवर ही दिखाअी देगा। हम अपने परिचित डाक-बंगलेके आंगनमें आये और मैंने देखा कि पानी तो कबका वापस लौट चुका है। दूर मटियाला पानी बालूके ढेरके समान मालूम होता था। सिर्फ बालूका पट अधिकाधिक खुलता जा रहा था। यदि हम चार-छह ही मिनट पहले पहुंचे होते, तो सूर्यको पानीमें पांव रखते हुअे देख पाते। आसमानमें बादल थे, पर सूर्यने पासका क्षितिज स्वच्छ और सुन्दर था। बादलोंके धन्ने सूर्यकी शोभाको बढ़ा रहे थे। सूर्यको देखकर अपना हमेशाका श्लोक भी बोलना मुझे नहीं सूझा। मैंने केवल अंजलि बनाकर अर्घ्य अर्पण किया और दूर समुद्रमें निकले हुअे सूर्यनारायणका अुपस्थान किया। मनमें मनुका श्लोक प्रकट हुआ

आपो नारा अिति प्रोक्ता आपो वै नर-सूनवः।
ता यदस्य अयनं जातम् अिति नारायणः स्मृतः।।

अितनेमें चि० अमृतलालने गीत गाया

'प्रथम प्रभात अुदित तव गगने।'

नीचे बालू पर पहुंचते हमें देर न लगी। शरमीले केकडोंने अपने-अपने बिलोंमें घुसकर हमारा स्वागत किया।

समुद्रसे लौटनेवाले पानीने दूरसे ही हमें अिशारेसे पूछा 'यहां तक आना है?' पानीके निमंत्रणका अिनकार भला कैसे किया जाय?

हम आगे बढे। बीच बीचमें दो-चार अंगुल गहरा पानी देखकर पैर छपछपाते हुअे चलने लगे। कभी सूर्यको देखनेका मन हो जाता, तो कभी पीछे मुडकर किनारेकी ओर देखनेको जी हो जाता। थोडे ताडोंके पेड, अेक-दो कुटिया और जकात-विभागका झंडा चढानेका अूंचा स्तंभ — अिनसे अधिक आकर्षक वहां कुछ नहीं था। अिससे तो पावतलेके पानीमें प्रतिबिम्बित बादलोंकी शोभा ही अधिक आनंद देती थी। पीछे हटनेवाले पानीकी मोहिनीसे पीछे पीछे हम कितने ही दूर चले जाते। किन्तु हम यह बात भूले नहीं थे कि हमारे सामने दूसरा भी कार्यक्रम है, और समयके बजटके बाहर यहां अधिक मौज नहीं की जा सकती। किनारेसे कितनी दूर आ गये, अिसका हिसाब लगानेके लिअे कदम गिनते गिनते हम वापस लौटे। दो दो फुटके कदम भरते हुअे हमने अेक हजार कदम गिने और दौडते हुअे माणिककी रत्नभूमि तक पहुंचे। अूपर चढकर देखते हैं तो नटखट पानी धीरे-धीरे हमारे पीछे आ रहा है और पानीको आता हुआ देखकर कुछ मछुअे बालूके पटमें अपना जाल खंभोंके सहारे फैला रहे हैं!

पुरानी कहानियां समाप्त होती हैं, 'खाया, पिया और राज किया' वाक्यसे। हमारे वर्णन ज्यादातर पूरे होते हैं अिन शब्दोंके साथ: 'प्रार्थना की और बादमें नाश्ता किया।' अेक भाअीने बताया कि आजकल यहां जब फौजी आदमी तोपें छोडते हैं तब भूकंपकी तरह सारी बस्ती कांप अुठती है। तैयार हुआ जानलेवा माल अच्छी तरह अुतर गया है या नहीं, यह जांचनेका स्थान यही है। आवाज चाहे जितनी बड़ी हो, शांतिके बाद जिस प्रकार शांतिकी स्थापना होती

है, अुसी प्रकार आवाज आकाशमें विलीन हो जाती है और अंतमें नीरवता ही बाकी रहती है।

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति ।

मअी, १९४?

६०
सार्वभौम ज्वार-भाटा

हरेक लहर किनारे तक आती है और वापस लौट जाती है। यह अेक प्रकारका ज्वार-भाटा ही है। वह क्षणजीवी है। बडा ज्वार-भाटा बारह बारह घंटोंके अंतरमें आता है। वह भी अेक तरहकी बडी लहर ही है। बारह घंटोंका ज्वार-भाटा जिसकी लहर है, वह ज्वार-भाटा कौनसा है? अधाय-तृतीयाका ज्वार यदि वर्षका सबसे बडा ज्वार हो, तो सबसे छोटा ज्वार कब आता है?

हम जो श्वास लेते हैं और छोडते हैं वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। हृदयमें धडकन होती है और अुसके साथ सारे शरीरमें खून घूमता है, वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। बाल्यकाल, जवानी और बुढ़ापा भी बडा ज्वार-भाटा है। अिस प्रकार ज्वार-भाटेका क्रम विशालसे विशालतर होकर सारे विश्व तक पहुंच सकता है। जहां देखें वहां ज्वार-भाटा ही ज्वार-भाटा है। राष्ट्रोंका ज्वार-भाटा होता है। संस्कृतियोंका ज्वार-भाटा होता है। धार्मिकतामें भी ज्वार-भाटा होता है। हरेक भाटेके बाद ज्वारको प्रेरणा देनेवाले तो हैं रामचंद्र और कृष्णचंद्र जैसे अवतारी पुरुष। समुद्रके ज्वार-भाटेको प्रेरणा देनेवाले चंद्र परसे ही क्या राम और कृष्णको चंद्रकी अुपमा दी गअी होगी? कवि कहते हैं कि दोनोंका रूप-लावण्य आह्लादक था, अिसी परसे अुन्हें चंद्रकी अुपमा दी गअी है। और कवि जो कहते हैं वह ठीक ही होना चाहिये। मगर अैसा क्यों न कहा जाय कि

धर्मके भाटेको रोकनेवाले और नये ज्वारको गति देनेवाले वे दोनों धर्मचंद्र थे, अिसीलिअे अुन्हें चन्द्रकी अुपमा दी गअी है? यह कारण अब तक भले न बताया गया हो, मगर आजसे तो हम यही मानेंगे कि धर्म-सागरके चन्द्रके नाते ही अुनका नाम रामचंद्र और कृष्णचंद्र रखा गया है।

जलके स्थान पर स्थल और स्थलके स्थान पर जल जो कर सकती है, वह 'अघटित-घटना-पटीयसी' अीश्वरकी माया कहलाती है। अिस मायाका यहां हमें रोज दर्शन होता है। फिर भी हम भक्ति-नम्र क्यों नहीं होते? अदभुत वस्तु रोज होती है, अिसलिअे क्या वह निःसार हो गअी? मेरे जीवन पर तीन चीजोंने अपने गांभीर्यसे अधिकसे अधिक असर डाला है: हिमालयके अुत्तुंग पहाड़, कृष्ण-रात्रिका रत्नजटित गहरा आकाश और विश्वात्माका अखंड-स्तोत्र गानेवाला महार्णव। तीन हजार साल पहले या दो हजार साल पहले (हजारका यहां हिसाब ही नहीं) भगवान बुद्धके भिक्षु तथागतका संदेश देश-विदेश पहुंचाकर अिसी समुद्र-तट पर आये होंगे। सोपारासे लेकर घारापुरी तक, वहांसे पारापुरी तक और थाना जिले व पूना जिलेकी सीमा पर स्थित नाणाघाट, लेण्याद्रि, जुन्नर आदि स्थानों तक, कार्ला और भाजाके प्राचीन पहाड़ों तक और अिस तरफ नासिककी पांडव-गुफाओं तक शांति-सागर जैसे बौद्ध भिक्षु जिस समय विहार करते थे, अुस समयका भारतीय समाज आजसे भिन्न था। अुस समयके प्रश्न आजसे भिन्न थे। अुस समयकी कार्य-प्रणाली आजसे भिन्न थी। किन्तु अुस समयका सागर तो यही था। अुन दिनों भी यह अिसी प्रकार गरजता होगा। होगा क्या, गरजता था। और 'दृश्यमात्र नश्वर है, धर्म ही अेक सत्य है; जिसका संयोग होता है अुसका वियोग निश्चित है; जो संयोग-वियोगसे परे हो जाते हैं, अुन्हींको शाश्वत निर्वाण-सुख मिलता है।'—यह संदेश आजकी तरह अुस समय भी महासागर देता था। आज वह जमाना नहीं रहा। महासागरका नाम भी बदल गया। मगर अुसका संदेश नहीं बदला। ज्वार-भाटेसे जो परे हो गये, अुन्हींको शाश्वत शांति

मिलनेवाली है। वे ही बुद्ध हैं। वे ही सु-गत हैं। वे सदाके लिअे चले गये। ज्वार फिरसे आयेगा। भाटा फिरसे आयेगा। परन्तु वे वापस नहीं आयेंगे। तथागत सचमुच सु-गत हैं।

गोरडी ७ मअी १९२७

६१

अर्णवका आमंत्रण

समुद्र या सागर जैसा परिचित शब्द छोडकर मैंने अर्णव शब्द केवल आमंत्रणके साथ अनुप्रासके लोभसे ही नहीं पसन्द किया। अर्णव शब्दके पीछे अूंची-अूंची लहरोंका अखंड तांडव सूचित है। तूफान, अस्वस्थता, अशांति, वेग, प्रवाह और हर तरहके बंधनके प्रति अमर्ष आदि सारे भाव अर्णव शब्दमें आ जाते हैं। अर्णव शब्दका धात्वर्थ और अुसका अुच्चारण दोनों अिन भावोंमें मदद करते हैं। अिसीलिअे वेदोंमें कअी बार अर्णव शब्दका अुपयोग समुद्रके विशेषणके तौर पर किया गया है। खास तौरसे वेदके विख्यात अघमर्षण सूत्रमें जो अर्णव-समुद्रका जिक्र है, वह अुसकी भव्यताको सूचित करता है।

अैसे अर्णवका संदेश आजके हमारे संसारके सामने पेश करनेकी शक्ति मुझे प्राप्त हो अिसलिअे वैदिक देवता सागर-सम्राट् वरुणको मैं वंदना करता हूं।

जहां रास्ता नहीं है वहां रास्ता बनानेवाला देव है वरुण। प्रभंजनके तांडवसे जब रेगिस्तानमें बालूकी लहरें अुछलती हैं, तब वहां भी यात्रियोंको दिशा-दर्शन करानेवाला वरुण ही है। और अनंत आकाशमें अपने परोंकी शक्ति आजमानेवाले निराधार यात्री पक्षियोंको व्योममार्ग दिखानेवाला भी वरुण ही है। और वेदकालके भुज्युसे लेकर कल ही जिसकी मूछें अुगी हैं अैसे खलासी तक हरेकको समुद्रका रास्ता दिखानेवाला जैसे वरुण है, वैसे ही नये नये अज्ञात क्षेत्रोंमें

प्रवेश करके नये नये रास्ते बनानेवाले यमराज या अगस्तिको हिम्मत और प्रेरणा देनेवाला दीक्षागुरु भी वरुण ही है।

वरुण जिस प्रकार यात्रियोंका पथ-प्रदर्शक है, अुसी प्रकार यह मनुष्य-जातिके लिअे न्याय और व्यवस्थाका देवता है। 'ऋतम्' और 'सत्यम्' का पूर्ण साक्षात्कार अुसे हुआ है, अिसलिअे वह हरेक आत्माको सत्यके रास्ते पर जानेकी प्रेरणा देता है। न्यायके अनुसार चलनेमें जो सौंदर्य है, समाधान है और जो अंतिम सफलता है, वह वरुणसे सीख लीजिये। और यदि कोअी लोभी, अदूरदृष्टि मनुष्य वरुणकी अिस न्यायनिष्ठाका अनादर करता है, तो वरुण अुसको जलोदरसे सताता है, जिससे मनुष्य यह समझ ले कि लोभका फल कभी भी अच्छा नहीं होता।

अपना मूल्य घट न जाये अिस खयालसे जिस प्रकार परम-मंगल, कल्याणकारी, सदाशिव रुद्ररूप धारण करते हैं, अुसी प्रकार रत्नाकर समुद्र भी उरपोक मनुष्यको अट्टहास्य करनेवाली लहरोंसे दूर रखता है। कोमल वनस्पति और गृह-लंपट मनुष्य अपने किनारे पर आकर स्थिर न हो जायें, अिसलिअे ज्वार-भाटा चलाकर वह सब लोगोंको समझाता है कि तुम लोगोंको मुझसे अमुक अन्तर पर ही रहना चाहिये।

समुद्रके किनारे खड़े रहकर जब लहरोंको आते और जाते देखा, अमावस्या और पूर्णिमाके ज्वारको आते और जाते देखा, और बुद्धि कोअी जवाब नहीं दे सकी तब दिल बोल अुठा, 'क्या अितना भी समझमें नहीं आता? तुम्हारे श्वासोच्छ्वासकी वजहसे जिस प्रकार तुम्हारी छाती फूलती है और बैठती है, अुसी प्रकार विराट सागरके श्वासोच्छ्वासकी यह घटना है; अुसका यह आवेग है। जमीन पर रहनेवाले मनुष्योंने जो पाप किये और अुत्पात मचाये हैं, अुनको क्षमा करनेकी शक्ति प्राप्त हो अिसीलिअे महासागरको अितना हृदयका व्यायाम करना पड़ता है!

जो लहरें दुर्बल लोगोंको डराकर दूर रखती हैं, वही लहरें विक्रमके रसियोंको स्नेहपूर्ण और फेनिल निमंत्रण देती हैं और कहती

है : 'चलिये! अिस स्थिर जमीन पर क्यों खड़े हैं? अिस तरह खड़े रहेंगे तो आप पर जंग चढ़ने लगेगा। लीजिये, अेक नाव, हो जाअिये अुस पर सवार, फैला दीजिये अुसके पाल और चलिये वहां जहां पवनका प्राण आपको ले जाय। हम सब हैं तो सागरके बच्चे, किन्तु हमारा शिक्षागुरु है पवन। वह जैसे नचाय वैसे हम नाचते हैं। आप भी यही व्रत लीजिये, और चलिये हमारे साथ।' जिस दिलमें अुमंग होती है वह अैसे निमंत्रणका अस्वीकार नहीं कर सकता।

बचपनमें सिंदबादकी कहानी आपने नहीं पढ़ी? सिंदबादके पास विपुल धन था, जमीन-जागीर आदि सब कुछ था। आपने प्रेमसे अुसका जीवन भर देनेवाले स्वजन भी अुसके आसपास बहुत थे। फिर भी जब समुद्रकी गर्जना वह सुनता था तब अुससे घरमें रहा नहीं जाता था। लहरोंके घूंसेको छोड़कर पलंग पर सोनेवाला पामर है। दिलने कहा 'चलो!' और सिंदबाद समुद्रकी यात्राके लिअे चल पड़ा। अुसमें काफी हैरान हुआ। अुसे मीठे अनुभवोंकी अपेक्षा कड़वे अनुभव अधिक हुअे। अतः सही-सलामत वापस लौटने पर अुसने सौगंद खाओी कि अब मैं समुद्रयात्राका नाम तक नहीं लूंगा।

किन्तु अंतमें वह था तो मानवी संकल्प। अिस मतलबको सम्राट् वरुणका आशीर्वाद थोड़े ही मिला था! कुछ दिन बीते। गृहस्थी जीवन अुसे फीका मालूम होने लगा। रातको वह सोता था, किन्तु नींद नहीं आती थी। लहरें अुसके साथ लगातार बातें किया करती थी। अुत्तर-रात्रिमें जरा नींदका झोंका आ जाता तो स्वप्नमें भी लहरें ही अुछलतीं और अपनी अंगुलिया हिलाकर अुसे पुकारतीं। बेचारा कहां तक जिद पकड़कर रहे? अनमना होकर जरा-सा घूमने जाता, तो अुसके पैर अुसे बगीचेका रास्ता छोड़कर समुद्रकी सफेद और चमकीली बालूकी ओर ही ले जाते। अंतमें अुसने अच्छे अच्छे जहाज खरीदे, मजबूत दिलवाले खलासियोंको नौकरी पर रखा, तरह तरहका माल साथमें लिया और 'जय दरिया पीर' कहकर सब जहाज समुद्रमें आगे बढ़ा दिये।

करो।' तब अुन्होंने अुत्तर भारतमें चालीस साल तक प्रचार-कार्य किया। अपना राज्य आसेतु-हिमाचल फैलानेके लिअे निकले हुअे सम्राट अशोकको दिग्विजय छोड़कर धर्म विजय करनेकी सूझी। धर्म विजयका मतलब आजकी तरह धर्मके नाम पर दस देशानरकी प्रजाको लूटकर, गुलाम बनाकर भ्रष्ट करना नहीं था बल्कि लोगोंको कल्याणका मार्ग दिखाकर अपना जीवन कृतार्थ करनेका अष्टांगिक मार्ग दिखाना था। जो भगवान बुद्ध खुद गैंडेकी तरह अनुद्वेगमय होकर जंगलमें घूमे थे, अुनके शाक्यसिंह शिष्य अर्णवका आमंत्रण सुनकर दस विदेशमें जाने लगे। कुछ पूर्वकी ओर गये, कुछ पश्चिमकी ओर। आज भी पूर्व और पश्चिम समुद्रके किनारों पर अिन भिक्षुओंके विहार पहाड़ोंमें खुदे हुअे मिलते हैं। सोपारा कान्हेरी घारापुरी आदि स्थल बौद्ध मिशनरियोंकी विदेश यात्राके सूचक हैं। अुड़ीसाकी खंड-गिरि और अुदय-गिरिकी गुफायें भी अिसी बातकी साक्ष दे रही हैं।

अिन्हीं बौद्धधर्मी प्रचारकोंसे प्रेरणा पाकर प्राचीन कालके औसाओं भी अर्णव मार्गसे घर और अुन्होंने अनेक देशोंमें भगवद्-भक्त ब्रह्मचारी औसाका सन्देश फैलाया।

जो स्वार्थवश समुद्र यात्रा करते हैं, अुन्हें भी अर्णव सहायता देता है। किन्तु वरुण कहता है स्वार्थी लोगोंको मेरी मनाही है, निषेध है। किन्तु जो केवल शुद्ध धर्म प्रचारके लिअे निकलेंगे, अुन्हें तो मेरे आशीर्वाद ही मिलेंगे। फिर वे महेन्द्र या संघमित्रा हों या विवेकानन्द हों। सेंट फ्रान्सिस जेवियर हों या अुनके गुरु अिग्नेशियस लोयला हों।'

मगर अर्णवकी मदद लेनेवाले स्वार्थी लोगोंके हाल देखें। मद्रासी लोग बलूचिस्तानके दक्षिणमें रहकर पश्चिम सागरमें तरकी यात्रा करते थे। अिसलिअे हिन्दुस्तानकी तिजारत अुन्हींके हाथमें थी। व्यापारके साथ वे अुसको अपने ही हाथमें रखना चाहते थे। तब अेक वरुणपुत्रको लगा कि हमें दूसरा दरियाई रास्ता ढूंढ निकालना चाहिये। वरुणने अुससे कहा कि अमुक महीनेमें अरबस्तानसे तुम्हारा जहाज भर समुद्रमें छोड़ोगे तो सीधे कालीकट तक पहुंच जाओगे। अेक्स्ने

महीनों तक तुम हिन्दुस्तानमें व्यापार करना और वापस लौटनेके लिअे तैयार रहना, अितनेमें मैं अपना पवनको अुलटा बहाकर जिस रास्ते तुम आये अुसी रास्तेसे तुम्हें वापस स्वदेशमें पहुंचा दूंगा। यह किस्सा अी० स० पूर्व ५० सालका है।

प्राचीन कालमें दूर दूर पश्चिममें वार्अिकिंग नामक समुद्री डाकू रहते थे। वे वरुणके प्यारे थे। ग्रीनलैंड, आअिसलैंड, ब्रिटेन और स्वेन्डिनेवियाके बीचके टापू और सागरकी समुद्रमें वे यात्रा करते थे। आजके अंग्रेज लोग अुन्हींके वंशज हैं। समुद्र किनारे पर स्थित नार्वे, ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन और पुर्तगाल देशोंने कारी बारीक समुद्रकी यात्रा की। अिन सब लोगोंको हिन्दुस्तान आना था। बीचमें पूर्वकी ओर मुसलमानोंके राज्य थे। अुन्हें पारकर या टालकर हिन्दुस्तानका रास्ता ढूंढना था। सबने वरुणकी अुपासना शुरू की और अर्णवके रास्तेसे चले। कोअी गये अुत्तर ध्रुवकी ओर कोअी गये अमरीकाकी ओर। चंद लोगोंने अफ्रीकाकी अुलटी प्रदक्षिणा की और अंतमें सब हिन्दुस्तान पहुंचे। समुद्र यानी लक्ष्मीका पिता। अुसमें जो यात्रा करे वह लक्ष्मीका कृपापात्र अवश्य होगा। अिन सब लोगोंने नये नये देश जीत लिये, धन-दौलत जमा की। किन्तु वरुणदेवका न्यायासन वे भूल गये। वरुणदेव न्यायका देवता है। अुसके पास धीरज भी है, पुण्यप्रकोप भी है। जब अुसने देखा कि मैंने अिनको समुद्रका राज्य दिया, किन्तु अिन लोगोंने सजाके अुचित न्याय-धर्मका पालन नहीं किया, तब वरुणराजाने अपना आशीर्वाद वापिस ले लिया और अिन सब लोगोंको जलोदरकी सजा दी। अब ये देश हिन्दुस्तान और अफ्रीकासे जो संपत्ति लाये थे, अुसका अुपयोग आपसमें लड़नेके लिअे करने लगे हैं और अपने प्राणोंके साथ वह सारी संपत्ति जलके अुदरमें पहुंचा रहे हैं। समुद्र-यान हो या आकाश-यान हो, अंतमें अुसे समुद्रके जलके अुदरमें पहुंचना ही है। अब वरुणराजा क्रुद्ध हुअे हैं। अुन्हें अब विश्वास हो गया है कि सागरसे सेवा लेनेवालोंमें यदि सात्त्विकता न हो तो वे संसारमें अुत्पात मचानेवाले हो जाते हैं। अब तक अुन्होंने विज्ञान-शास्त्रियों और ज्योतिषशास्त्रियोंको, विद्यार्थियों और लोकसेवकोंको

समुद्र-यात्राकी प्रेरणा दी थी। अब वे हिन्दुस्तानको नये ही किस्मकी प्रेरणा देना चाहते हैं हिन्दुस्तानके सामने अेक नया 'मिशन' रखना चाहते हैं। क्या अुस सुननेके लिअ हम तैयार हैं ?

हम पश्चिम समुद्रके किनारे पर रहते हैं। दिन-रात पश्चिम सागर*का निमंत्रण सुनते हैं। अब तक हम बहरे थे। यह संदेश हमारे कानों पर जरूर पड़ता था, किन्तु अंदर तक नहीं पहुंच पाता था। अब यह हालत नहीं रही है। युरोपकी महाप्रजाने हमारे अूपर राज्य जमाकर हमें मोहिनीमें डाल रखा था। अब यह मोहिनी अुतर गयी है। अब हमारे कान खुल गये हैं। समारके नाकोंकी ओर हम नयी दृष्टिसे देखने लगे हैं। अब हम समझने लगे हैं कि महासागर भूखंडोंको तोड़ते नहीं बल्कि जोड़ते हैं। अफ्रीकाका सारा पूर्व किनारा और कलकत्ताका लेकर सिंगापुर आस्ट्रेलिया (ऑस्ट्रेलिया) तकका पूर्वकी ओरका पश्चिम किनारा हमें निमंत्रण देता है कि "अीश्वरने तुम्हें जो ज्ञान, चारित्र्य और वैभव दिया है अुसका लाभ यहांके लोगोंको भी पहुंचाओ।" अेक ओर अफ्रीका है, दूसरी ओर जावा है, बाली है, ऑस्ट्रेलिया है, टास्मानिया है और प्रशांत महासागरके असंख्य टापू हैं। ये सब अर्णवकी वाणीसे हमें पुकार रहे हैं। अिन सब स्थानोंमें सागरको प्रेरणा लेकर अनेक मिशनरी गये थे। किन्तु वे अपने साथ सब जगह शराब ले गये, वर्ण-वर्णके बीचका अूंच-नीच भाव ले गये। अीसा मसीहको भूलकर सिर्फ अुनका बायबल ले गये। और अिस बायबलके साथ अुन्होंने अपने अपने देशका व्यापार चलाया। अर्णव अुन्हें जरूर ले गया था। किन्तु वरुण अुन पर नाराज हुआ है। हम भारतवासी प्राचीन कालमें चीन गये, यवनोंके देश ग्रीस तक गये, जावा और बालीकी ओर गये। हमने 'सर्वे सन्तु निरामया' की

---

* हमारे जिस पड़ोसीको हम 'अरबी समुद्र' के नामसे पहचानते हैं, यह विचित्र बात है। विलायतसे आनेवाले गोरे लोग अुसे 'अरबी समुद्र' भले कहें। हमारे लिअे तो वह बम्बअी समुद्र या पश्चिम सागर है। यही नाम हमें चलाना चाहिये।

संस्कृतिका विस्तार किया। किन्तु हमने अुन स्थानोंमें अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेकी दुर्बुद्धि नहीं रखी। दूसरोंके मुकाबलेमें हमारे हाथ साफ हैं। अतः वरुणका हमें आदेश हुआ है — अर्णव हमें आमंत्रण दे रहा है और कह रहा है, "दूसरे लोग विजय-पताका लेकर गये; तुम अहिंसा धर्मकी तिरंगी अभय-पताका लेकर जाओ और जहां जाओ वहां सेवाकी सुगंध फैलाते रहो। शासनके लिअे नहीं, बल्कि पिछड़े हुअे लोगोंके पोषण और शिक्षणके लिअे जाओ। अफ्रीकाके शालिग्राम वर्णके तुम्हारे भाओ तुम्हें पुकार रहे हैं। पूर्वके द्वीपोंके वतनी सुवर्ण वर्णके तुम्हारे भाओ तुम्हारी राह देख रहे हैं। अिन सब लोगोंकी सेवा करनेके लिअे जाओ और सब लोगोंसे कहो कि अहिंसा ही परम धर्म है। अुच्चनीच भाव, अभिमान, अहंकार जैसी हीन वृत्तियोंको अिस धर्ममें स्थान नहीं हो सकता। भोग और अैश्वर्य, दोनों जीवनके जंग हैं (जीवनको दूषित करनेवाले हैं)। संयम और सेवा, त्याग और बलिदान, यही जीवनकी कृतार्थता है। यह धर्म जिन लोगोंने समझा है, वे सब निकल पड़ो। पूर्व सागर और पश्चिम सागरके बीचमें दक्षिणकी ओर घुसनेवाला हजारों मीलका किनारा तैयार करके हिन्दुस्तानको हिन्द महासागरमें जो स्थान दिया गया है, वह समुद्र-विमुख होनेके लिअे हरगिज नहीं है। वह तो अहिंसाके विश्वधर्मका परिचय सारे विश्वको करानेके लिअे है।"

युरोपके महायुद्धके अंतमें दुनियाका रूप जैसा बदलनेवाला होगा वैसा बदलेगा। किन्तु असंख्य भारतीय प्रवासी-वीर अर्णवका आमंत्रण सुनकर, वरुणकी दीक्षा लेकर, धीरे-धीरे देश-विदेशमें फैलेंगे, अिसमें कोओी संदेह नहीं है। सागरके पृष्ठ पर हमारे अंसंख्य जहाज डोलते हुअे देख रहा हूं। अुनकी अभय-पताकाओंको आकाशमें लहराते देख रहा हूं और मेरा दिल अुछल रहा है। अर्णवके आमंत्रणको अब मैं खुद सायद स्वीकार नहीं कर सकता, फिर भी नौजवानोंके दिलों तक अुसे पहुंचा सकता हूं, यही मेरा अहोभाग्य है। वरुण-राजाको मेरा नमस्कार है! जय वरुणराजकी जय!!

अक्तूबर, १९४०

६२

दक्षिणके छोर पर

१

धनुष्कोटिमें मैं पहले-पहल आया अुसको अब करीब बीस साल हो चुके हैं। जहां तक मुझे स्मरण है, श्री राजाजीने मेरे साथ श्री वरदाचारीजीको भेजा था। वरदाचारी ठहरे रामायणके भक्त। रास्ते भर रामायणकी ही रसिक बातें चलीं। हम धनुष्कोटि पहुंचे और वरदाचारीजीकी सनातनी आत्मा श्राद्ध करनेके लिअे तड़पने लगी। अेक योग्य ब्राह्मणका पता लगाकर वे अिस विधिमें मशगूल हो गये और हम लोग आमने-सामने गरजनेवाले रत्नाकर और महोदधिकी भव्य शोभा देखनेके लिअे स्वतंत्र हो गये।

दो नदियोंका संगम या प्रयाग अनेक स्थानों पर देखनेको मिलता है। संगमका काव्य आर्योंके हृदय या मस्तिष्क तक पहुंचा कि तुरन्त अुन्हें वहां यज्ञ-याग करनेकी सूझी ही है। यज्ञ-यागके लिअे जैसे प्रकृष्ट या प्रशस्त स्थानको वे प्र-याग कहते हैं।

जब दो नदियां मिलती हैं तब अक्सर अंग्रेजी Y के जैसी आकृति बनती है। महाराष्ट्रमें कराडके पास दो नदियां आमने-सामने आकर मिलती हैं और बादको संयोगमें अेक ओर बहती हैं। अुनकी अंग्रेजी T जैसी पांच किनारोंकी आकृति बनती है। दो नदियां आमने-सामने आकर अेक-दूसरेको गले लगाती हैं, अिसलिअे अुसे प्रीति-संगम कहते हैं।

गंगामें जहां यमुना मिलती है वहां पर भी लगभग T के जैसी ही आकृति बनती है। सिर्फ अुसमें गंगा सीधी जाती है और यमुना किसी आग्रहके बिना और कुछ संभ्रम (घुमाव)के साथ गंगामें मिलती है।

यमुना प्रथम तो 'आत्मनि अप्रत्यय' दिखाअी देती है। किन्तु गंगामें मिलते ही दोनों बहनें अुल्लासके अुन्मादमें आ जाती हैं, और

अिस डरसे कि यदि अेक-दूसरेमें झट ओतप्रोत हो गअी तो मिलनेका आनंद मिट जायगा, दूर दूर तक दोनों कम-ज्यादा मिला ही करती हैं। धर्मकवियोंने अिस स्थानको 'प्रयाग-राज' जैसा गौरवभरा नाम यों ही नहीं दिया है।

किन्तु जब कोअी नदी सागरसे मिलती है तब यह सागर-सरिता-संगमका अुन्माद शिव-पार्वतीके मिलनके समान अद्भुत-रम्य होता है। अिसका वर्णन भक्तकवि या सन्तकी भाषामें हो ही नहीं सकता। मनुष्यको यह भूल कर कि वह मनुष्य है, और अपनी शक्तिसे भी अधिक अूंचे अुठकर सागर-सरिताके अिस अ-समान संगमका वर्णन करना होगा।

मगर कन्याकुमारीमें तो विष्णु और महादेवके मिलनेके समान दो समुद्रोंका सागर-संगम है। रत्नाकर मनार (Manar)की ओरसे आता है। महोदधि पाल्क (Palk)की सामुद्रधुनीका प्रतिनिधि है। अिन दोनोंको झट कैसे मिलने दिया जाय? पृथ्वीने मानो राम-धनुषकी कमानदार कोटि बीचमें आड़ी डालकर अेक सीमा तक अिन दोनोंको मिलनेसे रोका है। अिधर रत्नाकर अुछलता है तो अुधर महोदधि गरजता है और पवनकी सूचनाके अनुसार वे अपने-अपने प्रवाहको दौड़ाते हैं।

और अिन दोनोंका संगम-सम्मिलन कैसा अनोखा होता है! महोदधि यदि हरा रंग धारण करता है तो रत्नाकर पूरा नीला हो जाता है; और जब रत्नाकर पर हरा रंग चढ़ता है तब महोदधि आकाशको भी दीक्षा दे सके अैसा गहरा नीला रंग बहाने लगता है।

जब तक अुन्हें लगता है कि मिलनेकी अिच्छा होने पर भी मिला नहीं जा सकता, तब तक दोनों क्रोधसे तमतमाते रहते हैं। क्षण क्षणमें नया जोश जताते हैं। और अेक बार मिलनेकी छूट मिली कि कैसी शांति और सज्जनता चेहरे पर दिखाकर दोनों मिलते हैं, मानो मिलनेकी दोनोंको कोअी अुत्सुकता ही नहीं थी। मिलना था अिसलिअे मिल लिये! व्याकुलताको मानो दूर ही छोड़ दिया।

जहां दोनोंका प्रत्यक्ष मिलन होता है, वहां तो सरोवरकी शांति ही फैली रहती है। और अिसमें आश्चर्य क्या है? अद्वैतमें आनंदकी परिसीमा ही हो जाती है अुन्मादका स्थान कैसे हो सकता है?

धनुष्कोटीके छोर पर रात बड़े जेक बार गाड़ चक्कर लगाकर देख लेना चाहिये। जहांसे चक्कर आते हैं अुतनी जमीनकी जीभको छोड़ दें तो सब ओर महासागरको विशाल जलराशिका क्षितिजके साथ बनता वलय ही देखनेको मिलता है।

रंगून या कराची जाते समय बीच समुद्रमें चारों ओर समुद्र-वलय और क्षितिज-वलय मिलकर अेक हो जाते हैं, अुसकी मस्ती कुछ कम नहीं होती। मनमें यह कल्पना आये बिना नहीं रहती कि पानीके अिस क्षितिज-विस्तार पर आकाशका अुतना ही बड़ा किन्तु अनंत गुना अूंचा ढक्कन रखा हुआ है और जिस बड़े भारी डिब्बेमें अेक छोटे जहाज पर बैठे हुअे 'तुच्छ' हम मोतियोंकी तरह संगृहीत किये गये हैं। ज्यों ज्यों अिस परिस्थिति पर हम अधिक सोचते हैं त्यों-त्यों मनमें अपनी तुच्छताका अधिकाधिक भान हमें होने लगता है।

धनुष्कोटीकी बात अिससे अलग है। पृथ्वीके साथ हम अनुबद्ध हैं, पैर तले मजबूत जमीन है और यह जमीन धीरे धीरे फैलकर अेक विशाल देश और राष्ट्रकी ओर ले जा सकती है — यह खयाल हमें न सिर्फ आश्वासन देता है, बल्कि प्रचंड आत्मविश्वासके अधिकारी बनाता है। धनुष्कोटीके छोर पर मैं जितनी बार पहुंचा हूं, अुतनी बार मुझे मनुष्यके आत्म-गौरवका भान विशेष रूपसे हुआ है। अिसीलिअे वहां अपनी 'भूमिका' पर स्थिर रहकर मैं सागरकी अुपासना कर सका हूं।

जब जब मैं मंडपम् छोड़कर पुल परसे पामबन गया हूं, तब तब अिस प्रदेशका 'रघुवंश' में लिखा हुआ कालिदासका वर्णन मुझे याद आया है। कालिदासकी वर्णन-शक्ति मुझमें भले न हो,

किन्तु अिस बारेमें मेरे मनमें तनिक भी संदेह नहीं कि मैं अुनका समान-धर्मा हूं। मैं 'कवियश प्रार्थी' थोड़े ही हूं कि कालिदासके साथ अपना नाम देनेमें संकोच करूं? मुझ पर हंसनेवाले टीकाकारोंको मैं अेक टीकाकार कविका ही वचन सुना दूंगा 'पदेन परमाणो च पदार्थत्वं प्रतिष्ठितम्।'

मगर मैं जब धनुष्कोटीके पास आता हूं, तब कालिदासको भूल जाता हूं और लंकामें किस तरह पहुंचा जाय अिस अुधेड़बुनमें पड़े हुअे हनुमानकी दृष्टिसे दक्षिणकी ओर देखने लगता हूं। जिन जिन वानर-यूथ-मुख्योंने सेतुकी कल्पना की और अुसे कार्यरूपमें परिणत किया, अुनकी दृष्टिसे लंकाओमानाकी दिशामें देखने लगता हूं। और अिस प्रकार कल्पनाका दौड़ाते दौड़ाते जब थक जाता हूं, तब चारों धामकी यात्रा पूरी करके गंभीरतर पहुंचे हुअे वृद्ध यात्रियोंका हृदय धारण करके कल्पना करता हूं "अेक पूर्ण जीवन लगभग पूरा करके मैंने भारत-वर्षके जितने ही विशाल जीवन-प्रदेशकी यात्रा कर ली। अब वापस लौटकर क्या करना है? अिहलोकका काम ज्यों त्यों पूरा कर लिया। सफलता मिली हो या विफलता वही जीवन फिरसे नहीं बिताना है। अब तो यह सारा जीवन पीठके पीछे रहे यही अच्छा है। मुड़कर अुसकी ओर देखनेका स्मरण-रस भी अब नहीं रहा है। अब तो सामने-रामका, परजीवनका परमार्थकी दृष्टिसे विचार करनेमें ही श्रेय है।" जब अिस प्रकारकी विचार-परंपरा मनमें अुठती है, तब मन अेक प्रकारसे बेचैन हो अुठता है, और दूसरे प्रकारसे परम शान्तिका अनुभव करता है।

अबकी बार जब मैं धनुष्कोटी आया, तो परंपराके अनुसार मैंने महोदधिमें स्नान किया। महासागरसे क्षमा भी मांगी। किन्तु मनमें तो अेक ही विचार आया कि यहां अब फिरसे नहीं आना होगा। गीलोन कभी जाना है। मगर धनुष्कोटीके जो दर्शन किये, वे अन्तिम हैं। यह विचार मनमें क्यों आया, कहना मुश्किल है। किन्तु अिसमें संदेह नहीं कि मनमें तृप्तिका विचार अिसी बार अुत्पन्न हुआ।

२

रामेश्वर-धनुष्कोटीके बाद कन्याकुमारी। अेक स्थान यदि भव्य है तो दूसरा भव्यतर है। यहा दो नही बल्कि तीन सागरोंका सगम है। सगमका यह वायुमडल अभेद-भक्तिके आनदके समान है। 'यहा हिन्द महासागर पूरा होता है,' 'यहा बम्बअीका यानी पश्चिम समुद्र शुरू होता है और 'यहा बगालका पूर्व समुद्र शुरू होता है' — यों न तो यहा कह सकते हैं, न मान सकते हैं। यहा भारतवर्षका दक्षिणका छोर है और तीना सागर अुसको तीनो ओरसे लिपट हुअे पडे है। सगम तो हम कहते हैं। सागरोंके लिअे यहा सगमके जैसा कुछ भी नही है। सगमकी कल्पना हमारी है। सागरोंसे यदि पूछेंगे तो वे कहेंगे कि जिस भेदका अस्तित्व ही नही है, अुसके मिट जानेकी बात भी भला कैसे करें? 'स-गम' की कल्पना ही बिलकुल गलत है। कहना ही हो तो अुसको 'स-भवन' कहिये। जहा पूर्ण अेकता है वहा किसी भी हिस्सेको चाहे जो नाम दे सकते हैं। नाम और रूपका द्वैत यहा फीका पड जाता है, धुल जाता है, और फिर शुद्ध अद्वैत ही अपनी अखड मस्तीमें गर्जना करता है।

कन्याकुमारीमें मैंने जिस भव्यताका अनुभव किया है, वैसी भव्यता हिमालयको छोडकर और गाधीजीके जीवनको छोडकर अन्यत्र कही भी अनुभव नही की है।

कन्याकुमारीका महत्त्व मैंने पहले-पहल गाधीजीके ही मुहसे सुना था। वे शायद ही किसी दृश्यका वर्णन करते हैं। किन्तु कन्याकुमारीसे आश्रममें लौटनेके बाद अुन्होंने मेरे सामने अिस स्थानका अुत्साहपूर्वक वर्णन किया था।

सन् १९२७ मे जब मैंने अुनके साथ दक्षिण हिन्दुस्तानकी यात्रा की थी, तब नागर-कॉविल पहुचते ही अुन्होंने अपने मेजबानसे खास तौर पर सिफारिश की कि 'काकाको कन्याकुमारी जाना है; मोटरका बदोबस्त कर दीजिये।' अुस दिन अुन्होंने दो बार पूछताछ की कि काकाके कन्याकुमारी जानेका प्रबंध हुआ या नही।

पू० बाबो ललचानेमें मुझे कोओी कठिनाओी नहीं हुओी। दूसरे दो भाओी भी हमारे साथ हो गये।

जिस दृश्यकी प्रशंसा पू० बापूजीके मुहसे सुनी थी, वह दृश्य देखनेकी मेरी अुत्कंठा बहुत बढ़ गओी थी। यहां पहुंचनेके बाद तो अुसका नशा ही चढ़ गया। अुसके बाद जितनी बार यहां आया हू, वही नशा मुझ पर चढ़ा है।

और आश्चर्यकी बात तो यह है कि अिस नशेके साथ ही मनमें ब्रह्मचर्यके बारेमें भी गहरे विचार अुठे बिना नहीं रहते। देवी कन्याकुमारीका यह स्थान है, अिसीलिअे ये विचार मनमें अुठते हों, अैसी बात नहीं है। मैंने तो अैसा कभी नहीं माना। स्वामी विवेकानंदने अिस स्थान पर यही नशा अनुभव किया था, यह जाननेके कारण भी यहां आते ही मेरे मनमें ब्रह्मचर्यके विचार नहीं अुठते। गांधीजीकी भव्यताकी भव्य साधनाके साथ भी ये विचार संलग्न नहीं हैं। किन्तु ये विचार स्वयंभू रूपसे मनमें अुठते ही हैं।

अिस समय (ता० ५-१-१९४७) तीसरी दफा मैं यहां आया हू। आते ही सबसे पहले समुद्रकी लहरें, आकाशके बादल, पूर्व-पश्चिमके क्षितिज और पीछेकी पहाड़ियां — सब स्नेहियोंको मैंने देख लिया।

आज पौषका महीना है और शुक्ल पक्षकी त्रयोदशी है। आज चंद्र रोहिणीमें या मृगमें होना चाहिये। हम मंजिल-ब-मंजिल मोटरकी रफ्तारसे कन्याकुमारीकी ओर जब दौड़ रहे थे, तभीसे चंद्र आकाशमें अूंचा चढ़कर अिस तावमें बैठा था कि कब सूर्यास्त हो और कब मैं आकाश पर अधिकार करूं। संध्याको अपना वर्ण-विलास फैलानेके लिअे अुसने अधिक अवकाश नहीं दिया। फिर भी जितना अवकाश मिला अुतनेमें ही संध्याने रंगोंके अनेक सुन्दर दृश्य दिखला दिये।

सूर्यास्त देखनेकी हमारी बड़ी अभिलाषा थी। किन्तु पश्चिमके बादलोंने कुछ अुलाहना देते हुअे हमसे कहा, 'क्या किसीका अस्त देखनेकी अुत्कंठा रखी जा सकती है? वास्तवमें सूर्यका अस्त होता ही नहीं है। आपकी दृष्टिसे ही प्रकाशका अस्त होता है। अुसके लिअे

सूर्यको देखनेके बदले अुदय या अस्तके अवसरों पर वह जो अेक-रूपता धारण करता है अुसे रगको ही क्यों नहीं देख लेते?'

> अुदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमने तथा।
> सपत्तौ च विपत्तौ च महताम् अेक रूपता ॥

यह श्लोक बादलोंने भी बचपनमें कठस्थ कर लिया होगा!

सूर्य जब क्षितिजके नीचे गया, तब बादलोंके गवाक्षोंमें से सूर्य-प्रकाशकी लाल किरणें अूपर तक फैली। और अूपर फैली अुससे भी अधिक दक्षिण तथा अुत्तरकी ओर फैल गयी। गवाक्ष अधिक नहीं थे, किन्तु जो थे वे बहुत बडे थे। अत किरणें अैसी दीखती थीं मानों लाल रगके पट्टे खीच गये हो। और आकाश अपने वैभवमें प्रतिष्ठित मालूम होता था। मैंने माना था अुसमे कुछ अधिक समय तक यह शोभा कायम रही, जिससे अुसीको देखते रहनेकी अभिलाषा रखनेवाला मन कुछ तृप्त-सा हुआ।

जहा कुमारीके न-हुअे-विवाहके अक्षत बिखरे हुअे हैं, अुस ओरकी शिला पर हम लहराका ताडव देखनेके लिअे जा बैठे। देखते ही देखते सध्या पश्चिममें विलीन हो गयी और चद्रका राज्य आरम्भ हुआ। बादलोंने आकाशको घेर लेनेका मनसूबा अभी पूरा नहीं किया था, अितनेमें दक्षिणकी ओरके बादलोंमें से अेक बडा सितारा चमकने लगा। वह दूसरा कौन हो सकता था? स्वय अगस्ति महाराज दक्षिण-पूर्व दिशा पर आरूढ हो रहे थे। सौभाग्यसे यमुना और याममत्स्य भी तिरछी रेखामें आकाशमें दिखाअी दिये। दक्षिण दिशाका ध्यान करनेका फल मिला। सतुष्ट हुअी आखोंसे हमने अुत्तरकी ओर दृष्टि डाली। वहा आकाशमें देवयानी (कॅसियोपिया) का M अूपर तक चढा हुआ था। अुसके नीचे लगभग क्षितिजके पास अेक ताडके जितनी अूचाअी पर अुसी ताडके पत्तेका आसन बनाकर ध्रुवकुमारने हमें अपना शुभग दर्शन दिया। देवयानी और ध्रुवको देखने देखते दृष्टि पश्चिमकी ओर मुडी, वहा हमने बताया कि श्रवण तो कबके अस्त हो गए हैं। अत पूर्वकी ओर देखा। ब्रह्महृदयने कहा कि ब्रह्ममडलका विस्तार अितनेमें ही नहीं होना चाहिये।

हमने फिर दक्षिणकी ओर मुंह किया। अगस्ति अितना अूंचा नहीं आया था कि हम अुसकी कुटियाकी कल्पना कर सकें। किन्तु व्याध तो दिखना ही चाहिये। व्याध चाहे जितना तेजस्वी हो, तो भी बादलोंके मोटे स्तरको वह किस तरह बींध सकता है? फिर हमने अपनी दृष्टिसे बादलोंका स्तर भेदनेका प्रयत्न किया। संदेह हुआ कि बादलोंका जो हिस्सा कुछ विशेष अुजला मालूम होता है अुसीके पीछे व्याध होना चाहिये। बादलोंके अुस पार व्याधका प्रकाश और अिस पार हमारी दृष्टि — दोनोंके हमलेसे बादल पतले हुअे और जिस प्रकार पतले परदेके पीछेसे नाट्यके पात्र दिखाअी देते हैं, अुसी प्रकार व्याध दिखाअी देने लगा। देखते ही देखते व्याध पूर्ण रूपमें सामने आया और अुसके बाद व्याध, अगस्ति, यमुना और साममत्स्यकी शोभा तेलुगु अक्षरोंकी शिरोरेखा जैसी दिखाअी देने लगी।

अभी मृग दिखाअी देगा, रोहिणी चमकेगी, प्रश्वन झांकेगा, अैसी आशासे हम आकाशकी ओर ताक रहे थे, अितनेमें रजनीनाथने अपने आसपास कुंडल फैलाया और अिस सुवर्ण-वलयके साथ आकाशमें बादल भी बढ़े। आकाशमें चंद्रिका फैली हो तो भी क्या? रातके बादल हमारा ध्यान बहुत आकर्षित नहीं कर सकते थे। अतः हमने अत्यन्त काले समुद्रके गंभीर जल पर नाचते सफेद फेनकी चमकती हुअी रेखाओंकी पंक्तियां देखकर ही आंखोंको तृप्त किया।

समुद्रके जल पर और आकाशके बादलों पर विविध रंगोंके नाच जी भरकर देखनेके बाद यह गंभीरता अितनी तृप्तिदायक मालूम हुअी कि अिस तृप्तिके साथ स्थितप्रज्ञका आदर्श गानेमें और सन्ध्याकी अुपासना करनेमें अनोखा आनंद आया। यह सागर पूर्ण है। अुस पर फैला हुआ आकाश पूर्ण है। अिन दोनोंके दर्शनसे जीवनकी सन्ध्याके समय हृदयमें अुद्भूत हमारा शांति-प्रधान आनंद भी पूर्ण है। अब अिस त्रिविध पूर्णतामें से कुछ भी निकाल लीजिये या कुछ भी अुसमें जोड़ दीजिये, पूर्णत्वमें कोअी कमी नहीं होगी। पायी हुअी पूर्णता कम हो सकती है, क्योंकि वह सच्ची पूर्णता नहीं है। साधी हुअी पूर्णता स्थायी है; क्योंकि अिस विरासतके साथ ही

हम पैदा हुअे थे। यहां तक पहुंचनेमें विलंब हुआ यही दोष है। जो पूर्णता साधी वह आत्मसात् हो गयी। अब यहांसे चढ़ने-अुतरनेका प्रश्न ही नहीं है।

जो नित्य है अनन्त है सुन्दर है अुसके साथ अवश्य होनेके बाद जो जीवन स्वाभाविक रूपमें जिया जा सकता है वही सच्चा ब्रह्मचर्य है। वासनाको दबा देने पर वह फिर कभी अुछल सकती है। वासनाको मार डालने पर वह भूतकी तरह हैरान कर सकती है। वासनाको तृप्त करनेके अुपाय किये जायं तो व्यसनकी तरह वह सदाके लिअे सिर पर सवार हो जायगी और बढ़ेगी। वासनाका स्वागत किया जाय तो दिमागमें वह मस्तान बनेगी। वासनाका तो मुकाबला करके अुससे पूछना चाहिये कि तू कौन है? मित्रके रूपमें कसौटी करने आयी है या जीवनको समृद्ध करनेकी साधनाके रूपमें आयी है? वासना जब तक स्पष्ट और खुली नहीं होती, तब तक ही वह मोहक मालूम होती है। मोह अस्पष्टताका होता है अेकांगी दर्शनका होता है। वासनाके बलवान होनेमें मुख्य मदद अुपेक्षाकी ही होती है। वासनाका अंधा विरोध भी अुसको मजबूत ही बनाता है। दो आंखोंसे देखकर हम वासनाको पहचान नहीं सकते। अुसकी ओर महादेवजीकी तरह तीन आंखोंसे देखना चाहिये। फिर अुसकी समस्या अपने-आप खतम हो जाती है।

वासनाका शमन केवल तपस्यासे नहीं हो सकता, सच तो यह है कि प्रज्ञाके स्थिर होनेके बाद वासनाका विरोध ही नहीं करना पड़ता।

जीवनमें जब तक हमें अपूर्णताका भान है तब तक हम यह नहीं कह सकते कि ब्रह्मचर्य सिद्ध हुआ है। अपूर्णता स्वयं बाधक नहीं है। बालकमें अपूर्णता कम नहीं होती। वह निर्मल भावसे जीवन जीता रहता है और अुसकी अपूर्णता स्वाभाविक ढंगसे कम होती जाती है। अपूर्णताका भान हुआ कि तुरंत मनुष्य पामर बन जाता है। सागरकी तरह पूर्ण होनेके बाद लहरें भले अुसकी अुछलती-कूदती रहें, पानीका जत्था भले यहां वहां दौड़ता रहे, किन्तु सागरको बहनेकी आवश्यकता नहीं रहती। वह 'आत्मनि तृप्त' है अिसीलिअे अुसकी अपनी मर्यादा

छोड़नेकी जरूरत नहीं होती। अुसको अपनी मर्यादाका भान ही नहीं है; अिसीलिअे अनायास, अभावित रूपमें मर्यादाका पालन अुसके द्वारा होता रहता है। यही सच्चा ब्रह्मचर्य है।

प्रार्थना पूरी की और पिछले चार दिनके संस्मरण लिखनेकी अूमि जागी। कुछ लिखनेके बाद ही नींद आ सकी।

दूसरे दिन ब्राह्म-मुहूर्तमें भूतकी तरह मैं समुद्र-तट पर जा बैठता, किन्तु बारिशने रोक दिया। प्रार्थनाके समय समुद्र तट पर जाते-जाते फिरसे आकाशकी ओर देखा। दक्षिण दिशा अितनी साफ, सुन्दर और पारदर्शक थी कि पूर्वकी ओर जमे हुअे बादलों पर मनमें गुस्सा आया। अुन्होंने यदि दक्षिणका अनुकरण किया होता तो अुनका क्या बिगड़ जाता?

दक्षिण दिशामें त्रिशंकु बराबर खड़ा था। जय-विजय अुसके द्वारपालोंका काम कर रहे थे। 'कैरीना' का झूठा क्रॉस अेक ओर जाकर पड़ा था। अुन दोनोंके बीच कुछ अेक सुन्दर तारे चमक रहे थे, जो वर्धा या बम्बअीके लोगोंको जीवनमें कभी भी देखनेको नहीं मिलते।

अुत्तरकी ओर सप्तर्षि पूर्ण नम्रताके साथ फैले हुअे थे। ध्रुव रातकी तरह करीब करीब जमीनको छूने जा रहा था। स्वाति और चित्रा सिर पर चमक रहे थे। हस्त कुछ टेढ़ा हो गया था। पश्चिमकी ओर चंद्र अस्त हो चुका था, किन्तु चंद्रिका अभी अपना अस्तित्व बता रही थी। पुनर्वसुकी नावमें से केवल प्रश्वन ही बादलोंको भेदकर झांक रहा था। अकेला तारा अेकाकी अपने स्वभावके अनुसार प्रश्वन और मघासे सिर्फ थोड़ा दूर जा कर खड़ा हो गया था। मघाका हंसिया फाल्गुनीके चौकोनको संभाल रहा था। पूर्वकी ओर विशाखाके नीचे गुरु और शुक्र शोभायमान थे। और ये दोनों काफी अूचे चढ़ आये थे, अिसलिअे पतली अनुराधा, टेढ़ी ज्येष्ठा और नुकीला मूल अुनको सहारा दे रहा था। गुरु और शुक्र जब पारिजातके पास आते हैं, तब अिन तीनोंकी तुलना सुन्दर होती है। और मंगलके थुनके पास न होनेका दुःख नहीं होता।

मुझे हिन्दुस्तानकी अेक ज्योतिर्मयी व्याख्या सूझी है। कन्या-कुमारीके दक्षिणमें यदि हम जायें तो ध्रुव दिखाओ नहीं देता, और कश्मीरके अुत्तरकी ओर जायें तो दक्षिण दिशामें अगस्ति दिखाओ नहीं देता। अब मैंने यह व्याख्या बनाओ है कि जिस प्रदेशमें ध्रुव और अगस्ति दोनों दिखाओ पड़ते हैं वही हमारा भारत देश है।

प्रार्थनाके बाद सब प्राणियोंको जो अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म करना पड़ता है अुसे हमने भी पूरा किया और नहानेके लिअे तैयार किये हुअे कुंडमें अुतरे। नये ढंगसे बनाये हुअे अिस कुंडमें समुद्रका पानी निरन्तर आता रहता है। आधा कुंड चार फुट गहरा है। बाकीका आठ फुट गहरा है। कपड़े बदलनेके लिअे दो कमरे भी बनाये गये हैं। अिस तरहकी सुघड़ व्यवस्था धार्मिक पुण्यको कम करती है अैसा नहीं मानना चाहिये। नहाकर हम कन्याकुमारीके दर्शन करने गये। यह मंदिर त्रावणकोरके हिन्दू राज्यमें है अतः हरिजनोंके लिअे वह बहुत समयसे खुला कर दिया गया है। मंदिरके द्वार पर सरकारकी घोषणापत्र लगा है कि जो जन्म या धर्मसे हिन्दू हैं वे ही अिस मंदिरमें प्रवेश कर सकते हैं।

मंदिरका स्थापत्य सादा किन्तु प्रशस्त है। पत्थरके खंभों पर छतोंके तौर पर पत्थर ही आड़े रखनेके कारण अन्दरसे सारा मंदिर तह-खानेकी तरह मालूम होता है। देवीकी मूर्ति पूर्व दिशाकी ओर देखती है। किन्तु अुस ओरका बाहरका दरवाजा बंद होनेसे देवीको समुद्रका दर्शन नहीं होता, न समुद्रको देवीका दर्शन होता है! बेचारे बंगाल-सागरने कभी यह दावा नहीं किया होगा कि वह जन्म या धर्मसे हिन्दू है! और समुद्र होनेके कारण मर्यादाका अुल्लंघन करके भी वह मंदिरमें प्रवेश कर नहीं सकता!!

कन्याकुमारीकी कथा बड़ी करुण है। यहांके किनारे पर बिखरी हुअी अक्षतके जैसी सफेद मोटी रेत, माणिकके चूर्ण जैसी लाल रेतका गुलाल और स्याहीचूसके तौर पर अुपयोगमें लाओ जानेवाली काली रेत — ये सब प्राकृतिक चीजें अुस करुण कहानीको और भी करुण बनानेमें मदद करती हैं। मद्रासके सभी महाकाव्य यदि करुणान्त होते हैं,

नो हिन्द महासागरकी अधिष्ठात्री देवी कन्याकुमारीकी कथा भी करुणान्त हो यही अुपपन्न है। करुण रसमें जो गहराअी होती है, अुसीके द्वारा जीवनकी प्रतीति हो सकती है।

दुःख सत्यं सुखं माया, दुःखं जन्तोः परं धनम्।
. दुःखं जीवन-हृद्गतम् ॥

अुदात्त जीवन मानता है कि सुख ही जीवनकी अनुभूति है, जीवनका सार-सर्वस्व है। जिस भ्रमको मिटानेका काम दुःखको सौंपा गया है। दुःखसे परास्त न होकर जो मनुष्य जीवनकी साधनाके तौर पर दुःखको स्वीकार करता है वही सुख-दुःखसे परे होकर जीवन-समृद्धिका आनंद भोग सकता है। यह आनंद सुख-दुःखातीत होनेके कारण सागरके जैसा गभीर और आकाशके जैसा अनन्त होता है।

जिस आनंदके भाग्यसे किसीके साथ विवाह-बद्ध होना नहीं लिखा है!

दिसम्बर १९४७

६३

कराची जाते समय

[अेक पत्रमें]

बम्बअीके जागरणका ऋण अदा करनेके लिअे मैं जल्दी सो गया था। सुबह चार बजे अुठा। स्टीमर डोलती हुअी आगे बढ़ रही थी। यहां कहीं भी जमीन दिखाअी नहीं देती। अूपर आकाश और नीचे पानी। पानी पर मनुष्यका कितना विश्वास है! जमीनके सहारे ओझल रहते हुअे भी दिनरात वह समुद्र पर यात्रा कर सकता है। संस्कृतमें पानीको जीवन कहते हैं। 'प्यासके समय जो पेटमें अुतरता है वह है जीवन, और तूफानके समय जिसके पेटमें हमें अुतरना पड़ता है वह है मरण।' अैसे पानीके लिअे हमारे पूर्वजोंने दो भिन्न शब्दोंकी कल्पना नहीं की।

प्रार्थनाके लिअे साथियोंको जगाअू या नहीं, अिसका विचार थोड़ी देर मनमें चला। फिर मनके साथ तय किया कि जहाजके हिंडोलेमें सोये हुअे अिन बच्चोंको जगानेके बजाय सबकी ओरसे अकेले ही धीमी आवाजमें प्रार्थना कर लेना अच्छा है। लेकिन अिसको सामुदायिक प्रार्थना कैसे कहें? मनमें आया, चलो गर्मीपक कैनवासके मोटे परदे हटाकर देख लूं कि प्रार्थनामें साथ देनेके लिअे कोअी तारे जागते हैं या नहीं? अनुराधाने कहा कि 'हम अभी अभी जागे हैं। कृष्णपक्षके आनेकी तैयारी है।'

अितनेमें अपने दो सींग ऊंचे करके चन्द्र बोला 'तैयारीको बाकी सींग अुगने बाकी नहीं है। मैं आ ही गया हूं।' अुसने बायें हाथमें पारिजात धारण किया था, अिससे वह विशेष सुंदर मालूम होता था। देखते ही देखते अभिजितने क्षितिज परसे सिर अूंचा किया और बादमें स्वाति, अभिजित और पारिजातके त्रिकोणका अेक बड़ा पिरामिड पूर्व-क्षितिज पर खड़ा हो गया। अिन सबको साथमें लेकर मैंने अपनी प्रार्थना पूरी की।

अितनेमें चन्द्र कुछ अूपर आया और हमारे जहाजसे लेकर चन्द्रके पांवों तक अेक सुनहरी पट्टी पानी पर चमकने लगी। मुझे लगा, चन्द्रलोक जानेके लिअे यह कितना आसान और सीधा रास्ता है! जहाजसे अुतरकर चलनेकी ही देर है। किन्तु पाश्चात्य लोग कहते हैं कि चन्द्रलोकमें पागल लोग ही रहते हैं। अतः फिर सोचा कि अितनी मेहनतके बाद यदि वहां अपने समान-धर्मा और जाति-भाअी ही मिलनेवाले हों तो यह तकलीफ क्यों अुठाअी जाय?

*　　　　*　　　　*

मुझे आकाशके बादल बहुत पसंद हैं। छोटा हो या बड़ा, सफेद हो या काला, पूरा हो या टूटा-फूटा, बादल मुझे आनंद ही देता है। मगर गार बादल मुझे बिलकुल पसंद नहीं। अुनका आकार और रंग आकर्षक भले ही हों, मगर तारोंके बीच वे भूतोंकी तरह — या हत्यारोंकी तरह — ढकते-छिपते जाते हैं, यही मुझे पसंद नहीं है।

अुष:कालके पहले आकाश कितना सात्त्विक रमणीय मालूम होता था! चांदनीमें समुद्रकी लहरें — लहरें काहेकी? नाजुक बौनिमाला

था तुला स्मित करने पर सागरवाली चेहरे पर पड़ी हुआी शिकनें —ठीक गिनी जा सके अितनी स्पष्ट थी। मगर अिन विघ्नसंतोषी बादलोंने बीचमें आकर सब कुछ चौपट कर दिया।

हम जोरोंसे आगे बढ़ रहे थे। पूर्वकी ओर, यानी हमारे दाहिनी ओर, जमीन दिखाओी दे रही है या केवल भ्रम है, अिस अुधेड़बुनमें मैं पड़ा था। अितनेमें धारावत दीप दिखाओी दिये। विश्वास हुआ कि हम श्रीकृष्णकी द्वारिकाके समीप पहुंच हैं। थोड़े अंतर पर दीपोंका दूसरा झुंड चमक रहा था। अुसमें अेक दीपस्तंभका प्रकाश किसी वृद्धकी स्मृतिकी तरह बीच-बीचमें स्पष्ट हो अठता था। अुसके बाद अेक मिलकी चिमनीसे धुअेंकी अेक शांत नदी क्षितिजके साथ समानान्तर बहने लगी।

आकाशमें ताराका दर्शन और तुरत स्मरण हुआ। पता नहीं, सुबहकी अुषाके साथ तेरी क्या दुश्मनी है? हम मित्र अुसकी पहले ही बोरडीमें मैंने पूर्व दिशाको अनसूया नाम दे दिया था। 'जीवनको आनंद' (जीवनका आनन्द) में 'अनसूया प्राची' वाली टिप्पणी अवश्य देख लेना।

* * *

३०-१२-'३७

६४
समुद्रकी पीठ पर

[कराचीसे रवाना होते हुअे]

शामके चार बजे होंगे। हमारा जहाज रवाना हुआ। धूप सौम्य हो गअी थी। मंद-मंद हवा बह रही थी। पानी पर नाचनेवाली सूर्यकी चमकमें पीलापन आने लगा था। लाल लाल 'बोया' से गुजरकर जहाज आगे बढ़ने लगा। दोनों किनारों पर जहाज दिखाओी देते थे; छोटी छोटी नावें दिखाओी देती थीं। सेंट विलियमका किला छोड़कर हम आगे बढ़े। कुछ बंदरोंमें छोटे-मोटे जहाज बनाये जा रहे थे। दोनों ओरकी जमीन पानीकी सतहसे बहुत अूंची न थी। अतः दोनों ओर दूर दूरका प्रदेश दिखाओी देता था। किन्तु चित्तको तृप्ति हो

अैसा कोअी दृश्य न था। अिस तरहकी बड़ी नदियां जहां समुद्रसे मिलने जाती हैं वहांके किनारे बहुत गंदे होते हैं। ज्वार-भाटेके कारण भीगे हुअे कीचड़में दौड़धूप करनेवाले केकड़ाके सिवा और कुछ दिखायी ही नहीं देता।

ज्यों ज्यों हम आगे बढ़ते गये, नदी चौड़ी होती गयी। दूरके किनारे पर जब सफेद बालू दिखाअी दी, तभी जाकर मनको कुछ शांति महसूस हुअी। सुन्दरवनका प्रदेश पार किया, रात होनेसे पहले हम डायमंड हार्बरके पास आ पहुंचे। हमारा जहाज अब लहरोंके साथ डोलने लगा। जरा देर तक जहाजके डेक पर खड़े रहकर हमने हिन्दुस्तानके किनारेको लुप्त होते देखा। किन्तु बादमें तो चक्कर आने लगे। अतः खाना खाकर हम सो गये। सोनेके पहले प्रार्थनाके अन्तमें गिरधारीने रवीन्द्रनाथका 'आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे' यह सुन्दर गीत गाया। अुसे सुननेके लिअे कअी लोग जमा हो गये। और अुस गीतके प्रतापसे हमारे बिस्तर अच्छी तरह फैलानेमें किसीको अीर्ष्या नहीं हुअी।

सुबह सबसे पहले मैं जागा। अरुणोदय भी नहीं हुआ था। आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है, अुसी प्रकार जहाज अकेला अकेला पानी काटता हुआ चला जा रहा था। अुस समयकी शांति कैसी अनोखी थी! जहाजके पेटमें यंत्ररूपी हृदय यदि अपनी धड़कन न सुनाता, तो बाहरकी शांति अितनी सुन्दर न मालूम होती। चारों ओर समुद्र मानो लोहे या सीसेके ठंडे रसके समान फैला हुआ था। मैं जहाजके छत पर जा खड़ा हुआ। ज्यों ज्यों जहाज डोलता था, त्यों त्यों पानी अूपर चढ़ता या नीचे जाता था। चारों ओर लहरें ही लहरें! लहरें जब अेक-दूसरेसे टकराती हैं तब अुनमें से फेन निकलता है। अंधेरेमें भी यह फेन चमकता है, और अिस चमकको टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओंसे विचित्र प्रकारकी आकृतियां तैयार होती हैं। जहाज जब डोलता है, तब अुसका असर हमारे दिमाग पर होता है। अुसमें यदि हम लहरोंके अखंड और सनातन नृत्यकी लीला निहारने लगें तब तो अुसका नशा ही चढ़ने लगता है।

आगे जाकर लहरें अुठनी बंद हो गअी। सागरका हृदय जगह जगह अूपर अुठता और नीचे बैठता था। सामान्यतः लहरोंको अूपर अुठते और फूटते हुअे देखनेमें अेक तरहका आनन्द मालूम होता है। किन्तु अुसमें अुतना गाम्भीर्य नहीं होता। ध्वनिकाव्यका रहस्य जिस प्रकार शब्दोंमें स्पष्ट करनेसे कम हो जाता है, अुसी प्रकार लहरोंके फूटनेसे होता है। किन्तु जब लहरें अंदर ही अंदर अुछलती हैं और समा जाती हैं, तब अुनका सूचन विविध, अनंत और अस्पष्ट या अव्यक्त रहता है। अंधेरा होते हुअे भी हवा जब साफ होती है तब व्योम और सागरका मिलन-वर्तुल हमारा ध्यान खींचे बिना नहीं रहता। क्षितिजके पास कुहरेका सवाल ही नहीं होता। समुद्रके कालेपनकी तुलनामें अंधेरा आकाश भी अुजला मालूम होता है। वेदकालके ऋषियोंको जिस प्रकार जीवन-रहस्य दिखाअी दिया होगा, अुसी प्रकार क्षितिज रातके समय दिखाअी देता है। ऋषियोंको अुस कालके आध्यात्मिक तत्त्व अनंत आकाशमें चमकनेवाले तारोंके समान स्पष्ट मालूम होते हैं, जब कि पार्थिव जीवनका भविष्यकाल अुनकी आर्ष दृष्टिके सामने भी सागरकी वारि-राशिके समान अगाध और अव्यक्त ही रहता है।

अिस प्रकार ध्यान और रसास्वादका खेल चल रहा था, अितनेमें

'आकाशेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाय तारा नव नव।'

यह शोभा कम होने लगी और अरुणोदयने पूर्व दिशा निश्चित कर दी। मैंने यह दृश्य देखनेके लिअे जीवतराम (कृपालानी) को जगाया। किन्तु अुनके अुठनेके पहले ही गिरधारी जागा और कहने लगा, 'मुझे बताअिये, क्या है, मुझे बताअिये।' मैं भला अुसको क्या बताता? वहां कोअी पक्षी या जहाज थोड़े ही था जो अुंगली दिखाकर कुछ बताता? मैंने अुससे कहा, 'यह जो लाल आकाश दिखाअी पड़ता है अुसे देखो। थोड़ी देरमें वहां सूरज अुगेगा।'

अब समुद्रने अपना रंग बदला। पूर्वकी ओरसे मानो लाल जामुनी रंगका प्रवाह बहता चला आ रहा था। और आश्चर्य तो

यह था कि पश्चिमकी ओर भी अुगी रगकी प्रतिक्रिया हुअी थी। हां, पश्चिमकी ओर समुद्रने अधिक आकाशने ही अुस रगको ग्रहण कर लिया था। पूर्वकी प्रसन्नता बढने लगी। लाल रगमें चमक आ गअी। कुकुमका सिंदूर बना, और सिंदूरका सुवर्ण बना। बम्बअीकी ओर रहने-वाले हम लोग पश्चिम किनारेके समुद्रमें होनेवाले सूर्यास्तकी शोभा कअी बार देख सकते है किन्तु सागर-मथनसे निकली हुअी लक्ष्मीके समान अुदय हो रही अुषाकी वर्धमान शोभा देखनेका आनंद अनोखा ही होता है। आकाश ज्यो ज्यो हसने लगा, समुद्रके मुख पर आनद और लज्जाकी रेखाअें बढने लगीं, मानो दो हमअुम्र नौजवानोंके बीच विनोद चल रहा हो।

अेक ओर प्रभातका यह विलास देखनेके लिअे दिल ललचाता था, तो दूसरी ओर जहाजके डोलनेसे सिरमें चक्कर आने लगे थे। मनमे आया, थोडी देरके लिअे लहरें रुक जाय और जहाज स्थिर हो जाय तो कितना अच्छा हो। मगर समुद्रकी लहर और मनुष्यके मनोरथ कभी रुके हैं? अूपर आरामकुर्सी पर लटनेका मै सोच रहा था, अितनेमें बालसूर्यका बिम्ब पानीमें नहाकर बाहर निकला। अुगते हुअे सूर्यके सिर पर अेक विशिष्ट तरलता होती है मानो सूर्य ठडे पानीमें से कापता हुआ बाहर निकल रहा हो। और पानीमें जो प्रकाश बिखरा हुआ होता है वह अैसा दीखता है मानो सूर्यका धुला हुआ अगराग हो। सूर्यका सिर पूरा बाहर निकला कि मैंने सविता-नारा-यणका ध्यानमत्र गाया 'ध्येय सदा सवितृ-मडल-मध्यवर्ती' अित्यादि।

जीवतराममे अिस प्रकारकी गभीरता जरा भी सहन नहीं होती। वे तपाकसे बोल अुठे, 'बस कीजिये। कैसी वानर-भाषा बोल रहे है!' मैंने अुनसे कहा 'आप गलती कर रहे हैं। यह आपकी भाषा नहीं है, यह तो संस्कृत है।' विनोदमें भक्तिका अुभार नष्ट हो गया। प्रार्थना ज्यो त्यो पूरी की। और जहाजमें रोज जिसमें से पार होना पडता है अुस भयकर दिल्लगी चिन्ता करने लगे। शौचके लिअे जहाजके डेक परसे नीचे जाना होता है। नीचेका हिस्सा वैसे भी हमेशा गदा रहता है। किन्तु सुबहके समय तो वह मानो नरकके

साथ मुकाबला करना है। वहाँकी हवा गर्म और खारी होती है। जगह जगह लोग कै कर देते हैं। अंजिनकी भापमें निकलनेवाली और नरहरी दुर्गंध और खलासियोंके रसोडेसे ठीक अुसी समय निकली हुआी प्याज और मछलीकी बदबू — दोनोंके मिश्रणमें से पार होकर शौचालयमें प्रवेश करनेकी अपेक्षा समुद्रमें रहना मुझे कम कष्टदायी मालूम होता। हमारे बसकी बात होती तो तीन दिन तक हम शौच जाना ही छोड़ देते। किन्तु —

जो हो सो, पर हम तीनों अितने तंग हो गये थे कि अेक-दूसरेकी ओर देखनेकी भी अिच्छा नहीं होती थी। कोअी टोली डाका करनेके लिअे जाय और काफी मार खाकर वापस लौटे, तब जिस प्रकार अपने अपमानास्पद अनुभवका कोअी जिक्र तक नहीं करता, अुसी प्रकार हमने अिस दिनका नाम तक नहीं लिया।

मैंने गिरधारीसे कहा, 'चलो खाने बैठो।' अुसने कहा, 'मुझे भूख नहीं है।' जीवनरामने भी खानेसे अिनकार कर दिया। मैंने कहा, 'सब आदमी धूप बढ़ेगी तब चक्कर आने लगेंगे। फिर खाना असंभव हो जायगा। अभी ठंडा पहर है। पेट भरकर खा लो। दुपहरके पहले सब हजम हो जायगा।' गिरधारी पूछने लगा, 'कसरत किये बिना हजम हो जायगा?' मैंने जवाब दिया, 'हम सब लोगोंकी ओरसे यह जहाज ही कसरत कर रहा है। अतः तुम अुसकी फिक्र मत करो।' गिरधारी मेरी बात समझ नहीं पाया। वह मेरा मुंह ताकता रहा। हम तीनोंने पेटभर खा लिया। तीनोंमें जीवनराम चतुर थे। अुन्होंने केवल रसदार फल ही खाये। मैंने अपनी पसंदकी चीजें खायीं और अूपरसे अेक पूरा नींबू चूस लिया। बेचारे गिरधारीको शुरूमें केलोंका स्वाद लग गया। अुसने पेट भर कर केले ही खाये। लेकिन अेक दो घंटेके भीतर ही वह अितना पछताया कि बादमें सारी यात्रामें अुसने केलेका कभी नाम तक नहीं लिया।

दोपहर हुआी। मैं अपनी कमजोरी जानता था। मैंने अपना बिस्तर बिछाकर हाथ-पांव फैला दिये। हाथमें दूसरा नींबू लिया और आंखें मूंदकर लेट गया। मद्रासकी ओरका पानी जहाज

बजाता जा रहा होगा। अुसे दूरसे देखकर लोग कहने लगे 'वह देखो जहाज वह देखा जहाज। अन्तमें दोनों जहाजोंने 'भोंआ ' करके अेक-दूसरेका अभिवादन किया। किन्तु मैंने तो आंखें मूदकर कल्पनाके द्वारा ही यह सारा दृश्य देख लिया। गिरधारीसे रहा नहीं गया। वह चटसे अुठकर खड़ा हो गया। ज्यों ही वह खड़ा हुआ, अुसके तूफानने पेटमें रहनेसे अिनकार कर दिया। वह घबड़ा गया। मैंने लेटे लेटे ही अुसे पानी दिया। अदरकका टुकड़ा दिया। थोड़ा शान्त होनेके बाद वह मेरे बिस्तर पर आकर लेट गया। किन्तु अेक बार बिलोया हुआ पेट क्या तुरन्त शान्त हो सकता है?

हम डेक पर लेटे थे। वहां अेक आगे अूपरकी कैबिनमें दो देशी औसाअी बैठे थे। अुनमें से अेकको कै होने लगी। वह ज्यों-ज्यों जोरसे कै करता था त्यों-त्यों अुसका मित्र अुसका मजाक अुड़ाता था। वन हिंग्नस, अुल्टी करोसिंग आदि मित्रके अुद्गार अुसकी कै से भी अधिक जोरोंसे निकलने लगे। गिरधारी घड़ीभर हंसता था और फिर पछताता था।

अैसा करते करते शाम हो गअी। शामको मुझमें कुछ जान आयी। हमने फिरसे कुछ खा लिया, किन्तु वह किसीको अनुकूल नहीं आया। शामकी शोभा मैंने बैठे बैठे ही निहारी। लोग कहते थे 'अब हम काले पानीमें आये हैं।' और सचमुच पानीका रंग डर पैदा करे अितना काला था। लोग कहते 'अब अदमान दिखाअी देगा।' कोअी कहता 'नहीं हमारा जहाज असमे काफी दूर है। वह टापू नहीं दिखायी देगा।'

सन्ध्याकी शोभा कुछ निराली ही थी। प्रातःकालके रंग और सन्ध्याके रंग समान नहीं होते। अुदय और अस्त समान हो ही कैसे सकते हैं? अुदय वर्धमान बाल्यकाल है जब कि अस्त विजयी वीरके निधनके समान शोकपूर्ण होता है। उषाके मुख पर मुग्ध हास्य होता है, जब कि सन्ध्याकी मनमुद्रा पर क्षणजीवी अुल्लास और विलास होता है। समुद्रके रंग फिर बदलने लगे। सूर्य अस्त हुआ और देखते ही देखते धीरे धीरे तारोंका पारिजात खिलने लगा।

जहाज पर बिजलीके सौम्य दीये तो कभीके चमकने लगे थे। मुझे ये दीये बचपनसे ही बहुत पसंद हैं। ये अितने सौम्य होते हैं कि सबोंको सब कुछ दिखाअी देता है फिर भी ये आंखोंको चौंधिया नहीं पाते। अंधेरेको नष्ट करके अपना साम्राज्य जमानेकी महत्त्वाकांक्षा अुनमें नहीं होती। अंधेरेके साथ मीठा समझौता करके 'तुम भी रहो, हम भी रहेंगे'की जीवन-नीति ये पसंद करते हैं। शहरोंके बिजलीके दीये नये अभ्यासकी तरह अपना सारा प्रकाश अुडेल देना चाहते हैं, जहाजके दीये योगियोंके समान 'आत्मन्येव संतुष्ट' होते हैं।

बिस्तर पर लेटे लेटे हम अिन दीयोंकी बातें कर रहे थे। अितनेमें हमारा जहाज भा आ करके रंभाया। मैं तुरन्त समझ गया कि अुसने कहीं दूसरी भैंस देखी है। अितनेमें दूरसे रंभानेकी आवाज आअी। मैं अुठकर बैठ गया। रातके समय समुद्रमें जहाज देखना मुझे बहुत पसंद है। बिजलीकी बत्तियोंकी अेक लम्बी पंक्ति और अूंचे मस्तूल पर लगे दो लाल बड़े दीये भूतकी तरह जब अंधेरेमें दौड़ते हैं, तब अैसा लगता है मानो हमने परियोंके संसारमें प्रवेश किया है। जहाज ज्यों-ज्यों अपना रुख बदलता जाता है, त्यों त्यों सामनेका दृश्य भी नये नये ढंगसे खिलता जाता है। और जहाज जब दूर चला जाता है और लुप्त होने लगता है तब तो यह दृश्य नींदके कारण चढ़नेवाली स्मृति-विस्मृतिके बीचकी आंखमिचौनीके समान ही मालूम होता है। आकाशके तारोंकी ओर देखता देखता मैं सो गया।

तीसरे दिन सुबह पानी बरसने लगा। जहाजके अेक अीसाअी कारकुनने आकर हम सबको नीचे जानेको कहा। लोग अिसका कारण तुरन्त न समझ पाये। अुसने कहा 'अेक बड़ा बवंडर आग्नेय दिशासे अिस ओर आता मालूम हो रहा है।' अिसको साअिक्लोन कहते हैं। साअिक्लोनमें यदि जहाज फंस जाय तो वह बहुत बड़ी आफत मानी जाती है। बहुतसे जहाज साअिक्लोनमें फसकर डूब गये हैं। अुस कारकुनने कहा, 'यदि यहीं डेक पर आप लोग बैठे रहेंगे तो शायद आंधीमें अुड भी जाय।' लोग डरके मारे अेकके बाद अेक नीचे चले गये। हमने नीचे जानेसे साफ अिनकार कर दिया। अुसने हमें समझानेकी

कोशिश की। हमने कहा, 'आंधी आयेगी तो अिन बड़े बड़े रस्सोंको पकड़कर पड़े रहेंगे।'

'किन्तु वारिदासे आप भीग जायेंगे।

भीग जायेंगे ता सूख भी जायेंगे।'

हमारी जिद करार यह चला गया। पानी आया। अच्छा खासा आया। आधीका घरा तीन चार मीलका होता है। सौभाग्यसे वह हमारे जहाज तक नहीं आयी। धमकेतुकी तरह असके चारों ओर पूंछें होती हैं। अैसी अेक पूंछका तमाचा हमारे जहाजको भी कुछ लगा। हम काफी भीग गये। अन्त नीचे जाकर बदले अपर केबिनमें जा बैठे।

आखिर रंगून आया। बंदरगाह पर अुतरनेवाले लोगोंकी और अुन्हें लेने आये हुअे अिष्टमित्रोंकी भीड़का पार नहीं था। डॉ० प्राणजीवन मेहता खुद हमें लेनेके लिअे बंदरगाह पर आये थे। हमने देखा कि रंगूनमें जगह जगह रबरके रास्ते हैं। अतः गाड़ियां दौड़ती हैं तब सिर्फ घोड़ोंके टापोंकी ही आवाज सुनाअी देती है।

अुस दिन हमें अैसा लगता रहा मानो हमारे पावोंके नीचेकी जमीन डोल रही है। अेक दिनके आरामके बाद ही दिमागसे तीन दिनका समुद्र अुतर सका।

मार्च १९२७

सरोविहार

हमें रंगूनके समीपका प्रख्यात सरोवर देखना था। युरोप सरीखी आकृतिके जैसा अिस सरोवरका आकार भी टेढ़ा-मेढ़ा है। अुसमें छोटी खाड़ियाँ अधिक तथा जलडमरूमध्य हैं। रंगून शहरके ही अखात पर है तथा समुद्रके पास है, अिसलिअे वहाँकी वनश्री भी मुझे शहरके जितनी ही गुन्तमा मालूम हुआी। चारों ओर बड़े बड़े वृक्ष। सृष्टिने मानो अपना सारा ही वैभव दिखानेके लिअे बाहर निकाला था। वनश्री और जलदेवताका जहाँ मिलन होता है, वहाँ लक्ष्मी बिना बुलाये आ ही जाती है। हम तीसरे पहर अुस सरोवरके पास जा पहुँचे। काफी समय तक अुसके किनारे किनारे घूमे। सरोवरका सौंदर्य हर स्थानसे भिन्न भिन्न प्रकारका मालूम होता था। कुछ रूप-गर्वित वृक्ष सारे समय सरोवरके दर्पणमें अपना दर्शन किया करते थे।

घूमते-घूमते हमारा थकान खतम हुआ। सरोवर तो औश्वरने नौका-विहारके लिअे ही बनाया है। हब्शी जातको बुलाकर हम अुसकी नावमें जा बैठे और बिना किसी अुद्देश्यके अनेक दिशाओंमें घूमते रहे। बीचमें अेक टापू था। अुससे मुलाकात किये बिना भला वापस कैसे लौटा जा सकता था? टापू पर अेक सुंदर आराम-गृह बना हुआ था। अुसकी सीढ़ियोंकी दोनों दीवारों पर सीमेंटके बनाये हुअे दो भयानक अजगर लम्बे होकर पड़े थे। नाव चलाते चलाते अेक मोड़ लेते ही श्वेडेगोन पॅगोडा अपने अूँचे शिखरके साथ दर्शन देता है। आगरेके किलेसे ताजमहल देखनेमें जो मजा आता है, वैसा ही मजा यहाँ मालूम होता था। वस्तुके समीप जाने पर अुसका सम्पूर्ण सौंदर्य प्रकट होता है; किन्तु अुसका माधुर्य तो दूरसे ही खिलता है। यह खूबी जाननेसे ही क्या चाँद, सूर्य तथा अगणित सितारे हमसे अितने दूर दूर खिसकते होंगे?

शाम हुआी अिसलिअे हमें अतृप्त वापस लौटना पड़ा। सरोवरने मधुपर्ककी तरह हमें वापस आनेका निमंत्रण तो दिया ही था। अतः दूसरे

दिन नहानेका कार्यक्रम तय करके हमारी अेक बडी टोली वहां जानेके लिअे रवाना हुअी। वहां पहुंचने पर हमारे माथेसे लोगोंने बनाया 'गोरे लोगोंके बोटिंग करनेके कारण सरोवरमें नहानेकी मनाही है।' सुबह होते ही जिस प्रकार कुमुद बंद हो जाता है असी प्रकार मेरा अुत्साह मिट गया। जितनी मेहनतके बाद सम्पूर्ण सरोवरमें तैरनेके आनंदसे वंचित रहना भला किसको पसंद होगा? मगर हमारे साथी सत्याग्रही थोड़े ही थे! न सुन्दर कानूनका विरोध करनेके बजाय चुपचाप कानून तोडना ही अधिक पसंद करनेवाले थे। अुन्होंने अेक अैसा अेकान्त स्थान बहुत पहलेसे ढूंढ लिया था जहां न तो गोरे लोगोंकी नावें पहुंच सकती थीं न अुनकी दृष्टि। मैंने यहां आते ही देखा कि अिस स्थानका सौंदर्य अन्य स्थानोंसे कतअी कम नहीं है। अेकांतमें चोरीसे नहानेमें कुछ अनोखा ही आनन्द आया। गिरधारीको तैरना नहीं आता था, अुसका श्रीगणेश भी यहीं हुआ। पानीमें तैरते रहनेका अनुभव पहले-पहल होने पर मनुष्यको जो आनंद होता है अुसको यदि कोअी अुपमा देनी हो तो अंडा तोड़कर बाहर आये हुअे पक्षीके आनंदकी ही दी जा सकती है। धूप तेज हो गअी फिर भी गिरधारी बाहर आनेका नाम नहीं लेता था। आधा घंटा और पानीमें रहने देनेके लिअे वह मुझसे अंग्रेजीमें विनती करने लगा। अुसे न मानता तो वह बंगलामें विनती करता, मानो भाषा बदलनेसे विनतीमें अधिक जोर आता हो। अुसको मैं नाराज कैसे करता? हमने मनमाना जलविहार किया।

यदि ययातिको भी जीवनका आनंद छोडना पड़ा, तो फिर हमारे तैरनेके आनंदका अंत हुआ अिसमें आश्चर्य ही क्या? थके हुअे किन्तु हर्षे वदन हम वापस लौटे। रास्तेमें अनन्नासके बगीचे थे। अैसा मालूम होता था मानो दूर दूर तक बडीके अनन्नासोंके फव्वारे ही जमीनमें से अूपर अुड रहे हों। अनन्नासका अितना बडा बगीचा मैंने पहले कभी नहीं देखा था। अतः पेटमें भूख होते हुअे भी और यहां अनन्नासकी प्राप्तिकी कोअी अुम्मीद न होते हुअे भी काफी देर तक हम वहां देखते खड़े रहे।

मार्च, १९२७

६६

सुवर्णदेशकी माता अैरावती

औरावती कहें या अैरावती? मैं समझता हूँ कि औरा नामकी घास परसे ही नदीका नाम औरावती पड़ा होगा। अिसके किनारेकी पौष्टिक घास खाकर मदमस्त बने हुअ हाथीको अैरावत कहते होंगे; या फिर अिन्द्रके अैरावत जैसी महाकाय और गजगतिसे चलनेवाली अिस नदीको देखकर किसी बौद्ध भिक्षुको लगा होगा, 'चलो, अिसीको हम अैरावती कहें।'

परन्तु अैतिहासिक कल्पना-तरंगोंमें बहना बैठे-ठाले लोगोंका काम है। मुसाफिरको यह नहीं सुहाता।

अैरावती नदी हिन्दुस्तानमें होती तो संस्कृत कवियोंने अुसके बारेमें अैरावती जितना ही लम्बा-चौड़ा काव्य-प्रवाह बहा दिया होता। ब्रह्मदेशके कवियोंने अपनी अिस माताके विषयमें अनेक काव्य यदि लिखे हों तो हमें पता नहीं। ब्रह्मी भाषा न तो हमारी जन्मभाषा है, न शास्त्रभाषा या राजभाषा है। अपने पड़ोसीकी भाषा सीखनेकी प्रवृत्ति हममें है ही कहाँ? बरसों तक परदेशमें रहें तो हम वहाँकी भाषा बोल सकते हैं, किन्तु अुस भाषाके साहित्यका आस्वाद लेनेका श्रम हम कभी नहीं करते। कोअी अंग्रेज ब्रह्मी भाषा सीखकर ब्रह्मी कविताका अंग्रेजी अनुवाद हमें दे दे तो ही शायद हम अुसे पढ़ेंगे।

कोअी भी देश अैरावती जैसी नदी पर गर्व कर सकता है या अुसका कृतज्ञ हो सकता है। ब्रह्मदेशमें रंगूनसे अुत्तरकी ओर ठेठ मंडाले तक हम ट्रेनमें यात्रा कर चुके थे। वहाँसे नजदीकके अमरापुरा जाकर हमने अैरावतीके प्रथम दर्शन किये। यदि पहलेसे हमें मालूम हो जाता कि अमरापुराके समीप प्रचंड बौद्ध मूर्तियाँ हैं, तो हमने भगवान बुद्धके दर्शनसे ही अैरावतीके विहारका आरंभ किया होता।

यहा पर भी नदीका पाट खूब चौड़ा है। नदीका प्रवाह धीरोदात्त गजगतिसे चलता है। असी नदीकी पीठ पर नाव या 'बाफर' (स्टीमर) में बैठकर यात्रा करना जीवनका अेक बड़ा सौभाग्य ही है।

अमरपुरामें मडाले वापस जाकर हम 'बाफर' में बैठे। समुद्रकी यात्रा अलग है और नदीकी यात्रा अलग। नदीमें लहर नहीं होती। दोनों ओरका किनारा हमारा साथ देता रहता है। और हम अैसा नहीं मालूम होता कि जीवनका नाम धारण किये हुअे किन्तु जान लेनेवाले अेक महाभूतके शिकंजेमें हम फसे हुअे हैं। पृथ्वीके गालेकी हवामें चलनेवाली सनातन यात्राके समान ही नदीकी यात्रा शात और आह्लादक होती है। आज भी जब जिस अैरावतीकी यात्राका मैं स्मरण करता हू, तब मुझे द्रौपदीके जैसी मानिनी नर्मदाकी चाणोद-कर्नाली तरफकी यात्रा, सीताके जैसी ताप्तीकी सागर-सगम तककी यात्रा, काशी-तल-वाहिनी भारतमाता गगाकी यात्रा, मथुरा-वृदावनकी कृष्णसखी कालिंदीकी यात्रा, कश्मीरके नदनवनमें पार्वती वितस्ताकी यात्रा और वनश्रीके पीहर-सदृश गोमतक प्रदेशकी और केरलकी जलयात्रा, सभी अकस्मात याद आ जाती हैं। अिनमें भी मन तृप्त हो जाय अितनी लबी यात्रा तो वितस्ता और अैरावतीकी ही है। अैरावती नदी सिधु, गगा, ब्रह्मपुत्रा और नर्मदाकी बराबरी करनेवाली है। अैरावतीका पाट और प्रवाह देखते ही मनमें अैसा भाव अुठता है, मानो यह किसी महान साम्राज्य पर राज्य करनेवाली कोअी सम्राज्ञी हो! आगगान और पगुयोमा अैरावतीकी रक्षा अवश्य करते हैं, किन्तु अुसकी प्रतिष्ठा बनाये रखनेके लिअे वे आदरपूर्वक दूर ही खड़े रहते हैं।

हमारा जहाज चला। शाम होते ही जिस प्रकार कामधेनुके वत्स माके पास दौड़े आते हैं अुसी प्रकार आसपासके विस्तीर्ण प्रदेशके श्रमजीवी कृषीवलोंके ठट्के ठट अैरावतीके किनारे अिकट्ठा होते हैं। हमारा जहाज मानो अेक चलता-फिरता बाजार ही था। कोअी छोटा-मोटा बदरगाह आने पर वह लोगोंको न्यौता देनेके लिअे सीटी बजाता। बस, अुमडती हुअी चीटियोंकी तरह लोग दौड़ते दौड़ते आते और तरह तरहकी खाने-पीनेकी चीजें, कपड़े, बेंतके बर्तन, कारीगरीकी वस्तुअें तथा अन्य चीजें जहाज पर फैल जातीं। जहाजमें

भी यह व्यापारी अपना अपना माल लिये हुअे तैयार ही रहते। पक्षियोंके कलरवकी तरह लेन-देनका शोरगुल शुरू हो जाता। भाषा यदि हम समझते तो अिस शोरगुलसे अूब जाते। किन्तु यहां तो लोग लड़ें-झगड़ें या रोयें-चिल्लायें, हमारे लिअे सब अेकसा ही था। मानो अेक बड़ा नाटक चल रहा हो। बिल्कुल शुरू होते ही जहाज छूटता था। ध्यानेकी तैयारीमें ही अैसी भैंसकी तरह हमारा जहाज डोलता डोलता चलता था। जहाजके अेक यमीने गोरे अधिकारीके साथ हमारा कुछ झगड़ा हो जानसे यात्राके आरम्भमें ही सारा मजा किरकिरा हो गया था। किन्तु मंद मंद पवनमें यह सब अुड़ गया, और हम कुदरतकी तरह प्रसन्न हो गये।

फिर अेक बंदरगाह आया। यहां कुछ विशेष व्यापार चलता होगा। छोटी-बड़ी असंख्य नावें नदीके किनारे कीचड़में लोट रही थीं। ढोरोंकी पीठ पर जिस प्रकार मक्खियां भिनभिनाती हैं, अुसी प्रकार देहाती बच्चे अिन नावोंके बीच कूद और खेल रहे थे। यहांके लोग गोदना गुदानेके बड़े शौकीन होते हैं। अुनके केवड़ेके रंग जैसे चमड़े पर लाल और हरे गोदने बड़े ही सुन्दर मालूम होते हैं। महाराष्ट्रके गांवोंमें लोगोंका यह विश्वास है कि जिस जन्ममें शरीर पर जेवरोंकी आकृति गोदनेसे अगले जन्ममें सोनेके जेवर मिलते हैं और ललाट पर टीका या चंद्रमा गोदनेसे स्त्रीको अखंड सौभाग्य मिलता है। कुछ अैसी तरहका विश्वास शायद यहांके लोगोंमें भी होगा, क्योंकि यहांके बहुतसे देहाती कमरसे घुटनों तक सारे शरीरमें तरह तरहकी आकृतियोंवाली लुंगी गुदाते हैं। अिसीलिअे जब वे नहानेके लिअे नदीमें नंगे घुस पड़ते हैं, तब बगैर कपड़ोंके भी नंगे नहीं मालूम होते हैं। जहाज यहां अधिक समय तक ठहरता, तब हम किनारे पर अुतरकर आसपासके गांवोंमें घूम आते थे। यहांके घरों और मोहल्लोंसे हमारी आंखें अच्छी तरह परिचित हो चुकी थीं। अुनकी भाषा यद्यपि हम समझ नहीं पाते थे, फिर भी अिन निर्व्याज देहातियोंका जीवन हमारे लिअे परिचित-सा हो गया था। राजनीतिज्ञ और व्यापारी लोगोंके राग-द्वेषोंको यदि हम अलग कर दें और धार्मिक तथा अधार्मिक लोगोंकी कल्पना-सृष्टिको अेक ओर रख

दें, तो मनुष्य-जाति सर्वत्र समान ही है। मैं समझता हूं कि दुनियाभरमें सारे गांव रूप और स्वभावमें समान ही होंगे।

प्रवाहके साथ मानो ताल देनेवाले स्तूप और मंदिर भी बीच बीचमें मिल जाते थे। अूची अूची टेकरियां और शिखर मनुष्यको हमेशा ही प्रिय लगते हैं। अुसमें भी नील नदी जैसी अैरावती जब चारों दिशाओंमें अपनी उपजाअू उत्पत्ति फैलाती है तब ये अूंचे अूंचे स्थान ही मनुष्यके लिअे आश्रय-स्थान बन जाते हैं। मनुष्य अुनके प्रति अपनी कृतज्ञता यदि मंदिर बनवाकर प्रकट न करे तो भला किस प्रकार करे? प्रकृतिने हमें सिखाया है कि हरे पत्तोंमें पीले परिपक्व फल अपनी सारी मस्ती दिखा सकते हैं। अिस सबकको सीख कर यहांके लोगोंने पेड़ोंके बीचमें मंदिर बनवाकर अुन पर आसमानको अनंततारा दर्शन करानेवाली सोनेकी अुंगलियां अूंची अुठा रखी हैं। जो लोग यह मानते हैं कि प्रकृतिकी शोभाको मनुष्य बढ़ा नहीं सकता, अुन्हें अेक बार यहां आकर ये शिखर जरूर देखने चाहिये।

दोपहरका समय था। अंग्रेजी जाननेवाले अेक ब्रह्मी कॉलेजियनके साथ हम बातें कर रहे थे। अितनेमें अेक शांत आवाज सुनाअी दी। छिदवीन नदी अपना कर-भार लेकर अैरावतीसे मिलने आयी थी। कितना भव्य था दोनोंका प्रेम-संगम! वह दृश्य अैसा था मानो रामदास और तुकाराम अेक-दूसरेसे मिल रहे हों अथवा भवभूति शतरंज खेलनेवाले कालिदासको अपना 'अुत्तर-रामचरित' सुना रहे हों।

कल्पना द्वारा तो मैं छिदवीनके अज्ञात प्रदेशमें शान-राज्यों तककी सैर कर आया। हाथमें तीर-कमान या कुल्हाड़ी लेकर घूमनेवाले कअी निश्चित और निर्भय वनवासी मुझे वहां मिले। जरा-सा संदेह होने पर जान लेनेवाले और विश्वास बैठ जाने पर जान न्यौछावर करनेवाले अिन प्रकृतिके बालकोंका दर्शन सभ्यताके कीचड़को धो डालनेवाले मंगल-स्नान जैसा था। जहाजका पक्षी कितना ही क्यों न अुड़े, अंतमें जिस प्रकार वह जहाज पर ही लौट आता है, अुसी प्रकार कल्पना भी जंगलकी सैर करके फिर जहाज पर आ गयी। क्योंकि हम पकोकु बंदरगाह पर आ पहुंचे थे।

पत्तोरुके पास कीचड़वाली नदीमें नहाकर और वहीं आतिथ्य स्वीकार करके हम फिर जहाज पर सवार हुअे और मिट्टीके तेलके कुअें रानेके लिअे येननजाव तक गये। यहां जा सकता है कि यहां पर अमेरिकन मजदूरोंका राज चलता है। आसपास वनश्री नहींके बराबर है। यहां जेर और अिन मिट्टीके तेलके कुआका आधुनिक क्षेत्र और दूसरी ओर टेकरी पर स्थित छोटेसे प्राचीन बौद्ध मंदिरका तीर्थक्षेत्र, दोनोंको देखकर मनमें कअी विचार अुठे। मंदिरकी कारीगरीमें हाथीके मुंहवाला अेक पक्षी खुदा हुआ था। वैस ही अन्य अनेक मिश्रण यहां दिखाअी दिये। निकटके मठमें कुछ बौद्ध साधु आलापके साथ सायंकालकी प्रार्थना या अैसी ही कोअी दूसरी विधि कर रहे थे। अैरावती मानो बिना किसी पक्षपातके मिट्टीके तेलके कुआका पसारा शारगुल भी अपने हृदय पर वहन करती है और 'अनिच्चा वत संखारा अुप्पादव्यय-धम्मिणो' का शाश्वत या चिरंतन संदेश भी वहन करती है। अमेरिकाका सामर्थ्य भले बेजोड़ हो, लेकिन वह भगड़ अभी बच्चा ही कहा जायगा न? अुसको जीवनका रहस्य जितनी जल्दी कैसे हाथ लगेगा? अुसे तो नदीके किनारे तीन तीन हजार फुट गहरे कुअें खोदकर मिट्टीका तेल निकालनेकी ही सूझेगी। संसारके सब सृष्ट पदार्थ पैदा होते हैं और मिट जाते हैं। सभी नश्वर और व्यर्थ हैं, असार हैं। सार तो केवल अिससे बचकर निर्वाण प्राप्त करनेमें है — अिस बातको कौनसा अमेरिकन मान सकता है? किन्तु अैरावती नदी नत-अुत्साहके कारण कभी शानसे अिनकार नहीं करेगी, और न शानके भारसे अुत्साहको खो बैठेगी। अुसे तो महासागरमें विलीन होना है और अिस विलीनताके आनंदको सदा जाग्रत और बहता रखना है।

येननजावसे हम प्रोम तक गये और वहां अैरावतीसे विदा हुअे। यहांसे आगे चलकर यह महानदी अनेक मुखोंसे सागरको मिलती है। अैरावती सचमुच सुवर्णदेशकी माता है।

मार्च, १९२७

६७

समुद्रके सहवासमें

[अफ्रीका जाते समय]

बम्बअीस मार्मागोवा तक हिन्दुस्तानका पश्चिमी किनारा दिखाअी देता था। मा जब तक आंखोंसे ओझल नहीं होती तब तक बच्चेको जिस प्रकार यह विश्वास रहता है कि मैं माके साथ ही हूं, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानका किनारा दिखता रहा तब तक अैसा नहीं लगा कि हमने हिन्दुस्तान छोड़ दिया है। मार्मागोवा छोड़कर हमारे जहाज 'कपाला' ने स्वदेशके साथ समकोण बनाते हुअे सीधे विशाल समुद्रमें प्रवेश किया। देखते देखते हिन्दुस्तानका किनारा आंखोंसे ओझल हो गया और चारों ओर केवल पानी ही पानी दिखाअी देने लगा। रात हुअी और आकाशकी आबादी बढ़ी। परिणामस्वरूप अकेलापन बहुत कम महसूस होने लगा। किन्तु जैसे जैसे हम भूमध्य-रेखाकी ओर बढ़ने लगे, वैसे वैसे हवा और बादलोंकी चंचलता बढ़ने लगी। मौसम अच्छा होनेसे समुद्र शांत था। लहरें जरा जरा-सी हुमककर बैठ जाती थीं। कुछ लहरें कच्ची छोकरी तरह अुठते-अुठते ही शान्त हो जाती थीं। समुद्रका रंग कभी आसमानी स्याहीकी तरह नीला हो जाता, तो कभी कालास्याह। और जहाज पानी काटता हुआ जब आगे बढ़ता, तब दोनों ओर अुसका जो सफेद फेन फैलता, अुसके अनेक अबरी बेलबूटे बन जाते। नीले रंगके साथ अुनकी शोभा अेक किस्मकी मालूम होती, काले रंगके साथ दूसरे किस्मकी। शुरू शुरूमें समुद्रके चेहरे पर लहरोंके अलावा चमड़े पर पड़ी हुअी झुर्रियोंकी-सी स्पष्ट छाप दिखाअी देती। कभी कभी ये झुर्रियां लुप्त हो जातीं और पानी चमकते हुअे बर्तनोंकी तरह सुन्दर दिखाअी देता। जहाज आहिस्ता आहिस्ता डोलता हुआ चल रहा था। जहाज जब कदमें छोटे होते हैं तब अधिक डोलते हैं। बड़े जहाज अपनी धीरगतिको आसानीसे नहीं छोड़ते। सामनेसे जब लहर आती है, तब जहाज डोलनेके

अनाना घुससवारकी तरह आगे-पीछे भी हिलता है जिसे अंग्रेजीमें 'पिचिंग' कहते हैं। यह 'पिचिंग' लम्बे समय तक जारी रहे तो मनुष्यको अच्छा नहीं लगता, वह अनुकूल भी नहीं आता। किन्तु अुसे रोका कैसे जाय? झूलते झूलते अुकता जाने पर झूला बंद करके अुस परसे अुतरा जा सकता है। किन्तु यहां तो अेक बार जहाजमें बैठ कि आठ दिन तक अुसका हिलना और डुलना स्वीकार किये सिवा दूसरी चारा ही नहीं रहता। कभी कभी मनमें संदेह पैदा होता है कि दोनों गतियोंके मिश्रणसे कहीं चक्कर तो न आने लगेंगे? मनमें यह डर भी पैठ जाता है कि चक्करकी बात मनमें अुठी अिसीलिअे अब चक्कर भी आने लगेंगे। खाते समय स्वादपूर्वक खाते हों, तो भी मनमें यह संदेह बना रहता है कि खाया हुआ पेटमें रहेगा या नहीं? अिस संदेहको मिटाना आसान बात नहीं है। खैर जो हो, हमने तो अपने आठों दिन खूब आनंदमें बिताये। लोगोंने हमें डरा दिया था कि अन्तके चार दिन बड़े कठिन जायंगे, किन्तु वैसा कुछ भी नहीं हुआ। हां, भूमध्य-रेखा जिस दिन पार की अुस दिन कुछ समय तक हवा खूब तेज चली। किन्तु अुससे हम गमगीन नहीं हुअे।

चारों ओर जब पानी ही पानी होता है तब कुछ समय तक मजा आता है। बादमें सारा वायुमंडल गंभीर बन जाता है। यह गंभीरता जब कम हो जाती है तब आगोशी अुकताहट मालूम होती है। हमारी पूरी सृष्टि मानो अेक जहाजमें ही समा जाती है। विशाल समुद्रकी तुलनामें वह कितनी छोटी और तुच्छ लगती है! समुद्रकी दया पर जीनेवाली! अुसे छोड़कर चारों ओर पानी ही पानी होता है। अितने सारे पानीका आखिर अुद्देश्य क्या है? जमीन पर होते हैं तब हम चाहे अुतना विशाल खंड क्यों न देखें, मनमें कभी यह खयाल नहीं आता कि अितनी सारी जमीन किसलिअे बनाओ गयी है? विशाल और अनंत आकाशको देखकर भी अैसा नहीं लगता कि अितने बड़े आकाशका निर्माण किसलिअे हुआ है? किन्तु समुद्रका पानी देखकर यह विचार मनमें अवश्य अुठता है। जमीनकी अपेक्षा चौगुने पानीका अगाड़ विस्तार देखते देखते अुकता जाती है, और

आमें थककर क्षितिजमें छाये हुअ बादलोंको देखकर विश्राम पाती है। मगर ये बादल तो अक्सर बिना आकारके और अर्थहीन होते है। आकाश जब मेघाच्छन्न हो जाता है तब अुसकी अुदासी असह्य हो अुठती है। औश्वरकी कृपा है कि अिस अकुलाहटका भी अंतमें अंत आता है और खुली आंखें भी अंतर्मुख हो जाती हैं तथा मन गहरे विचारमें डूब जाता है।

रातके समय और शाम कर बड़े तड़के तारे देखनेमें बड़ा आनंद आता था। किन्तु 'पूरा आकाश तो नहीं ही देखने देंगे' अैसा कहकर बादल बच्चोंकी तरह आकाशके चेहरे पर अपने हाथ घुमाते रहते थे। अुनकी दयासे जिस समय आकाशका जितना हिस्सा दिखाअी देता अुसीको पढ़ लेना हमारा काम रहता था। गुरुवारका प्रातःकाल होगा। जहाज सीधा चल रहा था। अुसके मुख्य स्तंभके ठीक पीछे शर्मिष्ठा थी। स्तंभकी आड़में भाद्रपदाकी चौकोन आकृति जैसे वैसे जम गयी थी। नीचे अुतरते हुअे ध्रुवकी बगलमें देवयानी निकल रही थी। पौने पांच बजे और त्रिकाण्ड श्रवण सिर पर स्वस्तिककी जगह लटकने लगा। हंस, अभिजित और पारिजात तीनोंका मिलकर अेक सुन्दर चंदोवा बन गया था। बाअीं ओर गुरु चंद्र और शुक्र अेक कतारमें आ गये थे। चंद्रकी चांदनी *अितनी मंद थी कि अुस छाछकी अुपमा भी नहीं दी जा सकती थी।* सामने देखा तो बाअीं ओर वृश्चिक अपने अनुराधा ज्येष्ठा और मूलके साथ लटक रहा था जब कि दाअीं ओर स्वाति अस्त हो रही थी। बेचारा ध्रुवमत्स्य लगभग क्षितिजसे मिल गया था।

दूसरे दिन चंद्रका पक्षपात ध्रुवकी ओर हो गया। सप्तर्षिके दर्शन करके हम सोने जा रहे थे अुस समय आकाशमें पुनर्वसुकी नावको हमारे साथ दक्षिणकी यात्रा पर रवाना हुअी देखकर बड़ी खुशी हुअी। पुनर्वसुके नावमें बैठनेकी चित्राकी अभिलाषा अभी तक अतृप्त ही रही है। शायद मघा नक्षत्रकी और्ष्या अिसमें रुकावट डालती होगी। शनिवारके दिन चंद्र और शुक्रकी युति सुन्दर मालूम हुअी। आखिर आखिरमें अिन दोनोंने कुछ नीला-सा रंग धारण कर

लिया था। भाद्रपदकी चौड़ी नाली यहां खूब अूची चढ़ी हुअी दिखती थी।

ध्रुव कलसे लुप्त हो गया था।

सुबह जब अुषा स्वागत करनेके लिअे स्मित करती है, तब सारे क्षितिज पर चांदीके जैसी चमकीली किनारी बन जाती है। अिसके बाद समुद्र प्रसन्नताके साथ हंसने लगता है और अुषाके प्रगट होनेके लिअे गुलाबी अवकाश देता है।

शनिवारको सामनेसे आता हुआ अेक जहाज दिखाअी दिया। अपने दीयेका प्रकाश चमकाकर अुसने हमारे जहाजका अभिवादन किया। हमारे जहाजने भी अुसका अभिवादन किया ही होगा। दोनों जहाज यदि बहुत समीप आ जाते तो दोनों भोंपू बजाते। किन्तु जहां आवाज नहीं पहुंचती, वहां प्रकाशके द्वारा बातें करनी पड़ती हैं। पूरे चार दिनोंके अेकान्तके बाद हमारे जहाजके जैसी ही दूसरी अेक सृष्टिको जीवन-पट पर विहार करते देखकर अत्यंत आनंद हुआ। हमारे जहाजके लोग अफ्रीकाके सपने देख रहे थे। सामनेवाले जहाजके यात्री हिन्दुस्तानके सपने देख रहे थे। दोनों जहाजके यात्रियोंके मनोव्यापारोंका योग लगाया जाय तो कैसा मजा आये!

जहाज परके यात्रियोंकी तीन जातियां होती हैं। प्रतिष्ठाकी अस्पृश्यता भोगनेवाले होते हैं पहले वर्गके यात्री। अुन्हें अधिक सुविधायें मिलती हैं, यह बात छोड़ दीजिये। किन्तु अुनका बड़प्पन अिस बातमें है कि अुनके राज्यमें दूसरा कोअी प्रवेश नहीं कर पाता। अूपरी डेकका बहुत-सा हिस्सा अुनके आराम और खेल-कूदके लिअे सुरक्षित रखा जाता है। दूसरे वर्गके यात्रियोंको भी अच्छी खासी सुविधायें मिलती हैं। लेकिन तीसरे वर्गके यात्रियोंकी गिनती तो मनुष्योंमें होती ही नहीं। अुनको कुछ भेड़-बकरियोंकी तरह यहीं भी ठूंस दिये जाते हैं। लगातार आठ दिन तक मनुष्यको पशु-जीवन बिताना पड़े, यह कोअी मामूली मुसीबत नहीं है।

और अब दूसरे और तीसरे वर्गके बीचमें अेक 'अिन्टर' का वर्ग बनाया गया है। वह पशु और मनुष्यके बीचका वानर-वर्ग कहा जा सकता है। अुसमें काफी भीड होने हुअे भी अितनी गनीमत है कि यात्री मनुष्यकी तरह सो सकते हैं।

हम जहाज पर है, यह मालूम होते ही अनेक लोग हमसे बातें करनेके लिअे आने लगे। अुसमें भी हमारे सुबह-शाम प्रार्थना करनेके समाचार जब जहाजके खलासियों तक पहुंचे, तब अुन्होंने हमें नीचेके डेक पर शामकी प्रार्थना करनेके लिअे बुलाया। करीब सभी खलासी सूरत जिलेके थे। भजनके पूरे रसिया। वे अनेक भजन जानते और ताल-स्वरके साथ गा सकते थे। अुनकी भजन-मंडली जब जमती तब वे सारे दिनकी थकावट और जीवनकी सारी चिन्तायें भूल जाते थे। यह जानते हुअे भी कि नीले रंगकी पोशाक पहनकर सारे दिन यंत्रकी तरह काम करनेवाले लोग यही हैं यह सच नहीं मालूम होता था। अुनके समक्ष मैंने अनेक प्रवचन किये। मैंने अुन्हें यह समझानेकी कोशिश की कि अुनका जीवन अेक तरहकी साधना ही है। मैंने यह भी बताया कि जमीन पर ही दीवारें खडी की जा सकती हैं, समुद्र पर नहीं। अतः खलासियोंके समाजमें जात-पातकी दीवारें नहीं होनी चाहियें। अुन्हें तो दरिया-दिल बनना चाहिये।

हम लोग अिस प्रकार भजनमें तल्लीन रहते थे, अुसी बीच जहाज परके कअी गोवानी लोगोंने अेक रातको स्त्री-पुरुषोंके अेक नाचका आयोजन किया। अिसके लिअे अुन्होंने जो चंदा अिकट्ठा किया, अुसमें हमको भी शरीक किया। अिसलिअे हम हकदार प्रेक्षक बने!

गोवाके अीसाअी लोगोंमें युरेशियन नहींके बराबर हैं। धर्मसे अीसाअी किन्तु रक्तसे शुद्ध हिन्दुस्तानी लोगोंने पश्चिमके जो संस्कार अपनाये हैं अुनका असर देखने लायक होता है। कुछ युगल नृत्य-कलाका संयमपूर्वक आनंद ले रहे थे कुछ अैसे गंभीर, अलिप्त और यांत्रिक ढंगसे नाच रहे थे मानो कोअी सामाजिक रस्म अदा कर रहे हों; जब कि कुछ युगल नृत्यके नियम मंजूर करें अुतनी पूरी छूट लेकर नृत्यमें तथा अेक-दूसरेमें लीन हो रहे थे। अेक दो युगलोंकी

अुग्र और अूचाअी अितनी अगमान थी कि मनमें यही विचार आता कि अितनी बडी विडबनाका भोग अुन्हें क्यों बनना पडा। सकरी जगहमें अितने सारे लोगोंका नृत्य जैसे तैसे पूरा हुआ। अत तक जागनेकी अिच्छा न होनेसे ग्यारह बजनेसे पहले ही हम लोग सो गये।

हमारा जहाज पश्चिमकी ओर यानी पृथ्वीकी दैनदिन गतिसे अुल्टी दिशामें चल रहा था। अत लगभग हररोज हमें घडीके काटे घुमाने पडते थे। जहाजकी ओरसे हमें सूचना मिलती थी कि 'मध्यरात्रिमें आधा घटा कम करो' या 'अेक घटा कम करो।' सृष्टिके नियमको समझकर हम अितना नुकसान अुठानेको तैयार हो जाते थे। अफ्रीका पहुचने तक हमने कुल मिलाकर ढाअी घटे खोये थे। (बेल्जियन कांगो जाने पर अेक घटा और खोना पडा था।)

भूगोलके तथ्य न जाननेवाले पाठकोंको अितना कह देना आवश्यक है कि रेखाशकी हर पद्रह डिग्री पर अेक घटा बढाना या खोना पडता है। और प्रशात महासागरमें जब जहाज अेशिया और अमेरिकाके बीच १८० रेखाश पर होते है, तब अुन्हें आते या जाते अेक पूरा दिन बढाना या घटाना पडता है। अिस रेखाको अग्रेजीमें 'डेट लाअिन' कहते है। हमारे यहा जिस तरह अधिक मास आता है, अुसी तरह 'डेट लाअिन' पर जाते हुअे अेक अधिक दिन आता है, जब कि आते हुअे अेक दिनका क्षय होता है।

आठ दिनमें न तो कोअी अखबार देखनेको मिला, न डाक, न मुलाकाती, न कोअी शहर या गाव — यहा तक कि सौगद खानेके लिअे कोअी पहाड या टापू भी देखनेको नही मिला! अैसी स्थितिमें जब घटे पर घटे और दिनों पर दिन चुपचाप चले जाते है, तब वार और तारीखका भी ठिकाना नही रहता। हमारे जहाजकी अूचाअीका हिसाब करते हुअे जब मैंने अिस बातकी जाच की कि हमारे अिर्दगिर्द क्षितिज तक कितना समुद्र फैला हुआ है, तब जहाजवालोंसे मालूम हुआ कि हमारी आखें २५० वर्गमीलका समुद्र अेक नजरमें पी सकती थीं।

कैसी महाशान्ति थी! वह भी डोलती, झूलती, बहती किन्तु स्थिर शान्ति आकाशके आशीर्वादके नीचे अुमड रही थी। Swelling and rolling peace — abiding and abounding पता नहीं किस तरह अिस शान्तिके सेवनके साथ मुझमें मानव-प्रेम अुमड रहा था और सारी मनुष्य-जातिके स्वस्ति, स्वस्ति स्वस्ति कह रहा था। मानव-जातिका अितिहास आज भी कुल मिलाकर सुन्दर नहीं बन पाया है। अिसी समुद्रने कितने ही अन्याय और अत्याचार देखे होंगे। कितने ही गुलामोंकी आहें यहांकी हवामें मिली होंगी। और कितनी ही प्रार्थनायें सूर्य, चन्द्र और तारों तक पहुंच कर भी व्यर्थ गयी होंगी। अितना होते हुअे भी यदि मनुष्य-रक्तके कारण समुद्रमें लाली नहीं आयी, दुःखियोंकी आहोंसे यहांकी हवा कलुषित नहीं हुआी और लोगोंकी निराशासे आकाशकी ज्योतियां मंद नहीं पडीं, तो मनुष्य-जातिका थोड़ासा अितिहास पढ़कर मेरा मानव-प्रेम किसलिअे संकुचित या कम हो? यदि मैं अपने असंख्य दोषोंको भूलकर अपने आप पर प्रेम कर सकता हूं, और अपने विषयमें अनेक तरहकी आशायें बांध सकता हूं, तो मेरे ही अनंत प्रतिबिंबरूप मानव-जातिको मेरा प्रेम कम क्यों मिले?

अैसी भावनाके साथ अफ्रीकाकी भूमि पर विषम रूपसे चलने-वाले मनुष्य-जातिके विराट सहकारको देखनेके लिअे मैं मोम्बासा पहुंचा।

अिन आठ दिनोंमें खूब पढ़ने-लिखनेकी जो अुम्मीद मैंने रखी थी, वह पूरी नहीं हुआी। किन्तु ये आठ दिन जीवनके दर्शन, चिंतन और मननसे भरपूर थे।

नवंबर, १९५०

६८

रेखोल्लंघन

भूमध्य-रेखा (equator) पृथ्वीकी कटि-मेखला है। सीलोनमें दक्षिणमें पहुंचा था तब यह मानकर मन कितना अस्वस्थ हुआ था कि यहां तक आये फिर भी भूमध्य-रेखा तक नहीं पहुंच सके! सीलोनके दक्षिणमें गाल, देवेन्द्र और मातारा तक गये तब भी छठी डिग्रीसे ज्यादा दक्षिणमें नहीं जा सके। कन्याकुमारी गया तब मुश्किलसे आठवीं डिग्री तक ही पहुंचा था। चि० सतीश सिंगापुर था तब वहां जानेकी अेक बार अिच्छा हुअी थी — अुसे मिलनेके लिअे नहीं, परन्तु भूमध्य-रेखा लांघ सकूंगा अिस लालचसे। फिर जब नक्शेमें देखा कि सिंगापुर भी भूमध्य-रेखाके अिस पार ही है तब यह अुत्साह नहीं रहा।

लेकिन भूमध्य-रेखामें अैसा क्या है? जमीन पर या पानी पर सफेद, काली या पीली लकीर नहीं खींची गअी है। फिर भी भूमध्य-रेखाका प्रदेश काव्यमय है अिसमें कोअी शक नहीं।

अिस प्रदेशका स्मरण करता हूं और मुझे शान्तादुर्गा और अर्ध-नारी नटेश्वरका स्मरण होता है। शान्तादुर्गा अेक ओर शुभंकरी शान्ता है, तो दूसरी ओर भयंकरी दुर्गा है। महादेवका भी अैसा ही है। अुनका दक्षिण मुख सौम्य शिव है और वाम मुख अुग्र रुद्र है। अर्ध-नारी नटेश्वर अेक ओर स्त्रीरूप है, तो दूसरी ओर पुरुषरूप है। हमारे समन्वयवादी पूर्वजोंने हरि-हरेश्वरकी कल्पना अिसी तरह की है। शिव और विष्णु दोनोंके मिलनेसे हरिहरेश्वर बने हैं।

भूमध्य-रेखा पर अिसी तरह परस्पर विरोधी ऋतुओंका मिलन है। अुत्तर गोलार्धमें जब गर्मीका मौसम होता है तब दक्षिण गोलार्धमें जाड़ेका। अेकमें जब वसन्त होता है तब दूसरेमें शरद्। भूमध्य-रेखा

अेक अैसा प्रदेश है जहां गर्मी और जाड़ेके मौसम हस्तांदोलन कर सकते हैं। और प्रौढ़ा शरद् भी बाल वसंतको खेला सकती है।

अैसी जगह अगर अखंड शान्ति ही रहे तो यहांका जीवन अलोना हो जाय! खिलाड़ी कुदरतसे यह कैसे सहा जाय? गंगा-यमुनाका धवल-श्यामल पानीका संगम तो हमेशा नाचा करे, और अुत्तर-दक्षिणका मिलन नृत्य न करे, यह कैसे चले?

आज भूमध्य-रेखा पर आये हैं। यहां पवन अखंड रूपसे नाचता है। चंचलता कहीं स्थिर हुआी हो तो यहीं। यहांकी कुदरत अेक हाथसे गर्मीकी पीठ पर थपकियां देती है, तो दूसरा हाथ जाड़ेकी पीठ पर फेरती है।

भूमध्य-रेखा यानी तराजूमें तौला हुआ पक्षपात-रहित न्याय। *अुत्तर-ध्रुव दीख पड़े और दक्षिण-ध्रुव नहीं, अैसा यहां नहीं चल सकता।* यहांके आकाशमें मृग नक्षत्रके पेटमें पहुंचा हुआ बाण अिधर या अुधर झुक या ढल नहीं सकता। सीधा पूर्वमें अुग कर खस्वस्तिक (Zenith) को छू कर वह पश्चिममें डूबेगा। यही अेक धन्य प्रदेश है जहां खस्वस्तिक विषुववृत्त पर विराजमान हो सकता है। जैसे भूमि पर भूमध्य-रेखा होती है, वैसे आकाशमें विषुववृत्त (celestial equator) होता है। अितना लिखते हैं वहां हमारा रंगीन अभिनंदन करनेके लिअे अेक अिन्द्र-धनुष आगे दाहिनी ओर निकल आया है। अब तृप्ति हुआी। लेकिन समस्त मानव तृप्तियोंकी तरह यह अगर अल्पजीवी न हो तो पेट फूट जाय। और पेट नहीं तो आंखें फूट जायें। यह कैसे पुसा सकता है? अब दक्षिण गोलार्धमें क्या क्या देखने जाननेको मिलेगा, क्या क्या अनुभव होगा, अिसकी अुत्सुकता जाग्रत होने लगी है। भूमध्य-रेखा पहली बार लांघ सके अुसकी धन्यता सदा साथ रहेगी।

मअी, १९५०

६९

नीलोत्री

(१)

अफ्रीकाकी यात्रा करनेमें अेक अुद्देश्य था अुत्तर-पूर्व अफ्रीकाकी माताके समान अुत्तर-वाहिनी नील नदीके अुद्गम-स्थान नीलोत्रीके दर्शनका। *गंगोत्री और जमनोत्रीकी यात्रा करनेके बाद अभी अभी जैसा* लगने लगा था कि नीलोत्रीकी यात्रा करनी ही चाहिये। वह दिन अब निकट आ गया था। जलाअीकी पहली तारीखको सुबह ही हमने कंपाला छोड़कर जिंजाके लिअे प्रस्थान किया। अपने जरूरी कामके कारण श्री अप्पासाहब आज नैरोबी वापस चल गये और हम मोटर लेकर अपने रास्ते चल पड़े।

कंपालासे जिंजा तकका रास्ता सुन्दर है। अनेक छोटी-छोटी और चौड़ी पहाड़ियां चढ़ती-अुतरती हमारी मोटर हमारे और नीलोत्रीके बीचका बावन मीलका फासला काटती गअी और हमारी अुत्कंठा बढ़ाती गअी। यह कितने बड़े सौभाग्यकी बात थी कि जिंजा तक पहुंचनेके पहले ही हमारा संकल्प पूरा हुआ और हमें नीलोत्रीके दर्शन हो गये! दाअीं ओर विक्टोरिया या अमरसरका सरोवर दूर तक फैला हुआ है। अुसमें से सहज-लीलासे छलांग मारकर नील नदी जन्म लेती है! हम नदीके पुल पर पहुंचे। मोटरसे अुतरे और दाअीं ओर मुड़कर रिपन फॉल्सके नामसे मशहूर अेक छोटे-से प्रपातमें हमने नील नदीके दर्शन किये।

प्रपातके तुषारोंसे पैर ढक गये हैं। सिर पर मुकुट चमक रहा है। और पीछे अेक हरा-भरा वृक्ष मुकुटको अधिक सुशोभित कर रहा है। देवीके दोनों हाथोंमें धानकी पूलियां हैं और मुंह पर प्रसन्न वात्सल्य खिल रहा है — अैसी मूर्ति कल्पनाकी नजरमें आअी। मूर्ति नीले रंगकी नहीं थी, बल्कि श्यामवर्णकी और जरा अुतरती हुअी गोरी ही थी। सारे बदन पर पानीकी धारायें बह रही थीं। अिससे देवीके मुख परका हास्य अधिक सुन्दर मालूम हो रहा था।

जी भरकर दर्शन करनेके बाद हमने बाओं ओर देखा। दाओं ओरका पानी हमारी दिशामें दौड़ा चला आ रहा था। बाओं ओरका पानी हमसे दूर दूर दौड़ा जा रहा था। दोनोंका अगर बिलकुल भिन्न था। हमें मालूम था कि दाओं ओर रंजन प्रधान है, और बाओं ओर जरा दूर ओवेन प्रधान है। हमारे दर्शमें अुसे कोओी प्रधान हरगिज नहीं कहेगा। पानीकी सतहमें कुछ फुटका अंतर पैदा हो जानेसे ही क्या प्रपात बन जाता है? प्रपात तो तभी कहा जा सकता है जब पानी धब-धब गिरता हो, जितना गिरे अुतना ही फिर अुछलता हो और फेन तथा तुषारके बादल अिर्दगिर्द नाचते हों।

यात्रामें अनमें लोग तुरन्त जाकर मदिरोंमें जा देवताका दर्शन करते हैं, अुन यात्रियोंकी परिभाषामें 'धूल-भेंट' कहते हैं। यात्रा पैदलकी हो, सारे शरीर पर धूल छाओी हो और थुकानके कारण अुसी स्थितिमें दौड़कर अिष्ट देवताके चरणोंमें गिर रहे हों या मिल रहे हों, तो अुसे धूल-भेंट कहा हैं। हम तो मोटरसे रवाना आये थे। सुबह थोड़ा-सा पानी गिरा था, जिससे रास्ते पर भी धूल नहीं थी। अतः अिस प्रथम दर्शनको 'भीगी-भेंट' ही कह सकते थे। यदि 'भाव-भीनी' कहें तो वह और अधिक यथार्थ वर्णन होगा। मति गीली, जमीन गीली, आंखें गीली और अनेक मिश्र-भावोंसे आलिप्त हृदय भी गीला। 'अद्य मे सफलं जन्म, अद्य मे सफला क्रिया' यह पंक्ति जिसने प्रथम गाओी होगी, वह मेरे जैसे असंख्य यात्रियोंका प्रतिनिधि ही होगा।

नीलमाताके अिस प्रथम दर्शनको हृदयमें संग्रह करके हमने शिवामें प्रवेश किया। गुजरात विद्यापीठके किसी समयके विद्यार्थी अेडवोकेट श्री चंदुभाओी पटेलके यहां हमारा डेरा था। पुराने विद्यार्थियोंके यहां आतिथ्य अनुभव करना जितना आनंद-दायक होता है, अुतना ही बड़ा और कठिन भी होता है। घरकी अच्छीसे अच्छी सुविधायें हमें देकर खुद अड़चन भोगनेमें व आदर मानते होंगे; किन्तु हमें संकोच अनुभव हुअे बिना कैसे रह सकता है?

अब हम नीलोत्रीके विधिवत् दर्शनके लिअे निकल पड़े। हम वहां पहुंचे जहां अमरगंगाका जल शिलाओंकी किनार परसे नीचे अुतरता है और नील नदीको जन्म देता है। जल्दी जल्दी पानीके पास जाकर पहले पैर ठंडे किये। आचमन करके हृदय ठंडा किया और क्षणभरके लिअे अुस स्थानका ध्यान किया। मेरी आदतके अनुसार अीशोपनिषद्, माण्डुक्य अुपनिषद् या अघमर्षण सूक्त मुंहसे निकलना चाहिये था। किन्तु अैसाअेक यह श्लोक निकला

ध्येय सदा सवितृ-मण्डल-मध्यवर्ती
नारायण सरसिजासन-सन्निविष्ट ।
केयूरवान् मकर-कुण्डलवान् किरीटी
हारी हिरण्मय-वपुर् धृत-शंख-चक्र ॥

नील नदीके तट पर भिन्न भिन्न समय पर और भिन्न भिन्न स्थान पर तीन बार नीलाम्बाका ध्यान किया और हर बार मुंहसे अेक रूपमें यही श्लोक निकला। अब मुझे मिश्र देशकी संस्कृतिके पुराणोंमें यह खोज करनी है कि क्या नील नदीका भगवान् सूर्य-नारायणके साथ कोअी खास संबंध है?

मैं यदि संस्कृतका कवि होता तो अिस नदीके पानीमें रहने-वाली मछलियां, पानी पर अुड़नेवाले वाचाल पक्षियों और अुसके किनारे लोटनेवाले किंगोंका (हिपोपोटेमस) की धन्यताके स्तोत्र गाता। नील नदीके किनारे जो कॉटन फार्म है, अुसकी देखभाल करनेके लिअे नियुक्त अेक गुजराती सज्जनके भाग्यसे अुन्हींकी भाषामें अीर्ष्या प्रकट करके मैंने संतोष माना "आप कितने धन्य हैं कि आपको अहोरात्र नीलोत्रीके दर्शन होते रहते हैं, और यहांसे न हटनेके लिअे आपको तनख्वाह दी जाती है!" यह देखने या पूछनेके लिअे मैं वहां रुका नहीं कि अुनको अिस तरहकी धन्यता महसूस होती है या नहीं।

मेरी दृष्टिसे नदियां दो प्रकारकी होती हैं। पहाड़से निकलनेवाली और सरोवरसे निकलनेवाली। पहलीको मैं शैलजा या पार्वती कहूंगा; और दूसरीको सरोजा। (आशा है संसार भरके कमल मुझे क्षमा

करेंगे।) शैलजा नदियोंका अुद्गम बहुत छोटा, पतला और लगभग तुच्छ जैसा होता है। अत अुनके प्रति आदर अुत्पन्न करनेके लिअे बड़े-बड़े माहात्म्य लिखने पड़ते हैं। गंगोत्रीके पास गंगाका प्रवाह कभी-कभी अितना छोटा हो जाता है कि सामान्य मनुष्य भी अुसके अेक किनारे अेक पैर और दूसरे किनारे दूसरा पैर रख कर खड़ा हो सकता है। सरोजा नदियोंकी बात अलग है। विशाल और स्वच्छ वारि-राशिमें से जीमें आये अुतना पानी खींचकर वे बहने लगती हैं। और अुनके चलन-बोलनमें जन्मसे ही धनी श्रीमन्त होनेका आत्मभान होता है।

नीलोत्रीकी यात्रा करनेका अेक और भी अदम्य आकर्षण था। महात्मा गांधीके पार्थिव शरीरको दिल्लीके राजघाट पर अग्निसात् करनेके पश्चात् अुनकी अस्थि और चिता-भस्मका विसर्जन हिन्दुस्तान तथा संसारके अनेकानेक पुण्य-स्थानोंमें किया गया था। अुनमें से अेक स्थान नीलोत्री है।

हम जिस नगरीके सार्वजनिक मेहमान थे। वहां यहांके लोगोंने हमारी अुपस्थितिसे 'लाभ अुठाने' की ठानी और जहां चिता-भस्मका विसर्जन किया गया था, अुसके पास अेक कीर्तिस्तंभ खड़ा करनेकी बात तय हो चुकनेसे अुसका शिलान्यास मेरे हाथों करानेका प्रबंध किया।

२ जुलाअी, १९५० को अधिक आषाढ कृष्ण तृतीयाके दिन सुबह सैंकड़ों लोगोंकी अुपस्थितिमें मैंने यह विधि पूरी की। अिस अवसरके लिअे गांधीजीका अेक बड़ा चित्र सामने रखा गया था। अुसकी नजर मंच पर पड़ते ही मैं बेचैन हो अुठा। वैदिक विधि पूरी होनेके पश्चात् मैंने गांधीजीके जीवनके बारेमें थोड़ासा प्रवचन किया और बताया कि अफ्रीका ही अुनकी तपोभूमि है। फोटो वगैरा खींचनेकी आधुनिक विधिसे मुक्त होते ही किनारेके अेक पत्थर पर बैठकर नील-माताके शुभग जल-प्रवाह पर मैंने टकटकी लगाअी और अंतर्मुख होकर ध्यान किया। अुस समय मनमें विचार आया कि युरोप, अफ्रीका और अेशिया, अिन तीनों महाखंडोंके बल्कि अमेरिकाके भी महान और सामान्य आबालवृद्ध स्त्री-पुरुष यहां आयेंगे, सर्वोदयके ऋषि महात्मा

गाधीके जीवन, जीवन-कार्य और अंतिम बलिदानका यहां चिन्तन करेंगे और मनुष्य मनुष्यके बीचका भेदभाव भूलकर विश्व-कुटुबकी स्थापना करनेका व्रत लेंगे। भविष्यके अिन सारे प्रवासियोंको मैंने यहांसे अपने प्रणाम भेजे।

(२)

नील नदीकी दो शाखायें हैं। श्वेत और नील। जिंजाके समीप जिसका अुद्गम होता है वह श्वेत शाखा है। नीलशाखा भी सरोजा ही है। ओथियोपिया (जिसे हम हब्शियाना (अबिसीनिया) कहते हैं) देशमें ताना नामक अेक सरोवर है। अिस सरोवरमें से नील शाखा निकलती है। ये शाखायें लाखों बरससे बहती रही हैं और अपने किनारे रहनेवाले पशु-पक्षी और मनुष्योंको जलदान देती रही है। मगर युरोपियन लोगोंको जिस चीजका पता न हो वह अज्ञात ही कही जायगी। अेक दृष्टिसे अुनका कहना सही भी है। दूसरे लोग नदीके किनारे रहते हुअे भी यदि अिसकी खोज न करें कि यह नदी असलमें कहांसे आती है और आगे कहां तक जाती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि अुन लोगोंको सारी नदीका ज्ञान है। मसलन्, तिब्बतके लोग मानसरोवरसे निकलनेवाली सानपो (विशाल प्रवाह) नदीको जानते हैं। वे लोग अधिकसे अधिक अितना ही जानते हैं कि यह नदी पूर्वकी ओर बहती बहती जंगलमें लुप्त हो जाती है। अिधरसे हमारे लोग ब्रह्मपुत्रका अुद्गम खोजते खोजते अुसी जंगलके अिस ओरके सिरे तक पहुंचे। आगेका वे कुछ नहीं जानते। जब कभी अंग्रेजोंने प्रतिकूल परिस्थिति होते हुअे भी अिन जंगलोंको पार किया, तभी वे यह स्थापित कर सके कि तिब्बतकी सानपो नदी ही अिस ओर आती है और अन्य कभी छोटी-बड़ी नदियोंका पानी लेकर ब्रह्मपुत्र बनी है।

नील नदीका अुद्गम खोजनेवालोंमें मि० स्पीक अंतमें सफल हुअे और अुन्होंने यह सिद्ध किया कि जिंजाके पास सरोवरसे जो नदी निकलती है वही मिश्र-माता नील है।

ये स्पीक साहब हिन्दुस्तान सरकारकी नौकरीमें थे। अुन्हें पता चला कि प्राचीन हिन्दू लोग मिश्र यानी आजके अजिप्तके बारेमें काफी जानकारी रखते थे। अुन्होंने जांच करके यह मालूम किया कि संस्कृत पुराणोंमें कहा गया है कि नील नदीका अुद्‌गम मीठे पानीके अमरसरसे हुआ है, अिसी प्रदेशमें चन्द्रगिरि है, ठेठ दक्षिणमें मेरु पर्वत स्थित है, आदि। पुराणोंमें से कुछ संस्कृत श्लोकोंका अुन्होंने अनुवाद करवा लिया और अुसके सहारे नीलके अुद्‌गमका खोज करनेका निश्चय किया।

वे पहले झांझीबार गये और वहांसे सब तैयारी करके केनिया प्रदेश पार करके युगान्डा गये। वहां अुन्हें अमरसरवाला 'अच्छोद' सरोवर मिला। (अच्छ – सुअच्छ = स्वच्छ। अुद – अुदक = पानी। मीठे पानीके सरोवरको अच्छोद कह सकते हैं।) और वहांसे निकलनेवाली नील नदी भी मिली। अुन्होंने यह सिद्ध किया कि सुदान और अजिप्तमें बहनेवाली नदी यही है। अिस बातको अभी पूरे सौ साल भी नहीं हुअे हैं।

अफ्रीका खंड सचमुच बड़ा रहनेवाली अनेक अफ्रीकन जातियोंका देश है। अिस प्रदेशके बारेमें युरोपियन लोगोंको पूरी जानकारी नहीं थी, यह कोअी वहांके लोगोंका दोष नहीं है। युरोपके और खास करके अरबस्तानके लोग अफ्रीकाके किनारे जाकर वहांके लोगोंको पकड़ लेते थे और अपने अपने देशमें ले जाकर अुन्हें गुलामके तौर पर बेचते थे। पकड़े हुअे लोगोंमें स्त्रियां भी होती थीं और बच्चे भी होते थे। किन्तु लुटेरे अुनका मनुष्यके नाते खयाल क्या करने लगे?

कुछ मिशनरी लोगोंको सूझा कि अैसे जंगली लोगोंकी आत्माके अुद्धारके लिअे अुन्हें औसाअी बनाना चाहिये। जिस गहन प्रदेशमें लोभी व्यापारी भी जानेकी हिम्मत नहीं कर पाते, वहां ये अुत्साही धर्म-प्रचारक पहुंच जाते और वहांकी भाषा सीखकर लोगोंको औसा मसीहका 'शुभ-सन्देश' सुनाते।

आगे चलकर युरोपके राजाओंने अफ्रीका खंडको आपसमें बांट लिया। अिसमें नियम यह रखा कि जिस देशके मिशनरियोंने जितना

प्रदेश ढूंढ निकाला (!) हो अुतना प्रदेश अुस देशके राजाकी मिलकियत माना जाय। जिसमें अेक बार अैसा हुआ कि स्टेन्ली नामक किसी मिशनरीने अिंग्लैण्डके राजासे कांगो नदीके विस्तारका प्रदेश 'ढूंढने' के लिअे मदद मांगी। अिंग्लैण्डके राजाने यानी पार्लियामेन्टने यह मदद नहीं दी। अतः वह बेल्जियमके राजाके पास गया। राजा लिओपोल्ड लोभी और अुत्साही था। अुसने अुसे सब तरहकी मदद दी। परिणाम-स्वरूप जब अफ्रीकाका बटवारा हुआ तब कांगो नदीके विस्तारका प्रदेश बेल्जियमके हिस्सेमें गया। बेल्जियम कांगोका यह प्रदेश करीब हिन्दुस्तान जितना बड़ा है। यहांसे रबड़ प्राप्त करनेके लिअे गोरे लोगोंने यहांके बाशिंदों पर जो जुल्म गुजारे अुसका वर्णन पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, अैसा कहना अनावश्यक ही होगा। भावनाशील मनुष्य यदि ये वर्णन पढ़े तो अुसका खून जम जायगा। फिर भी गोरे लोगोंने यहांके बाशिंदोंको धीरे धीरे 'सुधारा' अवश्य है। अब ये लोग कपड़े पहनते हैं, बालोंमें तरह तरहकी मांगें निकालते हैं और शराब भी पीते हैं। जिस प्रकार अुनमें से बहुतसे औसाअी बन गये हैं!

हमारे यहांके लोगोंने युगान्डामें जाकर कपासकी खेती बढ़ाअी। राज्यकर्ताओंकी मददसे वहां बड़ी बड़ी 'अेस्टेटें' बनाअीं और करोड़ों रुपये कमाये। हमने भी वहांके लोगोंको सुधारा है; दरजी-काम, बढ़ईगीरी, राजकाम, रसोअी-काम आदि धंधोंमें हमने अुनकी मदद की, अिसलिअे वे लोग धीरे धीरे जिसमें प्रवीण हो गये। हिन्दुस्तानके कपड़े और विलायतसे आनेवाली शराब आदि अनेक प्रकारकी चीजें बेचनेकी दूकानें खोलीं और अुन लोगोंको जीवनका आनंद भोगना सिखाया!

गोरे और गेहुंअे रंगके लोगोंके अिस पुरुषार्थकी साक्षी नील नदी यहां चुपचाप बहती रहती है और अपना परोपकार अपने दोनों तटों पर दूर दूर तक फैलाती रहती है।

हमारे देशमें गंगा नदीका जो महत्त्व है, वही महत्त्व अधिक अुत्कट रूपसे अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामें नील नदीका है। अिजिप्तकी मिश्र या मिसर संस्कृतिका स्थान दुनियाकी सबसे महत्त्वपूर्ण पांच-छ प्राचीन

संस्कृतियोंमें है। असका असर युरोपके अितिहास पर ही नहीं, बल्कि अुसके धर्म पर भी पडा है। हमारे यहा जैसी चार वर्णोवाली संस्कृति विकसित हुअी, वैसी ही संस्कृति प्राचीन मिस्र देशमें भी देखनेको मिलती है और अुसका प्रतिबिंब यूनानी दार्शनिक अफलातूनकी 'समाज-रचना' पर पडा हुआ मिलता है। चार वर्णोवाली संस्कृति अुस कालके लिअे चाहे जितनी अनुकूल और भव्य मानी गअी हो, फिर भी तूफानी युरोप अुसे हजम नहीं कर सका। युरोपमें जो अीसाअी धर्म फैला है, अुसका पालन-पोषण अिजिप्तमें कुछ कम नहीं हुआ है। किन्तु वहा विकसित हुअे वैराग्य, तपस्या तथा देह दमनको काफी आजमानेके बाद युरोपने अुसे छोड दिया। फिर भी युरोपकी संस्कृतिकी जडें ढूंढनी हो तो अिजिप्तके अितिहासमें प्रवेश करना ही पडता है और अिस अितिहासका निर्माण कुछ हद तक नील नदीका ऋणी है।

जिस तरह नदीका पानी आगे ही आगे बहता है, पीछे नहीं जा सकता, अुसी तरह अिजिप्तकी संस्कृति नील नदीके अुद्गमको ओर युगान्डा प्रदेशमें नहीं पहुच सकी, यह बात हमारा ध्यान आकर्षित किये बिना नहीं रहती। अिजिप्तके लोग यदि अमरसरके आसपास आकर बसे होते तो अफ्रीकाका ही नहीं बल्कि दुनियाका अितिहास भिन्न प्रकारसे लिखा जाता।

हमारे देशमें नदियोंके जितने अुद्गम हम देखते हैं, वे सब जंगलोंमें या दुर्गम प्रदेशोंमें होते हैं। और ये अुद्गम छोटे भी होते हैं। नील नदीका अुद्गम विशाल है अिसकी तो कोअी बात नहीं। किन्तु अुद्गमके वाव्यमें कभी अिस बातसे आ गअी है कि वहा अेक शहर बसा हुआ है। हमारे यहा कृष्णा और अुसकी चार सहेलिया सह्याद्रिके जिस प्रदेशसे निकलती हैं, वह प्रदेश दुर्गम और पवित्र था। सतोंने वहा शिवजी महाबलेश्वरकी स्थापना की थी। किन्तु अंग्रेजोंने अुसको अपना ग्रीष्म-नगर बनाकर अुस तपोभूमिको विहार-भूमि या विलास-भूमि बना डाला, अिस बातका स्मरण मुझे जिंजामें हुअे बिना नहीं रहा।

और अब तो वहा ओवेन फॉल्सके सामने अेक बडा बाध बाधकर बिजली पैदा की जायगी। समारका यह अेक अद्भुत बाध होगा। अुसकी शक्ति युगांडामें ही नही, सुदान और अिजिप्त तक पहुचनेवाली है। जिससे अनाज बढेगा। अकाल दूर होगा। असख्य अश्वत्थामाओं (हॉर्स-पावर) जितनी शक्ति मनुष्यकी सेवाके लिअे मिलेगी। अत अैसी प्रवृत्तिको तो आशीर्वाद ही देना चाहिये। फिर भी हृदय कहता है कि मनुष्य-जाति अिसके बदले कुछ अैसी चीज खोनेवाली है, जिसकी पूर्ति बडेसे बडे वैभवसे भी नही हो सकेगी।

नील नदी माता थी, देवी थी। अब यह वर्तमानकालकी लोकधात्री दासी बननेवाली है!

नवबर १९५०

७०

वर्षा-गान

कालिदासका अेक श्लोक मुझे बहुत ही प्रिय है। अुर्वशीके अतर्धान होने पर वियोग-विह्वल राजा पुरूरवा वर्षा-ऋतुके प्रारभमें आसमानकी ओर देखता है। अुसको भ्रान्ति हो जाती है कि अेक राक्षस अुर्वशीका अपहरण कर रहा है। कविने जिस भ्रमका वर्णन नही किया, किन्तु यह भ्रम महज भ्रम ही है, अिस बातको पहचाननेके बाद, अुस भ्रमकी जडमें असली स्थिति कौनसी थी, अुसका वर्णन किया है। पुरूरवा कहता है — "आकाशमें जो भीमकाय काला-कलूटा दिखाओी देता है, वह कोओी अुन्मत्त राक्षस नही किन्तु वर्षाके पानीसे लबालब भरा हुआ अेक बादल ही है। और यह जो सामने दिखाओी देता है वह अुस राक्षसका धनुष नहीं, प्रकृतिका अिन्द्र-धनुष ही है। यह जो बौछार है, वह बाणोंकी वर्षा नही, अपितु जलकी धाराअें है और बीचमें यह जो अपने तेजसे चमकती हुओी नजर आती है, वह

मेरी प्रिया अुर्वशी नहीं, किन्तु कसौटीके पत्थर पर सोनेकी लकीरके समान विद्युल्लता है।"

कल्पनाकी अुडानके साथ आकाशमें अुडना तो कवियोंका स्वभाव ही है। किन्तु आकाशमें स्वच्छन्द विहार करनेके बाद पछी जब नीचे अपने घोंसलेमें आकर अितमीनानके साथ बैठता है तब अुसकी अुस अनुभूतिकी मधुरिमा कुछ और ही होती है। दुनियाभरके अनेकानेक प्रदेश घूमकर स्वदश वापस लौटनेके बाद मनको जो अनेक प्रकारका सतोष मिलता है संस्कार जो लाभ होता है और निश्चिन्तताका जो आनन्द मिलता है, वह अेक चिर-प्रवासी ही बता सकता है। मुझे अिस बातका भी सतोष है कि कल्पनाकी अुडानके बाद जल-धाराओंके समान नीचे अुतरनेका मजाक व्यक्त करनेके लिअे कालिदासने वर्षा-ऋतुको ही पसन्द किया।

* * *

आजकल जैसे यात्राके साधन जब नहीं थे और प्रकृतिको परास्त करके अुस पर विजय पानेका आनन्द भी मनुष्य नहीं मनाते थे, तब लोग जाडेके आखिरमें यात्राको निकल पडते थे और देश-देशान्तरकी संस्कृतियोंका निरीक्षण करके और सभी प्रकारके पुरुषार्थ साधकर वर्षा-ऋतुके पहले ही घर लौट आते थे।

अुस युगमें संस्कृति-समन्वयका 'मिशन' (जीवन-कार्य) अपने हृदय पर वहन करनेवाले रास्ते अनेक खण्डोंको अेक-दूसरेसे मिलाते थे। जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुलोंकी सख्या बहुत कम थी —जो थे, वे सेतु ही थे। अुन सेतुओंका काम था, जीवन-प्रवाहको रोक लेना और मनुष्योंके लिअे रास्ता कर देना। लेकिन जब जीवनको यह बधन असह्य सा मालूम होने लगता था, तब सेतुओंको तोड डालना और पानीके बहावके लिअे रास्ता मुक्त कर देना प्रवाहका काम होता था। यह था पुराना क्रम। यही कारण था कि नदी-नालोंका बढा हुआ पानी रास्तो और सेतुओंको तोडे, अुसके पहले ही मुसाफिर अपने-अपने घर लौट आते थे। अिसीलिअे वर्षा-ऋतुको वर्षकी 'महिमामयी ऋतु' माना है।

असलमें 'वर्ष' नाम ही वर्षासे पड़ा है। 'हमने कुछ नहीं तो पचास बरसातें देखी हैं!' अिन शब्दोंसे ही हमारे बुजुर्ग प्राय अपने अनुभवोंका दम भरते हैं।

* * *

बचपनसे ही वर्षा-ऋतुके प्रति मुझे असाधारण आकर्षण रहा है। गरमीके दिनोंमें ठण्डे-ठण्डे आकर बरसनेवाली वर्षा सबको प्रिय होती है। लेकिन बादलोंके ढेरसे लदी हुअी हवाअें जब बहने लगती हैं, बिजलियाँ कड़कती हैं और यह महसूस होने लगता है कि अब आकाश तड़क कर नीचे गिर पड़ेगा, तबकी वर्षाकी चढ़ाअी मुझे बचपनसे ही अत्यन्त प्रिय है। वर्षाके अिस आनन्दसे हृदय आकण्ठ भरा हुआ होने पर भी अुसे वाणीके द्वारा व्यक्त न कर पाअूँगा और व्यक्त करने जाअूँगा तो भी अुसकी तरफ हमदर्दीसे कोअी ध्यान नहीं देगा, अिस खयालसे मेरा दम घुटता था।

* * *

आसपासकी टेकरियों परसे हनुमानके समान आकाशमें दौड़नेवाले बादल जब आकाशको घेर लेते थे, तब अुसे देखकर मेरा सीना मानो भारसे दब जाता था। लेकिन सीने परका यह बोझ भी सुखद मालूम होता था। देखते-देखते विशाल आकाश संकुचित हो गया, दिशाअें भी दौड़ती-दौड़ती पास आकर खड़ी हो गअीं और आसपासकी सृष्टिने अेक छोटेसे घोंसलेका रूप धारण किया। अिस अनुभूतिसे मुझे वह खुशी होती थी जो पक्षी अपने घोंसलेका आश्रय लेने पर अनुभव करता है।

लेकिन जब हम कारवार गये और पहली बार ही समुद्र-तट परकी वर्षाका मैंने अनुभव किया, तबके आनन्दकी तुलना तो नयी सृष्टिमें पहुँचनेके आनन्दके साथ ही हो सकती है।

* * *

बरसातकी बौछारोंको मैंने जमीनको पीटते बचपनसे देखा था। लेकिन अुसी वर्षाको मानो वेगसे समुद्रको पीटते देखकर और

समुद्र पर अुसके साट अुडे देखकर अितने बडे समुद्रके बारेमें भी मेरा दिल दया और सहानुभूतिसे भर जाता था। बादल और वर्षाकी धाराअें जब भीड करके आकाशकी हस्तीको मिटाना चाहती थी तो अुसका मुझे विशेष कुछ नहीं लगता था क्योंकि बचपनसे ही मैं *अिसका अनुभव करता आया था। लेकिन वर्षाकी धाराअें और अुनके* सहायक बादल जब समुद्रको काटने लगते थे तब मैं बेचैन हो जाता था। रोना नहीं आता था लेकिन जो कुछ अनुभव करता था अुसे व्यक्त करनेके लिअे 'फूट-फूटकर' यह शब्द काममें लेनेकी अिच्छा होती है। वर्षा चाहे तो पहाडों पर धावा बोल सकती है, चाहे खेतोंको तालाब और रास्तोंको नाले बना सकती है, लेकिन समुद्रको अपनी दरी समेटनेके लिअे बाध्य करना मर्यादाका अतिक्रमण-सा मालूम होता था। अवज्ञाके अिस दृश्यको देखनेमें भी मुझे कुछ अनुचित-सा प्रतीत होता था।

* * *

मेरी यह वेदना मैंने भूगोल-विज्ञानसे दूर की। मैं समझने लगा कि सूर्यनारायण समुद्रसे लगान लेते हैं और अिसीलिअे तप्त हवामें पानीकी नमी छिपकर बैठती है। यही नमी भापके रूपमें अूपर जाकर ठण्डी हुअी कि अुसके बादल बनते हैं और अन्तमें अिन्हीं बादलोंसे कृतज्ञताकी धाराअें बहने लगती हैं, और समुद्रको फिरसे मिलती हैं।

गीतामें कहा गया है कि यह जीवन-चक्र प्रवर्तित है अिसीलिअे जीवसृष्टि भी कायम है। अिसी जीवन-चक्रको गीताने 'यज्ञ' कहा है। यह यज्ञ-चक्र यदि न होता तो सृष्टिका बोझ भगवानके लिअे भी असह्य हो जाता। यज्ञ-चक्र मानो हो है परस्परावलंबन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय। पहाडों परसे नदियोंका बहना, अुनके द्वारा समुद्रका भर जाना, फिर समुद्रके द्वारा हवाका आर्द्र होना, सूखी हवाके तृप्त होते ही अुसका अपनी समृद्धिको बादलोंके रूपमें प्रवाहित करना और फिर अुसका अपने जीवनका अवतार-कृत्य प्रारंभ करना — अिस

भव्य रचनाका ज्ञान होने पर जो संतोष हुआ वह अिस विशाल पृथ्वीसे तनिक भी कम नहीं था।

तबसे हर बारिश मेरे लिअे जीवन-धर्मकी पुनर्दीक्षा बन चुकी है।

* * *

वर्षा-ऋतु जिस तरह सृष्टिका रूप बदल देती है, अुसी तरह मेरे हृदय पर भी अेक नया मुलम्मा चढ़ाती है। वर्षाके बाद मैं नया आदमी बनता हूं। दूसरोंके हृदय पर वसन्त-ऋतुका जो असर होता है, वह असर मुझ पर वर्षाका होता है। (यह लिखते-लिखते स्मरण हुआ कि साबरमती जेलमें था तब वर्षाके अन्तमें कोकिलाको गाते हुअे सुनकर 'वर्षान्ते वसंत' शीर्षकका अेक लेख मैंने गुजरातीमें लिखा था।)

* * *

गरमीकी ऋतु भूमाताकी तपस्या है। जमीनके फटने तक पृथ्वी गरमीकी तपस्या करती है और आकाशसे जीवन-दानकी प्रार्थना करती है। वैदिक ऋषियोंने आकाशको 'पिता' और पृथ्वीको 'माता' कहा है। पृथ्वीकी तपश्चर्याको देखकर आकाश-पिताका दिल पिघलता है। वह अुसे कृतार्थ करता है। पृथ्वी बालतृणोंसे सिहर अुठती है और लक्षावधि जीवसृष्टि चारों ओर कूदती विचरने लगती है। पहलेसे ही सृष्टिके अिस आविर्भावके साथ मेरा हृदय अेकरूप होता आया है। दीमकें पर फूटते हैं और दूसरे दिन सुबह होनेसे पहले ही सबकी-सब मर जाती हैं। अुनके जमीन पर बिखरे हुअे पर देखकर मुझे कुरुक्षेत्र याद आता है। मखमलके कीड़े जमीनसे पैदा होकर अपने लाल रंगकी दोहरी शोभा दिखाकर लुप्त हुअे कि मुझे अुनकी जीवन-श्रद्धाका कौतुक होता है। फूलोंकी विविधताको लजानेवाले तितलियोंके परोंको देखकर मैं प्रकृतिसे कलाकी दीक्षा लेता हूं। प्रेमल लतायें जमीन पर विचरने लगीं, पेड़ पर चढ़ने लगीं और कुअेंकी थाह लेने लगीं कि मेरा मन भी अुनके जैसा ही कोमल और 'लागृती' (लगौटा) बन जाता है। अिसलिअे बरसातमें जिस

तरह बाह्य सृष्टिमें जीवन-समृद्धि दिखाओी देती है, अुसी तरहकी हृदय-समृद्धि मुझे भी मिलती है। और बारिश शेष होकर आकाशके स्वच्छ होने तक मुझे अेक प्रकारकी हृदय-सिद्धिका भी लाभ होता है। यही कारण है कि मेरे लिअे वर्षा-ऋतु सब ऋतुओंमें अुत्तम ऋतु है। अिन चार महीनोंमें आकाशके देव भले ही सो जाय, मेरा हृदय तो सतर्क होकर जीता है, जागता है और अिन चार महीनोंके साथ मैं तन्मय हो जाता हू।

'मधुरेण समापयेत्' के न्यायसे वसन्त-ऋतुका अन्तमें वर्णन करनेके लिअे कालिदासने 'ऋतुसहार' का प्रारभ ग्रीष्म-ऋतुसे किया। मैं यदि 'ऋतुरम्य' की दीक्षा लू और अपनी जीवन-निष्ठा व्यक्त करने लगू, तो वर्षा-ऋतुसे अेक प्रकारसे प्रारभ करके फिर और ढगसे वर्षा-ऋतुमें ही समाप्ति करूगा।

जुलाओी, १९५२

अनुबन्ध

[सामाजिक जीवनके लिअे अत्यंत अुपयोगी अुद्योग-हुनर सीखते या चलाते हुअे कदम-कदम पर जिस ज्ञानकी या जानकारीकी जितनी जरूरत हो, अुतना पूरा ज्ञान अुस वक्त ढूंढ़ लेना और अुसे अपनाना यह जीवनको समृद्ध करनेका स्वाभाविक तरीका है। जीनेके लिअे जो भी प्रवृत्ति करनी पड़े, अुसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली अिधर-अुधरकी सब जानकारी हासिल करनेसे बड़ा संतोष होता है और वक्त-मौके हासिल की हुअी जानकारी आसानीसे हजम होती है और जीवनमें घुलमिल जाती है।

यह सब देखकर शिक्षाशास्त्रियोंने पढ़ाअीका यह नया तरीका चलाया है कि जीवन जीते हुअे अेक जीविकाका हुनर सीखते और चलाते हुअे जो भी जरूरी ज्ञान लेना या देना पड़े, अुसीको शिक्षाका जरिया बनाया जाय। अिस पद्धतिको अनुबंध या 'को-रिलेशन' कहते हैं।

संस्कृत ग्रंथोंके प्राचीन टीकाकार अिसी शैलीका सहारा लेकर किसी भी ग्रंथको समझाते समझाते अनेक विषयोंकी जानकारी दे देते हैं। और अगर मूल लेखक अनेक विद्या-विशारद रहा और अुसके ग्रंथमें अुन विद्याओंके तत्त्वोंका जिक्र आया, तो टीकाकार अुन सब विद्याओंका जरूरी ज्ञान अपनी टीकामें भर ही देते हैं।

आजकलकी पढ़ाअीकी पाठ्य-पुस्तकोंके साथ नोट्स या टिप्पणियां दी जाती हैं। किताबें अंग्रेजीमें और टिप्पणियां भी अंग्रेजीमें। अिस तरह परभाषा द्वारा पढ़नेकी कृत्रिम स्थितिके कारण विद्यार्थी लोग नोट्स रटने लगे और रटी हुअी चीज अिम्तहानमें लिखकर परीक्षा पास करने लगे। अिस परिस्थितिके कारण नोट्स देनेकी प्रथा काफी बदनाम हो चुकी है और अच्छे-अच्छे शिक्षाशास्त्री दर्सी किताबों पर नोट्स देना अपनी शानके खिलाफ मानते हैं। और कभी-कभी अैसे नोट्स निन्दाके पात्र भी होते हैं।

लेकिन अगर अनुबन्धकी दृष्टिसे टिप्पणी लिखी जाय और मौका पाकर जरूरी विविध ज्ञान देनेकी कोशिश की जाय तो यह पद्धति हर तरहसे अिष्ट और लाभदायी ही है।

मेरे कओ अध्यापक-मित्रोंने मेरी चंद किताबें अपनी टिप्पणियों द्वारा विभूषित की हैं। अिसमें मैंने अुन्हें अपना सहयोग भी दिया है। जहां विद्यार्थियोंको और अध्यापकोंको बड़े पुस्तकालयकी सहूलियत नहीं मिलती, वहां तो अिन टिप्पणियोंके द्वारा ही किताबकी पढ़ाओ संतोष-कारक हो सकती है। किताबोंके अूपर स्वभाषामें लिखी टिप्पणियां देनेसे अनुबन्धका बहुतसा काम हो जाता है। अिसलिअे शिक्षा-कलाके प्रवीण अध्यापकोंके द्वारा दी हुओ टिप्पणियोंको मैंने 'अनुबंध' के जैसा ही माना है। मुझे आशा है कि अगर किसी अध्यापकको यह किताब पढ़ानेका मौका आ जाय, तो वे अिन टिप्पणियोंका अनुबन्धके खयालसे ही अुप-योग करेंगे। अध्यापककी मददके बिना जो नवयुवक अिस किताबको टिप्पणियोंके साथ पढ़ेंगे, अुन्हें अिनके द्वारा अनुबन्धका कुछ खयाल आ जायगा। का० का०]

मुखपृष्ठका श्लोक

विश्वस्य मातरः ० 'अिस प्रकार जितनी नदियोंका स्मरण हुआ अुनके नाम मैंने सुना दिये। ये सब विश्वकी मातायें हैं, और सभी शक्तिशाली हैं तथा महान फल देनेवाली हैं।'

धृतराष्ट्रके प्रश्नके अुत्तरमें संजय जब भारतवर्षका वर्णन करता है, तब भारतकी नदियोंके नाम सुनानेके बाद अुपसंहारमें वह अुक्त वचन कहता है। महाभारतके भीष्मपर्वके नवें अध्यायके ३७वें तथा ३८वें श्लोकोंके पहले दो-दो चरण लेकर यह श्लोक बनाया गया है।

यथास्मृति : भाव यह है कि नदियां हैं तो अनेक, किन्तु जितनी मुझे याद आयीं अुन्हींके नाम मैंने सुना दिये। ३७वें श्लोकके अंतके दो चरणोंमें यह स्पष्ट कहा गया है

तथा नद्यस्त्वप्रकाशाः शतशोऽथ सहस्रशः।

अिसी तरह जो ज्ञात नहीं हैं अैसी तो सैकड़ों और सहस्रों नदियां हैं।

[अिसमें राजयकी (और लेखककी भी?) अपने देशके प्रति भक्ति दिखाओी देती है। 'सुजला सुफला' माताओंकी विपुलता थोओी कम न समझ बैठे, अैसी अतिस्नेहसे पैदा होनेवाली पापशंका भी क्या अिसमें होगी?]

जीवनलीला

पृ० ३ ग्राम्य: गांवमें रहनेवाले। ऋग्वेदमें अिस शब्दका अिस अर्थमें प्रयोग किया गया है।

पृ० ५ डलयोः सावर्ण्यम्: ड तथा ल समान वर्ण हैं। 'डलयोरभेदः' भी कहते हैं।

पृ० ७ लिम्पतीव ० अंधेरा मानो अंगोंको लीपता है और नभ मानो अंजनकी वर्षा करता है।

पृ० ९ देशका मतलब . . भी हैं: अपभ्रंश भाषाके निम्न पद्यसे तुलना कीजिये:

> सरिहिं न सरेहिं न सरवरेहिं नहि अुज्जाणवर्णेहिं।
> देस रवण्णा होन्ति वढ निवसन्तेहिं सुअणेहिं॥

[हे मूढ, देश न सरिताओंसे रमणीय बनता है, न सरोसे; न सरोवरोंसे बनता है, न अुद्यान-वनोंसे। बल्कि अुसमें बसनेवाले सुजनोंसे रमणीय बनता है।]

सरिता-संस्कृति

पृ० ११ क्षेमेन्द्र: ग्यारहवीं सदीके अेक काश्मीरी पंडित कवि। कहते हैं कि अिन्होंने चालीससे अधिक ग्रंथोंकी रचना की थी, जिनमें 'भारतमंजरी', 'बृहत्कथामंजरी', 'नृपावलि', 'सुवृत्ततिलक', 'औचित्य-विचारचर्चा', 'कविकंठाभरण' आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

पृ० १२ मीनलदेवी: कर्णाटककी चंद्रावती नगरीकी राजकन्या, कर्णदेव सोलंकीकी पत्नी, सिद्धराज जयसिंहकी माता; धोलकाका विख्यात 'मलाव' तालाब तथा वीरमगामका 'मुनसर' तालाब अिसीने बनवाये थे। अिसने सोमनाथके दर्शनके लिअे जानेवाले हर यात्री पर लगाया गया कर बंद करवा दिया था। यह बडी प्रजावत्सल रानी थी।

अुर्वशी : 'अुरु' देवकी अुर्वशी।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

पृ० १४ कूल-मर्यादा : कूल=किनारा। किनारेकी मर्यादा। 'कुल-मर्यादा' शब्द परसे यह शब्द बनाया गया है।

नामरूपको त्यागकर . . . जाती है मुण्डकोपनिषद्का निम्न वचन याद कीजिये

यथा नद्य: स्यन्दमाना: समुद्रे
अस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।

[जिस प्रकार बहती हुअी नदियां नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती हैं।]

अुपस्थान

पृ० १५ अुपस्थान : वंदना, पूजा, अुपासना। जैसे, सूर्यका या सध्याका अुपस्थान।

हमारे पूर्वजोंकी नदी-भक्ति ' लेकर *सरस्वतीपुत्र सारस्वत हैं*, अिस बातका यहां स्मरण हुअे बिना नहीं रहता।

भक्तिके अिन अुद्गारोंका श्रवण करके : भक्तिका श्रवण करके, श्रवण-भक्ति करके। अुद्गार=वचन। (प्रेम और आदरपूर्वक सुनना भी भक्तिका ही अेक पुण्यप्रद प्रकार है।)

संस्कृति-पुष्ट : संसारकी बहुतसी संस्कृतियोंका विकास नदियोंके किनारों पर ही हुआ है। अुदाहरणके लिअे, अिजिप्त (मिस्र)की संस्कृति नील नदीके किनारे विकसित हुअी है। खाल्डिया (अिराक) की संस्कृति युफ्रेटिस और टैग्रिसके किनारे चीनकी संस्कृति ह्वांगहो तथा हाअिांगहोके किनारे, मध्य अेशियाकी संस्कृति अमु और सरके किनारे और भारतकी संस्कृति पंचसिंधु, गंगा-यमुना, तापी-नर्मदा और कृष्णा-गोदावरीके किनारे विकसित हुअी है।

पृ० १६ भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके बारेमें : तापी —तपती सूर्यकी पुत्री मानी जाती है। वह संवरण राजाकी पत्नी और कुरुकी

माता थी। गुजराती कवि प्रेमानंदके नामसे चलनेवाले 'तपत्याख्यान' में असकी कथा है।

पृ० १७ 'अितिहासका अुषाकाल' सामान्य तौरसे 'अुष काल' शब्द अुपयोगमें लाया जाता है। किन्तु यहां जान-बूझ कर 'अुषाकाल' शब्दका प्रयोग किया गया है। स्थानीय अितिहासमें कहा गया है कि *ब्रह्मपुत्रके अुत्तर किनारे पर तेजपुरके पास बाणासुर और अुषा रहते थे।*

अुषा-अनिरुद्धकी कथा भागवतके दशम स्कंधके ६२–६३ वें अध्यायमें आती है। बलिके पुत्र बाणासुरकी कन्या अुषाका अेक बार स्वप्नमें किसी सुंदर युवकसे समागम हुआ। स्वप्नके अुड़ जाने पर वह अुसके वियोगसे बड़बड़ाने लगी। अुसकी सखी चित्रलेखाने यह बड़बड़ाहट सुनी। पूछने पर अुषाने स्वप्नकी बात कह सुनायी और कहा कि अिस पुरुषसे विवाह किये बगैर मैं जीवित नहीं रह सकती। चित्रलेखाने अेकके बाद अेक अनेक चित्र खींचकर अुसे दिखाये। अंतमें कृष्णके पौत्र अनिरुद्धकी तस्वीर देखकर अुसने कहा, यही है वह पुरुष जिसको मैंने स्वप्नमें देखा था।

अिसके अनंतर चित्रलेखा योगबलसे द्वारका जाती है। वहांसे सोते अनिरुद्धको पलंगके साथ अुठाकर ले आती है। अुषा-अनिरुद्ध गांधर्व विधिसे विवाह कर लेते हैं और चार महीने साथमें बिताते हैं। अुषाके पिताको जब पता चलता है कि अुषाके मंदिरमें कोअी पुरुष रहता है, तब वह गुस्सेके मारे वहां जाकर अनिरुद्ध पर टूट पड़ता है। दोनोंके बीच युद्ध होता है। अिसमें बाणासुर अनिरुद्धको नागपाशसे बांधकर गिरफ्तार कर लेता है।

अिधर द्वारकामें अनिरुद्धकी खोज शुरू होती है। नारदने आकर खबर दी कि अनिरुद्धको तो शोणितपुर (आजकलके तेजपुर)में बाणासुरने बंद कर रखा है। अिससे युद्ध होकर यादव शोणितपुर पर हमला करते हैं और बाणको हराकर अुषा-अनिरुद्धके साथ बड़ी धूमधामसे द्वारका वापस लौटते हैं।

संभूय-समुत्थानका सिद्धान्त : अेकत्र होकर अुन्नति करनेका सिद्धान्त। Joint Stock का सिद्धान्त। स्मृतियोंमें यह शब्द मिलता है।

पृ० १८ समुद्रसे मिलने जाते . . . कर जानेवाली : दक्षिण गुजरातमें बलसाडके पासकी 'वाकी' नदी भी अपने नामकी ही तरह टेढी-तिरछी होती हुअी ठेठ समुद्रके पास आकर अैसी टेढी होती है कि दो तीन मील अुत्तर दिशाकी ओर बहकर औरंगामें मिलती है और अुसीके साथ समुद्रसे जा मिलती है।

पृ० २० गति देनी होगी : वासना-पीडित भूतोंको मान्त्रिक गति देते हैं अुस प्रकार।

१. सखी मार्कण्डी

पृ० ३ मार्कण्डी : बेलगावसे नौ मीलकी दूरी पर लेखकके गाव बेलगुंदीके पास बहनेवाली छोटीसी नदी।

वैजनाथ : (स० वैद्यनाथ) बेलगावका अेक पहाड। वैद्योंके कहे अनुसार अिस पहाड पर मूल्यवान वनस्पतिया हैं।

हमारे तालुकेका : कर्णाटकके बेलगाव तालुकेका।

पृ० ४ मार्कण्डेय : मृकण्डु मुनिका पुत्र, मार्कण्ड।

साधु सुंदर ० मध्यकालके अेक कवि द्वारा रचित मार्कण्डेय अुपाख्यानमें ये पंक्तिया आती हैं। मराठी स्त्रियामें कअियोंको ये मुखाग्र होती हैं।

मृत्युंजय : महादेवजीका नाम। यह अलुक् समास है। अिसमें विभक्तिके प्रत्ययका लोप नहीं होता। तुलना कीजिये धनजय, समितिजय, गणजय (dictator)।

अुसकी आयुधारा : कथामें कहा गया है कि अुसे सात या चौदह कल्पका आयुष्य मिला था। अिस परसे जब किसीको दीर्घजीवी होनेका आशीर्वाद दिया जाता है, तब 'मार्कण्डायुर्भव' कहा जाता है। किन्तु अिस लेखमें अिसका अर्थ है यह नदीरूपी आयुधारा। यह लेखककी कल्पना है।

पृ० ५ भाअी-दूज : कार्तिक सुदी दूज। अिस दिन यमुनाने अपने भाअी यमको अपने घर बुलाकर अुसकी पूजा की थी तथा अुसको खाना खिलाया था। अिसलिअे अिस दिनको यम-द्वितीया भी कहते हैं। अिस

दिन बहन अपने भाओकी पूजा करती है और खाना खिलाते समय नीचेका मंत्र बोलकर असे आचमन करवाती है :

> भ्रातस् तवानुजाताऽहं भुंक्ष्व भक्तम् अिदम् शुभम्।
> प्रीतये यमराजस्य यमुनाया विशेषत ॥

[हे भैया, मैं आपकी छोटी बहन हूं। मेरा पकाया हुआ यह शुभ अन्न आप भक्षण कीजिये, जिससे कि यमराज और खास करके अुनकी बहन यमुना प्रसन्न हो जाय।]

बहन बड़ी हो तो 'भ्रातस्तवाग्रजाताऽहं' कहती है।

मृगनक्षत्र : भाओ-दूज जाड़ेमें आती है। अुन दिनों मृगनक्षत्र सारी रात आकाशमें होता है। अैसी 'मृगनीता रात्रयः'।

लावण्य : (सं० लवण+य) मिठास, झलक यौवनकी कांति। अथवा लक्षण

> मुक्ता-फलेषु छायाया तरलत्वम् अिवान्तरा।
> प्रतिभाति यद् अंगेषु तल्लावण्यम् अिहोच्यते॥

२. कृष्णाके संस्मरण

पृ० ५ सातारा : कृष्णाके किनारे स्थित नगर। लेखकका जन्म-स्थान। यह शाहू आदि महाराष्ट्रके राजाओंकी राजधानी था।

थो शाहू महाराज : शिवाजीका पौत्र। संभाजीका पुत्र। अुसका नाम शिवाजी था। औरंगजेबने अुसका नाम शाहू रखा था। छुटपनमें अुसको दिल्लीके दरबारमें कैद रहना पड़ा था। वहांके भोगे हुअे अैश-आरामके कारण अुसने राज्यका कारोबार अपने प्रधान — पेशवाको सौंप दिया था और स्वयं सातारामें रहता था।

पृ० ६ हम बच्चे : लेखक तथा अुनके भाओ।

'वासुदेव' : मोरपंखोंकी टोपी पहनकर भजन गाते हुअे भीख मांगनेवाले अेक याचक सम्प्रदायके लोग।

येण्णा : सातारामें अेक छोटीसी नदी।

'नरसोबाची वाड़ी' : कृष्णाके किनारे कुरुंदवाड़के समीप यह स्थान है। यह दत्तात्रेयका तीर्थस्थान है।

पृ० ७ अमृत-खेतः अमृत जैसे मीठे फल देनेवाले खेत।

जिसने अेकाध बार . . . अिच्छा करेगा: सिक्खोंके गुरु नानकसाके सबंधमें अेक लोककथा प्रचलित है। कहते हैं कि वे स्वर्गमें गये, किन्तु वहा पर भी वे अुदास रहने लगे। भगवानने अिसका कारण पूछा, तो जवाब मिला 'स्वर्गमें सब कुछ है। किन्तु मक्कीके भुट्टे नहीं हैं न सरसोंकी सब्जी है। यह खानेके लिअे पृथ्वी पर वापस जानेकी अिच्छा होती है।'

लोक-मानस ही अैसी कथाअें गढ़ सकता है।

सागली: कृष्णाके तट पर स्थित अेक शहर। स्वातन्त्र्यपूर्व कालकी अेक रियासत।

अेकश्रुति: यह वैदिक शब्द है। अिसका अर्थ है, 'जिसमें विविधता न हो अैसा।' वेदोंमें तीन प्रकारके अुच्चार बताये गये हैं: अुदात्त, अनुदात्त और स्वरित। अिनमें से किसी अेकको लेकर बिना किसी प्रकारका फर्क किये लगातार अुच्चारण करना 'अेकश्रुति' अुच्चार या आवाज है। अंग्रेजी 'मोनोटोनस'।

श्रीसमर्थ: स्वामी रामदास। श्री शिवाजी महाराजके गुरु। वे ब्रह्मचारी थे। अुन्होंने अनेक मठोंकी स्थापना की तथा धर्म-प्रचार किया। 'दासबोध', 'मनोबोध' आदि प्रख्यात ग्रंथोंके रचयिता।

पृ० ८ घोरपडे: संताजी। शिवाजीके अेक सेनापति। राजारामके समयमें धनाजी और संताजी घोरपडे अिन दो सेनापतियोंके बीच बहुत बडा विरोध था। घोरपडे मुरारराव (१७०४-१७७७) भी शाहूके मुख्य सरदारोंमें से अेक थे। अपने पराक्रमसे सारा कर्णाटक जीतकर अिन्होंने गुत्तीमें राजधानीकी स्थापना की थी, अिसलिअे अुन्हें 'गुत्तीकर घोरपडे' भी कहते थे। चन्दा साहबके साथ पेशवाओंका त्रिचिनापल्लीमें जो घोर युद्ध हुआ, *अुसमें अिन्होंने पेशवाओंको विजय* दिलायी। अिसलिअे शाहूने अुन्हें कर्णाटककी 'सरदेशमुखी' और त्रिचिनापल्लीके किलेकी 'सूबेदारी' दे दी थी। अन्तमें हैदरने अुन्हें कैद करके चांदीकी हथकडी-बेडी पहनाकर कपालदुर्गमें रखा था। वहीं अुनका अंत हुआ।

पटवर्धन: परशुराम भाऊ (१७३९–१७९९) सवाओी माधवराव पेशवाके समयके बड़े सेनापति। बड़े शूरवीर तथा बहादुर थे। हैदरके साथ जो युद्ध हुआ, अुसमें अिनके अेकके पीछे अेक तीन घोड़े मारे गये, किन्तु वे घबड़ाये नहीं। १७८१ में अुन्होंने अंग्रेज सेनापति गोडार्डको परास्त किया। १७९६ में नाना फड़नवीससे अिनकी कुछ अनबन हो गओी। अिसलिअे फड़नवीसने अिनको कैद कर लिया। १७९८ में वे रिहा हुअे। किन्तु फौरन पट्टणकुडीके युद्धमें शामिल हुअे और वहीं लड़ते लड़ते मारे गये।

नाना फड़नवीस: (१७४२–१८००) मराठाशाहीके अंतिम कालके अेक महान चतुर राजनीतिज्ञ।

रामशास्त्री प्रभुणे: (१७२०–१७८९) पेशवाओी जमानेके अेक प्रख्यात न्यायशास्त्री। बीस सालकी अुम्र तक वे निरक्षर ही थे। जिस साहूकारके यहां वे नौकरी करते थे, अुसने अिनसे कुछ मर्मभेदी वचन कहे। अतः ये पढ़नेके लिअे काशी चले गये और बड़े विद्वान धर्मशास्त्री बने। १७५१ में पेशवाओंके दरबारमें अुन्होंने सेवा स्वीकार की और १७५९ में मुख्य न्यायाधीश बने। ये अत्यंत निःस्पृह थे। बड़े माधवराव अिनकी सलाहके अनुसार चलते थे। नारायणरावके खूनके लिअे राघोबाको देहांत प्रायश्चित्त लेनेकी बात अुन्होंने बिना किसी हिचकिचाहटके कही थी।

देहू: अिन्द्रायणी नदीके किनारे स्थित अेक गांव। पूनाके पास है। महाराष्ट्रके संत तुकारामका गांव होनेसे पवित्र माना जाता है।

आळंदी: अिन्द्रायणी नदीके किनारे बसा हुआ अेक गांव। पूनासे अधिक दूर नहीं है। यहां श्री ज्ञानेश्वरने जीवित अवस्थामें समाधि ली थी। देहू-आळंदीकी नदी अिन्द्रायणी भीमा नदीसे मिलती है। यह भीमा पंढरपुरके पास टेढ़ी बहती है, अिसलिअे यहां अुसे चंद्रभागा कहते हैं। अिसके बाद ही यह बड़ी होकर कृष्णासे मिलती है।

तुंगभद्रा: तुंगा और भद्रा, ये दो नदियां मिलकर तुंगभद्रा बनती है। देखिये: 'मुळा-मुठाका संगम' (पृ० ११)। तुंगभद्राके किनारे हंपीके पास कर्णाटक साम्राज्यकी राजधानी विजयनगर बसा हुआ था।

तेलंगण: त्रिलिंगका प्रदेश। 'जिसके पेटमें कृष्णाकी अेक बूंद भी पहुंच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नहीं सकता।' और 'कृष्णामें पक्षपाती प्रांतीयता नहीं है।' — क्या अिन दो वचनोंके बीच विरोध है? लेखकका कहना है कि महाराष्ट्रके सद्गुणोंके प्रति मनमें आदरभाव तो रहने ही वाला है, किन्तु तीनों प्रांतोंके प्रति आत्मीयता जाग्रत होने पर मनमें संकीर्णता आ ही नहीं सकती।

पहाड़की अस्थियां: पत्थर।

पृ० ९ जीवनकी लीला: जीवन यानी जल और जीवन यानी जिंदगी। यहां अुसका दोनों अर्थोंमें प्रयोग किया गया है।

अनतबुआ मरढेकर: काकासाहबके प्रिय सुहृद, जिनकी पवित्र स्मृतिमें काकासाहबने अपनी 'हिमालयकी यात्रा'* पुस्तक अर्पण की है।

श्रीसमर्थ रामदास स्वामी तथा अुनके शिष्योंने जो अनेक मठ स्थापित किये हैं अुनमें 'मरढे मठ' भी अेक है। अिस मठके गृहस्थाश्रमी मठपतियोंके वंशमें अनतबुआका जन्म हुआ था। अिनके पिता *पुराणिक तथा कीर्तनकार थे। अनतबुआ प्रथम मराठी ट्रेनिंग कॉलेजमें* शिक्षक थे। बादमें वे काकासाहबसे पहले बड़ौदाके 'गंगनाथ विद्यालय' में शरीक हुअे। अिस विद्यालयके लिअे चंदा अिकट्ठा करनेके हेतुसे वे बड़ौदा राज्यमें सर्वत्र घूमते थे। अुनका मासिक खर्च कभी भी दस रुपयेसे अधिक नहीं हुआ। संस्थाके नियमके अनुसार अुन्हें खर्चके अलावा जेबखर्चके लिअे पांच रुपये अधिक लेने पड़ते थे। वे अिन पांच रुपयोंका अुपयोग विद्यार्थियोंके लिअे अथवा हिसाबमें गलती हुअी हो तो अुसमें जोड़नेके लिअे करते थे। रहन-सहनमें अिनकी तुलना गुजरातके प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्ता श्री रविशंकर महाराजसे की जा सकती थी। अुनके पवित्र जीवनको देखकर कअी लोग अुनसे कंठी मांगते थे। किन्तु अुन्होंने कभी किसीको कंठी नहीं दी। वे कहा करते थे कि 'मुझमें यह योग्यता नहीं है।'

* हिन्दीमें 'हिमालयकी यात्रा' नवजीवन प्रकाशन मंदिरकी ओरसे प्रकाशित हो चुकी है। कीमत २–०–०, डा० खर्च ०–१५–०।

हृदयकी भावनासे: आदरभावसे। लेखकके प्रति वे असाधारण आदरभाव रखते थे असलिअे।

बडे भाअी: राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य वे लेखकके पहलेसे करते आ रहे थे और लेखककी दृष्टिमें अधिक त्यागी थे असलिअे।

गगोत्री: हिमालयका अेक तीर्थस्थान। गगा यहींसे निकलती है। असलमें गगाका अुदगम होता है 'गगोत्र' से, जो गगोत्रीसे करीब चौदह मील दूर है।

अमरनाथ: यह तीर्थस्थान काश्मीरमें है। यहा अेक गुफामें बर्फका स्वयभू शिवलिंग पाया जाता है।

अमर हुअे: स्वर्गवासी हुअे।

वाअी: कृष्णाके किनारे पर स्थित पवित्र तीर्थस्थान। यहा सस्कृत विद्याकी परपरा अुत्तम रूपमें सुरक्षित है।

वाअीके . . . गगाका. वाअीके लोग प्रेमभक्ति-पूर्वक कृष्णाको गगा कहते हैं।

शिरस्नान: वर्षाऋतुमें वाअीके कुछ मदिर नदीके पानीमें कलश तक पूरे डूब जाते हैं।

स्वराज्य-ऋषि: स्वराज्यका 'ध्यान' करनेवाले, स्वराज्यके लिअे 'तपश्चर्या' करनेवाले और स्वराज्यका 'मत्र' देनेवाले। 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' लोकमान्यका यह वचन प्रसिद्ध है।

पृ० १० पट-वर्धन: पट = वस्त्र, वर्धन = वृद्धि करनेवाले। द्रौपदी वस्त्र-हरणका किस्सा याद कीजिये।

घरसे भी . . . अुतनी ही संख्यामें: बीस लाख चरखे चलानेकी बात तय हुअी थी।

बेजवाडा: आध्र प्रातका अेक मुख्य शहर। यह भी कृष्णाके तट पर ही है।

श्री अब्बास साहब: (१८५४–१९३६) नित्य-युवा देशभक्त श्री अब्बास तैयबजी। तीसरी महासभा (काग्रेस) के प्रमुख श्री बदरुद्दीन तैयबजीके भतीजे। बादमें अुन्हींके दामाद। पूर्व जीवनमें आप बड़ौदा राज्यकी बडी अदालतके न्यायाधीश थे। अुत्तर जीवनमें आप

पर गांधीजीका असर हुआ। अुस समय गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें आपने महत्त्वका हिस्सा अदा किया था। पंजाबके हत्याकांडकी तहकी-कातमें, असहयोग आंदोलनमें, तिलक-स्वराज्य-फंड अिकट्ठा करनेमें, सरकारी शालाओं तथा परदेशी कपड़ोंकी दुकानों पर चौकी करनेमें, खादी-फेरीमें, हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके प्रयत्नोंमें बाढ़-संकट-निवारणमें, रानीपरज लोगोंकी मदद करनेमें, बारडोलीके आन्दोलनमें तथा नमक-सत्याग्रहके समय धरासणाके आगर पर हुअे सत्याग्रहका नेतृत्व करनेमें आपकी अनेकविध देशसेवाको प्रगट होते हमने देखा है।

श्री पुणतांबेकर : बम्बअीके राष्ट्रीय महाविद्यालयके अुस समयके आचार्य। आप बैरिस्टर थे। बादमें बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें अितिहासके मुख्य अध्यापकके तौर पर तथा नागपुर विश्वविद्यालयमें *राजनीति-विभागके मुख्य अध्यापकके तौर पर आपने काम किया था।*

गिदवाणीजी : गुजरात विद्यापीठके पहले कुलनायक (वाअिस-चान्सलर) और गुजरात महाविद्यालयके पहले आचार्य। पूरा नाम, असुदमल टेकचंद गिदवाणी। गुजरातमें आनेके पहले आप दिल्लीके रामजस कॉलेजके प्रिन्सिपाल थे।

कृष्णाम्बिका : कृष्णामैया।

रामशास्त्री : रामशास्त्री प्रभुणे वाअीके पास कृष्णाके तट पर रहे थे अिसलिअे।

नाना फड़नवीस : वाअीके पास मेणवलीमें रहते थे अिसलिअे।

'राष्ट्रीय' हिन्दी : शुद्ध हिन्दी तो है प्रान्तीय हिन्दी। अनेक भाषाओंके असरसे बनी हुअी हिन्दीका नाम है राष्ट्रीय हिन्दी!!

जन्मवाल्या : लेखकके जन्मवालका।

३. मुळा-मुठाका संगम

पृ० ११ अपवादके बिना . . . नहीं चलते : Exception proves the rule '*अुत्सर्गा सापवादा*'।

मिसिसिपी-मिसोरी : अिसकी लंबाअी ५४३१ मीलकी है। ये दोनों नदियां जहां मिलती हैं, वहांका पट ५००० फुट चौड़ा है।

द्वन्द्व समासमें : दोनो पद समान कक्षाके होते हैं, अिस बात पर यहा जोर दिया गया है।

सीता-हरणसे लेकर . . . तकका अितिहास : कहते हैं कि रावण जब सीताको अुठाकर ले गया था, तब सीताकी साडीका पल्ला हपीके पास अेक बडी शिला पर घिस गया था, जिसकी रेखायें अुस शिला पर अब तक दिखाओ देती हैं। विजयनगरके साम्राज्यका कारोबार भी तुगभद्राके तट पर ही चलता था। अिस साम्राज्यकी स्थापना सन् १३४६ मे हुओ थी। अिसका विस्तार कृष्णासे लेकर कन्याकुमारी तक था। सवा दो सौ साल तक मुसलमानोंके हमलोंका सामना करके सन् १५६५ में अिस साम्राज्यका अंत हुआ। अिसका पूरा अितिहास 'अे फरगॉटन अेम्पायर' नामक अंग्रेजी पुस्तकमें तथा 'विजयनगरके साम्राज्यका अितिहास' नामक हिन्दी पुस्तकमें दिया गया है।

खडक-वासला : पूनासे सिंहगढ जाते समय बीचमें यह स्थान है। यहा पूनाका जलागार (वॉटर वर्क्स) है। स्वतत्र भारतके 'राष्ट्ररक्षा विद्यालय' के लिअे भी यही स्थान पसद किया गया है। देखिये पृ० १३

मुंडी टेकरियां : संन्यासीके जैसी, जिनके सिर पर अेक भी पेड नही है अैसी।

चिन्ताजनक : मनुष्य जब चितामें रहता है तब अुसकी आंखें बार-बार खुलती-बन्द होती रहती हैं। सितारे भी सारी रात अिसी तरह झिलमिलाते रहते हैं। यहा अर्थ है पानीके हिलनेसे होनेवाली झिलमिलका प्रतिबिंब।

बांग : यह फारसी लफ्ज है। मस्जिदमें नमाजके पहले 'नमाजका समय हुआ है, नमाज पढनेके लिअे आअिये,' अैसा बतानेके लिअे बडे जोरकी जो आवाज दी जाती है अुसको बाग कहते है। अरबीमें अिसीको अजान कहते हैं। यहा बाग शब्दका सामान्य अर्थ पुकार है।

लकडी-पुल : शायद पहले यह पुल लकडीका रहा हो या अिसके पासमें ही लकडी बेची जाती रही हो। अहमदाबादके छोटेके 'अेलिसब्रिज' को भी 'लकडिया पुल' कहते हैं।

पृ० १२ ओंकारेश्वर : यहां अेक स्मशान है। दूसरा स्मशान लकडी-पुलके पास है।

कॅप्टन मॅलेट : पेशवाओंको नष्ट करनेके लिअे षड्यंत्र रचनेवाला अंग्रेज।

भांडारकर : डॉ० सर रामकृष्ण गोपाल भांडारकर। संस्कृत विद्या और प्राच्य विद्याके संशोधनमें पारंगत। प्रार्थना समाजके नेता।

गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्र : कर्वे विश्वविद्यालयके साथ जिनका नाम जोड़ा गया है वे सर विट्ठलदास दामोदरदास ठाकरसी।

अुत्तुंग-शिरस्क : अूंचे सिरवाली।

नम्रनामधेय : नम्र नामवाली। मकान तो बड़े राजमहलके जैसा है, किन्तु अुसका नाम है 'पर्णकुटी'। अिसी मकानमें गांधीजीने दो बार अनशन किया था।

यरवडाका कैदखाना : छोटे-बड़े असंख्य देशवीरोंके और खास तौरसे गांधीजीके कारावासके कारण तथा वहां हुअे हरिजनोंके मताधिकार संबंधी करारके कारण यह कैदखाना देशमें और समस्त दुनियामें प्रसिद्ध हो चुका है। गांधीजी अिसको 'यरवडा मंदिर' कहते थे।

प्राणहरणपटु : प्राण लेनेमें कुशल।

भिक्षाधीश : भिक्षाके अधिकारी भिखारी। लक्षाधीशके साथ तुक मिलानेके लिअे अिस शब्दकी योजना की गयी है।

पृ० १३ निसर्गोपचार भवन : सन् १९४४ में जेलसे रिहा होनेके बाद गांधीजीने निसर्गोपचारका प्रचार किया था। अुसी दरमियान वे कुछ समय तक अिस निसर्गोपचार भवनमें रहे थे। अुरुलीकांचनमें भी अुन्होंने अेक नया निसर्गोपचार केंद्र खोला था, जो अब तक चल रहा है।

सिंहगढ़का निवास : लेखकको क्षयरोग हुआ था, तब वे काफी समय तक सिंहगढ़में रहे थे। अुस बातका यहां जिक्र है।

४. सागर-सरिताका संगम

पृ० १४ सारोंका वन : लेखककी 'स्मरण-यात्रा' में 'सारो पार्क' नामक प्रकरण देखिये। (यह पुस्तक हिंदीमें नवजीवन प्रकाशन मंदिरकी

ओरसे प्रकाशित हुओ है; की० ३-८-०, डा० रार्च १-२-०।)
जिसमें काकासाहबकी छठे बरससे लेकर अठारह बरस तककी जीवन-यात्राका वर्णन है।

जब कि अपनी मर्यादाको . . . सामने हो जाता है : चन्द्रके अमरके कारण जब सागरमें भाटा आता है तब पानी रास्ता बना देता है; और ज्वारके समय अुभरकर जब नदीमें घुस जाता है तब सामने हो जाता है।

पृ० १६ जमनोत्री : हिमालयमें अुत्तराखंडका अेक तीर्थस्थान। यहींसे यमुना निकलती है।

महाबळेश्वर : यह कृष्णाका अुद्गम-स्थान है। यह स्थान सातारामें है।

त्र्यंबक : नासिकके पासका स्थान। यह गोदावरीका अुद्गम-स्थान है।

अुद्गमकी खोज : "मेरी धारणा है कि गंगोत्री, जमनोत्री, केदार, बदरी, अमरनाथ, गोजरनाथ, मानसरोवर, रावणताल, परशुराम कुंड, अमरकंटक, महाबळेश्वर, त्र्यंबक आदि सारे तीर्थस्थान नदीका अुद्गम खोजनेकी प्राकृतिक जिज्ञासाके ही परिणाम हैं। अुत्तरी ध्रुवके आसपास रहनेवाले आर्य लोग जिस प्रकार अिस बातकी खोज करनेके लिअे बाहर निकले कि हमें अुष्णता देनेवाला सूर्य कहांसे अुदय होता है और कहां अस्त होता है, और चारों महाद्वीपोंमें फैल गये, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानकी सतानें अपने-अपने ढोर-बछेरू लेकर, या अकेले ही, नदीके अुद्गमकी खोज करती हुओ घूमी हों तो कोओी आश्चर्य नहीं।" — 'हिमालयकी यात्रा', प्रकरण २१, पृ० १०९।

अजंताकी गुफाओंके पास भी अेक छोटीसी नदीका अुद्गम है।

शंकरराव गुलवाड़ीजी : कारवारकी ओरके अेक सर्वोदय कार्यकर्ता।

कवि बोरकर : गोवाके कोंकणी तथा मराठी भाषाके प्रसिद्ध कवि।

५. गंगामैया

पृ० १७ देवव्रत भीष्म : शांतनु और गंगाके आठवें पुत्र देवव्रत। अपने पिता शांतनु सत्यवती नामक धीवर-राजकी कन्यासे विवाह कर सकें, अिसलिअे अुन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रहनेकी भीषण प्रतिज्ञा

ली थी और अुसे पाला था। अिसलिअे वे भीष्मके नामसे प्रसिद्ध हुअे। अिसी कारण आज भी जब कोअी बड़ी प्रतिज्ञा लेता है, तब अुस प्रतिज्ञाको हम 'भीष्म प्रतिज्ञा' कहते हैं। भीष्म = भीषण, भयंकर।

आर्योंके बड़े-बड़े साम्राज्य : हर्षका मौर्योंका आदि।

कुरु पांचाल : दिल्लीके आसपासका प्रदेश कुरु और गंगा-यमुनाके बीचका प्रदेश पांचाल कहा जाता था।

अंग-वंगादि : गंगाके दायें तट पर जो प्रसिद्ध राज्य था अुसका नाम था अंग। चंपा अुसकी राजधानी थी। यह नगरी आजकलके भागलपुरके स्थान पर या अुसके आसपास कहीं थी। वंग कहते हैं पूर्व बंगालको। अिसमें बंगालके समुद्र-तटका भी समावेश होता था। अुत्तर बंगालका नाम था गौड या पुंड्र।

पृ० १८ जब हम गंगाका दर्शन करते हैं . . . स्मरण हो आता है : गंगाके तट पर सिर्फ खेती और व्यापारका ही विकास नहीं हुआ है, बल्कि काव्य, धर्म शौर्य और भक्ति — संक्षेपमें पूरी संस्कृतिका विकास हुआ है।

श्री जवाहरलाल नेहरूने अपनी 'डिस्कवरी ऑफ अिंडिया' नामक पुस्तकमें भारतकी नदियोंके बारेमें लिखते हुअे गंगाके सिलसिलेमें अिस प्रकार लिखा है

" and the Ganga, above all *the* river of India, which has held India's heart captive and has drawn uncounted millions to her banks since the dawn of history The story of the Ganga, from her source to the sea, from old times to new, is the story of India's civilization and culture, of the rise and fall of empires, of great and proud cities, of the adventure of man and the quest of the mind which has so occupied India's thinkers, of the richness and fulfilment of life as well as its denial and renunciation, of ups and downs, and growth and decay, of life and death." p. 43

". . और गंगा तो खास तौर पर भारतकी नदी है। अितिहासके अुष कालसे वह भारतके हृदय पर अपनी सत्ता जमाती आयी

है और अपने तटों पर असंख्य लोगोंको आवर्जित करती आयी है। गंगाके अुद्गमसे लेकर सागरके साथके अुसके संगम तककी और प्राचीन कालसे लेकर अर्वाचीन काल तककी अुसकी कहानी, भारतकी संस्कृतिकी और अुसकी सभ्यताकी कहानी है — साम्राज्योंके अुत्थान और पतनकी, विशाल और गौरवशाली नगरोंकी, मानवके साहसकी तथा भारतके चिंतकोंको व्यग्र रखनेवाले तत्त्वोंके अन्वेषणकी जीवनकी समृद्धि और सफलताकी तथा निवृत्ति और संन्यासकी अुतार और चढ़ावकी, वृद्धि और क्षयकी जीवन और मरणकी कहानी है।"

अुत्तरकाशी : गंगोत्रीसे निकलनेके बाद गंगा जहां सर्वप्रथम अुत्तर-वाहिनी होती है वह स्थान। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३५।

देवप्रयाग : भागीरथी और अलकनंदाका संगमस्थान। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा' प्रक० २५।

लक्ष्मणझूला : हृषीकेशके पास गंगा नदी पर यह स्थान है। यहां पहले छींकाका पुल था। अब यहां लोहेकी सांकल और सीकचोंका झूलनेवाला पुल है। यहीं लक्ष्मणजीका मंदिर है। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २३।

विकराल दंष्ट्रा : विकराल दाढ़। तुलना कीजिये : 'बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालम्'। गीता, ११–२४, 'दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि'। गीता, ११–२५

त्रिवेणी संगम : गंगा, यमुना और (गुप्त) सरस्वतीका संगम। प्रयागमें तीनों नदियोंके प्रवाह अेकत्र हो जाते हैं, अिसलिअे यहां अुनको 'युक्तवेणी' कहते हैं। बंगालमें अेक प्रवाहमें से अनेक प्रवाह बन जाते हैं, अिसलिअे वहां अुनको 'मुक्तवेणी' कहते हैं। देखिये पृ० १५४ की टिप्पणी।

वर्धमान : बढ़ती हुअी।

गंगा शकुन्तला जैसी . . . दीखती है : देखिये पृष्ठ २१।

शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा : दैत्यगुरु शुक्राचार्यकी कन्या देवयानीके साथ दैत्यराज वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठाकी मित्रता थी। अेक दिन दोनों जलक्रीडाके लिअे गयीं। नहानेके बाद देवयानी पहले

बाहर आयी और गलतीसे असने शर्मिष्ठाके कपड़े पहन लिये। अिस पर दोनोंके बीच झगड़ा शुरू हुआ। शर्मिष्ठाने देवयानीको अेक कुअेंमें धकेल दिया। थोड़ी देरमें मृगयाके लिअे निकला हुआ राजा ययाति पानीकी खोजमें वहां आ पहुंचा। असने देवयानीको कुअेंसे बाहर निकाला। देवयानीने घर जाकर सारा किस्सा अपने पिताको सुनाया। शुक्राचार्य गुस्सा हुअे और वृषपर्वाका राज्य छोड़नेके लिअे तैयार हो गये। अंतमें राजा शर्मिष्ठाको देवयानीकी दासीके तौर पर रखनेके लिअे तैयार हुअे तभी जाकर शुक्राचार्य शान्त हुअे। अिसके बाद देवयानीने राजा ययातिसे विवाह किया और अपनी दासी शर्मिष्ठाको साथमें लेकर वह ससुराल गयी। शर्मिष्ठाके रूप-गुण पर मुग्ध होकर ययातिने असके साथ गुप्त विवाह किया। अंतमें असीका सबसे छोटा पुत्र राज्यका अुत्तराधिकारी बना।

अिसीलिअे देवयानीकी कहानी सुनते समय यहांके 'बड़ी कठिनाअीके साथ' मिलते हुअे गंगा और यमुनाके प्रवाहोंका स्मरण होता है।

पृ० १९ प्रयाग-राज : [प्र (अच्छी तरहसे) + यज् (पूजा करना) + अ (अधिकरण) = जहां अुत्तम रूपमें पूजा हुअी अैसा स्थान।] याग = यज्ञ। यज्ञके लिअे पवित्रतम स्थान, गंगा, यमुना और सरस्वतीका संगम-स्थान, अिलाहाबाद।

सरयू: कैलास पर्वत पर स्थित मानस सरमेंसे जिसका अुद्गम हुआ है वह नदी। सर यानी सरोवर। सरोवरमें से निकली अिसलिअे वह 'सरयू' कहलायी। अयोध्या असके तट पर है। असीको घाघरा भी कहते हैं।

चंबल: देखिये पृ० १७१

रतिदेव: देखिये पृ० १७२

शोणभद्र: देखिये पृ० १६८

गजग्राह: देखिये पृ० १६८

पाटलीपुत्र: बिहार राज्यका आजका पटना शहर। अिसीको कुसुमपुर भी कहते थे। चन्द्रगुप्त मौर्य, अशोक, आदि सम्राटोंकी वह राजधानी था। गुरु गोविन्दसिंहके जन्मस्थानका गुरुद्वारा यहीं है।

मगध साम्राज्य: समुद्रगुप्तके समय अिस साम्राज्यका विस्तार सिन्धुसे लेकर कावेरी तक था।

'दाक्षिण्य' : संस्कृत भाषामें दाक्षिण्य शब्दके दो अर्थ होते हैं — दक्षिण दिशा और विनयी स्वभाव। लेखकने यहां दोनों अर्थ सूचित किये हैं। 'दाक्षिण्य धारण कर' अिन शब्दोंमें अुन्होंने अिस बातका वर्णन किया है कि यहांसे ये दोनों नदियां दक्षिणकी ओर बहने लगती हैं, और यह भी बताया है कि वे विनय धारण करती हैं। विनयके अर्थमें दाक्षिण्यका लक्षण अिस प्रकार दिया गया है

दाक्षिण्यं चेष्टया वाचा परचित्तानुवर्तनम्।

[केवल सद्भावके कारण वाणी और वर्तनसे दूसरेकी वृत्तिके अनुकूल होना — यही दाक्षिण्य है।]

पृ० २० सगरपुत्र: सूर्यवंशी राजा बाहुने शत्रुओंसे पराजित होने पर राजपाट छोड दिया और वह हिमालयके जंगलोंमें भाग गया। वहीं अुसका अवसान हुआ। अुस समय अुसकी अेक रानी यादवी सगर्भा थी। अुसकी सौतने गर्भका नाश करनेके हेतुसे यादवीको गुराकमें जहर मिला दिया। परन्तु गर्भनाश नहीं हुआ और अुसे पुत्र हुआ। वह 'गर' नामक जहरके साथ पैदा हुआ अिसलिअे 'सगर' कहलाया। सगर बडा हुआ तब अुसने अपने पिताका राज्य शत्रुसे वापिस ले लिया। अुसकी शैव्या नामक अेक रानी थी। अुसने असमजस् नामक अेक पुत्रको और अेक पुत्रीको जन्म दिया। अुसकी दूसरी रानी थी वैदर्भी। अुसने अेक मांसपिंडको जन्म दिया, जिसमें से साठ हजार पुत्र पैदा हुअे। सगरने ९९ यज्ञ करनेके बाद जब सौवां यज्ञ शुरू किया और घोडेको छोडा, तब अिन्द्रने अुसकी चोरी की और पातालमें जाकर कपिल मुनिके आश्रममें अुसे बांध आया। अिधर सगरके साठ हजार पुत्रोंने घोडेकी खोज शुरू की। अुन्होंने सारी पृथ्वी खोद डाली, जिससे अुसमें पानी भर गया। अिसीलिअे यह पानीवाला स्थान सगरके नाम परसे 'सागर' कहलाने लगा। काफी प्रयत्नोंके बाद वे पातालमें पहुंचे। वहां अुन्होंने कपिल मुनिके आश्रममें घोडेको

देखा। मुनिको ही चोर मानकर अुन्होंने मुनिका बडा अपमान किया। अिस पर मुनिने शाप देकर अुनको भस्म कर डाला। अिसके बाद असमंजसका पुत्र अंशुमान मुनिको प्रसन्न करके घोडा ले आया। अिस प्रकार यज्ञ संपन्न हुआ। मुनिने प्रसन्न होकर अुसको अपने साठ हजार पूर्वजोंके अुद्धारका मार्ग भी बतलाया और कहा कि यदि कोअी स्वर्गमें बहनेवाली गंगाको पृथ्वी पर अुतार दे और अुसके जलका अुन्हें स्पर्श करा दे तो अुनका अुद्धार होगा। अिसलिअे अंशुमानने अपना शेष जीवन तपश्चर्यामें बिताया। अंशुमानके पुत्र दिलीपने भी यह तपश्चर्या चालू रखी और अंतमें अुसके पुत्र भगीरथने बडी बडी तपश्चर्या करके गंगाको पृथ्वी पर अुतारा और अुसका प्रवाह अपने साठ हजार पूर्वजोंकी भस्म परसे बहा कर अुनका अुद्धार किया। यहां अिसीका अुल्लेख है। भगीरथने गंगाको अुतारा, अतः गंगा भागीरथी कहलाअी।

[अिस प्रकार भगीरथको नहर बांधनेमें निष्णात मानकर Irrigation के लिअे लेखकने अेक सुन्दर पारिभाषिक शब्द प्रचलित किया है — भगीरथ-विद्या।]

६. यमुना रानी

पृ० २१ **भव्यताकी भव्यताको कम करते रहना** : अपार भव्यता विशेष कर 'अतिपरिचयाद् अवज्ञा' के न्यायसे भव्यताका महत्त्व कम करना।

अूर्जस्विता : भव्यता।

गगनचुंबी और गगनभेदी : अिन दो शब्दोंके बीचका भेद ध्यानमें लीजिये।

असित ऋषि : व्यासजीके अेक शिष्य। देखिये 'हिमालयकी यात्रा' के प्रकरण ३३ का अंतिम भाग। असित = कृष्ण।

देवाधिदेव : महादेव। स्वर्गमें से अुतरी हुअी गंगाको महादेवजीने अपनी जटाओंमें धारण किया था।

पृ० २२ **अेक काव्यहृदयी ऋषि** : लेखकने अुसका नाम रखा है — 'यामुन ऋषि'। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३१।

अंतर्वेदी : पुराने समयमें गंगा और यमुनाके बीचके प्रदेशको अंतर्वेदी कहते थे। अिस परसे आजकल दो नदियोंके बीचके किसी भी प्रदेशको अंतर्वेदी (दो-आब) कहते हैं।

श्रीनगर : काश्मीरका श्रीनगर नहीं। यह स्थान केदार जाते बीचमें आता है। यह सिद्धपीठ कहलाता है। यहां की हुआी साधना व्यर्थ नहीं जाती और शीघ्र फलदायी होती है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा' प्रक० २९ और 'जीवनका काव्य' नामक लेखककी दूसरी पुस्तकमें शंकराचार्यसे सम्बन्धित प्रकरण।

ब्रह्मावर्त : कुरुक्षेत्रके समीपका दृषद्वती और सरस्वतीके बीचका प्रदेश। आजकल ब्रह्मावर्तको 'बिठूर' कहते हैं।

हत्यारे भूमिभागको : क्योंकि यहां अनेक भीषण युद्ध हुअे थे।

पृ० २३ सचिवराणी : सचिव = मित्र या मंत्री। यहां दोनों अर्थ लिये जा सकते हैं — मित्रतापूर्ण सलाह और सुलहकी बातें। कौरव-पांडवोंके बीच सुलह हो जिसलिअे भगवान श्रीकृष्णने हस्तिनापुरमें ही सन्धिकी बातचीत की थी।

रोमहर्षण : रोंगटे खड़े कर देनेवाली। 'संवादम् अिमम् अश्रौषम् अद्भुतं रोमहर्षणम्।' गीता, १८–७४।

यमराजकी बहनका भाओपन : यम तथा यमुना अथवा यमी और अश्विनीकुमार सूर्य और अुसकी पत्नी संज्ञाकी संतान माने जाते हैं। अेक बार संज्ञाको अपने पिता विश्वकर्माके घर जानेकी अिच्छा हुआी, किन्तु सूर्यने अिजाजत न दी। अतः अुसने अपनी मायाके बलसे छाया नामक अेक स्त्रीका सर्जन किया और अुसको सूर्यके पास रखकर स्वयं पीहर चली गयी। छाया संज्ञासे अितनी मिलती-जुलती थी कि सूर्यको पता ही नहीं चला कि वह संज्ञा नहीं है। छायाने ही यमकी परवरिश की। किन्तु बादमें अुसमें सौतेली मांकी भावना जाग्रत हुआी और अुसने यमकी अुपेक्षा शुरू की। अिससे यम गुस्सा होकर अुसे लात मारनेको तैयार हुआ। तब छायाने अुसे शाप दिया, जिससे यमके दोनों पैरोंमें घाव हो गये और अुसमें कीड़े बिलबिलाने लगे।

यमने सारी बात सूर्यसे कही। सूर्यने अुसे अेक कुत्ता दिया, जो अुसके घावमें से पीब व कीडे चाटने लगा।

कहते हैं कि यमने दक्ष-प्रजापतिकी तरह कन्याओंके साथ विवाह किया था। अिनमें अुस श्रद्धासे सत्य, मैत्रीसे प्रसाद, दयासे अभय, शांतिसे शम, तुष्टिसे हर्ष, पुष्टिसे गर्व, क्रियासे याग, अुन्नतिसे दर्प, बुद्धिसे अर्थ, मेधासे स्मृति, तितिक्षासे मंगल, लज्जासे विनय और मूर्तिसे नर और नारायण नामक पुत्र पैदा हुअे।

यह जीवोंके पाप-पुण्यका न्याय करता है। अिसमें चित्रगुप्त नामक अुसका अेक मंत्री पाप-पुण्यकी बही रखकर अुसकी मदद करता है। दंड अुसका हथियार है और पाडा अुसका वाहन है।

सारी सृष्टि पर शासन करनेवाले अैसे भाओीकी बहन भी अुतनी ही प्रतापी होगी। अिसलिअे अुसका भाभी बननेके लिअे मनुष्यमें असाधारण योग्यता होनी चाहिये। कोअी मामूली आदमी यह स्थान नहीं ले सकता।

पारिजातके फूलके समान : सुंदर और सुकोमल।

ताजबीबी : मुमताजमहल बड़ा भारी नाम मालूम होता है, अिसलिअे यह नाजुक-सा नाम लिया है। आगराके लोगोंमें 'ताज-बीबीका रोजा' नामसे ही यह अिमारत प्रख्यात है।

जमे हुअे आंसू : शुभ्रशुचि ताजमहल। लेखकने अपने ताजमहलके वर्णनमें लिखा है 'यह मकबरा नहीं है, बल्कि अेक अैसा स्थान है जहां अेक रसिक सम्राटका दुःख जमकर बर्फके जैसा सफेद हो गया है।' कविवर रवीन्द्रनाथने अिसको कालके कपोल (गाल) पर पड़ा हुआ अश्रुबिंदु कहा है

> अे कथा जानिते तुमि भारत-अीश्वर शा-जाहान
> कालस्रोत भेसे जाय जीवन यौवन धनमान।
> शुधु तव अन्तर्वेदना
> चिरंतन हये थाक, सम्राटेर छिल अे साधना।
> राजशक्ति वज्रसुकठिन

सन्ध्या-रक्तराग-सम तन्द्रातले हय होक लीन,
केवल अकटि दीर्घश्वास
नित्य-अुच्छ्वसित हये सकरुण करुक आकाश
अेअि तव मने छिल आश।
हीरा-मुक्ता-माणिक्येर घटा।
जेन शून्य दिगन्तेर अिन्द्रजाल अिन्द्रधनुच्छटा
जाय जदि लुप्त हये जाक,
शुधु थाक
अेकबिन्दु नयनेर जल
कालेर कपोलतले शुभ्र समुज्ज्वल
अे ताजमहल ॥

जिस प्रकार पानी जमकर सफेद बर्फ हो जाता है, या घी जमने पर सफेद हो जाता है, असी प्रकार सम्राट्के आंसुओंने जमने पर अुन्होंने सफेद संगमरमरका रूप ले लिया है — असा सूचन यहां है।

चर्मण्वती : देखिये प्रकरण ४१।

सिन्धु : मालवा होकर बहनेवाली अिस नामकी छोटीसी नदी। अिसका अुल्लेख 'मेघदूत' के २९ वें श्लोकमें आता है।

वेणीभूत-प्रतनु-सलिला तावतीतस्य सिंधुः
पाण्डु-च्छाया तट-रुह-तरुभ्रंशिभिर् जीर्णपर्णैः।
सौभाग्य ते सुभग विरहावस्थया व्यंजयन्ती
कार्श्यं येन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्य.॥

महाकवि भवभूतिके 'मालतीमाधव' के चौथे अंकके अंतिम विभागमें मकरंद माधवसे कहता है 'अुठो, पारा और सिंधु नदीके संगममें स्नान करके हम नगरमें ही प्रवेश कर लें।' — तदुत्तिष्ठ पारासिंधुसंभेदमवगाह्य नगरीमेव प्रविशाव।

कालिदासके 'मालविकाग्निमित्र' नाटकके पांचवें अंकके १४वें तथा १५वें श्लोकके नीचे अेक पत्र आता है, जिसमें अिस नदीका अुल्लेख है: "योऽसौ राजसूययज्ञदीक्षितेन मया राजपुत्रशतपरिवृत वसुमित्र

गोप्तारम् आदिश्य संवत्सरोपावर्तनीयो निरर्गलस्तुरगो विसृष्ट स सिन्धोर्दक्षिणरोधसि चरन्नश्वानीकेन यवनानां प्रार्थित ।"

[*राजसूय यज्ञकी दीक्षा लिये हुअे मैंने सौ राजपुत्रोंसे घिरे* वसुमित्रको रक्षण करनेका आदेश देकर अेक वर्षमें वापस लानेकी बात कहकर जो घोडा छोडा था, वह सिन्धुके दक्षिण तट पर घूम रहा था। *वहां यवनोंके अश्वदलने अुसकी अिच्छा की (अुसको रोका)।*]

वहांकी मिश्रीसे मुह मीठा बनाकर : कालपीमें मिश्रीके कारखाने हैं, अिस बातका यहां सूचन है।

अक्षयवट प्रयाग भुवनेश्वर, गया आदि तीर्थस्थानोंमें बोये हुअे वटवृक्ष। कहते हैं कि अिस वटकी पूजा करनेसे, अिसे पानी पिलानेसे अक्षय पुण्यकी प्राप्ति होती है, अिसलिअे अुसे अक्षयवट कहते हैं। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

बूढा अकबर : अकबरने यहां किला बनवाया है अिस बातका सूचन। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

पृ० २४ अशोकका शिलास्तंभ *अिस पर अशोकका धर्मलेख* खुदा हुआ है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

सरस्वती : वाणी। गुप्तस्रोता सरस्वतीका भी यहां सूचन है।

कादंब : *कलहंस।*

धवल-शीला : जिसका शील (चारित्र्य) शुभ्र है।

अिन्दीवर-श्यामा : नीलकमलके जैसी श्याम। अिन्दीवर = नील-कमल।

संस्कृत कवियोंकी अेक पुरानी कल्पना है कि अिन्दीवर-श्याम और गौरवर्णके सगमसे अेक-दूसरेकी शोभाके कारण सौन्दर्य अुत्पन्न होता है। देखिये

अिन्दीवर-श्यामतनुर् नृपोऽसौ त्वं रोचना-गौर-शरीर-यष्टि ।
अन्योन्य-शोभा-परिवृद्धये वां योगस् तडित्तोयदयोर् अिवास्तु ॥
— रघुवंश, ६-६५

सुधा-जला : सुधा = अमृत। अमृत जैसे जलवाली। कहते हैं कि अमृतका रंग शुभ्र होता है। अिसलिअे यहां 'शुभ्र जलवाली' अिस

अर्थमें भी यह शब्द लिया जा सकता है। फिर, सुधाका दूसरा अर्थ होता है चूना। और चूनेका रंग सफेद होता ही है। अिस अर्थमें भी 'सफेद जलवाली' ही वह सकते हैं। तुलना कीजिये सुधाधवल।

जाह्नवी : गंगा। सगरपुत्रोंके अुद्धारके लिअे भगीरथ गंगाको लेकर जा रहा था। मार्गमें जह्नु नामक अेक राजर्षिकी यज्ञ-सामग्री अुसमें बह गयी। अिससे क्रुद्ध होकर ऋषि अपने तपोबलसे गंगाको पी गये। मगर भगीरथने अुनकी बहुत स्तुति की, तब अुन्होंने अपने कानमें से (कअी लोगोंके मतके अनुसार जांघमें से) गंगाको निकाला। अिस परसे गंगाको जाह्नवी नाम भी प्राप्त हुआ।

७. मूल त्रिवेणी

पृ० २५ ब्रह्मकपाल : हिमालयमें बदरीनारायण तीर्थमें अिस नामकी अेक शिला है। शास्त्रोंमें लिखा है कि अिस शिला पर बैठकर श्राद्ध करनेसे मनुष्यके सभी पूर्वज अेकसाथ मोक्ष पाते हैं और वह पितरोंके ऋणसे सदाके लिअे मुक्त होता है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ४२।

पृ० २६ हरिके चरण : हरिकी पैड़ीका सूचन है।

८. जीवनतीर्थ हरिद्वार

पृ० २६ त्रिपथगा : तीन मार्गोंसे बहनेवाली; स्वर्गगामिनी मंदाकिनी, मर्त्यवाहिनी गंगा और पातालगामिनी भोगवती।

पृ० २७ प्रशम-कारी : शांतिदायक। प्रशमका अर्थ निर्वाण और वैराग्य भी है।

पृ० २८ 'महोल्ला' : सिख गुरुओंके भजनोंके अंतमें नानकका ही नाम आता है। अिससे कौनसा भजन किस गुरु द्वारा लिखा गया है, यह नाम परसे मालूम नहीं हो सकता। 'ग्रंथसाहबका' जब संग्रह किया गया, तब ये सब भजन गुरुके क्रमके अनुसार अलग किये गये और हरअेक गुरुके भजनोंका 'महोल्ला' अलग माना गया। अिस परसे अब कौनसा भजन किस गुरुका है यह मालूम किया जा सकता है।

आसा-दि-वार : आसावरी राग।

मुक्तिफौज : 'साल्वेशन आर्मी' नामक फौजी ढंगसे संगठित क्रिस्ती लोगोंकी अेक संस्था है, जिसके सदस्य गेरवे वस्त्र पहनते हैं।

पृ० २९ दीपदानका अिसी तरहका वाङ्मय वर्णन लेखकने 'हिमालयकी यात्रा' में 'गंगाद्वार' शीर्षक लेखमें किया है। आगे देखिये।

पृ० ३० वाजिनीवती अुषा ऋग्वेदके अुषा-संबंधी सूक्तमें अुसको वाजिनीवती कहा गया है। वहां अुसका अर्थ 'बलवती' या 'समृद्धिशाली' होता है।

> अुषस् तत् चित्रतमा भर अस्मभ्य वाजिनीवती।
> येन तोकं च तनयं च धामहे।।

[हे बलवती और समृद्धिशालिनी अुषा, हमें सुन्दर (बल या संपत्ति) दे, जिससे हम पुत्र और प्रपौत्रको धारण कर सकें।] मंडल १, सूक्त ९२–१३

'वाज' का अर्थ है बल वीर्य, वेग। अिस परसे 'वाजिन्' कहते हैं बलवान, वीर्यवान, वेगवानको। फिर अिसका अर्थ हुआ — जिसमें ये सब गुण हैं अैसा युद्धके रथका घोडा। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है 'वाजिनी' = घोडी। अिस परसे 'वाजिनीवत्' कहते हैं वेगवान घोडी हांकनेवालेको या अुसके मालिकको। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है —'वाजिनीवती'। जब यह विशेषण सिन्धु या सरस्वतीको लगाते हैं तब अुसका अर्थ होता है — बलवान, वेगवान घोडोंसे समृद्ध।

बल और वीर्य समृद्धिका मूल है। अिससे समृद्धिका अर्थ भी अिसमें आ जाता है। और धान्य तो अेक प्रकारकी समृद्धि है ही। अिससे अिस शब्दमें यह अर्थ भी समाया हुआ है। कभी कभी 'वाजिनीवती' का अर्थ 'अन्नवाली' भी होता है।

> स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्मयी सुकृता वाजिनीवती।
> अूर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधम्।।
> मं० १०, सू० ८२–८

[उत्तम अश्वोंवाली, अच्छे रथोंवाली, सुन्दर वस्त्रोंवाली, हिरण्य-वाली, सुघटित, अन्नवती, ऊनवाली, गणवाली, युवती और सुभगा सिन्धु मधुवृधो (मधु बढ़ानेवाले पौधों) धारण करती है।]

कठोपनिषद्में 'वाजश्रवस्' का उल्लेख है। यहां 'वाज' का अर्थ है अन्न। अन्नके दान आदिके कारण जिसको 'श्रवस्'= यश मिला है वह है 'वाजश्रवस्'।

'वाजीकर' औषधि यानी शक्तिवर्धक दवाओं। 'वाजीकरण' प्रयोग यानी शक्ति बढ़ानेका प्रयोग। ये शब्द भी अिसके साथ संबद्ध हैं।

९. दक्षिणगंगा गोदावरी

श्लोकोनियां० 'प्रातःकालमें अुठकर मुहमें चन्द्रमौली शिवका नाम लो। श्रीबिन्दुमाधवके पास गंगामें स्नान करो, गोदावरीमें स्नान करो . . । कृष्णा, वेण्या, तुंगभद्रा, सरयू, कालिंदी, नर्मदा, भीमा, भामा, — अिन सब नदियोंमें गोदावरी मुख्य है, अिस गंगामें स्नान करो।'

श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन: सीता और लक्ष्मणके साथ बिताये हुअे वनवासके दिन।

जीवनका दारुण आघात: सीताके हरणका।

पृ० ३१ वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से: क्रौंचवध जैसे अेक छोटेसे प्रसंगमें से करुणाकी भावना जाग्रत होकर जिस प्रकार रामायणके जैसा महाकाव्य पैदा हुआ अुस प्रकार।

पृ० ३२ सहनवीर रामचन्द्र और दुःखमूर्ति सीतामाता: अिन विशेषणोंकी योग्यता ध्यानमें लीजिये। तुलना कीजिये 'दुःख-संवेदना-यैव रामे चैतन्यम् आहितम्।'—अुत्तररामचरित

पर्याय: वगैरे।

कल्पांतिक: कल्प= ब्रह्माका अेक दिन= १००० युग= ४३२० लक्ष मानवी वर्ष। सृष्टिकी आयु अितनी मानी जाती है। सृष्टिके अंत तक जो बना रहे वह है कल्पांतिक दुःख। (कल्प+अंत+अिक)

जनस्थान: दण्डकारण्यका अेक हिस्सा, जहां गोदावरीके तट पर श्री रामचन्द्र रहते थे। यहां राक्षसोंका अुपद्रव बहुत था, अिसलिअे

मनुष्य वहा रह सकते थे। मनुष्योंके रहनेके योग्य स्थान होनेसे वह 'जनस्थान' कहलाता था।

जटायु: अरुणका पुत्र, संपातिका छोटा भाओ, दशरथ राजाका परम मित्र। रावण जब सीताको लेकर जा रहा था, तब सीताके मुखसे 'राम' 'राम' की पुकार सुनकर जटायुने सीताको छुडानेके बहुत प्रयत्न किये। किन्तु वह असफल रहा। अुसको मरणासन्न स्थितिमें डाल कर रावण सीताको लेकर चला गया। अिधर जब राम सीताकी खोज करते हुअे वहा पहुचे तो जटायुने अुन्हें खबर दी कि सीताको रावण अुठा ले गया है, और फिर प्राण छोडे।

पृ० ३३ सीतामाताकी कातर तनु-यष्टि तुलना कीजिये —

अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्तन्मार्गदत्तेक्षण
सा हंसैः कृतकौतुका चिरम् अभूद् गोदावरीसैकते।
आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वीक्ष्य बद्धस्त्वया
कातर्याद् अरविन्दकुड्मलनिभो मुग्ध प्रणामाञ्जलि ॥
—*अुत्तररामचरित, ३–३७*

पाडेके मुहसे . . . करवानेवाले महाराष्ट्रके सतकवि ज्ञानेश्वरके पिता विट्ठलपत शुरूसे ही वैराग्य-परायण वृत्तिके थे। जवानीमें तीर्थयात्रा करते करते वे अेक बार आळदी पहुचे। वहाके अेक ब्राह्मणने अुनकी योग्यताको देखकर अपनी लडकी अुन्हें ब्याह दी। मगर विवाहके कारण विट्ठलपतकी वैराग्य-वृत्ति दब नही पायी। 'मैं गंगास्नानके लिअे जा रहा हू' कहकर अुन्होंने घर छोडा और काशीमें जाकर 'मेरे स्त्री-पुत्र आदि कुछ नही है' कहकर रामानद स्वामीसे सन्यासकी दीक्षा ली। कुछ समयके बाद रामानद स्वामी रामेश्वरकी यात्राके लिअे जाते हुअे रास्तेमें आळदी पहुचे। वहा विट्ठलपतकी पत्नी पतिके सन्यासकी *बात सुनकर व्रतोपासनामें जीवन बिता रही थी।* गावमें रामानद स्वामीके आनेकी खबर सुनकर वह अुनके पावोंमें पडनेके लिअे आयी। सन्यासीने जब अुसको 'पुत्रवती भव' कहकर आशीर्वाद दिया तब वह हसी। सन्यासीने हसनेका कारण पूछा। अुसने अपनी कहानी सुना दी। रामानद आळदीसे ही वापस काशी गये और

विट्ठलपतको घरसंसार वापस गृहस्थ-जीवन बिताने के लिअे भेज दिया। अिनके चार संतान हुआीं निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव और मुक्ताबाआी।

किन्तु शास्त्रोंमें संन्यासीको फिरसे संसारी बननेकी अनुज्ञा नहीं है। अिसलिअे समाज अिस कुटुंबको सताने लगा। अिनके बच्चोंको जनेअु देनेके लिअे कोअी तैयार नहीं हुआ। अनमें विट्ठलपंत पैठण गये और वहांके ब्राह्मणोंके पावोंमें पड़कर अुन्होंने कहा, 'मेरे लिअे कोअी भी प्रायश्चित्त बता दो, किन्तु मुझे शुद्ध करो और मेरे बच्चोंको अुपवीत संस्कार देनेकी अनुज्ञा दो।' ब्राह्मणोंको शास्त्रोंमें कोअी आधार नहीं मिला। अुन्होंने कहा, 'तुम्हारा पाप ही अितना बड़ा है कि तुम्हारे लिअे देहत्याग ही अेक अुपाय है। और तुम्हारे बच्चोंको अुपवीत दिया ही नहीं जा सकता।' विट्ठलपंत और अुनकी पत्नीने प्रयाग जाकर गंगामें जल-समाधि ले ली।

अिसके बाद अिन चारों बच्चोंने आळंदीके ब्राह्मणोंसे प्रार्थना की कि 'हम ब्राह्मणके बच्चे हैं, हमें अुपवीत संस्कार मिलना चाहिये।' किन्तु ब्राह्मणोंने जवाब दिया कि पैठणके ब्राह्मणोंसे शुद्धि-पत्र लाने पर अुपवीत दिया जा सकेगा।

बच्चे पैठण गये। वहांके ब्राह्मणोंके सामने अुन्होंने अपनेको समाजमें लेनेकी मांग पेश की। किन्तु ब्राह्मणोंने कहा, 'संन्यासीके बच्चोंको अुपवीतका अधिकार किसी भी शास्त्रमें नहीं है। अिसके लिअे कोअी प्रायश्चित्त भी नहीं है। अतः तुम भक्तिभाव ओीश्वरभाव रखकर जितेन्द्रिय बनो, विवाह मत करो और सदा हरिभजनमें मग्न रहो।'

निर्णय देकर सभा समाप्त होनेवाली थी, अितनेमें अिन चारों बच्चोंसे किसीने अुनके नामोंके अर्थ पूछे। निवृत्तिनाथने कहा, 'मेरा नाम निवृत्ति है। मैं कभी प्रवृत्तिमें पड़नेवाला नहीं हूं।' ज्ञानदेवने कहा, 'मैं ज्ञानदेव हूं। सकल आगमोंको जाननेवाला हूं।' सोपानदेवने कहा, 'मैं भक्तोंको ओीश्वर-भजन सिखाकर वैकुंठ प्राप्त करानेवाला सोपान हूं।' मुक्ताबाओीने कहा, 'मैं विश्वकी लीला दिखानेके लिअे प्रकट हुआी ओीश्वरकी लीलारूपी मुक्ति हूं।'

यह जवाब सुनकर अुस आदमीने कहा, 'नाम तो चाहे जैसे रखे जा सकते हैं। वह जो पाडा जा रहा है अुसका नाम भी ज्ञानदेव है।'

ज्ञानदेव फौरन बोल अुठे 'बेशक! अुस पाडेमें और मुझमें कोअी भी भेद नहीं है। अुसमें भी मेरी ही आत्मा है।'

अुसी समय किसीने अुस पाडे पर तीन चाबुक लगाये और *अिधर अुसी क्षण ज्ञानेश्वरकी पीठ पर चाबुकके निशान अुठ आये!*

चारों बच्चे ब्राह्मणोंको नमस्कार करके अपने गांव वापस जानेके लिअे निकले। रास्तेमें गोदावरीके तीर पर वे बैठे थे। वहां कुछ नौजवान अिकट्ठे हुअे थे। अुन्होंने मजाकके तौर पर ज्ञानदेवसे कहा 'तुम यदि शुद्धिपत्र चाहते हो, तो *अिस पाडेके मुहसे वेदका पाठ करा दो।'* तुरन्त ज्ञानेश्वर पाडेके पास गये और अुसके सिर पर हाथ रखकर अुन ब्राह्मणोंसे कहने लगे 'आप तो भूदेव हैं। आपका वचन कभी निष्फल नहीं जा सकता। देखिये, यह पाडा अब वेदोंका पाठ करेगा।'

और सचमुच वह पाडा वेदोंकी ऋचायें बोलने लगा!!

ज्ञानेश्वरने गीता पर 'भावार्थ दीपिका' लिखी है जिसको 'ज्ञानेश्वरी' कहते हैं। अिसके अलावा अुनकी अेक स्वतंत्र रचना है, जिसका नाम है 'अमृतानुभव'। ये दोनों भारतीय साहित्यके *अनमोल रत्न हैं।*

दशग्रंथी: ऋक् यजुर्, साम और अथर्व ये चार वेद तथा शिक्षा (स्वरोच्चारण शास्त्र), छंद, व्याकरण, निरुक्त (व्युत्पत्ति और अर्थ साधी), ज्योतिष और कल्प (सूत्र) ये छह वेदांग — अिन दस ग्रंथोंको कंठ करनेवाले।

पृ० ३४ शंकराचार्यके अूपर किये . . . अत्याचार: शंकराचार्यकी माता अुन्हें सन्यास लेनेकी अिजाजत नहीं देती थी। अेक बार शंकराचार्य नहानेके लिअे नदीमें अुतरे। वहां मगरमच्छने अुनका पांव पकडा। शंकराचार्यने पुकार कर माको कहा, 'अब तो मुझे सन्यास लेनेकी अिजाजत दो।' माने अिजाजत दी कि शंकराचार्य मगरके जबडेमें से मुक्त हुअे। वे पूरे-पूरे मातृभक्त थे। किन्तु सन्यास-

धर्मके अनुसार वे माताके साथ रह नहीं सकते थे, माताका दर्शन तक नहीं कर सकते थे। तो भी अन्होंने घर छोड़कर जाते समय मातासे कहा 'मरणके समय मुझे बुलाओगी तो मैं आ जाअूँगा।' और वे चले गये। कुछ समयके बाद मां बीमार पड़ी। अुसे पुत्रसे मिलनेकी अिच्छा हुआी। शंकर अनगार शंकराचार्य आये और माताके अवसान तक अुन्होंने अुसकी सेवा की। माताने सुखसे प्राण छोड़े।

किन्तु मुसीबत अब शुरू हुआी। शवको स्मशानमें ले जानेके लिअे गांवके ब्राह्मण तैयार नहीं थे। न अपने स्मशानमें अुस शवको जलानेकी अिजाजत देते थे। लकड़ी भी किसीने नहीं दी। ब्राह्मणोंने तय किया कि जो सन्यास लेनेके बाद अपनी पूर्वाश्रमकी मासे मिलने जाता है अुसका यह कार्य शास्त्रविरुद्ध है, अुसका बहिष्कार ही होना चाहिये। शंकराचार्यने अपनी माके शवके चार टुकड़े किये, केलेके पेड़ काटकर ले आये, अुन पर ये टुकड़े रखकर अुन्होंने अपनी माताके घरके आंगनमें ही योगाग्नि जलायी और अपने तपस्तेजसे अुसको सद्गति दी।

शंकराचार्यका गांव जिस राज्यमें था, वहांका राजा अुनका शिष्य था। अपने पूज्य गुरु पर गुजरे हुअे अिस जुल्मकी खबर पाते ही अुसने अपने राज्यके नाम्बूद्री ब्राह्मणोंको सजा दी कि वे अपने घरके लोगोंके शव स्मशानमें नहीं ले जा सकते, बल्कि घरके आंगनमें ही अुसके चार टुकड़े करके जलावें। राजाने अिस सजाका अमल कठोरताके साथ करवानेका निश्चय किया। ब्राह्मण घबड़ा गये। अुन्होंने माफी मांगी। तब राजाने शवके चार टुकड़े करनेके बदले शवके अूपर चार रेखायें खींचनेकी और बादमें स्मशानमें ले जानेकी अिजाजत दी।

अष्टवक्रा : जिसके आठों अंग टेढ़े हों — खूब मोड़वाली।

पृ० ३५ जीवन-वितरण : जीवन = पानी, वितरण = बांटना।

यानान : गोदावरीके मुखके पास यह स्थान है। फ्रेंच कंपनीने सन् १७५० में अिसका कब्जा लिया था और दो सालके बाद फ्रेंच सरकारको सौंप दिया था। अब यह स्वतंत्र भारतमें मिल गया है।

पृ० ३६ चचल कमलोंके बीच कमलोंको गतिमान बनाकर दृश्यकी शोभा बढानेके लिअे।

भवभूतिका स्मरण भवभूतिने अपने 'अुत्तररामचरित' में गोदावरीके विविध सौदर्यका वर्णन किया है अिसलिअे। अुदाहरणके तौर पर देखिये

अेतानि तानि गिरि निर्झरिणी तटेषु
वैखानसाश्रित-तरूणि तपोवनानि।
येष्वातिथेयपरमा शमिनो भजन्ते
नीवार-मुष्टि-पचना गृहिणो गृहाणि॥
अुत्तररामचरित १–२५

स्निग्ध-श्यामा क्वचिद् अपरतो भीषणा भोग-रूक्षा
स्थाने स्थाने मुखर-ककुभो झाङ्कृतैर्निर्झराणाम्।
अेते तीर्थाश्रम-गिरि-सरिद्-गर्त-कान्तार-मिश्रा
सदृश्यन्ते परिचित-भुवो दण्डकारण्य-भागा॥
अु० रा० २–१४

अिह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरमुक्त-
प्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।
फलभरपरिणामश्यामजम्बू-निकुञ्ज-
स्खलनमुखरभूरिस्रोतसो निर्झरिण्य॥
अु० रा० २–२०

अेते त अेव गिरयो विरुवन्मयूरास-
तान्येव मत्तहरिणानि वनस्थलानि।
आमञ्जुवञ्जुललतानि च तान्यमूनि
नीरन्ध्रनीलनिचुलानि सरित्तटानि॥
अु० रा० २–२३

मेघमालेव यश्चायमारादिव विभाव्यते।
गिरि प्रस्रवण सोऽत्र यत्र गोदावरी नदी॥
अु० रा० २–२४

अस्यैवासीन्महति शिखरे गृध्रराजस्य वासस्
तस्याधस्ताद्वयमपि रतास्तेषु पर्णोटजेषु।
गोदावर्याः पयसि विततानोकहश्यामलश्रीर्
अन्तः कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः॥
अु० रा० २-२५

गुञ्जत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघूत्कारवत्कीचक-
स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौञ्चावतोऽयं गिरिः।
अेतस्मिन्प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैर्
अुद्वेल्लन्ति पुराणरोहिणतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः।
अु० रा० २-२९

अेते ते कुहरेषु गद्गदनदद्गोदावरीवारयो
मेघालम्बितमौलिनीलशिखराः क्षोणीभृतो दाक्षिणाः।
अन्योन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोलकोलाहलैर्
अुत्तालास्त अिमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्सङ्गमाः॥
अु० रा० २-३०

यत्र द्रुमा अपि मृगा अपि बन्धवो मे
यानि प्रियासहचरश्चिरमध्यवात्सम्।
अेतानि तानि बहुकन्दरनिर्झराणि
गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि॥
अु० रा० ३-८

वैदिक प्रभात : वेदकालमें जहां आर्य रहते थे, वहांका प्रभात कुहरेके कारण धूसर होता था अिसलिअे, अितिहासमें वेदकाल अुषःकालके जैसा धुंधले प्रकाशवाला माना गया है अिसलिअे तथा वेदकालमें ही धर्मज्ञानका अुषःकाल हुआ था अिसलिअे भी।

पृ० ३७ कविकी प्रतिभाके समान : प्रतिभाकी व्याख्या अिस प्रकार है : 'प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता।'— नये नये स्फुरण जिस प्रज्ञा (बुद्धि)से निकलते हैं, वह प्रतिभा कही जाती है।

चरित्र : [चर् (चलना) + त्र (साधन) = चलनेका साधन = पैर।] चाल, आचरण। वेदोंमें 'चरित्र' शब्द पैर अर्थमें आया है। (पैरोंके निशान — चरित्र — देखकर चलनेवालेका यह सूचन मिल जाता है कि बगुला किस दिशामें गया है। दूसरे अर्थमें, चालबाजीका भरा आचरण करनेवाले बगलाभगतका बगला दिशा बताता है।)

१०. वेदोंकी धात्री तुगभद्रा

पृ० ४१ 'द्वंद्व सामासिकस्य च' समासोंमें मैं द्वंद्व हूं। गीता, १०–३३।

११. नेल्लूरकी पिनाकिनी

पृ० ४२ नेल्लूर : (नेल्ल = धान + ऊर = गांव) धानका गांव। यह गांव मद्रासकी उत्तर दिशामें है।

१२ जोगका प्रपात

पृ० ४४ होनावर उत्तर कर्णाटकमें पश्चिम समुद्र-तट पर स्थित अेक शहर।

पृ० ४५ धारवाड दक्षिण कर्णाटकमें सागर और शृंगेरीके बीच स्थित अेक शहर। यहां हैदरके द्वारा स्थापित हनुमानका मंदिर है। समीपकी टेकरी पर वाहूबलीकी अेक भव्य मूर्ति खड़ी है।

मनसा० मनमें सोचता है अेक बात और दैव दूसरी ही बात कर देता है।

चिरवांछित रवीन्द्रनाथकी यह पंक्ति याद कीजिये

बहुदिन वंचित अंतरे संचित कि आशा।

शिमोगा सागर . गांवका नाम है।

पृ० ४६ गुजरातमें बाढ़-संकट सन् १९२७ में गुजरातमें अति-वृष्टिके कारण हजारों मकान टूट गये थे। लोग बिना अन्न-वस्त्रके और आसरेके हो गये थे। अुस समय सरदार वल्लभभाओ पटेलने अपनी विलक्षण व्यवस्था-शक्ति और भक्तिकी मददसे लोगोंको राहत देनेका भगीरथ कार्य सफलतापूर्वक किया था।

श्री गंगाधरराव देशपांडे : कर्णाटकके अेक नेता।

स्थितधीः ० स्थितप्रज्ञ कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे चलता है? गीता, २–५४।

कुलशिखरिणः ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है

> धिग्‌ धिग्‌ व्यापाराद् अस्माद् दुरध्यवसायतो
> विपदि महता धैर्य-ध्वंस यद् ईक्षितुम् ईहसे।
> अयि जडमते! कल्पापाये व्यपेत-निजक्रमा
> कुल-शिखरिणः क्षुद्रा नैते न वा जलराशयः॥

[*अपनी मर्यादा कभी न छोड़नेवाला सागर और अपने स्थान पर सदा स्थिर रहनेवाले कुलपर्वत भी जब प्रलयकाल आता है तब चलित होते है। किन्तु महात्माओंमें अैसी क्षुद्रता नहीं होती। वे तो संकट जितना अधिक होता है अुतने ही अधिक अडिग रहते हैं। जिस तरह समझाते हुअे कवि कहता है*

हे जडमते! विपद्‌के समय महात्माओंका धैर्यनाश देखना यदि चाहते हो तो यह झूठा प्रयास है। अुसको छोड़ दो। ये महात्मा तुम्हारे क्षुद्र कुलपर्वत नहीं है, न पामर सागर है, जो प्रलयकाल आते ही अपने स्वधर्म-कर्मके नियमोंको भी तोड़ देते हैं।]

पृथ्वी पर चाहे जितना अुत्पात हो जाय, फिर भी पृथ्वीको सम-तुला सँभालनेवाले कुलपर्वत अपनी जगहसे हटते नहीं है। अिसीलिअे किसीके धैर्यकी अुपमा देते समय कहा जाता है कि अिसका धैर्य तो कुलपर्वतके समान है।

अिसी प्रकार नदियोंमें चाहे जितनी बाढ़ आ जाय, तो भी अुनके पानीसे समुद्र का महासागर अुभर नहीं आता। महासागर अपनी मर्यादाको छोड़ते नहीं, अिसलिअे महासागर भी नदियोंकी सृष्टिमें धैर्य और मर्यादाके लिअे आदर्श अुपमान बन गये हैं।

प्रस्तुत श्लोकमें महात्माओंकी अचल स्थिरताका वर्णन करते समय कवि कहता है कि अुनके सामने कुलपर्वत भी क्षुद्र होते हैं और जलराशि महासागर भी तुच्छ है। क्योंकि हजारों और लाखों साल तक अपनी मर्यादाका अुल्लंघन न करनेवाली ये विभूतियाँ प्रलयकालमें

समय अपना स्वधर्म-कर्म छोड़ देती हैं। महात्माओंकी बात अैसी नहीं है।

आदर्श अुपमानको तुच्छ मानकर अुपमेय वस्तु अुपमानसे भी श्रेष्ठ है, यह दिखानेवाली पद्धतिको संस्कृतमें प्रतीप अलंकार कहते हैं। अिसमें अत्युक्ति अवश्य होती है।

पृ० ४७ खंडाला घाट . पूना और बम्बअीके बीचका घाट।

पृ० ४८ प्रतीप [प्रति = विरुद्ध + अिप = पानी] प्रवाहके विरुद्ध, अुल्टी।

पृ० ४९ तमाशा : यहां फजीहतके अर्थमें।

पृ० ५० नमः पुरस्तात् ० हे सर्व! तुम्हें आगेसे, पीछेसे, सभी ओरसे नमस्कार है। तुम्हारा वीर्य अनंत है। तुम्हारी शक्ति अपार है। सब कुछ तुम्हीं धारण कर रहे हो अतः तुम सर्व हो। गीता, ११–४०

सुदुर्दर्शम् अिदम् ० मेरा जो रूप तुमने देखा है अुसका दर्शन बड़ा दुर्लभ है। देवता भी अिस रूपके दर्शनकी आकांक्षा रखते हैं। गीता ११–५२

स्वप्न था ० तुलना कीजिये.

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु? — शाकुंतल, ६–१०

पृ० ५१ व्यपेतभी ० डर छोड़कर शांतचित्त हो जा और यह मेरा परिचित रूप फिरसे देख ले। — गीता, ११–४९

देवदास देवदास गांधी।

मणिबहन सरदार पटेलकी पुत्री।

लक्ष्मी *राजाजीकी पुत्री बादमें देवदास गांधीकी पत्नी।*

पृ० ५२ अण्णा राजाजी।

पत्रं नैव यदा० वसंत ऋतुमें जब सब वृक्ष-वनस्पतियोंको नये पत्ते आते हैं, तब यदि केवल करीलके वृक्षको ही पत्ते न हों, तो अुसमें वसंतका भला क्या दोष है? घुग्घू यदि दिनको देखे ही नहीं, तो अिसमें सूर्यका क्या दोष है?

भर्तृहरिके अिस श्लोकके शेष दो चरण अिस प्रकार हैं:

धारा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणम् ?
यत् पूर्वं विधिना ललाट-लिखितं तत् मार्जितुं कः क्षमः ?

[चातकके ही मुहमें यदि पानीकी धारा गिरे नहीं तो अुसमें भला मेघका क्या दोष है ? विधिने कपालमें जो लिख रखा है, अुसको मिटानेके लिअे कौन समर्थ है ?]

'अुच्छिष्ट' [अुत्+शिष्ट] जूठा नहीं बल्कि किसानके फसल काट कर ले जानेके बाद बचा हुआ।

रवीन्द्रनाथ अथर्ववेदके अेक मंत्रका आधार लेकर बताते हैं कि सारी कलाओंका और मनुष्यकी सारी अुच्चतर प्रवृत्तियोंका मूल 'अुच्छिष्ट' है। नीचे अुनके वचन दिये जा रहे हैं

अृतं सत्यं तपो राष्ट्रं श्रमो धर्मश्च कर्म च।
भूतं भविष्यद् अुच्छिष्टे वीर्यं लक्ष्मी-बलं बले॥

"Righteousness, truth, great endeavours, empire, religion, enterprize, heroism and prosperity, the past and the future dwell in the surpassing strength of the surplus."

The meaning of it is that man expresses himself through his super-abundance which largely overleaps his absolute need

The renowned vedic commentator Sayanacharya says :

"The food offering which is left over after the completion of sacrificial rites is praised because it is symbolical of Brahma, the original source of the universal."

According to this explanation, Brahma is boundless in his superfluity which inevitably finds expression in the eternal world process Here we have the doctrine of the origin of the arts. Of all living creatures in the world man has his vital and mental energy vastly in excess of his need which urges him to work in various lines of creation for

its own sake Like Brahma himself, he takes joy in productions that are unnecessary to him, and therefore represent his extravagance and not his hand-to mouth penury The voice that is just enough can speak and cry to the extent needed for everyday use, but that which is abundant *sings; and in it we find our joy Art reveals man's wealth* of life, which seeks its freedom in forms of perfection which are ends in themselves

भावार्थ

'ऋत सत्य, तप, राष्ट्र, श्रम, धर्म, कर्म तथा भूत और भविष्य वीर्य और लक्ष्मी अुच्छिष्टक बलमें निवास करते हैं।'

अिसका अर्थ यह है कि अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके बाद मनुष्यके पास जो अतिशय शक्ति अधिक रहती है, अुसीके द्वारा वह अपनेको व्यक्त करता है।

वेदोंके प्रसिद्ध टीकाकार सायणाचार्य कहते हैं

'यज्ञविधिके बाद, बचे हुअे (अुच्छिष्ट रहे) अन्नबलिको पवित्र अिसीलिअे कहा गया है कि वह अखिल विश्वके मूल कारणरूप ब्रह्मका प्रतीक है।'

अिस धारणाके अनुसार ब्रह्मकी अुच्छिष्ट शक्ति अपरंपार है, और वह सनातन विश्व-प्रक्रियाके रूपमें प्रकट होती है। यहां हमें कलाओंके अुद्भवसे संबंध रखनेवाला सिद्धांत देखनेको मिलता है। संसारके सभी जीवोंकी तुलनामें मनुष्यमें प्राण और मनकी शक्ति अुसकी आवश्यकतासे अधिक भरी है, और वह अुसे अनेकविध निर्हेतुक सर्जक प्रवृत्तियां करनेके लिअे प्रेरित करती है। स्वयं ब्रह्मकी तरह, वह भी जो सर्जन अुसके लिअे अनावश्यक हैं, और जो अुसके अकिंचनत्वके नहीं बल्कि अुसके अुडाअूपनके सूचक हैं, अुनमें आनन्द लेता है। जो आवाज केवल आवश्यकता भरकी ही है वह रोजके कामकाजके जितनी ही बोल सकती है या रो सकती है, किन्तु जो आवाज अधिक होती है, वह गाने लगती है—और अिसीमें हमारा आनन्द है। कला मनुष्यके

जीवनकी समृद्धिको प्रगट करती है। यह समृद्धि निर्हेतुक सर्वांग-सम्पूर्ण स्वरूपोंमें मुक्तिका आनन्द मनानेके लिअे प्रयत्न करती रहती है।

'परिग्रहो भयायैव': परिग्रहमें भय रहता ही है। लेखकका यह अपना सूत्र है।

पृ० ५३ 'निस्' कोटिके (Gneiss) सतहवाले पत्थर जिनमें अभरक, चकमक वगैराका समावेश होता है।

पृ० ५४ भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलना: मूल अिस प्रकार है

Beauty of place translates itself to the Indian consciousness as God's cry to the soul. Had Niagara been situated on the Ganges, it is odd to think how different would have been its valuation by humanity. Instead of fashionable picnics and railway pleasure-trips, the yearly or monthly incursion of worshiping crowds. Instead of hotels, temples. Instead of ostantatious excess, austerity. Instead of the desire to harness its mighty forces to the chariot of human utility, the unrestrainable longing to throw away the body and realize at once the ecstatic madness of Supreme Union. Could contrast be greater?

—*The Web of Indian Life* —241

भैरवजाप: "पहाड़ पर जहां अूंचेसे अूंचा शिखर हो और पास ही नीचे अेकदम सीधा कगार हो, अुस स्थानको भैरवघाटी कहते हैं। प्राचीन कालमें और आज भी भैरव सम्प्रदायके लोग प्रायः अैसे स्थान पर भैरवजीका जाप करते-करते अूपरसे नीचे कूद पड़ते हैं। माना यह जाता है कि अिस तरह आत्महत्या करनेमें पाप नहीं, अपितु पुण्य है। यह मान्यता आजके कानूनके अनुसार गलत भले ही हो, किन्तु मानस-शास्त्री अुसके आधारभूत तत्त्वको सहज ही समझ सकते हैं। दुनियासे सब तरह निराश होकर कायरतावश किसी मनुष्यका आत्महत्या करना और प्रकृतिके विशाल, अुच्च, अुदात्त तथा रमणीय सौंदर्यको देख, तल्लीन होकर प्रकृतिके साथ अेकरूप होनेकी

अिच्छाका प्रबल हो अुठना, किसी तरह प्रकृतिका वियोग सहा ही न जाना, और अैसेमें किसी मनुष्यका अिस क्षुद्र देहके बंधनको भूल कर तादात्म्य प्राप्त करनेके लिअे अनन्तमें कूद पड़ना — ये दो बातें नितांत भिन्न हैं। दोनोंका परिणाम चाहे अेक ही हो। हर तरहके विनाशको हम मृत्युके अेक ही नामसे पुकारते हैं परन्तु वस्तु अेक ही नहीं होती। कभी बार मरण जीवन-रूपी नाटकका विरूपक होता है, और कभी बार वह अुस नाटकका भरत-वाक्य — जीवन-साफल्य — होता है।" — 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० १६, पृ० ९१-९२

पृ० ५५ विषय तृष्णा. देखिये पृ० १४८ पर 'लहरोंका ताडव-योग' शीर्षक लेख।

नाभिनदेत० न मृत्युका स्वागत करना न जीवनका।

— मनुस्मृति।

हॉर्स पावर अिसके लिअे लेखक 'अश्वत्थामा' शब्द पारिभाषिक शब्दके तौर पर सुझाते हैं। [अश्व = घोड़ा + स्थामन् = शक्ति।] समासमें 'स्थामन्' में से 'म्' का लोप हो जाता है।

अुपवन 'न्यू फॉरेस्ट' नामक प्रदेश।

नीरो : रोमका अेक बादशाह (सन ५४–६८)। माके षड्यन्त्रसे पिताका खून होनेके बाद रोमकी गद्दीके अधिकारी ब्रिटेनिकसको हटाकर खुद गद्दी पर बैठा। पांच साल तक अच्छी तरह राज चलानेके बाद वह तानाशाह बन गया। अुसने ब्रिटेनिकसकी, अपनी माकी और पत्नीकी हत्या की। रोमको जलानेके झूठे अिल्जाम पर अुसने ख्रिस्तियोंके अूपर तरह तरहके अत्याचार किये। अपने गुरु और मंत्री सेनेकाकी तथा अपनी दूसरी पत्नीकी भी हत्या की। अिसके बाद रोममें बगावत हुअी, जिससे वह भाग गया और अुसने आत्महत्या कर ली। अैसा बताया है कि अुसने रोमको जलाया था और खुद जलते हुअे रोमको देख कर फिडल बजाता था। किन्तु अितिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन प्राप्त नहीं है। किन्तु अिसमें कोअी संदेह नहीं कि वह अत्यन्त निर्दय था।

पृ० ५६ आर्तिनाश : तुलना कीजिये

न त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःख-तप्तानां प्राणिनां आर्ति-नाशनम्॥

[अपने लिअे मैं न राज्य चाहता हूँ, न स्वर्गकी अिच्छा करता हूँ, और न मोक्ष चाहता हूँ। दुःखमें तपे हुअे प्राणियोंकी पीड़ाका नाश हो, बस अितना ही मैं चाहता हूँ।]

पृ० ५७ वीरभद्र : दक्ष प्रजापतिके यज्ञका संहार करनेवाले शिवगण।

अंग्रेजोंको हम पहचान गये हैं तो : अंग्रेज भी भारतका खून चूसते हैं, परन्तु मालूम ही नहीं होता कि वे चूस रहे हैं। अंग्रेजोंका यह स्वरूप हम पहचान गये हैं तो —

काकदृष्टि : कौअेके जैसी चकोर दृष्टि। ['काका' की दृष्टि, यह अर्थ भी है।]

पृ० ५८ प्रायः कन्दुक० आर्यजन गिरते हैं तो भी अक्सर गेंदकी तरह गिरते हैं, यानी गिरने पर फिर अूंचे अुछलते हैं।

भर्तृहरिका पूरा श्लोक अिस प्रकार है :

प्रायः कन्दुक-पातेन पतत्यार्यः पतन्नपि।
तथा त्वनार्यः पतति मृत्पिण्ड-पतनं यथा॥

न हि कल्याणकृत्० कल्याण करनेवाला कोअी भी दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता। गीता, ६–४०

पृ० ६० मानो महादेवजी संहारकारी तांडव-नृत्य . . हों : रावणके शिव-तांडव-स्तोत्रका यहां स्मरण होता है। नीचे दो श्लोक दिये जा रहे हैं :

जटा-कटाह-संभ्रम-भ्रमन्निलिम्प-निर्झरी–
विलोल-वीचि वल्लरी-विराजमान मूर्धनि।
धगद्-धगद्-धगज्ज्वलल्-ललाट-पट्ट-पावके
किशोर-चन्द्र-शेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम॥१॥

[जिनका सिर जटारूपी कटाहमें तेज गतिसे घूमनेवाली सुर-सरिता (गंगा) की चंचल तरंग-लताओंमें सुशोभित हो रहा है, ला-

टाग्नि धग धग धग जल रही है, सिर पर बालचंद्र विराजमान है, अुन (शिवजी) में मेरा निरंतर अनुराग बना रहे।]

जयत्वदभ्र-विभ्रम-भ्रमद्भुजगम-श्वसद्
विनिर्गमत्क्रम-स्फुरत्कराल-भाल-हव्यवाट्।
धिमिद् धिमिद् धिमिद् ध्वनन्-मृदंग-तुंग-मंगल-
ध्वनि-क्रम-प्रवर्तित-प्रचण्ड-ताण्डव शिव ॥१०॥

[सारा हिलते रहनेवाले भुजगके निश्वाससे जिनके भालकी कराल अग्नि अुत्तरोत्तर अधिक स्फुरित होती जाती है और धिमिद् धिमिद् धिमिद् जैसी मृदंगकी अुच्च मंगल ध्वनिकी तरह जो प्रचंड ताण्डव खेल रहे हैं अुन शिवजीकी जय हो।]

पृ० ६१ देवेन्द्र: लखपतका दक्षिण छोर। Dundra Head नारायणका ही सरोवर सिन्ध और कच्छके बीच स्थित सरोवर।

पृ० ६३ पुनरागमनाय च धार्मिक प्रसंगों पर पूजाके अंतमें देवताओंका विसर्जन करते समय अिस वचनका प्रयोग होता है। अिसका अर्थ है—'फिर आनेके लिअे।' भाव यह है कि विदाअी हमेशाके लिअे नहीं है बल्कि फिरसे मिलनेके लिअे ही है।

लेखककी अिस अिच्छाकी या संकल्पकी पूर्ति पचास सालके बाद किस प्रकार हुअी, अिसका वर्णन अगले प्रकरणमें देखिये।

१३ जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

पृ० ६४ अेतावान् अस्य महिमा० अितनी तो अुसकी महिमा है, पुरुष तो अिससे भी बड़ा है। यह वचन ऋग्वेदके पुरुषसूक्तसे लिया गया है।

पृ० ६६ अुदरी: छोटे पेटवाली। मंदोदरी, कृशोदरीकी तरह।

विश्वजित यज्ञ 'सर्ववेदस्', यह यज्ञ जिसमें जीवनकी सारी कमाअी देनी होती है। तुलना कीजिये :

स्थाने भवान् अेक-नराधिपः सन्
अकिंचनत्वं मखजं व्यनक्ति।
पर्याय-पीतस्य सुरैर् हिमांशोः
कला-क्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः ॥ रघुवंश, ५-१६

[आप चक्रवर्ती राजा होकर विश्वजित यज्ञके कारण अुतना हुआ अकिंचनत्व दर्शाते हैं, यह योग्य है। देवताओंके बारी बारीसे पीनेके कारण चन्द्रकी कलाका क्षय वृद्धिसे अधिक बधाओके योग्य है।]

पृ० ६७ अलकेश्वरः (अलका + ओश्वर) कुबेर।

प्रति-धनुषः आकाशमें अिन्द्रधनुषके कुछ अूपर दूसरा फीका धनुष अक्सर दिखाओी देता है, अुसको प्रति-धनुष कहा गया है। अुसके रंग मूल धनुषके ठीक अुलटे क्रममें होते हैं।

सुरधनुः देवोंका धनुष, 'अिन्द्रधनु'।

सुरधुनी: स्वर्गकी नदी। यहां केवल नदी।

किसी भी नदीको गंगा कहा जाता है अिसलिअे।

प्रतिक्षण हमारा पुण्य . . . है : याद कीजिये

क्षीणे पुण्ये मर्त्य-लोकं विशन्ति।

—गीता, ९-२१

पृ० ७० रोमें रोलां: (१८६६-१९४४) फ्रान्सके विश्व-विख्यात मानवतावादी साहित्यकार और कला-विवेचक। अुनका अुपन्यास 'जां क्रिस्तॉफ' अुनकी सर्वश्रेष्ठ कृति माना जाता है। सन् १९१६ में अुन्हें अिसके लिअे 'नोबल पारितोषिक' मिला था। अुन्होंने गांधीजी, रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्दकी जीवनियां लिखकर भारतकी विचारधारा पश्चिमके संसारको समभावपूर्वक समझायी थी। गांधीजी जब गोलमेज परिषद्में शरीक होनेके लिअे विलायत गये थे, तब लौटते समय अुनसे खास तौर पर मिले थे। अुनकी भारत-सम्बन्धी डायरी फ्रेन्च भाषामें प्रसिद्ध हुअी है। अुसमें भी गांधीजी, रवीन्द्रनाथ, श्री अरविंद आदिके सम्बन्धमें काफी बातें हैं। वे युद्धके विरोधी थे और मानते थे कि कला सर्व-लोक-गम्य होनी चाहिये।

पृ० ७१ मानवकृत कलाकृतिः सृष्टिमें जो सौन्दर्य होता है अुसको कला नहीं कहते। कला तो मानवीय ही होती है। प्रकृतिका सौन्दर्य कलाकी अुत्पत्तिका अेक प्रेरक कारण जरूर है।

'अल्पस्य हेतोः' ० अल्प हेतुके लिअे बड़ी वस्तुका नाश करनेकी अिच्छावाले। कवि कालिदासके 'रघुवंश' में यह वचन है। दिलीप जब

गायके बदलेमें अपना शरीर सिंहको देनेके लिअे तैयार होता है, तब अुसे समझानेके लिअे सिंह कहता है

> अेकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं,
> नवं वयः कान्तम् अिदं वपुश्च।
> अल्पस्य हेतोर् बहु हातुम् अिच्छन्
> विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्।। रघुवंश, २–४७

[संसारका अेक-छत्र राज्य, जवान अुम्र और यह सुंदर वपु (शरीर), थोड़ेके लिअे अितना बड़ा त्याग करनेके लिअे तुम तैयार हो गये हो! तुम मुझे विचारमूढ़ मालूम होते हो।]

१४. जोगका सुखा॰ प्रपात

पृ० ७२ राक्षसी दुष्टता याद कीजिये

> बुभुक्षितः किं न करोति पापम्
> क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति।

पृ० ७३ रावणकी तरह रावण पैदा हुआ तब महारव करता ही पैदा हुआ था। अिस परसे अुसके पिताने अुसका नाम रावण रख दिया था।

तपस्विनी गरमीका ताप सहती थी अिसलिअे।

सभाजीकी आँखें : १६८९ में सभाजीको गिरफ्तार करनेके बाद औरंगजेबने अुससे अिस्लाम स्वीकार करनेकी बात कही। किन्तु सभाजीने अिस्लाम स्वीकार करनेके बदले बादशाहका अपमान किया। अिसलिअे औरंगजेबने अुसकी जीभ कटवा डाली, आँखें निकलवा डालीं और अुसे मरवा डाला।

पृ० ७४ नदीमुखेनैव समुद्रमाविशत् : नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करना। महाकवि कालिदासने 'रघुवंश' में रघुके विद्याभ्यासका वर्णन करते समय लिखा है

> लिपेर् यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं
> नदीमुखेनैव समुद्रम् आविशत्।। रघु० ३–२८

[जिस प्रकार नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करते हैं, अुसी प्रकार लिपिके यथावत् ग्रहणके द्वारा अुसने साहित्यमें प्रवेश किया।]

अिस परसे गुजरात विद्यापीठके द्वारा चलनेवाले गुजरात महाविद्यालयकी द्वैमासिक पत्रिका 'साबरमती' के लिअे जब ध्यानमन्त्रकी आवश्यकता मालूम हुआी, तब श्री काकासाहबने 'नदीमुखेनैव समुद्रमाविशेत्' वचन दिया था। तबसे शायद अनके मनमें यह खयाल दृढ हो गया होगा कि यही वचन कालिदासका मूल वचन है। मत्रमें है 'आविशत्'=अुसने प्रवेश किया। अुन परसे काकासाहबने बना लिया आविशेत्=प्रवेश करना चाहिये।

पृ० ७५ कालपुरुष. कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्ध' कहनेवाला गीताका विराट-पुरुष।

'तत्रका परिदेवना'। अुसमें शोक क्या? याद कीजिये :

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्त-मध्यानि भारत।
अव्यक्त-निधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥ गीता, २-२८

पृ० ७७ अुष्मपा : गरम गरम पीनेवाले, पितर। अुस शावर नहीं, अपितु केवल अुष्णता पीकर रहनेवाले पितर और देवता। गीतामें यह शब्द आया है। ११-१२

१५ गुर्जर-माता साबरमती

पृ० ७९ वनस्पति-अुपासक श्री शिवशंकर : प्रसिद्ध गुजराती लेखक और अनुवादक स्व० श्री चद्रशंकर शुक्लके छोटे भाअी। आपने वनस्पतिका काफी गहरा अभ्यास किया है। हरिपुरा काग्रेसके समय आपके अुत्साह और परिश्रमसे वनस्पति-प्रदर्शनका आयोजन किया गया था। आपने 'गुजरातनी लोकमाताओ' नामक गुजराती पुस्तक लिखी है।

पृ० ८० ब्राह्मणोंने तप किया है : कहते है कि गौतम, वसिष्ठ, वामदेव, गौतम, गालव, गार्ग्य, भरद्वाज, अुद्दालक, जमदग्नि, कश्यप, जड़भरत, भृगु, जाबालि आदि ८८ सहस्र ऋषियोंने साबरमतीके किनारे तपश्चर्या की थी।

पृ० ८१ 'वौठा' का मेला : प्रतिवर्ष कार्तिकी पूर्णिमाको गुजरातमें धोल्का गावके पास वौठामें यह मेला लगता है, जिसमें करीब लाख-डेढ़ लाख लोग अिकट्ठे होते हैं। यहा पर मेरवो, माताम, बायक और सेठीगे

बनी हुआी वात्रक नदीका सारी हाथमती और साबरसे बनी हुआी साबरमतीके साथ संगम होता है।

साबरमतीके पुराने नाम : भिन्न भिन्न युगोंमें साबरमती भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारी गयी है। सत्ययुगमें अुसको कृतवती, त्रेतामें मणिकर्णिका और द्वापरमें विधुवती या चंदना या चंदनावती कहते थे। कलियुगमें अुसको साभ्रमती कहते हैं।

कश्यपगंगा : अेक कथा अिस प्रकार है :

किसी समय लगातार सात बार जब अकाल पड़ा तब ऋषियोंने कश्यपसे प्रार्थना की और अुसने शंकरजीकी आराधना की। शंकरजी साभ्रमती गंगाको लेकर अर्बुदारण्यमें आये, जहांसे अिसकी धारायें अरण्यमें होकर गुजरातकी ओर बहने लगीं। तब समुद्रने प्रकट होकर कश्यपसे प्रार्थना की : 'भगवन्, कुछ भी करके अिस नदीका पानी मेरे जलमें मिला दीजिये। क्योंकि अगस्त्य ऋषिने मेरा सारा पानी पीकर लघुशंकाके रूपमें वह पानी मुझे वापस दिया अिसलिअे वह अपवित्र हो गया है। अिस नदीके स्पर्शसे वह पावन हो जायगा।'

साबरमती दूसरी नदियोंके साथ समुद्रसे जा मिली और समुद्र पावन हुआ।

दूसरी कथा अिस प्रकार है कि पार्वतीके डरसे गंगा अिधर अुधर भटक रही थी — 'सा भ्रमति'। अुसे कश्यप अपनी जटाओंमें डालकर अर्बुदारण्यमें ले आये। यहां आनेके बाद अुन्होंने अपनी जटायें पछाड़ीं, अिसलिअे अुस गंगामें से सात प्रवाह बहने लगे। अुसका मुख्य प्रवाह साबरमती कहलाया और बाकीके छः प्रवाहोंको बौठाके पास मिलनेवाली छः नदियां बनीं।

कश्यप अुसको ले आये, अतः वह कश्यपगंगा कहलायी।

पृ० ८२ **दधीचिने तप किया** : वृत्रासुर यज्ञकुंडमें से पैदा हुआ और क्षण-क्षणमें अितना बढ़ने लगा कि देखते ही देखते अुसने समग्र लोकको ढंक दिया। अिससे भयभीत होकर देवताओंने अुसके विरुद्ध अपने सारे दिव्य शस्त्रास्त्रोंका अुपयोग किया। किन्तु सब व्यर्थ गये। अिसलिअे अिंद्र-सहित सब देवता आदिपुरुष अंतर्यामीकी शरणमें गये।

अन्तर्यामीने कहा, 'महर्षि दधीचिके पास तुम जाओ और विद्या, व्रत अेव तपसे बलवान बने हुअे अुनके शरीरकी माग करो। वे अिनकार नहीं करेंगे। फिर अुस शरीरकी हड्डियोंसे विश्वकर्मा तुम्हें अेक अुत्तम आयुध बनाकर देंगे। अुसीसे अिस वृत्रासुरका नाश हो सकेगा।'

साबरमती और चन्द्रभागाके संगमके पास दधीचि ऋषि तप करते थे। वहा जाकर देवताओंने अुनसे अुनके शरीरकी माग की। तब अुन्होंने जवाब दिया

"हे देवो, जो पुरुष अवश्य नाश होनेवाले अपने शरीरसे प्राणियों पर दया करके धर्म तथा यशको प्राप्त करना नहीं चाहता, वह स्थावर प्राणियों द्वारा भी शोक करने योग्य है। दूसरे प्राणियोंके दुःखसे दुःखी होना और दूसरे प्राणियोंके आनन्दसे आनन्द मनाना, यही धर्म अविनाशी है। अिसलिअे मैं अपने क्षणभंगुर तथा कौवे-कुत्तोंके भक्षरूप शरीरको छोड़ता हू। आप अुसे ग्रहण करें।"

यह निश्चय करके ऋषिने परब्रह्मके साथ आत्माको अेकाग्र किया और शरीरका त्याग किया।

जिसके बाद देवताओंने कामधेनुको बुलाया। वह ऋषिके शरीरको चाटने लगी। चाटते चाटते केवल हड्डिया रह गअीं। अिन हड्डियोंका वज्र बनाकर विश्वकर्माने अिन्द्रको दिया, जिसके द्वारा अिन्द्रने वृत्रासुरका नाश किया।

दधीचि ऋषिने जहा देहार्पण किया था, वहा कामधेनुका दूध गिरा था। अब वहा दूधेश्वर महादेवजीकी स्थापना हुअी।

खादीकी प्रवृत्ति : गांधीजीने स्वदेशी तथा खादीका प्रचार शुरू किया, अिसलिअे आश्रममें खादी-अुत्पादनका काम भी शुरू हुआ। आज भी यह प्रवृत्ति वहा चल रही है।

खेती और गोशाला : खेतीकी और गायोंकी नस्ल सुधारनेकी प्रवृत्ति आश्रममें शुरू हुअी थी। गोशाला तथा खेतीकी प्रवृत्ति विविध प्रयोगोंकी दृष्टिसे अब भी वहा चल रही है।

राष्ट्रीय शाला : आश्रमकी शाला। अिसमें श्री काकासाहब, नरहरि परीख, किशोरलाल मशरूवाला, विनोबा आदि शिक्षकों

प्रयोग करते थे। अिन प्रयोगोंकी बुनियाद पर ही बादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी।

आज 'बुनियादी तालीम' के नामसे पहचानी जानेवाली गांधीजीकी शिक्षा-पद्धतिकी नींव भी अिसी प्रवृत्तिको कह सकते हैं।

राष्ट्रीय त्योहार : देखिये 'नवजीवन' द्वारा प्रकाशित श्री काकासाहबकी 'जीवनका काव्य' नामक पुस्तक।

लोक-संगीत तथा शास्त्रीय संगीत : आश्रमवासी पंडित नारायण मोरेश्वर खरे संगीतशास्त्री थे। अुन्होंने गुजरातके कुछ लोकगीतोंकी स्वरलिपि तैयार करके 'लोक-संगीत' नामक पुस्तक लिखी थी। शास्त्रीय संगीतके प्रचारके लिअे अुन्होंने 'राष्ट्रीय संगीत मंडल' की भी स्थापना की थी। अहमदाबाद कांग्रेसके समय 'अखिल भारत संगीत परिषद्' का अधिवेशन भी यहीं हुआ था। अुसमें गांधीजीकी प्रेरणा तथा पंडित खरेके प्रयत्न मुख्य थे।

'नवजीवन' तथा 'यंग अिण्डिया' : सन् १९१९ में जब गांधीजीने रौलेट बिलके विरुद्ध आंदोलन चलाया, तब अुन्हें अपने विचारोंके प्रचारके लिअे अखबारोंकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री अिन्दुलाल याज्ञिक तथा अुनके मित्र गुजरातीमें 'नवजीवन अने सत्य' नामक मासिक चला रहे थे और अुसके द्वारा 'होमरूल' का प्रचार करते थे। गांधीजीने यही पत्र अपने हाथमें ले लिया और अुसको साप्ताहिक बनाकर 'नव-जीवन' के नामसे चलाया। यह पत्र गुजरातीमें चलता था।

फिर, सारे देशमें प्रचार करनेके लिअे अेक अंग्रेजी अखबारकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री शंकरलाल बैंकर, जमनादास द्वारकादास आदि 'यंग अिण्डिया' नामक अेक अखबार चलाते थे। गांधीजीने अिस पत्रको भी अपने हाथमें ले लिया।

दोनों साप्ताहिक सन् १९३३ तक चले। फिर हरिजन-प्रवृत्तिको चलानेके लिअे गांधीजीने जेलसे पत्र शुरू किये, जिनके नाम थे: 'हरिजन' (अंग्रेजी), 'हरिजनबन्धु' (गुजराती) और 'हरिजनसेवक' (हिन्दुस्तानी)। सन् ४२ से ४५ तकका काल यदि छोड़ दें, तो ये अखबार गांधीजीकी मृत्यु तक अुनके विचारोंके वाहन रहे।

गांधीजीकी मृत्युके बाद ये साप्ताहिक स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाने चलाये। अुनकी मृत्युके बाद श्री मगनभाओ देसाओ अुनके सम्पादक रहे। १९५६ के मार्चसे ये हमेशाके लिअे बंद कर दिये गये।

सत्याग्रह : चंपारन, खेडा, नागपुर, बोरसद, बारडोली आदि।

मिल-मालिकोंके साथका मजदूरोंका झगड़ा : यह झगड़ा सन् १९१८ में अहमदाबादके मिल-मालिक तथा मजदूरोंके बीच हुआ था। मजदूरोंका पक्ष न्यायका था अिसलिअे गांधीजीने अुनका पक्ष लिया था। विशेष जानकारीके लिअे देखिये नवजीवन द्वारा प्रकाशित श्री महादेवभाओ देसाओकी हिन्दी पुस्तक 'अेक धर्मयुद्ध'।

दांडीकूच : लाहौर कांग्रेसमें 'पूर्ण स्वराज्य' का प्रस्ताव पास होनेके बाद अुसको अमलमें लानेके लिअे गांधीजीने नमकका कानून तोड़नेका निश्चय किया था। भारतके स्वातंत्र्य-संग्रामके अितिहासका यह अेक अुज्ज्वल प्रकरण है।

कूचके लिअे अपने ७९ साथियोंके साथ जब गांधीजी सत्याग्रहाश्रम साबरमतीसे निकले, तब अुन्होंने प्रतिज्ञा ली थी कि 'जब तक स्वराज्य नहीं मिलेगा, मैं आश्रममें वापस नहीं लौटूंगा।' अिस कूचने सारे देशमें बिजलीकी गतिसे नवजीवन और नअी शक्तिका संचार किया था।

गांधीजीके वर्धा और सेवाग्राम जानेका यह भी अेक कारण था।

पृ० ८३ जलियांवाला बाग : रौलेट अेक्टके खिलाफ गांधीजीने जब आन्दोलन छेड़ा, तब अुन्होंने ६ अप्रैल, १९१९ के दिन सारे देशमें हड़ताल करने और अुपवास करनेका आदेश दिया था। सारे देशने अुसका अपूर्व अुत्साहके साथ पालन भी किया था। किन्तु तीन दिनके बाद, १० अप्रैल १९१९ के रोज, अमृतसरके डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटने वहांके कांग्रेसी नेता डॉ० किचलू और सत्यपालजीको गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान पर भेज दिया। अिससे शहरमें हुल्लड़ हुआ और शहरको फौजके हाथमें सौंप दिया गया। पंजाबमें अन्यत्र भी अैसी ही घटनायें घटीं, जिनमें जानमालको बड़ी हानि पहुंची। अिसके सिवा

गाधीजीकी गिरफ्तारीके कारण देशके अन्य भागोंमें भी हुल्लड हुअे, परन्तु वहा शांति हो गअी। १३ अप्रैल हिन्दुओंका वर्षारंभका दिन था। अुस दिन अमृतसरके जलियावाला बागमें आम सभा होनेकी घोषणा की गअी थी। यह जगह अैसी थी जिसके चारों ओर मकान ही मकान थे और बागके अन्दर जानेके लिअे केवल अेक ही सकरा रास्ता था। वहा शामके समय बीस हजार स्त्री पुरुष और बच्चे अिकट्ठे हुअे थे। अितनेमें जनरल डायर १०० देशी और ५० विदेशी फौजी सिपाहियोंको लेकर आया और दो-तीन मिनटके अदर ही अुसने गोली चलानेका हुक्म दिया। स्वय डायरके कथनके अनुसार १६०० गोलिया छोडी गअी थी और जब गोलिया खतम हो गअीं तभी गोलिया चलाना बद किया गया था। करीब ४०० लोग मारे गये और दो हजार घायल हुअे थे।

गुजरात विद्यापीठ : १९२० में जब असहयोगका आदोलन शुरू हुआ, तब गाधीजीने देशके विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूल-कॉलेज छोडनेका आदेश दिया था। अिस आदेशका पालन करके जिन विद्यार्थियोंने सरकारी शिक्षण-सस्थाओंका बहिष्कार कर दिया, अुनमें से कुछ विद्यार्थी रचनात्मक कार्योंमें लग गये। किन्तु बाकी विद्यार्थियोंके लिअे शिक्षाका स्वतत्र प्रबध करना आवश्यक था। अिनके लिअे देशभरमें राष्ट्रीय सस्थायें स्थापित हुअी — जैसे बिहारमें बिहार विद्यापीठ, काशीमें काशी विद्यापीठ, पूनामें तिलक विद्यापीठ वगैरा। गुजरातके गुजरात विद्यापीठका भी अिसीमें समावेश होता है। अिसकी स्थापना १९२० में हुअी थी। अिसके शिक्षकों और विद्यार्थियोंने गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें तथा साहित्यिक और सास्कृतिक प्रवृत्तियोंमें बडे महत्त्वका भाग लिया है। आज भी यह सस्था शिक्षा और साहित्य-प्रकाशनका कार्य कर रही है।

१६. अभयान्वयी नर्मदा

पृ० ८४ अभयान्वयी भारतके दक्षिण और अुत्तरके दोनों विभागोंको जोडनेवाली।

अमरकंटक तालाव : विलासपुरके पासके मेकल, मेकल या माअिकाल पर्वतका अेक हिस्सा अमरकंटकके नामसे मशहूर है। अुसकी तलहटीमें जो तालाव है अुसको भी अमरकंटक ही कहते हैं। यहींसे नर्मदा और शोणका अुद्गम हुआ है। अिसी परसे नर्मदाको मेकल-कन्यका भी कहते हैं। अमरकंटक श्राद्धके लिअे अुत्तम स्थान माना जाता है।

पृ० ८५ विन्ध्य : मशहूर पर्वतश्रेणी। अगस्ति ऋषि अिसीको पार करके दक्षिणकी ओर जाकर बसे थे। अिसके अूपर विन्दुवासिनीका प्रख्यात मंदिर है। अिसके थोड़े आगे अष्टभुजा योगमायाका मंदिर है, जो शक्तिका पीठ माना जाता है।

सातपुड़ा : नर्मदा और ताप्तीके बीच सात पुड़ों (folds) की पर्वतश्रेणी। ताप्ती यहींसे निकलती है।

भृगुकच्छ : आजकलका भड़ौच। कच्छ = नदी या समुद्रका किनारा।

पृ० ८६ आदिम निवासी : अिस प्रदेशके मूल निवासी भील आदि लोग, जो आज भी गरीबी और अज्ञानमें डूबे हुअे हैं।

पृ० ८७ सबिन्दु सिन्धु ० ये नर्मदाष्टककी पंक्तियां हैं। यह आद्य शंकराचार्यका लिखा माना जाता है। अिसका प्रारंभ अिस प्रकार है :

> सबिन्दु-सिन्धु-सुस्खलत्-तरंग-भंग-रंजितम्
> द्विषत्सु पापजातजातकारिवारि-संयुतम्।
> कृतान्तदूत-काल-भूत-भीतिहारि-वर्मदे
> त्वदीय पादपंकजं नमामि देवि नर्मदे॥

पृ० ८८ गतं तदैव ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है :

> गतं तदैव मे भयं त्वदम्बु वीक्षितं यदा
> मृकण्डसूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा।
> पुनर्भवाब्धिजन्मजं भवाब्धिदुःखवर्मदे
> त्वदीय पादपंकजं नमामि देवि नर्मदे॥४॥

पंचगौड़ : सरस्वतीके किनारेका प्रदेश, कनौज, अुत्कल, मिथिला और गौड़—यानी बंगालसे लेकर भुवनेश्वर तकका प्रदेश। विन्ध्यके

अुत्तरमें स्थित अिन पांच प्रदेशोंमें रहनेवाले ब्राह्मण। अुन प्रदेशों परसे वे अनुक्रमसे सारस्वत, कान्यकुब्ज, अुत्कल, मैथिल और गौड कहलाते हैं।

पंचद्रविड : विन्ध्याचलके दक्षिणमें रहनेवाले पांच जातिके ब्राह्मण महाराष्ट्र, तैलंग कर्णाट, गुर्जर और द्रविड।

विक्रम संवत् : विक्रमादित्यके नामसे चलनेवाला संवत्। यह ओीस्वी सन्से ५६ साल पूर्व शुरू हुआ था।

शालिवाहन शक : शालि = सिंह। सिंह जिसका वाहन है वह। दंतकथा अैसी है कि अिस नामका अेक मशहूर राजा बचपनमें सिंहके आकारके अेक यक्षको वाहन बनाकर सर्वत्र घूमता था। अिसीलिअे वह शालिवाहन कहलाया। अुसके नामसे चलनेवाली वर्षगणनाको 'शक' कहते हैं। अिसके अनुसार वर्षका आरंभ चैत्र माससे शुरू होता है। विक्रम संवत्से वह १३४–३५ वर्ष और ओीस्वी सन्से ७८ वर्ष पीछे है। भारत-सरकारने अब अिसको अपनाया है।

पृ० ९० कबीरवड : भडौचके पूर्वमें शुक्लतीर्थके पास नर्मदाके प्रवाहके बीचमें अेक टापू है, वहां यह प्रसिद्ध वड है। कहते हैं कि कबीरने दातुन करके जो टुकडा फेंक दिया था अुससे यह वटवृक्ष पैदा हुआ।

१७ सध्याकाश

पृ० ९३ रसवती पृथ्वी और निःशब्द आकाश : यहां जान-बूझकर न्यायशास्त्रकी व्याख्या तोड दी गयी है। मूल व्याख्या है: 'गंधवती पृथ्वी' और 'शब्दगुणम् आकाशम्।'

वनेचर : संस्कृतमें 'वनचर' कहते हैं जंगलमें रहने घूमनेवाले जंगली पशुओंको और 'वनेचर' कहते हैं जंगलमें रहने-घूमनेवाले मनुष्योंको। यह भेद यहां कायम रखा गया है।

सुर-असुरोंके गुरु : बृहस्पति और शुक्राचार्य — यहां आकाशके गुरु और शुक्र नामक ग्रह।

१८. रेणुका का शाप

पृ० ९५ अंतःस्रोता : [अन्त (अंदर) + स्रोता (प्रवाहवाली)] जिसका प्रवाह भूमिके अंदर है ऐसी नदी।

राणकदेवीका शाप : ऐक दंतकथा कहती है कि गुजरातके राजा सिद्धराज जयसिंहने सोरठ पर चढ़ाओ की और जूनागढ़को घेर लिया। वहांके राणा रा' खेंगारके भानजे ही विपक्षीसे जा मिले। परिणामस्वरूप जूनागढ़का पतन हुआ, खेंगार परास्त हुआ और मारा गया। सिद्धराजने अुसकी रानी राणकदेवी पर अधिकार कर लिया। रानीको लेकर वह पाटण जा रहा था। बीचमें वढवाणके पास रानी सती हो गअी। अितिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन नहीं है। सिद्धराजने खेंगारको हरा कर कैद कर लिया था, अितना तो निश्चित कहा जा सकता है। यह संभव है कि बादमें अुसने सिद्धराजकी सत्ता स्वीकार की हो अिसलिअे सिद्धराजने अुसे छोड़ दिया हो और सोरठकी ओर आते समय वढवाणके पास किसी कारणसे अुसकी मौत हो गअी हो और वहां अुसकी रानी सती हुअी हो।

यहां 'राणक' का अर्थ रेणुका नहीं है। 'गयाकी फल्गु' नामक प्रकरणमें 'सीताका शाप' और 'सिकताका शाप' से अिसकी तुलना कीजिये।

योमा : ब्रह्मी भाषामें पहाड़को 'योमा' कहते हैं। जैसे, आराकान योमा, पेगु योमा।

अलस-लुलित : [अलस (आलस्यसे भरा हुआ) + लुलित (थका हुआ) जब 'ललित' पाठ हो तब 'सुन्दर'] धीर गतिसे और थकी-मांदी चालसे चलनेवाली। यह शब्द 'अुत्तररामचरित' के अंक १, श्लोक २८ में आया है :

> अलस-लुलित-मुग्धानि अध्व-संजात-खेदात्
> अशिथिल-परिरम्भैः दत्त-संवाहनानि।
> परिमृदित-मृणाली-दुर्बलानि अंगकानि
> त्वम् अुरसि मम कृत्वा यत्र निद्राम् अवाप्ता॥

अन्त्यजोंका शाप लेकर : अुन्हें पानीकी सुविधा न देकर।

पृ० ९६ खंडिता : काव्यशास्त्रमें बताओ गयी मुख्य आठ नायिकाओंमें से अेक। 'ओर्ष्याकषायिता' — ओर्ष्यासे भरी हुओ स्त्री।

यहां खंडिताका यह अर्थ भी है जिसका प्रवाह खंडित हुआ हो।

१९ अंबा-अंबिका

पृ० ९७ अंबा-अंबिका : महाभारतमें यह कथा है भीष्म किसी समय काशीराजकी कन्याओंके स्वयंवरमें से अुनकी तीनों पुत्रियोंको — अंबा, अंबिका और अंबालिकाको अपहरण कर लाये। जिसके लिअे जो युद्ध हुआ अुसमें अुन्होंने शाल्वराजको परास्त किया। किन्तु जब कन्याओंका राजा विचित्रवीर्यके साथ विवाह करनेकी बात निकली, तब अिन कन्याओंमें से केवल अेकने — बडी कन्या अंबाने — कहा, 'मैं तो मनसे शाल्वराजसे विवाह कर चुकी हूं।' अतः अुसे शाल्वराजके यहां भेज दिया गया। किन्तु शाल्वने अुसे स्वीकार नहीं किया, अिसलिअे अुसने भीष्मके गुरु परशुरामकी शरण ली। किन्तु गुरुके कहने पर भी भीष्म अंबाको स्वीकार करनेके लिअे तैयार नहीं हुअे। अिससे गुरु-शिष्यके बीच दारुण युद्ध छिडा जिसमें गुरु परास्त हुअे और अंबाने वनमें जाकर भीष्मवधके संकल्पसे तपस्या करके अग्नि-प्रवेश किया और शरीर छोडा। वही बादमें द्रुपद राजाके यहां शिखंडीके रूपमें पैदा हुओ और भीष्मवधका कारण बनी।

यहां लेखकने पौराणिक कथामें मनमाना फेरफार किया है।

राजा कर्णके दो आंसू : गुजरातके वाघेला वंशका आखिरी राजपूत राजा कर्णदेव अत्यंत क्रोधी और विलासी था। अुसने अपने मंत्री माधवके भाओ केशवको मरवा कर अुसकी पत्नीको अपने अंतःपुरमें रख लिया था। अपमान और अत्याचारसे क्रुद्ध होकर माधवने दिल्ली जाकर अलाअुद्दीनको गुजरात पर चढाओ करनेके लिअे प्रेरित किया। अुसने अपने दो सरदारोंको गुजरात पर चढाओ करनेको लिअे भेजा। अुन्होंने गुजरातको जीता, राजधानी पाटणको लूटा और राजा कर्णकी रानियों और कन्याको पकड कर दिल्ली पहुंचा दिया। कर्ण देवगढके

राजाके आश्रयमें गया। कहते हैं कि अुसने अपने अंतिम दिन अज्ञातवासमें, आबूके जंगलोंमें अिन नदियोंके आसपासके प्रदेशमें, भटकवर घोर-विह्वल दशामें बिताये थे। यहां अुसीका सूचन है।

गुजराती भाषाका पहला अुपन्यास सन् १८६७ में अिसी वृत्तान्तके आधार पर लिखा गया था।

२०. लावण्यफला लूनी

पृ० ९८ लावण्यफला: लवण = नमक, लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध होनेसे यह नाम दिया गया है।

२१. अुचळ्ळीका प्रपात

पृ० १०० 'नागमोड़ी': यह मराठी शब्द है। अर्थ है नागकी तरह टेढ़ामेढ़ा, सर्प-सदृश।

पृ० १०१ 'कोयता': हंसिया।

पृ० १०२ घनघोर: [घन = गाढ़ा + घोर = भयावना] गाढ़ा और भयावना।

पृ० १०४ अितने शुभ्र पानीमें: नदीके नाम परसे यह सूझा है।

पदक्रम: तुलना कीजिये

भयो त्रिविक्रम, लियो पदक्रम
अेक मही पर, दीजेको अंबर, वंजो प्रभु
त्रीजेको गिर पर।

जीवनावतार: पानीका नीचे अुतरना।

पृ० १०५ कटक: संस्कृतमें 'कटक' का अर्थ है कंगण। अिस परसे आभूषण, गहनेका अर्थ करके श्लेष बनाया गया है।

सोनेके ढक्कनसे: तुलना कीजिये.

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। ओशावास्य, १५

अिस जगतको.... ढकना ही चाहिये: मूल मंत्र अिस प्रकार है:

ओशावास्यम् अिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

हरी नीलिमा: नीलका अर्थ काला, आसमानी, हरा, चमकीला आदि किया जाता है। यहांकी नीलिमा हरे रंगकी थी। अजीर या मखमलमें जिस प्रकार दो रंगोंकी छटायें दिखाओ देती हैं, अुसी तरहकी छटायें पानीमें भी कओ बार दिखाओ देती हैं—अैसा भी यहां सूचन है।

पृ० १०६ युयोधि अस्मत्० यह ओशावास्य अुपनिषद्का अंतिम मंत्र है।

२२. गोकर्णकी यात्रा

पृ० १०८ कपिलाषष्ठी: भादो वदी छठ, हस्त नक्षत्र, व्यतिपात और मंगलवार—अिनके योगका दिन। यह अेक दुर्लभ दिन है, जो हर ६० सालके बाद आता है।

पृ० ११० कृतार्थ कर दिया: नहला दिया।

२३. भरतकी आखोंसे

पृ० ११७ अद्य मे सफला० आज मेरी यात्रा सफल हुआी। मैं पानीके प्रसादसे धन्य हुआ। मूलमें 'त्वत् प्रसादत' था, जो यहां बदल दिया गया है।

पृ० ११८ श्री रामचन्द्रजीके प्रबंधक: रामके बदले भरत अयोध्याका राज्य संभालते थे अिसलिअे। 'भरणात् भरत'।

२४. वेरूळगांव—सीताका स्नान-स्थान

पृ० ११९ वेरूळग्रामका हरा कुंड: अंग्रेजीमें वेरूळको 'अिलोरा' कहते हैं। अिसलिअे वह अिसी नामसे अधिक प्रख्यात है। यह गांव शिवाजीके पुरखोंका है। यहां अेक सुन्दर कुंड है। अिस कुंडके विषयमें अैसी दंतकथा प्रचलित है कि अिलिचपुरके येलु नामक राजाको कोओ अैसा रोग हुआ था, जिसके कारण अुसके शरीरमें कीड़े पड़ गये थे। कओ अुपाय किये गये, किन्तु सब व्यर्थ गये। रोग वैसा ही रहा। अंतमें अुसे अिस कुंडके बारेमें आकाशवाणी सुनायी दी "तुम जाकर अुस तीर्थमें स्नान करो। तुम्हारा शरीर अच्छा हो जायगा।"

राजाने स्नान किया और अुसका रोग मिट गया!

कहते हैं कि अुसी राजाने बादमें वेरूळकी गुफायें खुदवानेका काम शुरू किया। जाडोंमें हरी काओीके कारण कुंडका पानी भी हरा मालूम होता है। कुंडके चारों ओर सुन्दर सीढ़ियां बनी हुअी हैं।

पृ० १२० प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताका पक्षपात: सीताके राजमहलमें रहकर राम जब वनवास जानेकी बातें करते हैं, तब सीताजी भी वनमें जानेके लिअे और वहांके कष्ट सहनेके लिअे तैयार हो जाती हैं। वे कहती हैं

फलमूलाशना नित्यं भविष्यामि न संशयः।
न ते दुःखं करिष्यामि निवसन्ती त्वया सह ॥१६॥
अग्रतस्ते गमिष्यामि भोक्ष्ये भुक्तवति त्वयि।
अिच्छामि परतः शैलान्पल्वलानि सरांसि च ॥१७॥
द्रष्टुं सर्वत्र निर्भीता त्वया नाथेन धीमता।
हंसकारण्डवाकीर्णाः पद्मिनीः साधुपुष्पिताः ॥१८॥
अिच्छेयं सुखिनी द्रष्टुं त्वया वीरेण संगता।
अभिषेकं करिष्यामि तासु नित्यमनुव्रता ॥१९॥
सह त्वया विशालाक्ष रंस्ये परमनंदिनी।
अेवं वर्षसहस्राणि शतं वापि त्वया सह ॥२०॥

अयोध्याकांड — २७: १६–२०

[मैं हमेशा फलमूल खाकर ही रहूंगी। आपके साथमें रहकर मैं आपको कभी कष्ट नहीं दूंगी। मैं आपके आगे-आगे चलूंगी और आपके खानेके बाद ही खाअूंगी। आपके साथ निर्भयतासे सर्वत्र घूमकर पर्वत, सर और सरोवरोंको देखनेकी मेरी बड़ी अिच्छा है। आपके साथ रहकर हंस और कारण्डवोंसे भरे हुअे सुन्दर पुष्पोंवाले सरोवर देखनेकी और आनंद मनानेकी मेरी अिच्छा है। अुन पद्मपूर्ण सरोवरोंमें मैं स्नान करूंगी और आपके साथ अुनमें रोज खेलूंगी। अिस तरहके सैकड़ों नहीं, बल्कि हजारों वर्ष भी मुझे आपके साथ क्षणके समान मालूम होंगे।]

'अुत्तररामचरित' में चित्र-दर्शनके बाद सीता अपना दोहद कहती है: 'मन करता है कि प्रसन्न और गंभीर वनराजियोंमें विहार

करूं और जिसका जल पावनकारी, आनन्ददायक और शीतल है उन भगवती भागीरथीमें स्नान करूं।'

दूसरे अंकमें राम जनस्थान आदि प्रदेशोंको देखकर कहते हैं, 'सचमुच वैदेहीको वन पसन्द थे। ये वे ही अरण्य हैं! इनसे अधिक भयानक और क्या होंगे?'

तीसरे अंकमें भी सीताके पाले हुए हाथी, मोर, कदंब और हिरनोंका वर्णन आता है। देखिये

सीतादध्या स्वकर-कलितैः सल्लकीपल्लवाग्रैर्-
अग्रे लोलः करि-कलभको यः पुरा वर्धिताऽभूत्।
वध्वा सार्धं पयसि विहरन्सोऽयमन्येन दर्पाद्
उद्दामेन द्विरदपतिना सन्निपत्याभियुक्तः ॥ ६ ॥

अनुदिवसम् अवर्धयत् प्रिया ते
यमचिरनिर्गतमुग्धलाञ्छवर्हम्।
मणिमुकुट शिवोच्छ्रित कदम्बे
नदति स एष वधूसखः शिखण्डी ॥१८॥

भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षुः
प्रचलित-चटुल-भ्रू-ताण्डवैर्मण्डयन्त्या।
कर-किसलय-तालैर्मुग्धया नर्त्यमानं
सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि ॥१९॥

कतिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः
प्रियतमया परिवर्धितो य आसीत्।
स्मरति गिरिमयूर एष देव्या
स्वजन इवात्र यतः प्रमोदमेति ॥२०॥

नीरन्ध्र-बाल-कदली-वन-मध्यवर्ति
कान्तासखस्य शयनीय-शिलातलं ते।
अत्र स्थिता तृणमदाद् बहुशो यदेभ्यः
सीता ततो हरिणकैर् न विमुच्यते स्म ॥२१॥

करकमल-वितीर्णैर् अम्बु-नीवार-शष्पैस्
तरु-शकुनि-कुरंगान् मैथिली यान् अपुष्यत्।
भवति मम विकारस् तेषु दृष्टेषु कोऽपि।
द्रव अिव हृदयस्य प्रस्तरोद्भेदयोग्यः ॥२५॥

सुवर्णमय बना देती है पतझड़की समृद्धि और अुसका पीला रंग, दोनोंका यहां सूचन है।

पृ० १२२. जीवनमय — 'जीवन' का अर्थ पानी भी होता है।

पृ० १२३ रामरक्षा-स्तोत्र बुध कौशिक ऋषि द्वारा रचित अत्यन्त मनोहर और लोकप्रिय स्तोत्र।

शिरो मे राघव पातु भालं दशरथात्मज ॥४॥
कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रिय श्रुती।
घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सल ॥५॥
जिह्वां विद्यानिधि पातु कण्ठं भरतवन्दित।
स्कन्धौ दिव्यायुध पातु भुजौ भग्नेशकार्मुक ॥६॥
करौ सीतापति पातु, हृदयं जामदग्न्यजित्।
मध्यं पातु खरध्वंसी, नाभिं जाम्बवदाश्रय ॥७॥
सुग्रीवेश कटि पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभु।
ऊरू रघूत्तम पातु, रक्षःकुल-विनाशकृत् ॥८॥
जानुनी सेतुकृत् पातु, जङ्घे दशमुखान्तकः।
पादौ विभीषणश्रीद, पातु रामोऽखिलं वपुः ॥९॥

२५. हृद्य नदी घटप्रभा

पृ० १२४ हमारी ओरके: दक्षिण महाराष्ट्रकी रहनेवाले।
बालकोंका: किसानोंका।

२६. कश्मीरकी दूधगंगा

सरोवरको तोड़कर: "आज जहां कश्मीरका रमणीय प्रदेश है, वहां पुराणकालमें सतीसर नामक अेक सुंदर सरोवर था, जो हर-मुख पर्वत और पीरपंजालके बीच फैला हुआ था। स्वयं पार्वती जिस सरोवरमें विहार करती थीं। किन्तु बादमें अुसमें [illegible]

घुसे। अिसलिअे देवताओंने सतीसरका नाश करनेकी बात सोची। भगवान कश्यपने वराहकी अुपासना की। वराहने संतुष्ट होकर अपने हंसियेसे पहाड़में घाटी बना दी और सतीसर का पानी 'वराहमूलम्' की घाटीमें से वितस्ता नदीके रूपमें बहने लगा। वितस्ता ही झेलम है और 'वराहमूलम्' आजका बारामुल्ला है।"

—लेखककी गुजराती पुस्तक 'जीवननो आनंद' में से।

अुपत्यका . घाटी। (अिसी प्रकार अधित्यका का अर्थ है अुच्च प्रदेश — tableland।)

पृ० १२५ सती-कन्या: सतीके प्रदेशमें पैदा हुअी अिसलिअे।

२७ स्वर्धुनी वितस्ता

पृ० १२६ 'संसारमें अगर . . यहीं है' मूल फारसी पंक्तियां अिस प्रकार हैं

अगर फिर्दौस बररुअे जमीनस्त
हमीनस्तो, हमीनस्तो, हमीनस्त।

पृ० १२७ अुसके किनारे अेक बड़ी वैभवशाली संस्कृति . . . हुआ: अनंतपुरके समीप अेक पहाड़ीके नीचे अेक प्राचीन शहरके अवशेष दबे हुअे थे, जो अभी अभी खोदे गये हैं।

चिनार: ये महावृक्ष सिर्फ कश्मीरमें ही होते हैं।

बुतशिकन . [बुत = मूर्ति + शिकन = तोड़नेवाला] मूर्तिभंजक।

गाजी: धर्मके लिअे युद्ध करनेवाला मुसल्मान। यह शब्द अरबी है।

पृ० १२८ सर्वतः संप्लुतोदके: चारों ओर पानीकी बाढ़ आयी हो तब। गीता, २–४६

सूअरके दांतके जैसा: मालूम होता है 'वराहमूलम्' परसे यह अुपमा सूझी है।

पृ० १२९ निर्माल्य: देवताको चढ़ानेके बाद जो फेंक दिये जाते हैं।

पृ० १३० स्वर्धुनी: [स्वर् = स्वर्ग + धुनी = नदी] स्वर्गकी नदी।

२८. सेवाग्रता रायो

पृ० १३१ स्वामी रामतीर्थ: आधुनिक भारतके निर्माणमें स्वामी रामतीर्थका महत्त्वका हाथ है। श्री काकासाहबने मराठीमें स्वामीजीकी जीवनी लिखी थी तथा अुनके कुछ लेखोंका अनुवाद करके मराठीमें *अेक संग्रह प्रकाशित किया था। यह अुनकी पहली साहित्य-कृति थी।* अिसीसे काकासाहबके लेखक-जीवनका आजसे तीस वर्ष पहले आरंभ हुआ था।

अर्जुनदेव: (१५६३–१६०६) सिक्खोंके पांचवें गुरु। आदिग्रंथके रचयिता। अिसमें अुन्होंने पहलेके गुरुओंकी और अन्य सन्तोंकी वाणी संगृहीत की है। कहते हैं कि अुनके दुश्मनोंने अकबर बादशाहके पास जाकर अुनके खिलाफ शिकायत की थी कि अर्जुनदेवने अिस ग्रंथमें हिन्दूधर्म तथा अिस्लामकी निन्दा की है। किन्तु अकबरने अुनका ग्रंथ देखकर *अुनको छोड दिया और अुनका बडा सम्मान किया।* जहांगीरके समयमें अुनके दुश्मनोंने फिरसे शिकायत की। जहांगीर अपने लडके खुसरोको कैद करना चाहता था। खुसरो भागता हुआ अर्जुनदेवके पास आश्रय मांगने आया। अर्जुनदेवने अुसको आश्रय दिया। बादशाहने अिसको राजद्रोह मानकर अुन पर दो लाख रुपयोंका जुर्माना किया। अर्जुनदेवने न खुद जुर्माना दिया, न दूसरोंको देने दिया। अिसलिअे बादशाहने जेलमें अुन पर बहुत अत्याचार करवाये और आखिर अुनकी हत्या करवा डाली। यों मानकर कि तलवारके बिना अपना पंथ कायम रहना असंभव है, अुन्होंने अपने पुत्रको सशस्त्र बन कर गद्दी पर बैठनेका और पर्याप्त फौज रखनेका आदेश भेज दिया था। अिससे सिक्खोंके अितिहासको नयी ही दिशा प्राप्त हुअी।

रणजितसिंह: (१७८०–१८३९) सिक्खोंके राजा। अहमदशाह अब्दालीके बाद पंजाबका सूबा फिरसे सिक्खोंके हाथमें आया था। किन्तु अुसके छोटे-छोटे टुकडे हो गये और वे आपसमें लडने लगे। रणजितसिंह तेरह सालकी अुम्रमें गद्दी पर बैठे। और १९ सालकी अुम्रमें अुन्होंने सिक्खोंके सभी राज्योंका आधिपत्य अपने हाथमें ले लिया।

अंग्रेज भी अुनसे डरते थे। जब सन् १८२३ में अुन्होंने पेशावर प्रान्त जीत लिया, तब अुसे वापस दिलवानेके लिअे दोस्त महमदने अंग्रेजोंसे बहुत कहा। किन्तु अंग्रेजोंने कुछ भी नहीं किया। ४० साल तक सतत परिश्रम करके रणजितसिंहने सिक्खोंमें फौजी ताकत पैदा की। कहते हैं कि जब वे अटक नदीको पार करना चाहते थे, तब अुनके गुरुने अुनसे कहा कि हिन्दुओंको अटक पार करनेकी आज्ञा नहीं है। अुन्होंने जवाबमें कहा

सर्व भूमि गोपालकी तामें अटक कहा?
जाके मनमें अटक है वो ही अटक रहा।

और सारा अफगानिस्तान जीत लिया।

पृ० १३३ अप्सरा. [अप = पानी + सृ = आगे जाना = पानीमें तैरनेवाली, विहार करनेवाली।] गंधर्वोंकी स्त्री। अप्सराओंको पानीमें खेलना बहुत पसन्द है अिसलिअे अुनको यह नाम दिया गया है। रामायणमें अुनकी अुत्पत्तिके बारेमें अिस प्रकार लिखा है

अप्सु निर्मथनाद् अेव रसात् तस्माद वरस्त्रिय।
अुत्पेतुर्मनुजश्रेष्ठ! तस्माद् अप्सरसोऽभवन्॥

परोपकाराय० यह शरीर परोपकारके लिअे है।

२९ स्तन्यदायिनी चिनाब

पृ० १३५ मेरी जीवन-स्मृति: सन् १८९१-९२ में।

३० जम्मूकी तवी अथवा तावी

पृ० १३६ विग्रह: युद्ध। अलग करना।

संधि: सुलह। मिलाना।

राजनीतिमें कार्यसिद्धिके छह मार्ग बताये गये हैं

(१) संधि (२) विग्रह, (३) यान (चढ़ाओी), (४) स्थान अथवा आसन (मुकाम करना), (५) संश्रय (आश्रय लेना), (६) द्वैध या द्वैधीभाव–फूट डालना।

'आत्मरति, आत्मक्रीड़' ० श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञका वर्णन करते हुअे मुंडकोपनिषद्‌में कहा गया है

आत्मक्रीड आत्मरति क्रियावान् अेष ब्रह्मविदां वरिष्ठ ॥

मुण्डक, ३-१-४

आत्मामें खेलनेवाला, आत्मामें रमनेवाला, क्रियावान पुरुष ब्रह्मज्ञोंमें श्रेष्ठ है।

आत्मन्येव० देखिये गीता, ३-१७

यस्त्वात्मरतिरेव स्यात् आत्मतृप्तश्च मानव ।
आत्मन्येव च संतुष्ट तस्य कार्यं न विद्यते ॥

[जो मनुष्य आत्मामें ही रमा रहता है, जो अुसीसे तृप्त रहता है और अुसीमें संतोष मानता है, अुसे कुछ करनेको बाकी नहीं रहता।]

३१. सिंधुका विषाद

पृ० १३७ मानदण्ड: नापनेका दण्ड। महाकवि कालिदासके 'कुमारसंभव' के पहले श्लोकमें हिमालयके लिअे अिस शब्दका प्रयोग किया गया है

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थित पृथिव्या अिव मानदण्ड.।

[अुत्तर दिशामें जिस पर देवोंका वास है अैसा हिमालय नामक पर्वतराज पृथ्वीको नापनेके गजकी तरह पूर्व और पश्चिम सागरमें स्नान करता हुआ खड़ा है।]

पंजाबकी पांच नदियां: झेलम, चिनाव, रावी, ब्यास और सतलज।

युक्तप्रांतकी पांच नदियां: गंगा, यमुना, गोमती, सरयू, चंबल।

अति-भारतीय: केवल भारतमें ही नहीं, बल्कि भारतकी सीमाके बाहर भी बहनेवाली ये दोनों नदियां भारतवर्षके बाहरसे भारतमें आती हैं, यानी भारतवर्षकी सीमाका अतिक्रमण करके बहती हैं, अिसलिअे अिन्हें अति-भारतीय कहा गया है।

पृ० १३८ वैदिक . . सप्तसिंधु : वेदोंमें जिनका जिक्र है, वे सात नदियां वितस्ता (झेलम), असिक्नी या चंद्रभागा (चिनाब), परुष्णी या अिरावती (रावी), शतद्रु (सतलज), विपाशा (बियास, व्यास), सिंधु और सरस्वती। कुभु या क्रुमुं अिनमें नहीं गिनी गअी है।

प्राचीन आर्य . . खतरेमें आ पड़े भारत पर जितने आक्रमण हुअे, लगभग सभी अिसी ओरसे हुअे।

परोपनिसदी अफगान। ग्रीक भाषामें अफगानिस्तानको 'परोपनिसद' कहते हैं।

यवन · Ionian Greeks के प्रथम शब्द परसे यह शब्द बना है।

वाल्हीक बल्ख, बैक्ट्रिया। वाल्हीक शब्द वेदमें आया है।

रानी सेमीरामिस : [अी० स० पूर्व ८०० के आसपास] असीरियाकी पुराण-प्रसिद्ध रानी। कहते हैं कि बेबिलोनकी स्थापना अिसीने की थी। और यह भी माना जाता है कि निनेवेहकी स्थापना करनेवाले अुसके पति नीनससे भी वह अधिक पराक्रमी थी। छुटपनमें अुसकी माने अुसको छोड़ दिया था और कबूतरोंने अुसकी परवरिश की थी। प्रथम वह नीनसके अेक सेनापतिके साथ विवाह-बद्ध हुअी थी, किन्तु बादमें जब नीनसकी नजर अुस पर जमी तब अुसके पतिने आत्महत्या कर ली। अिसके बाद वह नीनससे विवाह-बद्ध हुअी और नीनसके पश्चात् गद्दी पर बैठी। अुत्तर-वयमें अुसने अपने पुत्रको गद्दी पर बिठाया था।

सुवर्ण-करभार : अी० स० पूर्व छठी सदीमें अीरानके बादशाह पहले दरायसने सिंध प्रदेश अपने कब्जेमें ले लिया था और अुससे सालाना १८५ हंडरवेट (=५१५।। मण) सुवर्ण-करभार लेना शुरू किया था। अुसीका यहां अुल्लेख है।

युअेची : अीस्वी सन् पूर्व पहली सदीके आसपास अुत्तर भारतसे शकोंको दक्षिणमें भगाकर वहां अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेवाले मध्य अेशियाके कुशान लोग। अिनमें से कअियोंने बौद्ध और कुछ लोगोंने हिन्दूधर्म अपना लिया था। विख्यात बौद्ध सम्राट् कनिष्क कुशान

था। कुशान साम्राज्यके वैभवके दिनोंमें अुसका विस्तार अितना था कि अुसमें पश्चिम अेशियाके बुखारा और अफगानिस्तान, मध्य अेशियाके काशगर, यारकंद और खोतान, अुत्तर भारतके कश्मीर, पंजाब और बनारस तथा दक्षिणमें विन्ध्य तकके सारे प्रदेशका समावेश होता था।

हूण : औ० सन्‌की पाचवीं या छठी सदीमें भारत पर लगातार आक्रमण करके मालवा, सिंध और सीमाप्रांतमें अपना राज्य जमानेवाले श्वेत हूण। युरोपमें भी अिन्हीं लोगोंने अेटिलाकी सरदारीके नीचे रहकर बड़े अत्याचार किये थे। यहां पर भी अुनके अत्याचारोंसे अूबकर अंतमें आर्यावर्तके सभी राजाओंने बालादित्य और यशोधर्माके नेतृत्वमें अिकट्ठे होकर हूण राजा मिहिरगुलको हराया और अुसे गिरफ्तार किया था। अिसके बाद अुनका आक्रमण फिर नहीं हुआ। भारतमें हूणोंका राज्य आधी सदी तक रहा।

गिलगिट : श्रीनगरकी वायव्य दिशामें १२५ मील दूर ४८९० फुटकी अूंचाअी पर अिसी नामके जिलेका मुख्य केन्द्र। अिसके आसपास बौद्ध अवशेष फैले हुअे हैं।

पृ० १३९ चित्राल: वायव्य सरहद प्रांतके अिसी नामके अेक राज्यका मुख्य शहर।

स्वात: पंजकोरासे मिलनेवाली अेक छोटीसी नदी।

सफेद कोह : पहाड़का नाम। कोह=पहाड़। तुलना कीजिये: कोह-अि-नूर=तेजका पहाड़।

बैद्रिया: बन्नु

कर्नल यंगहसबंड: सर फ्रांसिस अेडवर्ड यंगहसबंड १८६३ में पंजाबमें पैदा हुअे। जातिसे अँग्लो-अिंडियन। १८८२ में फौजमें भरती हुअे। १८९० में पोलिटिकल डिपार्टमेंटमें बदली हुअी। १८८६ में मंचूरियामें खोज की। १८८७ में चीनी तुर्किस्तानके रास्ते पेकिंगसे भारत तककी यात्रा की। १८९३–९४ में चित्रालमें पोलिटिकल अेजंटके तौर पर रहे। १८९५ में चित्रालकी लड़ाअी हुअी, तब 'टाअिम्स'के संवाददाताके तौर पर काम किया। १९०३–४ में ब्रिटिश-मंडलके

साथ ल्हासा गये। पूर्वके देशोंके बारेमें आपने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। रॉयल ज्यॉग्राफिकल सोसायटीके प्रमुख १९१९। विस्तृत जीवनीके लिअे पढ़िये 'फ्रांसिस यगहसबॅड — अेक्स्प्लोरर अॅंड मिस्टिक' — लेखक जॉर्ज स्वीवर।

अमीर अमानुल्ला : भारतमें रौलेट बिलके खिलाफ जब प्रचंड आंदोलन चला, अुसी समय १९१९ के अप्रैलमें अफगानिस्तानके अमीरने भारत पर आक्रमण किया था। दस दिनोंके अंदर ही अफगान परास्त हो गये थे। लम्बी बातचीतके पश्चात् ८ अगस्तको रावलपिंडीमें संधिपत्र पर दस्तखत किये गये थे।

गरमीका पागलपन : अुस समय गरमीके दिन थे और काम अविचारी था अिसलिअे। अमीरका खयाल था कि गरमीके दिनोंमें अगर आक्रमण करेंगे तो अंग्रेज परास्त हो जायेंगे। किन्तु यह गलत खयाल था। अंग्रेजोंने अिस साहसको 'मिड-समर मॅडनेस' का नाम दिया था।

परसों : यह मराठी प्रयोग है।

कोहाटकी क्रूरता : सन् १९२४ में ९-१० सितम्बरको कोहाटमें घटी हुअी घटनाका यहां जिक्र है। धर्मान्तर तथा अपहरणोंके कारण वहांका वातावरण पहले ही गरम हो चुका था। अितनेमें वहांकी सनातन धर्मसभाके मंत्रीने अेक पुस्तिका प्रसिद्ध की, जिससे मुसल्मानोंकी भावनायें अुत्तेजित हो अुठीं। हिन्दुओंने फौरन दुःख प्रगट किया और पुस्तिकाकी बाकी रही नकलें सार्वजनिक रूपमें जला दीं। फिर भी मुसलमानोंको सन्तोष नहीं हुआ और अुन्होंने हिन्दुओंके खिलाफ सख्त कार्रवाअी करनेकी मांग सरकारके सामने पेश की। रातको मस्जिदमें जमा होकर अुन्होंने बदला लेनेकी प्रतिज्ञा ली। ९ सितम्बरको सनातन धर्मसभाके मंत्री जमानत पर रिहा किये गये और दंगे शुरू हुअे। ये दंगे कैसे शुरू हुअे, अिस बारेमें मतभेद हैं, किन्तु शुरू होनेके बाद दो पक्षोंमें आमने-सामने गोलियां चलीं। सारे हिन्दू मोहल्लेको आग लगा दी गयी। पुलिस और फौजने भी गोली चलाअी। परिणामस्वरूप अपार हानि हुअी। सभी हिन्दुओंको सरकारी रक्षाके नीचे

छेन्टोनमेन्टमें रखा गया। वहासे अुनकी मांगके अनुसार अुन्हें रावलपिंडी भेज दिया गया। बेलगाव कांग्रेसमें अिस सबधमें जो प्रस्ताव पास किया गया था अुसमें हिन्दुओंको यह सलाह दी गयी थी कि कोहाटके मुसलमान अुन्हें सम्मानपूर्वक वापस न बुलायें और जानमालकी सलामतीका विश्वास न दिलायें, तब तक वे वापस न लौटें।

कुरमः सुलेमान पर्वतसे निकल कर सिन्धुसे मिलनेवाली नदी। अिसका वैदिक नाम है क्रुमु।

डेरा अिस्माअिलखां : लाहौरके पश्चिममें १२५ मीलकी दूरी पर स्थित सीमाप्रान्तका अेक शहर। यहासे गोमलघाटके द्वारा अफगानिस्तानके साथ तिजारत चलती है। सूती कपडे और बेलबूटेके कामके लिअे प्रसिद्ध है।

डेरा गाजीखां : भावलपुरकी वायव्य दिशामें ७० मीलकी दूरी पर स्थित पंजाबका अेक शहर। सिंधुकी बाढ़से अिसकी काफी हानि हुआ करती थी, अिसलिअे १८९१ में यहां पत्थरका अेक बांध बांधा गया था। यहाकी कुछ मसजिदें मशहूर हैं।

लाहौरका वैभव : अकबर और अुसके वंशजोंके जमानेमें लाहौरका वैभव बहुत बडा था। वजीरखांकी मसजिद, जामा मसजिद, शीशमहल, रणजितसिंहके महल और शहरके बाहर शाहदरेमें स्थित बादशाह जहांगीरकी कब्र और शालीमार बाग आज भी अुसके वैभवके साक्षी हैं।

व्यास : बियास, विपाशा। वसिष्ठ मुनिके सौ पुत्रोंको राक्षस खा गये तब पुत्रशोकसे विह्वल होकर वे देहत्याग करनेके अिरादेसे अिस नदीमें कूद पड़े थे। किन्तु नदीने अुन्हें विपाश यानी पाशमुक्त किया, अिसलिअे यह 'विपाशा' कहलाअी।

त्यागाय संभृतार्थानाम् : 'रघुवंश' के प्रारंभमें महाकवि कालिदास रघुओंका वर्णन करते समय अुनकी अनेक विशेषतायें बताते हैं। अुनमें अेक विशेषता यह है। जो त्याग = दानके लिअे संभृत अर्थ = धन अिकट्ठा करनेवाले हैं, अुन रघुओंके वंशकी कीर्ति मैं गाना चाहता हूं।

पृ० १४० अुसमें से मनमाना . चाहे : नहरके रूपमें।

अुदारता : चौडाअी ?

जयद्रथके समयमें : महाभारतके समयमें। जयद्रथ सिंधु देशका राजा था।

दाहिर : [६४५–७१२] सिन्धका अेक ब्राह्मण राजा। जच्चका पुत्र। सिन्ध प्रान्तका छूनेवाले खिलाफतके प्रान्तके सूबेदार हज्जाजको अुसने कअी बार हराया था। अिसके पश्चात् मुहम्मद बिन कासिम नामक सत्रह वर्षके अुम्रके सेनापतिको अुसके खिलाफ युद्ध करनेके लिअे भेजा गया, अिस युद्धमें दाहिरका हाथी भडक अुठा, जिसकी वजहसे वह मारा गया। अुसकी फौज भाग गअी। तबसे मुसलमानोंको हिन्दुस्तानमें प्रवेश मिला। मुहम्मदने अुसकी रानीके साथ शादी की और अुसकी दो लडकियोंको नजरानेके तौर पर खलीफाके पास भेज दिया।

जच्च : [४९७–६३७] दाहिरका पिता। अिसका अितिहास फारसीमें 'चचनामा' नामक किताबमें दिया गया है। वह बडा शूर था। अुसने अपने राज्यकी सीमा ठेठ कश्मीर तक फैलायी थी। वह सिंधके आरोर नामक गावके अग्निहोत्री ब्राह्मण शैलजका पुत्र था। प्रथम वह सिंधके राजाके मन्त्रीका कारकुन था, बादमें प्रधान मन्त्री बना, आखिर राजा बना और रानीके साथ अुसने शादी की। ब्राह्मणाबादके बौद्धधर्मी लोगों पर अुसने काफी जुल्म ढाये थे।

पृ० १४१ अनाचार : सिन्धके अेक ब्राह्मण राजाको अेक ज्योतिषीने कहा था कि तुम्हारी बहनका लड़का तुम्हारा राज्य छीन लेगा। अिसके अिलाजके तौर पर राजाने अपनी बहनके साथ ही शादी कर ली। दूसरे अेक राजाने अेक रानी पर अत्याचार किये थे। अिन ब्राह्मण राजाओंके अत्याचारोंसे लोग अितने परेशान हो गये थे कि मुहम्मद बिन कासिमको जाट और मेड लोगोंने ही सबसे अधिक मदद की थी।

मुहम्मद बिन कासिम : सिन्ध प्रान्तको जीतकर खिलाफतमें शामिल करनेवाला किशोर सेनापति। दाहिरके खिलाफ युद्ध करनेके बाद अुसने

दाहिरकी दो लड़कियोंको खलीफाके पास नजरानेके तौर पर भेज दिया था। जब खलीफाने अिनमें से अेक लड़कीके साथ शादी करनेकी अिच्छा व्यक्त की, तब अिन लड़कियोंने कहा कि मुहम्मदने अुन्हें भ्रष्ट कर दिया है, अिसलिअे वे अिस सम्मानके लायक नहीं हैं। अिस पर खलीफाने गुस्सा होकर मुहम्मदको हुक्म दिया कि गायके चमड़ेमें अपनेको सीकर वह खलीफाके सामने हाजिर हो। मुहम्मदने खलीफाकी आज्ञाका पालन किया, जिससे दूसरे ही दिन अुसकी मृत्यु हो गअी। जब मुहम्मदका शव अिस हालतमें हाजिर किया गया, तब लड़कियोंने खलीफासे सत्य कह डाला कि अुन्होंने बदला लेनेकी दृष्टिसे झूठ बात कही थी! खलीफाने अिन दोनों लड़कियोंकी गरदन अुड़ा दी।

सर चार्ल्स नेपियर : [१७८२–१८५३] १८०८ में स्पेनमें मूर लोगोंके खिलाफ अिसने लड़ाअी की, और कोरूनामें गिरफ्तार हुआ। १८१३ में अमरीकाके खिलाफ युद्ध किया। १८१५ में नेपोलियनके खिलाफ युद्ध किया। वह कवि बायरनका मित्र था। १८४१ में भारत आया। १८४२ में सिन्धकी फौजका नेतृत्व किया और अिसी वर्षके अन्तमें अिमामगढ़का किला कब्जेमें लिया। १८५४ के मियाणीके युद्धमें विजयी हुआ। मीरपुरके शेरमुहम्मदको परास्त करके भगा दिया। १८४४–४५ में सिन्धकी पहाड़ी जातियों पर विजय प्राप्त की। डलहाअुजीके साथ मतभेद होने पर अिस्तीफा देकर घर लौट गया। १८५३ में मृत्यु। अन्यायसे सिन्ध पर अधिकार करनेके बाद अिसने रिपोर्ट दी: "I have sinned (sind)"–मैंने सिन्ध पर कब्जा कर लिया है।

सुहिणी : अेक धनवान कुम्हारका लड़की। बुखाराका अेक खानदानी मुगल नौजवान मेहार अुसकी मुहब्बतमें फंस गया था और अुससे मिलनेमें कोअी कठिनाअी न हो अिसलिअे वेश बदलकर अुसके पिताके घर नौकर बन कर रहा था। दोनोंके बीच प्रेमका नाता दृढ़ होने लगा। किन्तु लड़कीके पिताको वह पसंद नहीं आया। अिसलिअे अुसने मेहारको नौकरीसे हटा दिया। वह सिन्धुके अुस पार जाकर रहा। सुहिणी हमेशा रातके समय मिट्टीके अेक बरतनका

सहारा लेकर सिन्धु नदी पार करती थी और मेहारसे मिलने जाती थी। जब अिस बातका पता अुसके पिताको चला, तब अुसने पक्के घड़ेके बदलेमें कच्चा घड़ा वहां रख दिया। सुहिणी तो प्रेमकी मस्तीमें थी। वह कच्चा घड़ा लेकर ही नदीमें कूद पड़ी। जरा आगे गअी कि घड़ा पिघलने लगा। अुसने मेहारको पुकारा। सामनेके किनारेसे वह अुसे बचानेके लिअे दौड़ा, किन्तु बचा नहीं सका। अंतमें दोनोंने साथ ही जल-समाधि ली।

३२ मचरकी जीवन-विभूति

पृ० १४२ *दिशो न जाने० न मैं दिशा जानता हूं, न शान्ति* प्राप्त करता हूं। गीता, ११–२५

अिदानीम्० अब मैं शांत हो गया हूं और स्वस्थ बन गया हूं। *गीता, ११–५१*

पृ० १४४ **स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया** : लोक-कथाओंमें 'खाया, पिया और राज्य किया' कहनेका प्रयोग चलता है। यहां पर 'स्वप्न-सृष्टि पर राज्य किया' का मतलब है 'नींद ली।'

अजगरोंकी अुपासना कर रहे थे : अजगर बड़े आलसी होते हैं। अिसलिअे यहां अर्थ होगा आलस्यकी अुपासना करते थे।

रेहानाबहन : श्री अब्बास तैयबजीकी पुत्री। भक्त-हृदय और सुकण्ठ गायिका। अिनकी 'Heart of a Gopi' नामक किताब बड़ी मशहूर है। अिस किताबके फ्रेंच तथा *पोलिश भाषामें भी अनुवाद* हुअे हैं। हिन्दीमें 'गोपी-हृदय' नामसे अनुवाद प्रकाशित हुआ है। अिनकी कुछ मौलिक हिन्दी किताबें भी हैं 'सुनिये काकासाहब !', 'नाटकेसे पहले', 'कृपा-किरन' वगैरा। अिनकी हिन्दी या हिन्दुस्तानी शैली अपने ढंगकी निराली है।

पृ० १४७ **मंघ** : मकानमें हवा आनेके लिअे छत पर जो चौरस आकारकी चिमनी जैसी रचना होती है अुसको मघ कहते हैं।

'ढंढ' : यह सिन्धी शब्द है।

३३. लहरोंका ताडवयोग

पृ० १४९ वप्रक्रीड़ा: सींग या लम्बे दांतोंके सहारे जमीन खोदनेका खेल। 'मेघदूत' में असका प्रयोग किया गया है

तस्मिन्नद्रौ कतिचिद् अवला-विप्रयुक्त स कामी
नीत्वा मासान् कनक-वलय-भ्रंश-रिक्त-प्रकोष्ठ ।
आषाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानु
वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श ॥

पृ० १५० अमर्ष: तिरस्कार या अपमानसे पैदा हुआ स्थिर क्रोध। काव्यशास्त्रमें अमर्षकी व्याख्या जिस प्रकार की गअी है 'अधिक्षेपापमानादेरमर्षोऽभिनिविष्टता।' भारवि कविके 'किरातार्जुनीय' काव्यमें दुर्योधनकी राजनीतिकी प्रशंसा सुनकर द्रौपदी नाराज होती है और युधिष्ठिरसे कहती है "अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः ॥ १,३३ [जिसमें अमर्ष नहीं है असका न स्नेहीजन आदर करते, न शत्रु आदर करते]

शिव-तांडव-स्तोत्र: कवि रावणका लिखा प्रसिद्ध स्तोत्र। देखिये, 'जोगका प्रपात' की टिप्पणियां।

प्रमाणिका और पंचचामर: ये दो संस्कृतके लोकप्रिय और अत्यंत सरल छंद हैं। प्रमाणिकाके दो पद मिलने पर अेक पंचचामर बनता है। असको नाराच भी कहते हैं।

प्रमाणिकापदद्वयम् वदेत पंचचामरम्।

पुष्पदंत: अेक गंधर्व और शिवगण। शिवमहिम्न-स्तोत्रका रचयिता। वायव्य दिशाके दिग्गजका नाम भी पुष्पदंत है। पुष्पदंतकी कथा 'कथासरित्सागर' में है।

गोमूत्रिकाबंध: चित्रकाव्यका अेक प्रकार।

श्रावण-भादोंकी धारायें: राजमहलमें जब पानीका प्रवाह बहाया जाता है और बीचमें छोटेसे पत्थर परसे बहता असका प्रपात बनाया जाता है, तब अिस प्रपातको श्रावण-भादोंकी धारायें कहते हैं।

३४. सिंधुके बाद गंगा

पृ० १५३ सौवीर देश : सिन्ध और मारवाडकी सीमाका प्रदेश।

पृ० १५५ सदाकत आश्रम : [सदाकत = सत्य + आश्रम] बिहारके प्रसिद्ध देशभक्त मजहरुल हकने जिसकी स्थापना सन् १९२०-२१के अरसेमें की थी।

पृ० १५८ 'रसो वै स' निश्चय ही वह रस है। तैत्तिरीयोपनिषद्‌में ब्रह्मका वर्णन करते समय यह वचन कहा गया है। देखिये तैत्तिरीय० २-७।

पृ० १५९ कैंकर्य : [किंकर (=नौकर)+य] नौकरपन, नौकरी।

पृ० १६० ॐ पूर्णम् अद. ० यह (जगत्) पूर्ण है, वह (ब्रह्म) भी पूर्ण है। पूर्णमें से पूर्ण ही प्रकट होता है। पूर्णमें से यदि पूर्णको निकाल लें तो पूर्ण ही शेष रहता है।

अीशावास्योपनिषद्‌के प्रारंभ तथा अंतमें यह शांतिमंत्र है।

३५. नदी पर नहर

पृ० १६१ कलौ आद्यन्तयो स्थितिः दक्षिणमें यह बात फैलायी गयी है कि कलिकालमें सिर्फ दो ही वर्णोंका अस्तित्व है - ब्राह्मण और शूद्र, क्योंकि संस्कार-लोपके कारण क्षत्रिय और वैश्य भी अब शूद्र जैसे बन गये हैं।

द्विजत्व : जिन्हें जनेअू लेकर अिसी जन्ममें दूसरा जन्म लेनेका अधिकार है, अुन ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णोंको द्विज कहते हैं।

जन्मना जायते शूद्र संस्कारात द्विज अुच्यते।

भगीरथ : भगीरथने हिमालयसे गंगाको अुतारकर बंगालके अुप-सागर तकके प्रदेशको अुपजाअू बनाया था। अिस परसे जल-सिंचनकी विद्यामें कुशल।

पृ० १६२ निम्नगा : नीचेकी ओर बहनेवाली।

परिवाह : अतिरिक्त जलके बहनेके लिअे रखा गया मार्ग। overflow

३६. नेपालकी बाघमती

पृ० १६३ अतिमानुषी: अलौकिक। अंग्रेजी superhuman.

भगिनी निवेदिता: स्वामी विवेकानंदकी अंग्रेज शिष्या मिस मार्गरेट नोबल। निवेदिता नाम गुरुका दिया हुआ था।

८ पृ० १६५ गोरक्षनाथ: अयोध्याके समीप जयश्री नामक नगरीमें सद्बोध नामके किसी ब्राह्मणकी सद्वृत्ति नामक अेक स्त्री थी। अेक बार भिक्षा मांगते हुअे मत्स्येन्द्रनाथ वहां आ पहुंचे। साधु पुरुष जानकर अुनको अुस स्त्रीने संतान न होनेकी बात बताअी। मत्स्येन्द्रनाथने भस्म दी, किन्तु अुसका प्रसादके तौर पर स्वीकार करनेके बदले अुसने अुसे घूरे पर फेंक दिया। ठीक बारह सालके बाद मत्स्येन्द्रनाथ फिर पधारे और अुन्होंने पूछा, "लड़का कहां है?" सद्वृत्तिने सच बात बता दी। अिस पर मत्स्येन्द्रनाथने घूरेके पास जाकर पुकारा 'अलख'। तुरन्त सामनेसे 'आदेश' कहकर गोरक्षनाथकी बालमूर्ति खड़ी हो गअी। अिसी कारणसे गोरक्षनाथको अयोनिज कहते हैं। गुरुके पास रहकर गोरक्षनाथने सब विद्या प्राप्त की। मत्स्येन्द्रनाथ योगी भी थे और भोगी भी थे। किन्तु गोरक्षनाथका वैराग्य अग्निके समान प्रखर था। मत्स्येन्द्रनाथको सिंहल द्वीपकी प्रमिलारानीके मोहपाशसे गोरक्षनाथने ही मुक्त किया था। वे योगी, शिवोपासक, अद्वैतवादी और कीमियागरके रूपमें प्रसिद्ध हैं। बंगाल, पंजाब, नेपाल, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, सिंहल द्वीप आदि सभी स्थानोंमें अुनके मठ हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ नेपालके गुरखा लोगोंके देवता हैं। गोरक्षनाथ परसे ही अिनको 'गुरखा' कहते हैं। नेपालमें बौद्धोंका महायान पंथ चलता था। अुसकी पराजय करके गोरक्षनाथने वहांके लोगोंमें शिवकी अुपासना प्रचलित की थी। गोरक्षनाथका समय अब तक निश्चित नहीं हो सका है।

३७. बिहारकी गंडकी

पृ० १६५ गंडकी: बिहारमें दो नदियोंका नाम गंडकी है। लेखकने मुजफ्फरपुरके पास जो गंडकी देखी थी वह है वृद्ध या छोटी गंडकी। दूसरी गंडकी बड़ी है।

पृ० १६६ बौद्ध जगतके दो छोर. नर्मदा और गडकीके बीच बौद्ध जगत समाया हुआ था।

मांडलिक नदियां: पानी-रूपी करभार देनेवाली नदियां, अुससे मिलनेवाली नदियां।

अष्टांगिक मार्ग: भगवान बुद्धके बताये हुअे आर्य अष्टांगिक मार्गके आठ अंग अिस प्रकार हैं (१) सम्यक् दृष्टि, (२) सम्यक् संकल्प; (३) सम्यक् वाचा, (४) सम्यक् कर्मान्ति, (५) सम्यक् आजीव; (६) सम्यक् व्यायाम, (७) सम्यक् स्मृति, और (८) सम्यक् समाधि।

मार: मनुष्यकी सद्वासनाओंका नाश करनेवाला। बौद्धधर्ममें आसुरी संपत्तिके अधिष्ठाता व्यक्तिको 'मार' कहते हैं।

३८. गयाकी फल्गु

पृ० १६७ सीताका शाप: कहते हैं कि अेक समय राम, सीता और लक्ष्मण घूमते-घूमते फल्गुके किनारे आ पहुंचे। वहां पहुंचते ही रामको स्मरण हुआ कि आज मेरे पिताजीके श्राद्धका दिन है। अिसलिअे सामान लानेके लिअे अुन्होंने लक्ष्मणको शहरमें भेजा। लक्ष्मण गये, किन्तु बडी देर तक वापस नहीं लौटे। अिससे रामको चिंता हुआी और वे स्वयं अुन्हें ढूंढनेके लिअे निकल पडे। अिधर श्राद्धका मुहूर्त चूकने लगा; अिसलिअे सीताजीने नहा-धोकर जो कुछ था अुसीसे अपने पतिके बदले स्वयं अुनके पितरोंको पिंडदान दिया। पितरोंने संतोषपूर्वक पिंडका स्वीकार किया। वे पिंड लेकर जाने लगे, तब सीताजीने अुनसे पूछा: 'आप स्वयं आकर पिंड ले गये हैं, यह मेरे पतिको कैसे मालूम होगा?' तब आकाशवाणी हुआी 'तुम साक्षी रखो।' सीताजीने फल्गु नदी, गाय, अग्नि और केवडेको साक्षी रखा।

राम-लक्ष्मण सारी सामग्री लेकर आये और अुन्होंने सीताको चरु (पिंडका भात) तैयार करनेको कहा। किन्तु सीताने न तो कोअी अुत्तर दिया, न चरु तैयार किया। अंतमें रामने पूछा, तब सीताने सारी बात बता दी। किन्तु राम-लक्ष्मणको विश्वास नहीं हुआ। अिसलिअे सीताने

फल्गु आदि सब साक्षियोंसे पूछनेके लिअे कहा। मगर अिन सबने कहा, 'हम कुछ मालूम नहीं है।' अतः सीताने लाचारीसे दुबारा घर तैयार किया और रामने पिंडके लिअे पितरोंका आवाहन किया। तब आकाशवाणी हुआी कि जानकीने हमें तृप्त किया है। किन्तु रामको विश्वास नहीं हुआ। अिसलिअे फिरसे आकाशवाणी हुआी। अिससे भी रामको संतोष नहीं हुआ। अिस पर स्वयं सूर्यने आकर साक्षी दी, तब रामको विश्वास हुआ।

साक्षी होते हुअे भी अुन्होंने बात नहीं बताअी, अिसलिअे सीताने अुन चारोंको शाप दिया। फल्गुको कहा, 'तुम पातालमें रहोगी।' केवडेको कहा, 'तुम शिवजीको अग्राह्य होगे।' गायको कहा, 'तेरा मुंह अपवित्र माना जायगा और पूछ पवित्र मानी जायगी।' अग्निको कहा 'तुम सर्वभक्षक होगे'। — शिवपुराण, अध्याय ३०।

३९. गरजता हुआ शोणभद्र

पृ० १६८ अथ शोण० ० 'स्वच्छ जलवाला, अगाध, पुलिन-मंडित, अैसा यह शोण है। हे ब्रह्मन्, हम किस रास्तेसे पार अुतरेंगे?" श्री रामचन्द्रके पूछने पर विश्वामित्रने जवाब दिया, "जिस रास्तेसे महर्षि जाते हैं, वह मेरे द्वारा बताया हुआ मार्ग यह है।"

क्षत्रिय गुरुशिष्य: क्षत्रियोंके गुरु अक्सर ब्राह्मण ही होते हैं। किन्तु यहां गुरु विश्वामित्र भी मूलतः क्षत्रिय थे।

पीवरकाय: पुष्ट शरीरवाला।

✓ गजेन्द्र और ग्राह: हाहा और हूहू नामक दो गंधर्व थे। किसी दिन अिन दोनोंके बीच विवाद चला — 'संगीत-विद्यामें हममें कौन बड़ा है?' वे अिन्द्रके पास गये और अुसके सामने अपनी कला दिखाअी। अिन्द्रने कहा, 'तुम दोनोंमें कौन बड़ा है, यह तो देवल ऋषिके सिवा और कोअी नहीं बता सकेगा।' अिसलिअे वे देवल ऋषिके पास गये और गाने लगे। ऋषि अुस समय ध्यानमग्न थे। वे कुछ बोले नहीं। अिसलिअे यह मानकर कि वे जड़ हैं, कुछ समझते नहीं हैं, गंधर्वोंने अुनका अपमान किया। अिससे ऋषिने अुनको शाप दिया कि 'तुम अब

मृत्युलोकमें जन्म लोगे।' किन्तु बादमें अुनकी प्रार्थना सुनकर शापके निवारणके लिअे कहा कि 'हरि तुम्हारा अुद्धार करेंगे।'

अिस प्रकार वे दोनों मृत्युलोकमें गजेन्द्र और ग्राहके रूपमें पैदा हुअे। अेक बार गजेन्द्र जलक्रीडाके लिअे पानीमें अुतरा, तब ग्राहने अुसका पाव पकड लिया और अुसे अंदर खींचने लगा। बाहर आनेके लिअे गजेन्द्रने काफी प्रयत्न किया, किन्तु कुछ नहीं हुआ। और वह गहरे पानीमें खिंचता चला गया। जब वह पूराका पूरा पानीमें चला गया, सिर्फ सूड ही बाकी रही, तब अुसने अीश्वरकी स्तुति की। स्तुति सुनकर अीश्वरने आकर अुसे बचाया और दोनोंका अुद्धार किया।

यह कथा पचरत्न-गीताके 'गजेन्द्र-मोक्ष' में है।

[बरसों पहले Tug of War के लिअे श्री काकासाहबने गुजरातीमें 'गजग्राह' शब्द प्रचलित किया था।]

ब्रह्मपुत्र: ब्रह्मपुत्राका सही नाम है 'ब्रह्मपुत्र'। शायद रोमन लिपिके कारण गडबड हुअी है। लेखकने अिस पुस्तकमें दोनों रूपोंका प्रयोग किया है।

पृ० १६९ कहां जाअू ० महाकवि कालिदासने शोणका यह भाव बहुत सुन्दर ढगसे व्यक्त किया है। अिन्दुमतीके स्वयवरके बाद निराश हुअे राजा लोग अजका मार्ग रोकते हैं, तब अज अुनकी सेना पर टूट पडता है। कालिदासने अिसकी तुलना भागीरथी पर अपनी अुत्ताल तरगोंसे टूट पडनेवाले शोणसे की है।

तस्या स रक्षार्थम् अनल्पयोध
आदिश्य पित्र्यं सचिव कुमार।
प्रत्यग्रहीत् पार्थिव-वाहिनीं तां
भागीरथीं शोण अिवोत्तरग।

— रघुवंश ७–३६

नाल्पे सुखमस्ति . . तत् सुखम्: 'अल्पमें सुख नहीं है। जो भूमा है — सारे विश्वको समा ले अितना विशाल है, वही सुखरूप है।' (छांदोग्य, ७–२३)

४०. तेरदालका मृगजल

जमखंडी: दक्षिण महाराष्ट्रका अेक शहर।

४१. चर्मण्वती चंबल

पृ० १७२ रतिदेव: भरतकी छठी पीढ़ीमें हुआ सूर्यवंशी राजा। महाभारतमें असकी कथा दो बार आयी है। मेघदूतमें भी असका जिक्र आता है।

हेकेटॉम: [शत अुक्ष यज्ञ] ग्रीक (यूनानी) लोगोंका अेक यज्ञ जिसमें सौ बैलोंकी आहुति दी जाती थी।

भूदेव: ब्राह्मण। अग्नि और ब्राह्मण देवताओंके मुख माने जाते हैं। वे जो खाते हैं वह सीधा देवताओंको मिल जाता है।

४२. नदीका सरोवर

पृ० १७३ बेलाताल: ताल = तालाब। जैसे नैनीताल, भीमताल।

पृ० १७४ हिमालयसे माफी मांगकर: हिमालयमें केदारनाथके पास मंदाकिनी नामक अेक नदी है, असलिअे।

महाराज पुलकेशी: वातापी वंशका राजा। छठी सदीके मध्य भागमें अुसने महाराष्ट्रके छोटे छोटे सब राज्योंको अेकत्र करके अेक साम्राज्यकी स्थापना की थी और अश्वमेध यज्ञ भी किया था। अुसके पुत्र कीर्तिवर्माने पिताके साम्राज्यका विस्तार किया और अुसमें अंग-वंग और मगधका भी समावेश किया। सन् ६०९ में जब दूसरा पुलकेशी गद्दी पर बैठा तब यह चालुक्य साम्राज्य विन्ध्यसे लेकर दक्षिणमें पल्लव साम्राज्य तक फैला हुआ था। अुसने मालव, गुर्जर, और कलिंगोंको भी अधीन कर लिया था। अुसका सबसे बड़ा पराक्रम तो यह था कि महाराज हर्षने जब दक्षिण पर आक्रमण किया, तब पुलकेशीने अुनको रोका और पराजित किया (औ० स० ६३६)। पुलकेशी = पुलिकेशी। दक्षिणकी भाषामें पुलि = हुलि = बाघ। जिसके बाल (केश) बाघकी अयालके जैसे हों, वह है पुलकेशी।

पृ० १७५ अनाविला: जिसमें कीचड़ नहीं है, अैसी। स्वच्छ।

पृ० १७६ *दशार्ण : विन्ध्याचलके दक्षिण-पूर्वमें स्थित प्रदेश।* दश +ऋण (दुर्ग) जिसमें है वह। नदीका नाम है 'दशार्णा'। मेघदूतमें असका अुल्लेख अिस प्रकार आता है

पाण्डुच्छायोपवनवृतय केतकैः सूचिभिन्नैर् –
नीडारम्भैर् गृहबलिभुजाम् आकुलग्रामचैत्या ।
त्वय्यासन्ने परिणतफलश्याम-जम्बूवनान्त
सपत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहसा दशार्णा ॥२३॥

वेत्रवती : मालवाकी अेक नदी बेतवा। मेघदूतमें असका भी अुल्लेख है :

तेषा दिक्षु प्रथित-विदिशा-लक्षणा राजधानी
गत्वा सद्य फलम् अविकलम् कामुकत्वस्य लब्ध्वा ।
तीरोपान्त-स्तनित-सुभग पास्यसि स्वादु यस्मात् ।
सभ्रूभग मुखम् अिव पयो वेत्रवत्याश् चलोर्मि ॥२४॥

४३. निशीथ-यात्रा

पृ० १७७ *सबिन्दु-सिन्धु ० श्री शकराचार्य विरचित 'नर्मदास्तोत्र'* में ये वचन है। अिसी स्तोत्रमें निम्नलिखित श्लोक है, जिसमें नर्मदाको 'शर्मदा' कहा गया है

त्वदम्बुलीन दीनमीन दिव्य सप्रदायक
कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम् ।
सुमत्स्य-कच्छ-नक्रचक्र-चक्रवाक शर्मदे
त्वदीयपादपकज नमामि देवि नर्मदे ॥

पृ० १७९ *मेरी जाति है कौवेकी :* कौवा कभी अकेला नही खाता। दूसरे कौवोको पुकार कर ही खाता है।

लेखकका नाम 'काका' है, यह भी नही भूलना चाहिये।

पृ० १८६ *शान्त प्रज्ञ ० माडूक्योपनिषद्में* तुरीय रूपके वर्णनमें ये शब्द आते है। अिनका अर्थ है—'वह न अतःप्रज्ञ है, न बहिष्प्रज्ञ है। वह न अुभयतःप्रज्ञ है, न प्रज्ञानघन है। वह न प्रज्ञ है, न अप्रज्ञ है।'

४४. धुवांधार

पृ० १९३ पूषन्नेकर्षे० और ॐ क्रतो स्मर, कृत स्मर : ये श्रीशावास्योपनिषद्के श्लोक हैं। पूरे श्लोक अिस प्रकार हैं

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन्, समूह।
तेजो, यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि
योऽसावसौ पुरुष सोऽहमस्मि ॥ १६ ॥
वायुर् अनिलम् अमृतम् अथेदं भस्मान्तं शरीरम्।
ॐ क्रतो स्मर कृतं स्मर क्रतो स्मर कृतं स्मर ॥१७॥

[हे जगत्पोषक सूर्य, हे अकेले गमन करनेवाले, हे यम (सबका नियमन करनेवाले), हे सूर्य (प्राण और रसका शोषण करनेवाले), हे प्रजापतिनंदन, तू अपनी रश्मियां समेट ले। तेज अेकत्र कर ले। तेरा जो अत्यन्त कल्याणमय रूप है, अुसे मैं देखता हूं। सूर्यमंडलमें रहनेवाला वह जो परात्पर पुरुष है, वह मैं ही हूं।

अब मेरे प्राण सर्वात्मक वायुरूप सूत्रात्माको प्राप्त हों और यह शरीर भस्मीभूत हो जाय। हे मेरे संकल्पात्मक मन, अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर; अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर।]

पृ० १९४ चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्त : चन्द्रगुप्तकी पुत्री प्रभावतीका विवाह वाकाटक वंशमें हुआ था। अुसने कअी बरस तक शासन-तंत्र संभाला था। चन्द्रगुप्तने अुस समय खास लोग वहां भेज दिये थे, अिस बातका यहां अुल्लेख है। समुद्रगुप्तकी विजय-यात्रामें अिस प्रदेशका भी समावेश होता था।

कलचुरी : वाकाटक साम्राज्यके पतनके बाद अनेक छोटे छोटे स्वतंत्र राज्य पैदा हुअे थे। अुनमें अुत्तर महाराष्ट्रके कलचुरी लोगोंका भी अेक राज्य था। अुनकी राजधानी थी त्रिपुरी, जहां सन् १९३९ में कांग्रेसका अधिवेशन हुआ था।

वाकाटक : सन् २२५ से ५४० के आसपास मध्यप्रान्तके बरार प्रदेशमें वाकाटकोंका साम्राज्य था। छठी सदीके पहले दस वर्षोंका समय अिनके

सर्वोच्च वैभवका काल था। असमें सारा हैदराबाद, बम्बओका महाराष्ट्र, बरार और मध्यप्रान्तका बहुतसा हिस्सा समा जाता था। असके अलावा, अुत्तर कोंकण, गुजरात, मालवा, छत्तीसगढ और आन्ध्र प्रदेश पर भी असका प्रभुत्व था। अुस समय अितना विशाल और अितना बलवान साम्राज्य भारतमें दूसरा कोअी नहीं था।

४५. शिवनाथ और ओब

पृ० १९४ मलिक काफूर: अलाअुद्दीन खिलजीका प्रीतिपात्र खोजा। असने दक्षिणके राज्य जीतकर वहांकी प्रजा पर बड़ा अत्याचार किया था।

काला पहाड: बंगालके नवाब सुलेमान किराणीका तथा बादमें अुसके पुत्र दाअूदका सेनापति। असम, काशी और अुड़ीसामें जितने हिन्दू देवालय थे, अुनमें से अेक भी असके हाथसे नहीं बचा था। किसीको असने तोड डाला, किसीको खंडित कर दिया, तो किसीको जमींदोज कर दिया। जगन्नाथकी मूर्तिको अुसने जलाकर समुद्रमें फेंक दिया था। हिन्दुओं पर अुसने बहुत जुल्म ढाये थे। कुछ लोग कहते हैं कि वह पहले ब्राह्मण था, किन्तु किसी नवाबकी कन्याकी मुहब्बतमें फसकर मुसलमान बन गया था। मुसलमानोंके अितिहासमें अुसको पठान जातिका बताया गया है। १५६५ में अुसने अुड़ीसा जीता था। १५८० में अुसकी मृत्यु हुअी थी।

पृ० १९७ नामरूपका त्याग करनेसे ही: मुण्डकोपनिषद्में निम्नलिखित श्लोक (३-२-८) है

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषम् अुपैति दिव्यम्।

[जिस प्रकार निरंतर बहनेवाली नदियां अपना नामरूप छोड़कर समुद्रसे जा मिलती हैं, अुसी प्रकार विद्वान भी नामरूपसे मुक्त होकर परात्पर दिव्य पुरुषको प्राप्त कर लेता है।]

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति० जिस कुलमें सभी लोग महत्त्व चाहते हैं, अुस कुलका नाश होता है, अुसी प्रकार जिस देशमें सभी लोग नेता बन जाते हैं, अुस देशका भी नाश निश्चित है।

४६. दुर्वैयो शिवनाथ

पृ० १९९ राक्षस-पद्धतिका विवाह: विवाहके आठ प्रकार बताये गये है: (१) ब्राह्म, (२) दैव, (३) आर्ष, (४) प्राजापत्य, (५) गांधर्व, (६) आसुर, (७) राक्षस और (८) पिशाच। अिनमें से जिस विवाहमें लड़कीके रिश्तेदारोंको मारकर या परास्त करके जबरन् लड़कीसे विवाह किया जाता है, अुसको राक्षस-पद्धतिका विवाह कहते हैं।

४७. सूर्याका स्रोत

पृ० २०० फासा: बम्बअी राज्यके थाना जिलेका अेक गाव। आचार्य शंकरराव भिसेके मार्गदर्शनमें यहा अेक सर्वोदय-केंद्र चलता है, जिसके कार्यकर्ता यहाके आदिम निवासी 'वार्ली' लोगोंके बीच बहुत अच्छा काम करते हैं।

४८. अवरी औघ

पृ० २०५ कवियोंको जितना . . . देता था: बहुत कम और अस्पष्ट।

४९. संदुला और सुला

पृ० २०७ व्यंजन: शाक, चटनी।

पृ० २०९ यद् भावि० जो कुछ होनेवाला हो, सो होने दो।

५०. अुपिकुल्याका क्षमापन

पृ० २११ सरित्पिता: पर्वत।

सरित्पति: समुद्र।

पृ० २१३ अचलोंका अुपस्थान . . . देगी: श्री काकासाहबने अब पहाड़ोंके वर्णन लिखना शुरू कर दिया है, अिस बातका यहां अुल्लेख है।

५१. सहस्रधारा

पृ० २१४ आचार्य रामदेवजी: स्वामी श्रद्धानंदजीके सहायक। हरिद्वार गुरुकुलके आचार्य।

पृ० २१६ घमघमाता हुआ: धम्-धम् आवाज करता हुआ। लेखकका बनाया हुआ यह नाम-क्रियापद है।

५२. गुच्छुपानी

पृ० २२२ चंदन: श्री काकासाहबकी पुत्रवधू सौ० चंदन कालेलकर।

५३. नागिनी नदी तीस्ता

पृ० २३० यंत्रका जीन कसकर: पावर हाअुस खड़ा करके।

५४. परशुराम कुंड

पृ० २३२ नहि वेरेन वेरानि ० धम्मपदका यह पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

नहि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचन।
अवेरेन च सम्मन्ति अेस धम्मो सनन्तनो॥ ५॥

[वैर वैरसे कभी शांत नहीं होता, अवैरसे ही वैर शांत होता है — यही संसारका सनातन नियम (धर्म) है।]

५५. दो मद्रासी बहनें

पृ० २३६: नागमोड़ी: नागकी तरह जिसके मोड़ हों। सर्प-सदृश। यह शब्द मराठीका है।

५६. प्रथम समुद्र-दर्शन

पृ० २३९ मुरगांव: गोवाका अेक शहर जिसको अंग्रेजीमें 'मार्मागोवा' कहते हैं। यह पश्चिमी किनारेका अेक सुन्दर बंदरगाह है। फौजी दृष्टिसे अिसका बड़ा महत्त्व है।

पृ० २४० दूध-सागर: पानी पहाड़की चोटी परसे नीचे अिस तरह कूदता है कि अुसका दूधके समान बाष्पमय सफेद प्रपात बन जाता है। अिसलिअे अुसका नाम ही 'दूध-सागर' पड़ गया है।

केशू: = केशव, श्री काकासाहबके भाअी।

पृ० २४१ दत्तू: श्री काकासाहबका पूरा नाम दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर है। दत्तात्रेयका छोटा रूप है दत्तू।

गोंदू: = गोविंद, काकासाहबके दूसरे भाअी।

५७. छप्पन सालकी भूल

पृ० २४७ सरोके पेड़ : कारवारमें सरोका अेक सुन्दर वन है। अिसका वर्णन पढ़िये 'स्मरण-यात्रा' के 'सरोपार्क' नामक लेखमें — पृ० २०१।

५८. मरुस्थल या सरोवर

पृ० २५४ मरजाद-बेल : समुद्रका पानी ज्वारके समय अधिकसे अधिक जहां तक पहुंचता है, वहां अेक तरहकी बेल अुगती है। समुद्र कितना भी तूफानी क्यों न हो, वह कभी अपनी अिस मर्यादाका अुल्लंघन नहीं करता। अिसलिअे अिस बेलको मरजाद-बेल कहते हैं। खलासी लोगोंके अनुसार यह समुद्रकी मौसी है। अतः समुद्र अुसका भानजा हुआ।

पृ० २५५ सर्वं समाप्नोषि० 'आप सारे संसारको व्याप्त किये हुअे हैं; अतः आप सर्व हैं।' गीता, ११–४०

५९. चांदीपुर

पृ० २५७ महाश्वेता : बाणकी विख्यात कथा 'कादम्बरी' की नायिका कादम्बरीकी सखी।

कादंबरी : बाणकी कथाकी नायिका। कादम्बरीका मूल अर्थ है : मद्य, सुरा।

पृ० २५९ मदालसा : श्री जमनालाल बजाजकी पुत्री।

आपो नारा० पानीको 'नारा' कहा है। और यह नर अर्थात् परमात्मासे पैदा हुआ है। यह पानी पहले अुसका (परमात्माका) अयन (निवासस्थान) था। अिसीलिअे परमात्माको नारायण (पानीमें जिसका निवासस्थान है अैसा) कहा है। मनुस्मृति, १–१०

पृ० २६० प्रथम प्रभात : रवीन्द्रनाथका विख्यात राष्ट्रगीत 'अयि भुवन-मनोमोहिनि' में से ये पंक्तियां ली गअी हैं। पूरा गीत अिस प्रकार है :

अयि भुवन-मनोमोहिनि
अयि निर्मल-सूर्य-करोज्ज्वल-धरणि
जनक-जननी-जननि — अयि०

नील सिंधु-जल-धौत-चरणतल
अनिल-विकंपित-श्यामल-अंचल
अंबर-चुंबित-भाल-हिमाचल
शुभ्र-तुषार-किरीटिनि — अयि०

प्रथम प्रभात-उदय तव गगने
प्रथम साम-रव तव तपोवने
प्रथम प्रचारित तव वन-भवने
ज्ञान-धर्म कत काव्य-काहिनि — अयि०

चिर कल्याणमयी तुमि धन्य
देशविदेशे वितरिछ अन्न,
जाह्नवी-जमुना-विगलित-करुणा
पुण्य-पीयूष-स्तन्य-वाहिनि — अयि०

६०. सार्वभौम ज्वार-भाटा

पृ० २६३ सु-गत : भगवान बुद्धका अेक नाम। अेक खास 'मिशन' लेकर जो आये वे तथागत। सब संकल्पों और संस्कारोंका नाश करके जो निर्वाण तक पहुंचे वे सु-गत।

६१. अर्णवका आमंत्रण

पृ० २६३ अर्णव : अर्णव शब्दमें धातु 'ॠ' है। अुसका अर्थ है अुथल-पुथल होना, फेनसे भर आना। अिस परसे जिसमें अुथल-पुथल होती है, जो फेनसे भर आता है, जो अशांत है, अुसको अर्ण = पानी कहते हैं। और जिसमें अित तरहका पानी है अुसको अर्णव कहते हैं। 'अर्णोदर्ण। अर्णांसि अुदकानि अत्र सन्ति अिति अर्णव'।

अघमर्षण सूक्त : ऋग्वेदके १० वें मंडलका १९० वा सूक्त। अुसके ऋषिका नाम भी अघमर्षण ही है। सन्ध्यावंदनके समय सुबह-शाम यह सूक्त बोला जाता है। कालेलकर लिखते हैं : "अघमर्षणका

अर्थ है पापको धो डालना। किन्तु अिस सूक्तमें पापका अुल्लेख तक नहीं है। अुसमें अृषि कहता है ' बाह्य विश्वकी विशालताका अनुभव करो, हृदयकी गहराअीकी जाच करो। यह सारी आतर-बाह्य सृष्टि किसके सहारे टिकी हुअी है, यह देख लो। काल और सृष्टिकी अनन्तताका खयाल करो। अिससे तुम्हारा मन अपने-आप विशाल हो जायगा। विशाल मनमें पापके लिअे स्थान नहीं होता।

"अिस अनादि अनत सृष्टिमें 'ऋतम्' और 'सत्यम्' ही स्थायी हैं। 'ऋतम्'का अर्थ है विश्वका सार्वभौम नियम; चराचर सृष्टिका सनातन धर्म। अिसीके सहारे अनादि अनत सृष्टि चलती है (ऋ=चलना)। अिस 'ऋतम्'के अदर जो परम तत्त्व है, जो शाश्वत है और जिसका नाश कभी नही होता, अुसको सत्य कहते हैं। यह सत्य सर्वव्यापी है। अत अिसे विष्णु (सर्वत्र प्रवेश पानेवाला, फैलनेवाला) भी कहते हैं। 'सत्यम्' और 'ऋतम्' के द्वारा ही यह ससार अुत्पन्न होता है, विलीन होता है और फिरसे अुत्पन्न होता है। विश्वचक्र तपसे चलता है। यह विश्व तो परमात्माकी केवल महिमा है। परमात्मा अिससे भी बडा है। वह सुखका धाम है, आनदका निधान है। अुसकी कल्पना ज्यों ज्यों हृदयमें फैलती जायगी, त्यों त्यों हृदय स्वच्छ होता जायगा। जैसे जैसे तुम हृदयसे बडे होते जाओगे, वैसे वैसे पापसे तुम्हें घृणा होती जायगी। पापके लिअे स्थान ही नही होगा। 'यो वै भूमा तत् सुखम्। नाल्पे सुखम् अस्ति।' अितना समझ लो। यही पाप-नाशक मंत्र है।"

वरुण: वेदोंमें वरुणको पश्चिम दिशाका और सागरका अधीश्वर कहा गया है। वृ (घेर लेना) + अुन (कृतार्थे प्रत्यय)। जिसने पृथ्वीको घेर लिया है।

भुज्यु: ऋग्वेदमें अिसकी कथा है। कहते हैं कि भुज्यु अपने पुत्र तुग्र पर अेक बार गुस्सा हुअे। अिससे अुन्होंने तुग्रको दूसरे टापू पर बसे हुअे दुश्मनोंके खिलाफ लडनेके लिअे भेज दिया। रास्तेमें अुसके जहाजमें सुराख हो गया, जिससे वह बडी कठिन परिस्थितिमें आ पडा। किन्तु अश्विनीकुमारोंने सौ पतवारोंवाली नौकामें आकर अुसे सुरक्षित किनारे पर पहुंचा दिया।

पृ० २६४ जलोदर: अेक रोग, जिसमें पेटमें पानी भर जाता है। लेखकने यहा अिस शब्दका प्रयोग जलरूपी अुदरके अर्थमें किया है।

पृ० २६५ सिंदबाद: 'अरेबियन नाअिट्स' में अिसकी सात यात्राओंकी रोचक कथा है।

पृ० २६६ सिंहपुर विजय: सिलोनकी प्राचीनतम परपराके अनुसार अि० म० पूर्व छठी शताब्दीके मध्यमें सौराष्ट्रके सिंहपुरका राजकुमार विजय महत्वपूर्ण यात्रा करके सिलोन पहुचा था। विद्वानोंके कथनानुसार वह पौराणिक नहीं, बल्कि अैतिहासिक व्यक्ति है। देखिये ('भारतीय आर्यभाषा और हिंदी' — लेखक श्री सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय।)

भृगुकच्छ: आजका भडौच।

शोपारा: प्राचीन शूर्पारक।

दाभोळ: पश्चिम तट पर स्थित अेक अतीव मनोहर और बड़े महत्वका बदरगाह।

मगलापुरी: आजका मगळूर या मगलोर।

ताम्रद्वीप: सिलोन, लका।

जावा और बालिद्वीप: सिंगापुरके दक्षिणमें ये दो द्वीप हैं। वहाका धर्म अिस्लाम है, लेकिन हिन्दू सस्कृतिका असर आज भी वहा निश्चित मालूम होता है।

ताम्रलिप्ति: आजका तामलुक।

दसों दिशाओंमें: महावशमें लिखा है कि "बौद्ध धर्मका प्रचार करनेवाले मोग्गलीपुत्त (तिस्स) स्थविरने सगीतिका कार्य पूरा करनेके बाद भविष्यत् कालके बारेमें सोचकर और यह ध्यानमें रखकर कि मध्य देशके बाहर बौद्ध धर्मकी स्थापना होनेवाली है, कार्तिक मासमें कुछ स्थविरोंको अलग अलग स्थानोंमें भेज दिया कश्मीर और गाधारमें मज्झतिकको, महिष मडलमें महादेव स्थविरको, वनवासीमें रक्खितको, महाराष्ट्रमें महाधम्म रक्खितको और योन (यवन) लोगोंके देशमें महारक्खित स्थविरको भेजा।

"'मज्झिम स्थविरको हिमवत (हिमालय) प्रदेशमें तथा सोण और अुत्तर अिन दो स्थविरोंको सुवर्णभूमि (ब्रह्मदेश) में भेजा। महामहिन्द, अिट्ठिय, अुत्तिय, सबल और भद्दसाल अिन पांच स्थविर शिष्योंको 'तुम सुंदर लंकाद्वीपमें जाकर मनोरम बुद्धधर्मकी स्थापना करो' कहकर अुस द्वीपमें भेज दिया।" १–८

पृ० २६७ **धर्म-विजय**: कलिंगकी विजयके बाद मनमें अुत्पन्न हुअे पश्चात्तापका वर्णन करनेवाला जो शिलालेख अशोकने खुदवाया, अुसमें अुसने कहा है कि "महाराजके मतके अनुसार धर्मके द्वारा प्राप्त हुअी विजय ही श्रेष्ठ विजय है।"

गैंडेकी तरह अकुतोभय: मूल बौद्ध ग्रंथोंमें गैंडेकी नहीं बल्कि गैंडेके सींगकी अुपमा है। सब प्राणियोंके दो सींग होते हैं, किन्तु गैंडेको नाक पर सिर्फ अेक ही सींग होता है।

धम्मपदमें अिसी सदर्भमें अकेले हाथीकी अुपमा दी गअी है:

नो चे लभेथ निपकं सहायं सद्धिंचरं साधु विहारिधीरं।
राजा व रट्ठं विजितं पहाय अेको चरे मातंगरञ्ञे व नागो॥

[यदि निपुण, साथ चलनेवाला, साधु विहारवाला धीर पुरुष मित्रके रूपमें न मिले, तो जैसे हारे हुअे राज्यको छोड़कर राजा अकेला चला जाता है, या मातंग अरण्यमें हाथी अकेला घूमता है, वैसे अकेले ही घूमना चाहिये।]

अेकस्स चरितं सेय्यो नत्थि बाले सहायता।
अेको चरे न च पापानि कयिरा अप्पोस्सुक्को मातंगरञ्ञे व नागो॥

[अेकाकी चर्या श्रेय है, बालक (अज्ञानी) से कोअी सहायता नहीं मिलती। मातंग अरण्यमें अेकाकी हाथीकी तरह अल्पोत्सुक होकर अेकाकी चर्या करना चाहिये, पाप नहीं करना चाहिये।]

सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी: बम्बअीके आसपासकी बौद्ध गुफायें।

खंड-गिरि, अुदय-गिरि: अुडीसाके दो पहाड़। यहां बौद्ध गुफायें हैं। सम्राट् खारवेलका प्रख्यात शिलालेख भी यहीं है।

महिन्द और संघमित्ता: अशोकने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्राको बौद्ध धर्मका प्रचार करनेके लिअे लंका भेजा था।

पृ० २६८ वार्लिकन: यूरोपके अुत्तर समुद्रमें ८ वीं से १० वीं शताब्दी तक लूट मचानेवाले अेक नामक डाकू।

लक्ष्मीका पिता लक्ष्मी समुद्रमें पैदा हुअी, अिसलिअे पुराणोंमें समुद्रको लक्ष्मीका पिता कहा गया है। यहां पर लेखकने अिस कहानीसे फायदा अुठाकर समुद्रमें यात्रा करनेसे प्राप्त होनेवाली लक्ष्मीके अर्थमें अिन शब्दोंका प्रयोग किया है।

पृ० २६९ सर्वे सन्तु निरामया ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखम् आप्नुयात् ॥

[सब सुखी रहें, सब निरामय = नीरोग रहें। सब भद्र देखें। किसीको दुःख प्राप्त न हो।]

६२. दक्षिणके छोर पर

पृ० २७१ धनुष्कोटी धनुष्कोटीमें दो समुद्रोंके बीच भूमिका जो हिस्सा फैला हुआ है, वह धनुषकी कोटी जैसा कमानदार है। अिस परसे अिस स्थानका नाम धनुष्कोटी पड़ा है।

रत्नाकर और महोदधि दोनोंका अर्थ तो अेक ही है — समुद्र।

प्रशस्त मूल अर्थ है कल्याणमय शुभ कुशल। प्रशंसापात्र भी हो सकता है। यहां दोनों अर्थोंमें अिसका प्रयोग किया गया है। बंगला और मराठीमें अिस शब्दका दूसरा भी अेक अर्थ है चौड़ा, विशाल। यहां पर अिस अर्थमें भी लिया जा सकता है।

आत्मनि अप्रत्ययः जिसका आत्मामें यानी अपनेमें विश्वास नहीं है। 'बलवदपि शिक्षितानां आत्मन्यप्रत्ययं चेतः।' — शाकुन्तल

भूमिका पर स्थिर रहकर दो समुद्रोंके बीच खड़े रहनेके लिअे जो भूमि थी अुस पर खड़े रहकर। अल्पार्थमें 'क' प्रत्यय लगता है, अिसका भी यहां लाभ अुठाया गया है।

'रघुवंशमें' लिखा हुआ वर्णन : १३ वें सर्गमें रावण-वधके पश्चात् सीताको लेकर राम पुष्पक विमानमें बैठकर अयोध्या वापस लौटते हैं, तब लंकासे निकल कर सागर पार करते हुअे कुछ श्लोकोंमें सागरका वर्णन करते हैं

वैदेहि पश्यामलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम्।
छायापथेनेव शरत्प्रसन्नम् आकाशमाविष्कृतचारुतारम् ॥२॥
गर्भं दधत्यर्कमरीचयोऽस्माद् विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि।
अबिन्धनं वह्निमसौ बिभर्ति प्रह्लादनं ज्योतिरजन्यनेन ॥४॥
तां तामवस्थां प्रतिपद्यमानं स्थितं दश व्याप्य दिशो महिम्ना।
विष्णोरिवास्यानवधारणीयम् ईदृक्तया रूपमियत्तया वा ॥५॥
ससत्वमादाय नदीमुखाम्भः संमीलयन्तो विवृताननत्वात्।
अमी शिरोभिस्तिमयः सरन्ध्रैरूर्ध्वं वितन्वन्ति जलप्रवाहान् ॥१०॥
मातङ्गनक्रैः सहसोत्पतद्भिर्भिन्नान्द्विधा पश्य समुद्रफेनान्।
कपोलसंसर्पितया य एषां व्रजन्ति कर्णक्षणचामरत्वम् ॥११॥
वेलानिलाय प्रसृता भुजङ्गा महोर्मिविस्फूर्जथुनिर्विशेषाः।
सूर्यांशुसंपर्कसमृद्धरागैर्व्यज्यन्त अेते मणिभिः फणस्थैः ॥१२॥
तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु पर्यस्तमेतत्सहसोर्मिवेगात्।
ऊर्ध्वाङ्कुरप्रोतमुखं कथंचित् क्लेशादपक्रामति शङ्खयूथम् ॥१३॥
प्रवृत्तमात्रेण पयांसि पातुम् आवर्तवेगभ्रमता घनेन।
आभाति भूयिष्ठमयं समुद्रः प्रमथ्यमानो गिरिणेव भूयः ॥१४॥
दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला।
आभाति वेला लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा ॥१५॥
वेलानिलः केतकरेणुभिस्ते संभावयत्याननमायताक्षि।
मामक्षमं मण्डनकालहानेर्वेत्तीव बिम्बाधरबद्धतृष्णम् ॥१६॥
अेते वयं सैकतभिन्नशुक्तिपर्यस्तमुक्तापटलं पयोधेः।
प्राप्ता मुहूर्तेन विमानवेगात् कूलं फलावर्जितपूगमालम् ॥१७॥

पृ० २७४ पर्वते परमाणौ च० अिसका पूर्वपद अिस प्रकार है: 'क्व वयं क्व कालिदासाद्या कवयो वयमप्यमी।' पूरे श्लोकका अर्थ अिस

प्रकार है "कालिदास आदि भी कवि हैं, हम भी कवि हैं। पर्वत और परमाणुमें पदार्थत्व समान है।"

वानर-यूथ-मुख्य : रामरक्षा-स्तोत्रमें हनुमानकी स्तुतिका श्लोक अिस प्रकार है

मनो-जवं मारुत-तुल्य-वेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठं।
वातात्मजं वानर-यूथ-मुख्यं
श्रीराम-दूतं मनसा स्मरामि॥

साम्पराय : मृत्युके बादकी स्थिति। कठोपनिषद्‌में नचिकेताने यमराजसे साम्परायके बारेमें पूछा था।

पृ० २७७ अुदये सविता० अुदयके समय सूर्य लाल होता है और अस्तके समय भी लाल होता है। बड़े लोग संपत्ति और विपत्तिके समय अेकरूप रहते हैं।

पृ० २७८ अब अिस त्रिविध पूर्णतामें से . . होगी : याद कीजिये

पूर्णम् अदः पूर्णम् अिदं पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् अेवावशिष्यते॥

पृ० २८० ब्राह्म-मुहूर्त : सुबह करीब साढ़े तीन बजेका समय। आत्म-चिन्तनके लिअे यह समय अच्छा माना गया है। 'ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय चिन्तयेत् हितम् आत्मनः।'

पृ० २८१ अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म तुलना कीजिये

वदनी कवळ घेता नाम घ्या श्रीहरिचें
सहज हवन होतें नाम घेता फुकाचें।
जीवन करि जिवित्वा अन्न हें पूर्णब्रह्म
अुदरभरण नोहे जाणिजे यज्ञकर्म॥

[मुहमें कौर ऐसे हुअे हरिका नाम लो। मुफ्तका नाम लेनेसे सहज ही हवन होता है। अन्न पूर्ण ब्रह्म है और वह जीवन

करने ही वायुको जीवन बनाता है। यह अुदर-भरण नहीं है, परन्तु अिसे यज्ञकर्म जानना चाहिये।]

कन्याकुमारीकी कथा: बाणासुर नामक अेक दानवने शंकरजीकी आराधना की और हिरण्यकशिपुकी तरह 'मैं अिसमें न मरने पाअू, अुसमें न मरने पाअू' आदि वरदान मांग लिये। किन्तु अिस लंबी-चौड़ी सूचीमें कुमारी कन्याका नाम दर्ज करनेकी बात अुसको नहीं सूझी। वरदानसे निर्भय बना हुआ यह दानव संसार पर भारी जुल्म ढाने लगा। सारा संसार त्रस्त हो गया। अंत शिवजीने पार्वतीको कुमारी कन्याका रूप लेकर संसारमें जानेकी बात कही। पार्वतीने ललिता देवीका अवतार लिया और दानवको मार डाला। फिर हाथमें कुंकुम और अक्षत लेकर विवाहके लिअे शिवजीकी राह देखने लगी, क्योंकि पहलेसे वैसा तय हुआ था। शिवजी निकले तो सही, किन्तु रास्तेमें नारदमुनि द्वारा अनकी भेंट हो गअी। अुनके स्वागतमें कुछ देर लग गअी। अितनेमें कलियुग बैठ गया! और कलियुगमें विवाह नहीं हो सकता था।

अत पार्वतीने हाथके कुंकुम-अक्षत फेंक दिये और कलियुगकी समाप्तिकी राह देखती हुअी वहीं खड़ी रही।

पार्वतीके फेंके हुअे अक्षत अब भी समुद्र-तट पर रेतीके रूपमें पाये जाते हैं। श्रद्धालु लोग मानते हैं कि ये चावल मुंहमें डालनेसे स्त्रियोंके प्रसूतिकी वेदना कम होती है। कुंकुमके समान लाल रेतका तो वहां पार ही नहीं है।

६३. वैराग्यी जाते समय

पृ० २८३ अनुराधा, कृष्णचंद्र: अनुराधा नक्षत्र। कृष्णचंद्र = कृष्णपक्षका चांद। राधा और कृष्ण अिन दो शब्दोंका लेखकने यहां अच्छा लाभ अुठाया है।

६४. समुद्रकी पीठ पर

पृ० २८५ गिरधारी: आचार्य कृपालानीजीका भतीजा। अुस समय लेखकके साथ शांतिनिकेतनमें रहता था।

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे: पूरा गीत अिस प्रकार है

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे
अे जीवन पुण्य करो दहन-दाने।
आमार अेअि देहखानि तुले धरो,
तोमार अै देवालयेर प्रदीप करो,
निशिदिन आलोक-शिखा ज्वलुक गाने।
आधारेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाक तारा नव नव
नयनेर दृष्टि हते घुचवे काला
जेखाने पड़बे सेथाय देखवे आलो
व्यथा मोर, अुठवे ज्वले अूर्ध्व पाने।

आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है: रवीन्द्रनाथके दूसरे अेक गीतमें अिसी तरहका चित्र है

आजि शुक्ला अेकादशी, हेरो निद्राहारा शशी
अै स्वप्न पारावारेर खेया अेकला चालाय बसि।

पृ० २८७ **ध्येयः सदा०** सूर्यमंडलके मध्यमें स्थित, कमलासन पर विराजमान तथा केयूर, मकरकुंडल, किरीट और हार धारण करनेवाले, सुवर्णमय शरीरवाले, शंख-चक्रधारी नारायणका सदा ध्यान करना चाहिये।

जीवतराम आचार्य कृपालानी।

भयंकर दिव्यः दिव्य=कसौटी, परीक्षा। मराठीमें 'भयंकर दिव्य' नामक अेक अुपन्यास काफी मशहूर है।

पृ० २९० **आत्मन्येव संतुष्टः** आत्मामें ही संतुष्ट। गीता, ३–१७ पूरा श्लोक अिस प्रकार है —

यस्त्वात्म-रतिर् अेव स्याद् आत्म-तृप्तश् च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टस् तस्य कार्यं न विद्यते॥

६५. सरोविहार

पृ० २९२ **अुसका काव्य तो दूरसे ही खिलता है**: 'Tis distance lends enchantment to the view.

६७. समुद्रके सहवासमें

पृ० २९९ कच्ची छींककी तरह : अुपमाकी नवीनता और औचित्य ध्यानमें लीजिये।

पृ० ३०१ त्रिकांड : तीन कांड यानी तीन भागवाला। श्रवणके तीन तारे होते हैं। मृग नक्षत्रके पटमें तीन तारोंका अिषु त्रिकांड नक्षत्र होता है। अुसीके जैसा श्रवण होता है, अतः अुसे त्रिकांड कहा गया है।

खस्वस्तिक : हम जहां कहीं खड़े रहते हैं वहांका सिर परका आकाशका भाग या बिन्दु। अंग्रेजीमें अिसको 'झेनिथ' कहते हैं।

पृ० ३०२ प्रकाश चमकाकर : जिस प्रकार तार-विभागमें 'कट्' और 'कड' अिन दो ध्वनियोंसे सारी लिपि तैयार की गयी है, अुसी प्रकार रातमें प्रकाश चमकाकर दूर तक संदेश भेजे जाते हैं। दिनमें सूर्यप्रकाशसे भी अैसे संदेश भेजे जाते हैं। अुसे 'हेलियोग्राफ' कहते हैं।

पृ० ३०५ त्रिखंड सहकार : अफ्रीकामें मूल काले बाशिंदोंके अलावा (जो गुलाम या मजदूर होते हैं), राज्य करनेवाले गोरे युरोपियन लोग भी हैं और तिजारतके लिअे पूर्वसे आये हुअे गेहुंअे रंग या पीले रंगके अरब, हिंदुस्तानी और चीनी लोग भी हैं। तीनों खंडोंके अिन लोगोंके बीच जो सहयोग चलता है, अुसको त्रिखंड सहकार कहा गया है। अलबत्ता, यह सहयोग विषम है।

६८. रेखोल्लंघन

पृ० ३०६ रेखोल्लंघन : भूमध्य-रेखाका अुल्लंघन।

शांतादुर्गा : शुभकरी शांता और भयकरी दुर्गा। शांतादुर्गाका देवालय गोवामें है।

६९. नीलोत्री

पृ० ३०८ श्री अप्पासाहब : औंधके अंतिम राजाके दूसरे पुत्र श्री अप्पासाहब पंत। आप भारत-सरकारके कमिश्नरके नाते अफ्रीकामें थे, तब वहांके लोगों पर आपका अच्छा असर हुआ था।

पृ० ३१० औशोपनिषद् : अठारह मंत्रोंका अेक छोटासा अुपनिषद्। श्री विनोबाने अिसको वेदोंका सार और गीताका बीज कहा

है। गांधीजी कहते थे कि अिसमें हिन्दूधर्मका सारा निचोड़ आ जाता है। अिसका पहला मंत्र अुन्हें विशेष प्रिय था और अुस पर अुन्होंने कभी बार विवेचन किया था। ओशोपनिषद्का पहला मंत्र यह है

ओशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥

अिस अुपनिषद्को ओशावास्योपनिषद् भी कहते हैं।

माडूक्य अुपनिषद् : ओशोपनिषद्से भी छोटा है। अिसमें सिर्फ बारह मंत्र हैं। अिसमें ॐकारके द्वारा सारे अद्वैत सिद्धान्तका विवेचन किया गया है। गौड़पादाचार्यने अिस पर जो कारिका लिखी है, वह अद्वैत सिद्धान्तका प्रथम निबंध मानी जाती है। अिसीकी बुनियाद पर श्री शंकराचार्यने अपने मतकी स्थापना की है।

अघमर्षण सूक्त : अिसकी जानकारी 'अर्णवका आमंत्रण' नामक प्रकरणकी टिप्पणियोंमें दी जा चुकी है।

मैं यदि संस्कृतका कवि होता : संस्कृत कवि वाल्मीकिने गंगाष्टकमें कहा है

त्वत् तीरे तरुकोटरान्तर्गतो गंगे! विहंगो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि! वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः।
नैवान्यत्र मदान्ध सिंधुर-घटा-संघट्ट-घंटा रणत्-
कार-त्रस्त-समस्त-वैरि-वनिता-लब्ध-स्तुतिर् भूपतिः ॥

पृ० ३१२ मि० स्पीक : (Speke) जॉन हेनिंग (१८२७–१८६४) नील नदीका अुद्गम खोजनेवाला। हिन्दुस्तानी फौजमें भरती हुआ। पंजाबकी लड़ाओमें मशहूर हुआ। अुसे छुट्टियोंमें हिमालय, तिब्बत आदि प्रदेशोंमें घूमनेका शौक था। अफ्रीकाके भूगोलमें रस पैदा होते ही १८५४ में बर्टनके साथ वह अफ्रीका गया। सोमालीलैंडमें घूमा। अुसका वर्णन अुसने अपनी 'What led to the Discovery of the Source of the Nile' (१८५४) नामक पुस्तकमें लिखा है। अिसके बाद वह अफ्रीकाके मध्यमें स्थित सरोवरोंकी खोज करने निकला। अुसकी मान्यता थी कि अिनमें से अुत्तरकी

ओग्वे विक्टोरिया न्याज़ा सरोवरमें ही नीलका अुद्गम है। अुसने अपनी यह मान्यता नामाण 'The Journal of the Discovery of the Source of the Nile' नामक पुस्तकमें सिद्ध की। बर्टनने अुसका विरोध किया। बर्टनके अनुसार टांगानिका सरोवरमें नीलका अुद्गम था। दोनोंके बीच सार्वजनिक चर्चा रखी गअी। चर्चाके पहले ही दिन स्पीक शिकार खेलने गया था, जहां वह अपनी ही बंदूकका गोलीका शिकार हो गया।

पृ० ३१३ चन्द्रगिरि: रामायणके अनुसार सिन्धु और सागरके संगम-स्थान पर स्थित शतशृंग पर्वत। यहां 'रुवेन ज़ोरी' पर्वत।

मेरु पर्वत: भागवतके अनुसार जम्बुद्वीपमें अिलावृत्तके मध्यमें स्थित सोनेका पर्वत। यहां मध्य अफ्रीकाका अुसी नामका अेक पर्वत, किलीमाजारोका पहाड़।

अच्छोद सरोवर: बाणभट्टकी कादंबरीमें यह नाम लिया गया है।

'शुभ-संदेश': मुबारकी। अंग्रेजी 'गॉस्पेल'।

पृ० ३१४ स्टेन्ली: सर हेनरी मार्टन (१८८०–१९०४) अेक मामूली किसानका लड़का। मूल नाम जॉन रोलांड। बचपन बड़ी कठिनाअियोंमें बीता। मदरसेमें शिक्षकको पीटकर भाग गया था। मुर्गी-धागा बेचनेवालेके यहां काम किया। कसाअीके यहां भी काम किया। बादमें न्यू ऑर्लियन्स (अमेरिका) जानेवाले अेक जहाजमें केबिन बॉयका हैसियतसे काम किया। वहांके स्टेन्ली नामक अेक व्यापारीने अुसकी मदद की। बादमें अुसको गोद लिया। तबसे वह स्टेन्लीके नामसे पुकारा जाने लगा। पालक पिताके अवसानके बाद फौजमें भर्ती हुआ। युद्धके दरमियान गिरफ्तार हुआ। मुक्त होनेके बाद जब वापस घर लौटा, तब माने घरमें रखनेसे अिनकार किया। अिससे अुसके दिलको बड़ी चोट लगी। रोटीके लिअे अुसने मल्लाहीका जीवन स्वीकार किया। अमेरिकाके नौकादलमें भर्ती हुआ। बादमें अखबारोंमें लेख लिखने लगा। अुसकी वर्णन-शक्ति अच्छी थी। कअी युद्धोंमें संवाददाताके तौर पर काम किया। १८६९ में 'न्यूयॉर्क हेरल्ड' के संचालकने अुसको

तार देकर पश्चिम बुलाया और अफ्रीकाकी ओर जानेके लिये नियुक्त हुओ लिविंग्स्टनकी खोज करनेका आदेश दिया। करीब ओक सालकी बड़ी दौड़धूपके बाद वह १० नवम्बर, १८७१ को अजीजीमें लिविंग्स्टनसे मिला। अिस प्रवासका वर्णन अुसने 'How I found Livingstone' (१८७२) नामक पुस्तकमें किया है। शुरू शुरूमें अुसकी बातों पर लोगोंका विश्वास नहीं बैठा। मगर अुसने लिविंग्स्टनकी डायरियां दिखाओं तब जाकर लोगोंका विश्वास बैठा। रानी विक्टोरियाने अुसे नासकी रत्नजड़ित डिब्बी भेंटमें दी। किन्तु अिस प्रसंगमें लोगोंने अुस पर जो अविश्वास दिखाया और जो गालियां बरसायीं, अुससे अुसका मन हमेशाके लिअे खट्टा हो गया।

सन् १८७४ में लिविंग्स्टनकी मृत्युके बाद अुसका अपूर्ण कार्य पूर्ण करनेके लिअे 'डेली टेलिग्राफ' के मालिकने चंदा अिकट्ठा करके स्टेन्लीको दिया और अिसके नेतृत्वमें अेक टुकड़ी अफ्रीकामें भेजी। तीन साल यात्रा करनेके बाद अुसने सिद्ध किया कि लिविंग्स्टनने जिसे 'लुआलाबा' कहा था, वह और कांगो नदी अेक ही है। और अुसका पूरा जलमार्ग अुसने निश्चित कर दिया। अिस काममें अुसने जो कष्ट अुठाये अुनका कोअी हिसाब नहीं है। अुसने विक्टोरिया न्यांजाका क्षेत्रफल निश्चित किया। टांगानिकाकी लंबाओ और क्षेत्रफल निश्चित किया। अेडवर्ड नामक नये सरोवरकी खोज की। अिस यात्राका वर्णन अुसने 'Through the Dark Continent' नामक अपनी पुस्तकमें किया है। अुसकी अिस यात्राके कारण नाअील नदीके अुद्गमके आसपासका सारा प्रदेश अंग्रेजोंके संरक्षणमें आ गया।

कांगो नदी अफ्रीकाके मध्य प्रदेशका चोरस्ता जैसा जलमार्ग है यह अुसकी महत्त्वकी खोज है। अिसका महत्त्व बेल्जियमके राजा लियो-पोल्ड द्वितीयने अच्छी तरह समझ लिया था। अुसने अपने कुछ लोगोंको अफ्रीकासे वापस लौटनेवाले स्टेन्लीसे मिलनेके लिअे मार्सेल्स भेजा था। अुन्होंने राजाकी ओरसे स्टेन्लीको वापस कांगो जानेकी सूचना की। किन्तु स्टेन्ली अुस समय आराम करना चाहता था। अतः अुसने अिस सूचनाका स्वीकार नहीं किया। १८७९ में लिओपोल्डने अुसे फिरसे जानेकी सूचना

की। स्टेन्लीने तब तक अंग्रेज व्यापारियोंमें कांगोके बारेमें दिलचस्पी पैदा करनेकी काफी कोशिश की। किन्तु असमें अुसको सफलता नहीं मिली। असलिअे ब्रुसेल्स जाकर लियोपोल्डकी सूचना और योजनाको अुसने स्वीकार किया। वह फिरसे कांगो गया। पांच वर्षकी महनतके बाद अुसने लियोपोल्डके आधिपत्यके नीचे कांगोके स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। असका वर्णन अुसने अपनी 'The Congo and the Founding of its Free State' (१८८५) नामक पुस्तकमें किया है।

१८८४ में वह फिरसे युरोप लौटा। अुसके भाषणोंकी वजहसे जर्मनीमें अफ्रीकाके बारेमें रस अुत्पन्न हुआ। युरोपके राष्ट्रोंमें अफ्रीकाको कब्जेमें लेनेके लिअे होड़ शुरू हुआी। स्टेन्ली अिग्लैंडमें रहा, किन्तु बेल्जियमके राजाके प्रति अुसकी निष्ठा भी अुसे खींचती थी। दोनोंका हेतु सिद्ध करनेके लिअे वह फिरसे अफ्रीका गया। भूमध्य-रेखाके आस-पासके प्रदेशोंमें घूमते हुअे अुसके करीब दो-तिहाई साथी मर गये, कुछ साथी मारे गये। किन्तु वह हिम्मत नहीं हारा। अुसने अपना काम जारी रखा, और अंग्रेजोंके लिअे अुसने वहांके जमीनसे काफी रिआयतें प्राप्त कर लीं। अिस भयानक यात्राका वर्णन अुसने 'In Darkest Africa' नामक ग्रंथमें (१८९०) किया है।

अिस यात्राके बाद जब वह वापस अिग्लैंड लौटा, तब अुस पर विविध सन्मान बरसाये गये। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयोंने अुसको ऑनरेरी डिग्रियां प्रदान कीं। अुसने अेक कलाकार स्त्रीसे शादी की। अुसके आग्रहके कारण वह पार्लियामेण्टमें चुना गया। किन्तु अुसमें अुसको कोअी दिलचस्पी नहीं मालूम हुअी। अपनी जवानीके समयके यात्रा-वर्णन अुसने 'My Early Travels and Adventures' नामक ग्रंथमें दिये हैं। सन् १८९७ में वह आखिरी बार अफ्रीका गया। अुसका वर्णन अुसने 'Through South Africa' नामक ग्रंथमें किया है (१८९८)। सन् १८९९ में अिग्लैंडके राजाने अुसे 'नाअिट' का खिताब दिया। जीवनके अंतिम दिन निवृत्तिमें बिताकर सन् १९०४ में अुसकी मृत्यु हुअी।

मिसर संस्कृति : मिसरमें पुरोहित, राज्यकर्ता वर्ग, किसान और कारीगर, मजदूर या गुलाम अिन चार वर्गोंकी समाज-व्यवस्था चलती थी।

पृ० ३१५ अफलातूनकी 'समाज-रचना : अफलातूनने 'रिपब्लिक' नामक अपने ग्रंथमें आदर्श नगर-राज्यका चित्र खींचा है, जिसमें अुसने लोगोंको चार वर्णोंमें बांटा है (१) राज्यकर्ता तत्त्वज्ञ, (२) लड़नेवाले, (३) *किसान, कारीगर और व्यापारी तथा* (४) *गुलाम।*

पृ० ३१६ अश्वत्थामा : अश्व + स्थामन्। स्थामन् = बल। यहां 'स्थामन्' के 'स' का लोप होता है।

७०. वर्षा-गान

पृ० ३१६ कालिदासका श्लोक : यह है वह श्लोक —

नवजलधर सन्नद्धोऽयं न दृप्तनिशाचर ।
सुरधनुर् अिदं दूराकृष्टं न नाम शरासनम् ॥
अयम् अपि पटुर् धारासारो न बाण-परंपरा ।
कनक निकष-स्निग्धा विद्युत् प्रिया न ममोर्वशी ॥
— विक्रमोर्वशीयम्, अंक ४ श्लोक ७

यह निश्चय अलंकारका अुदाहरण है। श्लोकका अर्थ मूलमें दिया ही है।

पृ० ३१७ *चिर-प्रवासी : हमारे लोग चिर-प्रवासको मरणतुल्य* मानते थे। 'रोगी, चिर-प्रवासी ... यज्जीवति तन्मरणम्।'

जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुल : जीवन-प्रवाह, पानीका प्रवाह। पानीका प्रवाह मनुष्यको आगे अुस पार जानेसे रोकता है। नदी पर पुल बननेसे नदीकी यह रोकनेकी शक्ति परास्त होती है।

सेतु : सेतुका अर्थ है बांध।

पृ० ३१८ छोटेसे घोंसलेका रूप : यह अुपमा अुपनिषद्के अेक वचनसे सूझी है।

यत्र भवति विश्वं अेकनीडम्।

जहां सारा विश्व अेक छोटासा घोंसला बन जाता है। स्वयं भगवान ही अैसे घोंसलेमें रहनेवाले जीवोंको गरमी देनेवाला पक्षी है।

कारवार : बम्बई राज्यके पश्चिमी समुद्र-तटका अतीव सुन्दर बन्दरगाह जहां लेखकने अपने बचपनके कुछ वर्ष व्यतीत किये थे। लेखककी पुस्तक 'स्मरण-यात्रा' में कारवारका जिक्र कओ बार आता है।

पृ० ३१९ जीवनचक्र : गीतामें अध्याय ३ श्लोक १६ में अिस प्रवर्तित जीवन-चक्रका जिक्र आता है। 'गीताका जीवन-चक्र' नामक निबंध अिस सिलसिलेमें साथ पढ़ने लायक है।

परस्परावलम्बन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय : व्यक्तिगत जीवनके लिओ स्वाश्रय अच्छा है। सामाजिक जीवनकी बुनियादमें परस्परावलम्बन ही प्रधान है। अैसे परस्परावलम्बनमें जब आदान-प्रदान समसमान या तुल्यबल होता है तब जीवनका बोझ किसी पर न बढ़नेसे अुसमें स्वाश्रयकी निष्पक्षता आती है।

यज्ञ-चक्र : जीवन-चक्रको ही गीताने यज्ञ-चक्र कहा है। देखिये, 'सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा जि०' गीता—अध्याय ३, श्लोक १० से १६।

अवतार-कृत्य : अवतारका शब्दार्थ है नीचे अुतरना। बारिशका पानी अूपरसे नीचे अुतरता है। भगवान भी जब नीचे अुतरकर मनुष्यरूप धारण करते हैं, तब अुसे अवतार कहते हैं।

कुरुक्षेत्र : भारतीय युद्धकी रणभूमि।

मलमलके कीड़े : अिन्द्रगोप कहते हैं।

दोहरी शोभा : मखमलके कपड़ेमें जैसी शोभा होती है वैसी। अेक ओरसे देखनेसे गहरा रंग मालूम होता है; दूसरी ओरसे वही फीका या दूसरे रंगका मालूम होता है। अंग्रेजीमें अिसे 'Shot' कहते हैं।

पृ० ३२१ आकाशके देव : सितारे।

'मधुरेण समापयेत्' : भोजनमें आखिरी चीज मीठी हो।

'ऋतु-संहार' : कालिदासका अेक नितान्त सुन्दर काव्य, जिसमें छहों ऋतुओंका वर्णन आता है।

'ऋतुभ्यः' : विवाहके समय सप्तपदी द्वारा गृहस्थाश्रमके लिओ जो जीवन-दीक्षा ली जाती है, अुसमें से छठी प्रतिज्ञा है 'ऋतुभ्यः'। 'जीवनमें हम दोनों ऋतु-परिवर्तनके साथ साथ जीवन-परिवर्तन भी करेंगे'— यह है अुस प्रतिज्ञाका भाव।

सूची

अ

आ

इ

ई

उ

ख

ग

ल

श